ISBN 978-81-928330-3-3

जैन दर्शन परिभाषा कोश

Definitional Dictionary of Jain Philosophy

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
Government of India

जैन दर्शन परिभाषा कोश

Definitional Dictionary of Jain Philosophy

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)

COMMISSION FOR SCIENTIFIC & TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
GOVERNMENT OF INDIA

© भारत सरकार, 2014
© Government of India, 2014

बिक्री का पताः

1. आयोग का बिक्री एकक,
   फोन नंबर 011- 26105211 विस्तार 246
2. प्रकाशन विभाग, भारत सरकार
   सिविल लाइन्स, दिल्ली- 110054

प्रकाशक:
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
पश्चिमी खंड - 7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली 110066

विषय-सूची

1.	प्रस्तावना	iv
2.	संपादकीय	vi
3.	विशेषज्ञ समिति	ix
4.	संपादन एवं प्रकाशन	x
5.	वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा स्वीकृत शब्दावली निर्माण के सिद्धांत	xi
6.	Principles of evolution of terminology approved by Commission For Scientific And Technical Terminology	xiii
7.	आयोग के अध्यक्ष	xv
8.	जैन दर्शन परिभाषा कोश	1-446

प्रस्तावना

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही भारत सरकार की यह नीति रही है कि प्राथमिक कक्षा से विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएँ ही हों। परंतु इन भाषाओं को स्नातक तथा स्नातकोतर स्तर पर शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने के लिए आवश्यक है कि इनमें उच्च कोटि के प्रामाणिक ग्रंथ पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हों।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत सरकार ने विभिन्न विषय-क्षेत्रों में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण तथा विकास और विश्वविद्यालय स्तरीय मानक ग्रंथों के मौलिक लेखन तथा अनुवाद की विस्तृत योजना बनाई और इसके समन्वय तथा कतिपय महत्वपूर्ण विषयों में ग्रंथ-निर्माण का कार्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग को सौंपा गया।

आयोग की महत्वपूर्ण योजना "प्राच्य धर्म एवं दर्शन परिभाषा कोश" के अंतर्गत विश्व के प्राचीन धर्मों तथा समकालीन दार्शनिक विचारधाराओं, यथाः ताओवाद, फेनवाद, शिंटोवाद, कंफ्यूशिसवाद तथा सिख धर्म, इस्लाम धर्म, बौद्ध धर्म, आदि के तकनीकी शब्दों का संकलन तथा उनकी परिभाषाओं का निर्माण किया जाना है।

प्रस्तुत 'जैन दर्शन परिभाषा कोश' आयोग की इस महत्वपूर्ण योजना के अंतर्गत पहला प्रकाशन है। सामान्यतः आयोग द्वारा 2000 से 2500 शब्दों को आधार बनाकर परिभाषा कोश प्रकाशित किए जाते हैं किंतु विषय की व्यापकता की दृष्टि से इस पुस्तक में जैन धर्म तथा दर्शन की लगभग 4200 परिभाषाओं का संकलन किया गया है। इस पुस्तक में आयोग का उद्देश्य यह रहा है कि ऐसी संक्षिप्त परिभाषाएँ दी जाएँ जिनमें यथासंभव सरल भाषा में संकल्पनाओं के आवश्यक तत्वों का समावेश हो।

प्रस्तुत पुस्तक उन शोधार्थियों तथा छात्रों को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई है जो देश-विदेश में जैन दर्शन की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इस पुस्तक में जैन धर्म तथा दर्शन के उन शब्दों को भी सम्मिलित किया गया है जो अभी तक सामान्यतः सर्वसुलभ नहीं थे।

आयोग इस तथ्य से अवगत है कि जैन दर्शन एक व्यापक विषय है इसलिए इसकी समग्र संकल्पनाओं को कुछ परिभाषाओं में समेकित करना काफी कठिन कार्य है। किंतु इस चुनौतीपूर्ण कार्य को योजना में सम्मिलित विषय-विशेषज्ञों द्वारा जिस सावधानी से पूर्ण किया गया है वह प्रशंसनीय है।

कोश में सम्मिलित परिभाषाओं पर विचार करके उन्हें अंतिम रूप प्रदान करने में जिन विशेषज्ञों ने हमे सहयोग दिया है मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

कोश को पूरा कराने में आयोग के अधिकारी श्री महेंद्र कुमार भारल का विशेष योगदान रहा है। इनकी समर्पित सेवा के बिना इस कृति की सफलता संभव नहीं थी।

आशा है यह परिभाषा कोश जैन दर्शन के अध्येताओं, प्राध्यापकों, छात्रों, तथा पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

(प्रो. केशरी लाल वर्मा)
अध्यक्ष

संपादकीय

आयोग द्वारा दर्शनशास्त्र विषय पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी हैं जो इसकी अलग-अलग विधाओं से संबंधित हैं। अनेक पुस्तकों के बावजूद दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में एक ऐसे प्रकाशन की कमी बहुत समय से महसूस हो रही थी जिसे आधार बनाकर दर्शन के विद्यार्थी विश्व के प्राचीन धर्मों तथा उनकी दार्शनिकता को सरलता से समझ सकें।

आयोग के तत्कालीन उप निदेशक डा. वी.पी. सिंह जो कि स्वयं दर्शनशास्त्र विषय में विशेषज्ञता रखते थे उन्होंने दर्शन के छात्रों की इस समस्या को महसूस किया और उसके निराकरण हेतु इस योजना पर कार्य आरंभ किया।

इस योजना के अंतर्गत विश्व के प्राचीन धर्मों तथा समकालीन विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के तकनीकी शब्दों की परिभाषाओं का कोश तैयार किया जाना था। डा. वी.पी.सिंह के आकस्मिक निधन के बाद एक बार तो यह लगा कि यह योजना शायद अपना सफर पूरा नहीं कर पाएगी किंतु तत्कालीन अध्यक्ष प्रो. के.बिजय कुमार ने जिस आत्मीयता से इस योजना को पूर्ण कराने में अपना मार्गदर्शन दिया उसी के फलस्वरूप यह पुस्तक आज पाठकों के सम्मुख है।

मूल योजना में विश्व के प्राचीन धर्मों तथा समकालीन दार्शनिक विचारधाराओं के तकनीकी शब्दों की परिभाषाओं को लेकर कोश का निर्माण किया जाना प्रस्तावित था किंतु डा. सिंह के यथाशेष हो जाने पर इस योजना में कुछ व्यावहारिक परिवर्तन लाना इसलिए आवश्यक हो गया था क्योंकि योजना में सम्मिलित विभिन्न धर्मों पर प्रारंभिक कार्य आरंभ करने के लिए संबंधित संस्थानों से आयोग को वह सहयोग नहीं मिला जिसकी अपेक्षा थी।

जैन धर्म तथा दर्शन पर कार्य आरंभ करने में जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं(राजस्थान) ने हमे अपना सहयोग प्रदान किया। उनके मार्गदर्शन के पश्चात यह कार्य दिल्ली स्थित जैन दर्शन शोध संस्थान, वीर सेवा मंदिर, दरियागंज, नई दिल्ली में आरंभ किया गया।

इस कोश में सम्मिलित परिभाषाओं का निर्माण जैन दर्शन शोध संस्थान, वीर सेवा मंदिर, दरियागंज, नई दिल्ली, राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन एवं संशोधन संस्थान श्री धवलतीर्थ श्रवणबेलगोल (कर्नाटक) तथा मैसूर विश्वविद्यालय के जैन एवं प्राकृत अध्ययन विभाग में किया गया है।

मैसूर स्थित भगवान महाबीर प्राकृत जैन विद्यापीठ,श्री स्थानकवासी जैन संघ के पुस्तकालय में उपलब्ध मानक तथा दुर्लभ ग्रंथो का भी उपयोग इस योजना में किया गया है।

सामान्यतः आयोग के परिभाषा कोश में 2000 से 2500 तक परिभाषाएं होती हैं लेकिन जैन दर्शन पर उपलब्ध सामग्री को देखते हुए इस कोश में इस सीमा का त्याग करना आवश्यक हो गया था। यहां यह उल्लेखनीय है कि जैन दर्शन पर जो दुर्लभ ग्रंथ उपलब्ध हैं यदि उन सभी में से कुछ-कुछ शब्दों का संकलन कर लिया जाए तो इस विषय पर अनेक खंड प्रकाशित हो सकते हैं। अतः प्रस्तुत पुस्तक को एक परिभाषा कोश में समेकित करना कितना कठिन कार्य रहा होगा इसका अनुमान पाठक स्वयं लगा सकते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक की एक अन्य उपलब्धि यह भी रही कि परिभाषाओं के लिए शब्द चयन से लेकर उनके निर्माण तथा संपादन की प्रक्रिया तक वही विशेषज्ञ रहे हैं, जो योजना के आरंभ में इससे जुड़े थे। इसलिए पाठक परिभाषाओं में एक ही भाषा शैली का प्रयोग पा सकेंगे।

जैन दर्शन पर जो सामग्री उपलब्ध है वह मुख्यतः प्राकृत तथा संस्कृत भाषा में पाई जाती है। इस कोश के निर्माण के समय एक तथ्य यह भी देखने में आया कि दक्षिण के प्रांतों में जैन दर्शन पर अनेक दुर्लभ ग्रंथ तथा पांडुलिपियां आज भी उपलब्ध हैं तथा उनकी विषय-वस्तु से अभी तक जैन दर्शन के छात्र वंचित हैं। आयोग का प्रयास है कि यदि भविष्य में इस योजना पर पुनः कार्य किया गया तो इस प्रकार की सामग्री पाठकों के सामने लाने का प्रयास किया जाएगा।

जैन दर्शन का मूल आधार चूंकि प्राकृत तथा संस्कृत भाषा रही है इसलिए अभी तक हिंदी के पाठक इस विषय पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री से अवगत नहीं हो पाए।

प्रस्तुत पुस्तक में सकंलित परिभाषाएं जैन दर्शन के अध्येताओं, प्राध्यापकों, छात्रों तथा पाठकों के लिए मील का पत्थर सिद्ध होंगी एवं इस विषय में किसी मानक पुस्तक के न होने की जो कमी अभी तक महसूस की जा रही थी वह भी दूर हो सकेगी, यही आयोग का प्रयास रहा है।

जैन दर्शन का विषय व्यापक होने के साथ-साथ प्राकृत तथा संस्कृत निष्ठ है इसलिए अनेक संकल्पनाएं अनुवाद मूलक होने के कारण भाषायी दृष्टि से काफी क्लिष्ट हो गई थीं। ऐसी परिभाषाओं पर व्यापक चर्चा की आवश्यकता महसूस हुई अतः आयोग ने श्री जैन मठ, श्रवणबेलगोल में आयोजित बैठक के माध्यम से जैन स्वामियों से भी आवश्यक परामर्श किया तथा उनका मार्गदर्शन लिया।

आयोग को इस उद्देश्य की पूर्णता के लिए परम पूज्य जैन जगद्गुरु स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामी जी, श्री जैन मठ, श्रवणबेलगोल(कर्नाटक) तथा चंद्रगिरी मठ के स्वामी श्री भुवनकीर्ति भट्टारक स्वामी जी, का मार्गदशन भी प्राप्त हुआ है। परम पूज्य स्वामियीयों से प्राप्त सारगर्भित ज्ञान का ही परिणाम था कि क्लिष्ट परिभाषाएं सरल तथा बोधगम्य ढंग से प्रस्तुत हो पाई।

इस परिभाषा कोश के निर्माण में जैन दर्शन के शीर्षस्थ विद्वानों का योगदान प्राप्त हुआ है। मैं विशेषज्ञ सूची में उल्लिखित उन सभी विद्वानों का आभारी हूं जिन्होंने इस कोश की परिभाषाओं को अंतिम रूप देने और विषय के अद्यतन विचारों को इनमें समाविष्ट करने में आयोग को पूर्ण सहयोग दिया।

इस कोश के संपादन और भाषा की एकरूपता निर्धारित करने के कार्य में डा. जयकुमार जैन, .मुजफ्फरनगर तथा डा. कमलेश कुमार जैन,वाराणसी का जो सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है उसके लिए मैं इनके प्रति विशेष आभार प्रकट करता हूं। इनके सहयोग एवं मार्गदर्शन के अभाव में इस कोश को अंतिम रूप दे पाना संभव नहीं था।

यद्यपि प्रस्तुत कोश को उपयोगी और प्रामाणिक बनाने का भरसक प्रयत्न किया गया है, फिर भी कोश की त्रुटियों से अवगत कराए जाने के लिए हम विद्वान पाठकों के आभारी होगें और अगले संस्करण में उन्हें दूर करने का पूरा प्रयास करेगें।

(महेन्द्र कुमार भारल)
संपादक

विशेषज्ञ समिति

डा. जयकुमार जैन
विभागाध्यक्ष, संस्कृत
एस.डी. कॉलेज
मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)

प्रो. प्रेम सुमन जैन
पूर्व डीन, कला संकाय
मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राजस्थान)

डा. सुरेश चंद जैन
पूर्व दर्शन विभागाध्यक्ष
स्याद्वाद महाविद्यालय
वाराणसी (उ.प्र.)

डा अशोक कुमार जैन
जैन-बौद्ध दर्शन विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ.प्र.)

पी. तेजराज,
जैन एवं प्राकृत अध्ययन विभाग
मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

डा. कमलेश कुमार जैन
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान
जयपुर (राजस्थान)

डा. कमलेश कुमार जैन
प्रोफेसर, जैन-बौद्ध दर्शन विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ.प्र.)

डा रमेश चंद्र जैन
पूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष
वर्धमान कॉलेज
बिजनोर (उ.प्र.)

प्रो. शुभ चंद जैन,
पूर्व विभागाध्यक्ष
जैन एवं प्राकृत अध्ययन विभाग
मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

डा. जिनेन्द्र कुमार जैन
प्राकृत विभाग
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय
लाडनूं (राजस्थान)

डा. एल. सुरेश कुमार,
जैन एवं प्राकृत अध्ययन विभाग
मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

डा धर्मपाल आर्य, भाषाविद्
पूर्व कुलपति
गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय
हरिद्वार (उत्तराखंड)

संपादन एवं समन्वय

प्रधान संपादक
प्रो. केशरी लाल वर्मा
अध्यक्ष

संपादक
श्री महेन्द्र कुमार भारल

प्रकाशन
डा. पी.एन.शुक्ल
सहायक निदेशक

श्री कर्मचंद प्र.प्रे.लि

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
द्वारा स्वीकृत शब्दावली निर्माण के सिद्धांत

1. अंतरराष्ट्रीय शब्दों को यथासंभव उनके प्रचलित अंग्रेजी रूपों में ही अपनाना चाहिए और हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं की प्रकृति के अनुसार ही उनका लिप्यंतरण करना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय शब्दावली के अंतर्गत निम्नलिखित उदाहरण दिए जा सकते हैं:
   (क) तत्वों और यौगिकों के नाम, जैसे- हाइड्रोजन, कार्बनडाइआक्साइड, आदि।
   (ख) तौल और माप की इकाइयाँ और भौतिक परिमाण की इकाइयाँ, जैसे- डाइन, कैलॉरी, ऐम्पियर, आदि।
   (ग) ऐसे शब्द जो व्यक्तियों के नाम पर बनाए गए हैं, जैसे- मार्क्सवाद (कार्ल मार्क्स), ब्रेल (ब्रेल), बायॅकाट (कैप्टेन बॉयकाट), गिलोटिन (डॉ. गिलोटिन) गेरीमैंडर (मि. गेरी) एम्पियर (मि. एम्पियर फारेनहाइट तापक्रम (मि. फारेनहाइट आदि)।
   (घ) वनस्पति विज्ञान, प्राणिविज्ञान, भूविज्ञान आदि की द्विपदी नामावली।
   (ड.) स्थिरांक, जैसे- π, g आदि
   (च) ऐसे अन्य शब्द जिनका आमतौर पर सारे संसार में व्यवहार हो रहा है, जैसे- रेडियो, पेट्रोल, रेडार, इलेक्ट्रान, प्रोटॉन, न्यूट्रान, आदि।
   (छ) गणित और विज्ञान की अन्य शाखाओं के संख्यांक, प्रतीक, चिह्न और सूत्र, जैसे- साइन, कोसाइन, टेन्जेन्ट, लॉग, आदि (गणितीय संक्रियाओं में प्रयुक्त अक्षर रोमन या ग्रीक वर्णमाला के होने चाहिए)
2. प्रतीक, रोमन लिपि में अंतरराष्ट्रीय रूप में ही रखे जाएँगे परंतु संक्षिप्त रूप नागरी और मानक रूपों में भी, विशेषत: साधारण तौल और माप में लिखे जा सकते हैं, जैसे- सेंटीमीटर का प्रतीक cm हिंदी में भी ऐसे ही प्रयुक्त होगा परंतु नागरी संक्षिप्त रूप से.मी. भी हो सकता है। यह सिद्धांत बाल-साहित्य और लोकप्रिय पुस्तकों में अपनाया जाएगा, परंतु विज्ञान और प्रौद्योगिकी की मानक पुस्तकों में केवल अंतरराष्ट्रीय प्रतीक, जैसे- cm ही प्रयुक्त करना चाहिए।
3. ज्यामितीय आकृतियों में भारतीय लिपियों के अक्षर प्रयुक्त किए जा सकते हैं, जैसे- क, ख, ग या अ, ब, स परंतु त्रिकोणमितीय संबंधों में कवेल रोमन अथवा ग्रीक अक्षर ही प्रयुक्त करने चाहिए, जैसे- साइन A, कॉस B, आदि।
4. संकल्पनाओं को व्यक्त करने वाले शब्दों का सामान्यत: अनुवाद किया जाना चाहिए।
5. हिंदी पर्यायों का चुनाव करते समय सरलता, अर्थ की परिशुद्धता, और सुबोधता का विशेष ध्यान रखना चाहिए। सुधार-विरोधी प्रवृत्तियों से बचना चाहिए।

6. सभी भारतीय भाषाओं के शब्दों में यथासंभव अधिकाधिक एकरूपता लाना ही इसका उद्देश्य होना चाहिए और इसके लिए ऐसे शब्द अपनाने चाहिए जो-
   (क) अधिक से अधिक प्रादेशिक भाषाओं में प्रयुक्त होते हों, और
   (ख) संस्कृत धातुओं पर आधारित हों।
7. ऐसे देशी शब्द जो सामान्य प्रयोग के पारिभाषिक शब्दों के स्थान पर हमारी भाषाओं में प्रचलित हो गए हैं, जैसे- telegraphy/telegram के लिए तार, continent के लिए महाद्वीप, post के लिए डाक, आदि इसी रूप में व्यवहार में लाए जाने चाहिए।
8. अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, आदि भाषाओं के ऐसे विदेशी शब्द जो भारतीय भाषाओं में प्रचलित हो गए हैं, जैसे- टिकट, सिगनल, पेन्शन, पुलिस ब्यूरो, रेस्तरां, डीलक्स, आदि इसी रूप में अपनाए जाने चाहिए।
9. अंतरराष्ट्रीय शब्दों का देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण- अंग्रेजी शब्दों का लिप्यंतरण इतना जटिल नहीं होना चाहिए कि उसके कारण वर्तमान देवनागरी वर्णों में नए चिह्न व प्रतीक शामिल करने की आवश्यकता पड़े। शब्दों का देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण अंग्रेजी उच्चारण के अधिकाधिक अनुरूप होना चाहिए और उनमें ऐसे परिवर्तन किए जाएं जो भारत के शिक्षित वर्ग में प्रचलित हों।
10. **लिंग- हिंदी** में अपनाए गए अंतरराष्ट्रीय शब्दों को, अन्यथा कारण न होने पर, पुल्लिंग रूप में ही प्रयुक्त करना चाहिए।
11. **संकर शब्द-** पारिभाषिक शब्दावली में संकर शब्द, जैसे guaranteed के लिए गारंटित, classical के लिए 'क्लासिकी', codifier के लिए 'कोडकार' आदि के रूप सामान्य और प्राकृतिक भाषाशास्त्रीय प्रक्रिया के अनुसार बनाए गए हैं और ऐसे शब्द रूपों को पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकताओं तथा सुबोधता, उपयोगिता, और संक्षिप्तता का ध्यान रखते हुए व्यवहार में लाना चाहिए।
12. **पारिभाषिक शब्दों में संधि और समास-** कठिन संधियों का यथासंभव कम से कम प्रयोग करना चाहिए और संयुक्त शब्दों के दो शब्दों के बीच हाइफन लगा देना चाहिए। इससे नई शब्द-रचनाओं को सरलता और शीघ्रता से समझने में सहायता मिलेगी। जहाँ तक संस्कृत पर आधारित 'आदिवृद्धि' का संबंध है, 'व्यावहारिक', 'लाक्षणिक', आदि प्रचलित संस्कृत तत्सम शब्दों में आदिवृद्धि का प्रयोग ही अपेक्षित है परंतु नवनिर्मित शब्दों में इससे बचा जा सकता है।
13. **हलंत-** नए अपनाए हुए शब्दों में आवश्यकतानुसार हलंत का प्रयोग करके उन्हें सही रूप में लिखना चाहिए।
14. **पंचम वर्ण का प्रयोग-** पंचम वर्ण के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना चाहिए। परंतु lens, patent, आदि शब्दों का लिप्यंतरण लेंस, पेटेंट न करके, लेन्स, पेटेन्ट या पेटेण्ट ही करना चाहिए।

Principles For Evolution of Terminology Approved By the Commission For Scientific and Technical Terminology

'International terms' should be adopted in their current English forms, as far as possible and transliterated in Hindi and other Indian languages according to their genius. The following should be taken as example of international terms.

(a) Names of elements and compounds, e.g. Hydrogen, Carbon dioxide, etc. ;

(b) Units of weights, measures and physical quantities, e.g. dyne, calorie, ampere, etc.

(c) Terms based on proper names e.g., Marxism (Karl Marx). Braille (Braille), Boycott (Capt. Boycott), Guillotine (Dr. Guillotin, Gerrymander (Mr. Gerry), Ampere (Mr. Ampere), Fahrenheit scale (Mr. Fahrenheit). etc.

(d) Binomial nomenclature in such sciences as Botany, Zoology, Geology etc.;

(e) Constants, e.g., π, g, etc.;

(f) Words like radio, radar, electron, proton, neutron, etc., which have gained practically world-wide usage.

(g) Numerals, symbols, signs and formulae used in mathematics and other sciences e.g., sin, cos, tan, log etc. (Letters used in mathematical operation should be in Roman or Greek alphabets).

2. The symbols will remain in international form written in Roman script, but abbreviations may be written in Nagari and standardised form, specially for common weights and measures, e.g., the symbol 'cm' for centimeter will be used as such in Hindi, but the abbreviation in Nagari may be सें.मी. This will apply to books for children and other popular works only, but in standard works of science and technology, the international symbols only like cm., should be used.

3. Letters of Indian scripts may be used in geometrical figures e.g., क, ख, ग or अ, ब, स but only letters of Roman and Greek alphabets should be used in trigonometrical relations e.g., sin A, cos B etc.

4. Conceptual terms should generally be translated.

5. In the selection of Hindi equivalents simplicity, precision of meaning and easy intelligibility should be borne in mind. Obscuratism and purism may be avoided.

6. The aim should be to achieve maximum possible identity in all India languages by selecting terms.

   (a) common to as many of the regional languages as possible, and

   (b) based on Sanskrit roots.

7. Indigenous terms, which have come into vogue in our languages for certain technical words of common use, as तार for telegraph/telegram, महाद्वीप for continent, डाक for post etc. should retained.

8. Such loan words from English, Portuguese, French, etc., as have gained wide currency in Indian languages should be retained e.g., ticket, signal, pension, police, bureau, restaurant, deluxe etc.

9. **Transliteration of International terms into Devanagari Script-** The transliteration of English terms should not be made so complex as to necessitate the introduction of new signs and symbols in the present Devanagari characters. The Devanagari rendering of English terms should aim at maximum approximation to the standard English pronunciation with such modifications as prevalent amongst the educated circle in India.

10. **Gender**—The International terms adopted in Hindi should be used in the masculine gender, unless there are compelling reasons to the contrary.

11. **Hybrid formation**—Hybrid forms in technical terminologies e.g., गारंटित for 'guaranteed', क्लासिकी for 'classical', कोडकार for 'codifier' etc., are normal and natural linguistic phenomena and such forms may be adopted in practice keeping in view the requirements for technical terminology, viz., simplicity, utility and precision.

12. **Sandhi and Samasa in technical terms**—Complex forms of Sandhi may be avoided and in cases of compound words, hyphen may be placed in between the two terms, because this would enable the users to have an easier and quicker grasp of the word structure of the new terms. As regards आदिवृद्धि in Sanskrit-based words, it would be desirable to use आदिवृद्धि in prevalent sanskrit tatsama words e.g., व्यावहारिक, लाक्षणिक etc. but may be avoided in newly coined words.

13. **Halant**—Newly adopted terms should be correctly rendered with the use the 'hal' wherever necessary.

14. **Use of Pancham Varna**—The use of अनुस्वार may be preferred in place of पंचम वर्ण but in words like 'lens', 'patent', etc., the transliteration should be लेन्स, पेटेन्ट and not लैंस, पेटेंट or पेटेण्ट.

आयोग के अध्यक्ष
Chairman of The Commssion

अध्यक्ष	Chairman
डॉ. दौलत सिंह कोठारी (1961-1965)	Dr. Daulat Singh Kothari (1961-1965)
डॉ. निहालकरण सेठी (1965.1966)	Dr. Nihal Karan Sethi (1965-1966)
डॉ. विश्वनाथ प्रसाद (1966-1967)	Dr. Bishwa Nath Prasad (1966-1967)
डॉ. एस. बालसुब्रह्मणयम् (1967-1968)	Dr. S. Balasubramanyam (1967-1968)
डॉ. बाबूराम सक्सेना (1968-1970)	Dr. Babu Ram Saksena (1968-1970)
डॉ. कृष्ण दयाल भार्गव (1970)	Dr. Krishna Dayal Bhargava (1970)
डॉ. गंटि जोगी सोमयाजी (1970-1971)	Dr. G.J. Somayaji (1970-71)
डॉ. पी. गोपाल शर्मा (1971-1975)	Dr. P. Gopal Sharma (1971-75)
प्रो. हरबंसलाल शर्मा (1975-1980)	Prof. Harbanshlal Sharma (1975-1980)
संयुक्त शिक्षा सलाहकार (1981-1983)	Joint Educational Adviser,(1981-1983)
प्रो. मलिक मोहम्मद (1983-1987)	Prof. Malik Mohammed (1983-1987)
प्रो. सूरजभान सिंह (1988-1994)	Prof. Suraj Bhan Singh (1988-1994)
प्रो. प्रेम स्वरूप सकलानी (1994-1998)	Prof.Prem Swarup Saklani(1994-1998)
डॉ. राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव (1998-2001)	Dr. Rai Avadhesh Kumar Srivastava
डॉ. हरीश कुमार (2001-2003)	Dr. Harish Kumar (2001-2003)
डॉ.पुष्पलता तनेजा (2003-2005)	Dr. Pushpa Lata Taneja (2003-2005)
प्रो. के. बिजय कुमार (2005-2011)	Prof. K. Bijay Kumar (2005-2011)
श्री ए.के.सिंह, आई.ए.एस.,(2011-2012)	Sh. A.K.Singh, I.A.S., (2011-2012)
प्रो. केशरी लाल वर्मा (2012----)	Prof. Keshari Lal Verma, (2012----)

अंक **Aṅka**

1. सौधर्म स्वर्ग का सत्तरहवाँ पटल।
2. इंद्रक विमान।
3. रुचक पर्वतस्थ एक कूट।

अंककूट **Aṅkakūṭa**

मानुषोत्तर एवं कुंडल पर्वतस्थ कूट।

अंकप्रभ **Aṅkaprabha**

कुंडल पर्वत पर स्थित शिखर।

अंकमय **Aṅkamaya**

पद्म सरोवर में स्थित कूट।

अंकुशित **Aṅkuśita**

1. कायोत्सर्ग का एक अतिचार।
2. अंकुश के समान हाथ के अंगूठे को मस्तक पर करके वंदना करने वाला व्यक्ति अंकुशित दोष का भागी होता है।

अंग **Aṅga**

1. त्रिकाल विषयक समस्त द्रव्य-पर्यायों को व्यक्त करने वाला श्रुत।
2. शरीर के शिर व वक्षस्थल, पेट, पीठ, दो हाथ और दो जंघा आदि अंग।

अंगज्ञान **Aṅgajñāna**

अंगशास्त्रों (श्रुतज्ञान) का ज्ञान।

अंगना **Aṅganā**

अपने शरीर के अंग–स्तन, नितंब, जघन, आदि से अनुराग उत्पन्न करने वाली स्त्री।

अंगनिमित्त **Aṅganimitta**

मनुष्य व तिर्यंचों के अंग व उपांगों के स्पर्श से वात आदि धातुओं को देखकर सुख:दुख एवं मरण को जान लेना।

अंग प्रविष्ट **Aṅgapraviṣṭa**

भगवान् अर्हत्-सर्वज्ञ के द्वारा उपदिष्ट अर्थ की आचारादि रूप से की गई ग्रंथ-रचना। अंग प्रविष्ट के बारह भेद हैं।

2—416 Min. of HRD/2014

अंग बाह्य **Aṅgabāhya**

गणधरों के शिष्य-प्रशिष्य आदि आरातीय आचार्यों के द्वारा अल्पबुद्धि शिष्यों के अनुग्रह के लिए की गई अन्य ग्रंथ-रचना अंग बाह्य हैं। ये बारह अंग ग्रंथों के अतिरिक्त हैं।

अंगार **Aṅgāra**

आहार संबंधी एक दोष।

अंगारक **Aṅgāraka**

भरत क्षेत्र का एक देश।

अंगार कर्म **Aṅgāra karma**

अंगार-कोयला उत्पन्न करने के लिए लकड़ी को जलाना अथवा अग्नि के द्वारा सोना-चांदी, लोहा आदि को शुद्ध करना तथा उनके विविध आभरण व उपकरण बनाना।

अंगारजीविका **Aṅgārajīvikā**

भाड़ भूंजकर, ईंट आदि पकाकर तथा कुम्हार, लोहार, सुनार, ठठेरे आदि की आजीविका अन्य के द्वारा करना।

अंगारदोष **Aṅgāradoṣa**

इच्छित भोजन-पान में अति लालसा करना।

अंगारिणी **Aṅgāriṇi**

नमि एवं विनमि को देवियों से प्राप्त विद्याओं में से एक विद्या।

अंगावर्त **Aṅgāvarta**

विजयार्ध पर्वत का दक्षिण श्रेणी का एक नगर।

अंगुल **Aṅgula**

क्षेत्र प्रमाण का एक भेद।

अंगुलीचालन **Aṅgulīcālana**

कायोत्सर्ग का एक अतिचार।

अंगुलिदोष **Aṅgulidoṣa**

कायोत्सर्ग करते समय अंगुलियों से मंत्र-गणना में भूल करना।

अंगोपांगनाम **Aṅgopaṅganāma**

1. नामकर्म का एक भेद। इसके तीन भेद हैं-

औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर और आहारक शरीर।

अंगोपांगनामकर्म **Aṅgopāṅganāmakarma**

जिस नाम कर्म के उदय से शिर, पीठ, उरु, बाहु, उदर, पैर आदि अट्ठारह अंग तथा उसके उपांग–ललाट, नासिकादि की संरचना हो।

अंजन **Aṅjana**

1. सानत्कुमार स्वर्ग का प्रथम पटल।
2. पूर्व विदेहस्थ का एक वक्षार, उसका कूट व रक्षक देव।
3. रुचक पर्वतस्थ एक कूट।

अंजन कूट **Aṅjana kūṭa**

मानुषोत्तर पर्वतस्थ एक कूट।

अंजनगिरि **Aṅjanagiri**

नंदीश्वर द्वीप की पूर्वादि दिशाओं में ढोल के आकार के चार पर्वत।

अंजनमूल **Aṅjanamūla**

चित्रा पृथ्वी की एक पृथ्वी का नाम।

अंजनवर **Aṅjanawara**

मध्यलोक के अंत से बारहवाँ सागर व द्वीप।

अंजनशैल **Aṅjanaśaila**

विदेह क्षेत्रस्थ भद्रशाल वन में एक दिग्गजेन्द्र पर्वत।

अंड **Aṇḍa**

गर्भाशयगत शुक्रशोणित का आवरण करने वाले नख की त्वचा के समान वर्तुलाकार कठिन द्रव्य को अंड कहते हैं।

अंडज **Aṇḍaja**

अंडे से उत्पन्न होने वाले जीव।

अंडर **Aṇḍara**

1. निगोद के स्थूल जीवों का शरीर विशेष।
2. सप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर के अवयव।

अंजलिमुद्रा **Aṅjalimudrā**

हाथों को ऊँचा कर और अंगुलियों को कुछ संकुचित कर दोनों हाथों को बाँधना।

अंतःकरण **Antaḥkaraṇa**

अभ्यंतर करण (मन)।

अंतःकोटाकोटि **Antaḥkoṭākoṭi**

एक करोड़ में एक करोड़ संख्या के गुणनफल से कम संख्या।

अंत **Anta**

अवयव, समीप, समाप्ति, धर्म एवं गणित का अंतिम अंक आदि का वाचक शब्द।

अंतकृत् **Antakṛt**

आठों कर्मों का अंत करके अंतकृत् सिद्धि को प्राप्त त्रिकालवर्ती वस्तु-तत्त्व को प्रत्यक्ष जानने वाले।

अंतकृत् केवली **Antakṛt kevalī**

केवल ज्ञान प्राप्ति के उपरांत अन्तर्मुहूर्त में संसार का अंत करने वाले केवलज्ञानी साधक।

अंतकृद्दशांग **Antakṛtdaśāṅga**

प्रत्येक तीर्थंकर के तीर्थ में होने वाले दश-दश अंतकृत केवलियों का वर्णन करने वाला अंगश्रुत।

अंतरंग क्रिया **Antaraṅga kriyā**

स्व-समय और पर-समय के जानने रूप ज्ञान क्रिया।

अंतर **Antara**

द्रव्य की किसी पूर्व पर्याय के तिरोभाव और आगामी पर्याय की प्राप्ति के बीच का समय।

अंतर (निक्षेप) **Antara (Nikṣepa)**

मध्यावधि में क्षेत्र और काल का अंतर

अंतरकरण **Antarakaraṇa**

विवक्षित कर्मों की अधस्तन और उपरिम स्थितियों को छोड़कर मध्यवर्ती अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थितियों के निषेकों का परिणाम विशेष से अभाव।

अंतरकाल **Antarakāla**

अक्षत वीर्य विशेष वाले द्रव्य का निमित्तवश किसी पर्याय का तिरोभाव होने पर, अन्य निमित्त के अनुसार उसके आविर्भूत होने पर मध्य में लगने वाला काल।

अंतरात्मा **Antarātmā**

जिन वचनों में कुशल, देह और जीव के भेद के ज्ञाता तथा आठ मदों के विजेता।

अंतरात्मा (उत्तम) **Antarātmā (Uttama)**

शुद्ध आत्मा के स्वरूप के साक्षात्कार हेतु साधना में रत तत्त्वज्ञानी साधु।

अंतरात्मा (जघन्य) **Antarātmā (Jaghanya)**

तत्त्व श्रद्धा के साथ अविरत सम्यग्दृष्टि।

अंतरात्मा (मध्यम) **Antarātmā (Madhyama)**

देशव्रत का पालन करने वाले गृहस्थ तथा छठे गुणस्थानवर्ती मुनि।

अंतराय **Antarāya**

ज्ञान का विच्छेद करना, किसी के ज्ञान में बाधा पहुँचाना।

अंतराय (आहार संबंधी) **Antarāya (Āhāra sambandhī)**

दर्शन, स्पर्शन, मन में स्मरण, श्रवण, गंधन तथा रससंबंधी अंतराय।

अंतराय (उपभोग) **Antarāya (Upabhoga)**

उपभोग की इच्छा होने पर भी जिस कर्म के उदय से उपभोग नहीं हो।

अंतराय (क्षेत्र संबंधी) **Antarāya (Kṣetra sambandhī)**

इसका मस्तक काटो, इत्यादि रूप कठोर शब्दों को, हा हा इत्यादि रूप आर्तस्वर वाले शब्दों को और परचक्र के आगमनादि विषयक शब्दों को सुनकर भोजन में होने वाला अंतराय।

अंतराय (दर्शन संबंधी) **Antarāya (Darśana sambandhī)**

चमड़ा, गीली मिट्टी, मद्य, मांस, लोहू तथा पीवादि पदार्थों को देखकर भोजन में होने वाला अंतराय।

अंतराय (मन संबंधी) **Antarāya (Mana sambandhī)**

यह पदार्थ मांस के समान है अर्थात वैसी ही आकृति है, इस प्रकार भक्ष्य पदार्थ में भी मन के द्वारा संकल्प हो जाने पर भोजन में होने वाला अंतराय।

अंतराय (रसना संबंधी) **Antarāya (Rasanā sambahdhī)**

जिस वस्तु का त्याग कर दिया है, उसके भोजन कर लेने पर तथा जिन्हें भोजन से अलग नहीं कर सकते, ऐसे जीवित दो इन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, जीवों का संसर्ग हो जाने पर अथवा मरे हुए जीवों के मिल जाने पर होने वाला अंतराय।

अंतराय (साधु संबंधी) **Antarāya (Sādhu sambandhī)**

भोजन संबंधी अंतराय तीस हैं यथा–

1. **काक**- साधु के चलते समय, खड़े होते समय व खड़े रहते समय कौआ आदि के बीट करने पर भोजन का अंतराय।
2. **अमेध्य**- अशुचि वस्तु से चरण लिप्त हो जाना।
3. **छर्दि**- वमन होना।
4. **रोध**- भोजन पर निषेध करना।
5. **रुधिर**- अपने या दूसरे के लोहू को निकलता देखना।
6. **अश्रुपात**- दुःख से आँसू निकलते देखना।
7. **जात्यंध परामर्श**- पैर के नीचे हाथ से स्पर्श करना।
8. **जानूपरि व्यतिक्रम**- घुटने प्रमाण काठ के ऊपर उलंघ जाना।
9. **नाभ्यधो निर्गमन**- नाभि से नीचा मस्तक कर निकलना।
10. **प्रत्याख्यातसेवना**- त्याग की गई वस्तु का ग्रहण।
11. **जंतुवध**- जीववध होना।
12. **काकादिपिण्डहरण**- कौआ द्वारा ग्रास ले जाना।
13. **पाणितः पिण्डपतन**- पाणिपात्र के पिण्ड का गिर जाना।
14. **उपसर्ग**- देवादिकृत उपसर्ग।
15. **जीव संपात**- दोनों पैरों के बीच में किसी जीव का गिर जाना।
16. **भोजनसंपात**- भोजन देने वाले के हाथ से भोजन गिर जाना।
17. **उच्चार**- अपने उदर से मल निकल जाना।
18. **प्रस्त्रवण**- मूत्रादि निकलना।
19. **अभोज्य गृह प्रवेश**- चांडालादि के घर में प्रवेश करना।
20. **पतन**- मूर्च्छादि से गिर जाना।
21. **उपवेशन**- बैठ जाना।
22. **संदंश**- कुत्ता आदि का काटना।
23. **भूमिस्पर्श**- हाथ से भूमि का छूना।
24. **निष्ठीवन**- कफ आदि मल का फेंकना।
25. **उदरकृमि निर्गमन**- पेट से कृमि का निकलना।
26. **अदत्त ग्रहण**- बिना दिया किंचित् ग्रहण करना।

27. **प्रहार**- अपने व अन्य के तलवार आदि से प्रहार होना।
28. **ग्रामदाह**- ग्राम का जलना।
29. **पादेन किंचित् ग्रहण**- पाँव के द्वारा भूमि से कुछ उठा लेना।
30. **करेण किंचित् ग्रहण**- हाथ द्वारा भूमि से कुछ उठाना।

अंतराय (स्पर्शन संबंधी) **Antarāya (Sparśana sambandhī)**

रजस्वला स्त्री, सूखा चमड़ा, सूखी हड्डी, कुत्ता, बिल्ली आदि का स्पर्श हो जाने पर होने वाला अंतराय।

अंतराय कर्म **Antarāya karmā**

1. ज्ञान आदि की प्राप्ति में बाधक तत्त्व।
2. किसी क्रिया या अनुभव में व्याघात के कारण से दान आदि लब्धियों का फलित न होना।

अंतराय कर्म (बंधयोग्य परिणाम) **Antarāya karma (Bandhayogya pariṇāma)**

ज्ञान प्रतिषेध, सत्कारोपधान, दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य, स्नान, अनुलेपन, गंध, माल्य, आच्छादन, भूषण, शयन, आसन, भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और परिभोग आदि में विघ्न करना, विभव समृद्धि में विस्मय करना, द्रव्य का त्याग न करना, द्रव्य के उपयोग के समर्थन में प्रमाद करना, अवर्णवाद करना, देवता के लिए निवेदित या अनिवेदित द्रव्य का ग्रहण करना, निर्दोष उपकरणों का त्याग, दूसरे की शक्ति का अपहरण, धर्म व्यवच्छेद करना, कुशल चारित्रवाले तपस्वी गुरु तथा चैत्य की पूजा में व्यवधान करना, दीक्षित, कृपण, दीन, अनाथ को दिये जाने वाले वस्त्र, पात्र, आश्रय आदि में विघ्न करना, परनिरोध, बंधन, गुह्य अंगच्छेद, कान, नाक, ओठ आदि का काट देना, प्राणिवध आदि।

अंतराय (दान) **Antarāya (Dāna)**

दान देने में बाधक उदयागत कर्म।

अंतराय (भोग) **Antarāya (Bhoga)**

जिस कर्म के उदय से इच्छित भोगों का भोग न हो।

अंतराय (लाभ) **Antarāya (Lābha)**

जिस कर्म के उदय से वस्तु की प्राप्ति में बाधा उपस्थित हो।

अंतराय (वीर्य) **Antaraya (Vīrya)**

जिस कर्म के उदय से स्वशक्ति प्रकट न हो।

अंतर्द्वीप **Antardvīpa**

सागरों में स्थित छोटे-छोटे भूखंड।

अंतर्मुहूर्त **Antarmuhūrta**

एक समय अधिक आवली से लेकर एक समय कम अंतर्मुहूर्त तक का काल।

अंतर्व्याप्ति **Antarvyāpti**

1. पक्षीकृत ही विषय में साधन की साध्य के साथ व्याप्ति अंतर्व्याप्ति है। जैसे वस्तु अनेकांतात्मक है, क्योंकि अनेकांतात्मक होने पर ही उसकी सत्ता घटित होती है।
2. पक्ष के भीतर ही साध्य के साथ साधन की उपस्थिति होने को अंतर्व्याप्ति कहते हैं।

अंध **Andha**

पाँचवें नरक का चौथा पटल।

अंबर **Ambara**

समस्त विषय कषायरूप व्यवधानों से शून्य परम समाधि।

अंबरीष **Ambarīṣa**

भवनवासी असुर कुमार देवों का एक भेद।

अकथा **Akathā**

अज्ञानी मिथ्यादृष्टि द्रव्य लिंगी साधु। साधु या गृहस्थ के द्वारा नहीं की जाने वाली कथा।

अकंदर्पी **Akandarpī**

कामोद्दीपक वचन न बोलने वाला पुरुष।

अकरणोपशामना **Akarṇopaśāmanā**

करण = क्रिया के बिना की जाने वाली उपशामना। उदाहरणार्थ - जिस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र में बहने वाली नदी में अवस्थित पाषाण आदि में बिना किसी प्रकार के प्रयोग के स्वयमेव गोलाई आदि उत्पन्न हो जाती है, उसी प्रकार संसारी जीवों के अधःप्रवृत्तकरण आदि परिणाम स्वरूप क्रिया विशेष के बिना ही केवल वेदना के अनुभव आदि कारणों से होने वाला कर्मों का उपशमन।

अकर्मबंध **Akarmabandha**

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय, योग आदि कारणों से अकर्मरूप से स्थित प्रदेशों का परस्पर प्रवेश होना।

अकर्मभूमि **Akarmabhūmi**

जिस भूमि में कृषि आदि कर्मरहित कल्पवृक्षों के फलों में उपभोग की प्रधानता हो।

अकर्मभूमिक **Akarmabhūmika**

भोगभूमि में उत्पन्न न होने वाले देव और नारकी।

अकर्मोदय **Akarmodaya**

अपकर्षण के वश उदय को प्राप्त हुए कर्मस्कंध का नाम।

अकल्प्य **Akalpya**

साधु के लिए अकल्प्य (अग्राह्य), अपात्र दाता के द्वारा लाये गए उपधि, शय्या व आहार आदि का उपभोग।

अकषाय **Akaṣāya**

समस्त क्रोधादि कषायों का अभाव।

अकषायत्व **Akaṣāyatva**

चारित्र मोहनीय कर्म के उपशम अथवा क्षय से उत्पन्न लब्धि विशेष।

अकषायवेदनीय **Akaṣāyavedanīya**

चारित्रमोहनीय कर्म का अल्प कषाय रूप से वेदन होना।

अकस्माद् भय **Akasmād bhaya**

बाह्य निमित्तों से सहसा भय उत्पन्न होना।

अकाम निर्जरा **Akāma nirjarā**

बिना किसी कामना के भूख, प्यास, शयन आदि के दुख को संयम-साधना में सहन करते हुए ईषत् कर्म की निर्जरा करना।

अकाम मरण **Akāma maraṇa**

बिना किसी आकांक्षा के मरण को सहज रूप में स्वीकार करना।

अकायिक **Akāyika**

बादर और सूक्ष्म शरीर से रहित हो जाना। जैसे-सिद्ध परमेष्ठी।

अकारण दोष **Akāraṇa doṣa**

तप, स्वाध्याय व वैयावृत्ति आदि छह कारणों के बिना बल और वीर्य आदि की वृद्धि के लिए सरस (पुष्टिदायक) आहार करना।

अकार्यकारण शक्ति **Akārya kāraṇa śakti**

अन्य से न करने योग्य और अन्य का कारण नहीं, ऐसा एक द्रव्य।

अकालमृत्यु **Akālamṛtyu**

असमय में ही प्राणों का नाश होना।

अकालाध्ययन **Akālādhyayana**

सम्यग्ज्ञान का एक दोष।

अकालुष्य **Akāluṣya**

क्रोध, मान, माया और लोभ कषाय का मन्द उदय होने पर चित्त का निर्मल होना।

अकिंचनता **Akiṁcanatā**

1. समस्त परिग्रह का त्याग।
2. 'मेरा कुछ भी नहीं है', ऐसा भाव।
3. शरीरादि के संस्कारों की निवृत्ति के लिए 'ये मेरा हैं' इस प्रकार के अभिप्राय की निवृत्ति।

अकिंचित्कर **Akiṁcitkara**

1. प्रत्यक्षादि की प्रतीति का निराकरण करने वाला हेतु।
2. अप्रयोजक हेतु।

अकिंचित्कर हेत्वाभास **Akiṁcitkara hetvābhāsa**

साध्य के स्वयं सिद्धि होने पर अथवा प्रत्यक्षादि से बाधित होने पर उस साध्य की सिद्धि के लिए किया जाने वाले हेतु का प्रयोग।

अकिंचित्कर हेत्वाभास (सिद्धसाधन) **Akiṁcitkara hetvābhāsa (Siddha sadhana)**

पूर्व से ही सिद्ध विषय का साधन करना।

अकुशल **Akuśala**

दुःख देने वाला अविरति आदि रूप पाप कर्म।

अकुशलमनोनिरोध **Akuśalamanonirodha**

आर्तध्यान आदि से युक्त मन का निग्रह करना।

अकृतप्राग्भार **Akṛtaprāgbhāra**

सूना घर, पर्वत की गुफा, वृक्ष का मूल, आगंतुकों का घर आदि का संयमी द्वारा उपयोग।

अकृतयोगी **Akṛtayogī**

अकृतयोगी = अगीतार्थ। तीन बार घरों में घूमने पर भी यदि कल्प्य और एषणीय आहार नहीं प्राप्त होता है तो चौथी बार अकल्प्य और अनेषणीय आहार लेने वाला साधु।

अकृतसमुद्घात **Akṛta samudghāta**

जिनके नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मों की स्थिति आयुकर्म के समान होती है, ऐसे छह माह की आयु शेष रहने वाले केवलज्ञानी।

अक्रमानेकांत **Akramānekānta**

ज्ञान, सुख आदि अनेक अक्रमिक धर्मों की अपेक्षा से वस्तु-स्वरूप का कथन।

अक्रियावाद **Akriyāvāda**

क्रिया का अभाव मानकर पुरुषार्थ के सिद्धांत को नहीं मानना। इसके चौवन भेद हैं।

अक्रियावादी **Akriyāvādī**

पदार्थ में क्षणिकता के कारण क्रिया के अस्तित्व को न मानने वाला।

अक्ष **Akṣa**

यथायोग्य समस्त पदार्थों को जानने वाला, भोगने वाला या पालने वाला आत्मा।

अक्षताचार **Akṣatācāra**

साधु के द्वारा अपने निमित्त बनाये गये दोषयुक्त अशन-पान आदि का त्याग करना।

अक्षम्रक्षणवृत्ति **Akṣamrakṣaṇavṛtti**

निर्दोष भिक्षारूपी वृत्ति के माध्यम से साधु द्वारा क्रमशः समाधि अवस्था को प्राप्त होना।

अक्षयराशि **Akṣayarāśi**

व्यय के होते हुए भी कभी क्षय नहीं होने वाली राशि। जैसे-भव्य जीव राशि।

अक्षर **Akṣara**

1. द्रव्य अविनाशी होने से अक्षर है। क्षरण न होने से केवलज्ञान भी अक्षर है। अक्षर के तीन भेद हैं-

(i) लब्ध्यक्षर, (ii) निर्वृत्त्यक्षर, (iii) संस्थानाक्षर

2. निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीव का हानि रहित सूक्ष्म ज्ञान और हानि-वृद्धि से रहित केवलज्ञान।

अक्षर (बीज) **Akṣara (Bīja)**

संक्षिप्त शब्दरचना सहित एवं अनंत अर्थों के हेतुभूत अनेक चिह्नों से युक्त बीजपद।

अक्षर (लब्धि) **Akṣara (Labdhi)**

सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्याप्तक से लेकर श्रुतकेवली तक के जीवों का क्षयोपशम ज्ञान।

अक्षर (स्थापना) **Akṣara (Sthāpanā)**

पुस्तक आदि पर निजदेश की प्रवृत्ति के अनुसार अकारादि आकार का लिखना।

अक्षरगता **Akṣaragatā**

पूर्ण इंद्रिय वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय पयाप्त जीवों की भाषा।

अक्षरज्ञान **Akṣarajñāna**

पर्यायसमास श्रुतज्ञान के अंतिम स्थान में समस्त जीव राशि का भाग देने पर जो लब्ध आये उसी का प्रक्षेप होने पर उत्पन्न ज्ञान।

अक्षर महानिमित्त **Akṣaramahānimitta**

रवि, शशि, ग्रह, नक्षत्र और तारा आदि के उदय-अस्त आदि की अवस्था को देखकर अतीत और अनागत फल के विभाग को दिखलाना।

अक्षरश्रुतज्ञान **Akṣaraśrutajñāna**

पर्याय समास श्रुतज्ञान के अपश्चिम विकल्प को अनंत रूपों से गुणित करने पर अक्षर नामक श्रुतज्ञान होता है।

अक्षर संयोग **Akṣarasaṃyoga**

किसी एक अर्थ को प्रगट करने वाले संयुक्त अक्षर।

अक्षरसमास **Akṣarasamāsa**

अक्षरज्ञान के ऊपर द्वितीय अक्षर की वृद्धि होने पर अक्षरसमास का प्रथम

विकल्प होता है। इस प्रकार संख्यात अक्षरों की वृद्धि होने पर अक्षरसमास श्रुतज्ञान के द्वितीय, तृतीय आदि विकल्प चलते रहते हैं। इसी की अक्षरसमास संज्ञा होती है।

अक्षर (निर्वृत्ति) **Akṣara (Nirvṛtti)**

जीवों के मुख से निकले हुए शब्द।

अक्षरसमासावरणीय **Akṣarasamāsāvaraṇīya**

अक्षरसमास ज्ञान को रोकने वाला कर्म।

अक्षरात्मक **Akṣarātmaka**

संस्कृत, प्राकृत आदि रूप समस्त जनों की भाषा का कारण रूप शब्द।

अक्षरात्मकश्रुतज्ञान **Akṣarātmaka śrutajñāna**

वाच्य-वाचक संबंध के संकेत से योजनापूर्वक उत्पन्न श्रुतज्ञान।

अक्षरावरणीय **Akṣarāvaraṇīya**

अक्षर श्रुतज्ञान का आवरणीय कर्म।

अक्षरीकृत शब्द **Akṣarīkṛta śabda**

संस्कृत तथा प्राकृत आदि भाषाओं के भेद से समस्त जनों के व्यवहार का कारणभूत शास्त्र का अभिव्यंजक शब्द।

अक्ष संचार **Akṣa saṁcāra**

गणित संबंधी एक प्रक्रिया।

अक्षिप्र **Akṣipra**

1. नवीन सकोरे के ऊपर छिड़के हुए जल के समान पदार्थों का धीरे-धीरे होने वाला ज्ञान ।
2. अवग्रह का एक भेद।

अक्षीणमहानस **Akṣīṇamahānasa**

लाभान्तराय कर्म के प्रकर्ष क्षयोपशम से यतियों के आहार के बाद रसोईशाला में पूरी सेना को भोजन कराने पर भी उस दिन अन्न का क्षीण न होना। ऐसे आहार लेने वाले मुनि अक्षीण महानस ऋद्धिधारी कहलाते हैं।

अक्षीणमहानसिक **Akṣīṇamahānasika**

अक्षीणमहानस ऋद्धि के धारक मुनि के द्वारा लायी गई भिक्षा अन्य बहुतों के द्वारा भोजन कर लेने पर भी समाप्त नहीं होती, किन्तु उस मुनि के भोजन करते

ही समाप्त होती है। इस ऋद्धि के धारक साधु को अक्षीणमहानसिक कहा जाता है।

अक्षीणमहालय **Akṣīṇamahālaya**

अक्षीण महालय लब्धि के प्राप्त हुए यति जहाँ पर रहते हैं वहाँ पर यदि समस्त देव, मनुष्य और तिर्यंच निवास करें तो परस्पर बाधा न पहुँचाते हुए वे सुखपूर्वक रहते हैं, इस प्रकार की ऋद्धि का नाम अक्षीण महालय ऋद्धि है।

अक्षीणावास **Akṣiṇāvāsa**

जिस महर्षि के चार हाथ प्रमाण गुफा में ठहरने पर उस गुफा में चक्रवर्ती की पूरी छावनी ठहर सकती है, उसे अक्षीणावास ऋद्धि का धारक कहते हैं।

अगति **Agati**

गति कर्मोदय का अभाव या सिद्धगति।

अगमिकश्रुत Agamikaśruta

सदृश पाठ वाले ग्रंथ गमिकश्रुत हैं और गाथा आदि से असमान ग्रंथों को अगमिकश्रुत कहते हैं। जैसे-आचारांग ग्रंथ इत्यादि।

अगाढ **Agāḍha**

अस्थिर श्रद्धान को अगाढ कहते हैं। यह सम्यक्त्व का एक दोष है।

अगारी **Agārī**

आरंभ और परिग्रह रूप अगार (गृह) से ममत्त्व रखने वाला गृहस्थ।

अगीतार्थ **Agītārtha**

छेद नामक श्रुत (प्रायश्चित्त शास्त्र) के अर्थ को ग्रहण न करने वाला अथवा ग्रहण किये हुए को भूल जाने वाला साधु ।

अगुणप्रतिपन्न **Aguṇapratipanna**

पूर्ण गुण (संयम) को अप्राप्त असंयत साधक।

अगुणोपशामना **Aguṇopaśāmanā**

उदयादि करणों में से कुछ का शांत हो जाना और कुछ का उपशांत बने रहना। इसका अपर नाम देश करणोपशामना है।

अगुप्तिभय **Agupti bhaya**

दुर्ग आदि छिपने योग्य स्थान न होने पर अरक्षा का भाव होना। दर्शनमोहनीय कर्म के कारण एकांतवादिनी बुद्धि से अगुप्तिभय होता है।

अगुरुलघु **Agurulaghu**

1. जिसमें गुरु और लघु न हो ऐसे गुण का नाम अगुरुलघु है। वचन का अगुरुलघुता गुण उसकी सूक्ष्मता है और जीव का अगुरुलघुता गुण उसका मध्य में स्थित रहना है।
2. अगुरुलघुता अनंत होते हैं। प्रत्येक षट्स्थानपतित हानि-वृद्धि रूप अनंत अविभागी प्रतिच्छेद अगुरुलघुगुण है।

अगुरुलघुता **Agurulaghutā**

वचन की अगोचर सूक्ष्मता।

अगुरुलघुनामकर्म **Agurulaghunāmakarma**

वह नामकर्म, जिस कर्म के उदय से जीव का न तो गुरु और न लघु शरीर हो।

अगृहीतग्रहणाद्धा **Agṛhītagrahaṇāddhā**

अर्पित (विवक्षित) पुद्गल परिवर्तन के भीतर अगृहीत पुद्गलों के ग्रहण का काल।

अगृहीतमिथ्यात्व **Agṛhītamithyātva**

घोर अज्ञान में पड़े हुए एकेंद्रिय आदि जीवों का अतत्त्व श्रद्धान-रूप परिणाम।

अग्नि **Agni**

विद्युत, उल्का और वज्र आदि के संघर्ष से समुत्थित तथा सूर्य और सूर्यकांतमणि के संयोग से उत्पन्न दाहक वस्तु।

अग्निकाय **Agnikāya**

अग्निकायिक जीव के द्वारा परित्यक्त काय, जैसे-मृत मनुष्य आदि का निर्जीव शरीर मनुष्यकाय आदि कहलाता है।

अग्निकायिक **Agnikāyika**

अग्निकायिक नाम कर्म के उदय से उत्पन्न स्थावर जीव।

अग्निकायिकस्थिति **Agnikāyikasthiti**

अन्य पर्याय से अग्निकायिक जीवों में उत्पन्न होने के प्रथम समय से लेकर उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण काल तक उदय काल।

अग्निकुमार **Agnikumāra**

समस्त शरीरावयवों में मान व उन्मान के प्रमाण से सम्पन्न होते हुए विविध आभरणों से अलंकृत, तपे हुए स्वर्ण के समान वर्ण वाले और घट चिह्न से उपलक्षित देव विशेष।

अग्निजीव **Agnijīva**

पृथिवीकाय नाम कर्म के उदय को प्राप्त, कार्मण काय योग में स्थित जीव जब तक अग्नि को कायरूप से नहीं ग्रहण करता है, तब तक वह अग्निजीव कहलाता है।

अग्निदेव **Agni deva**

1. भूतकालीन ग्यारहवें तीर्थंकर।
2. लोकपालों के भेद रूप अग्नि।
3. अनलकायिक आकाशोपपन्न देव।
4. अग्न्याभ जाति के लोकांतिक देव।
5. अग्निज्वाल नामक ग्रह।
6. अग्निकुमार नामक भवनवासी देव।
7. अग्निरुद्ध नाम का असुरकुमार देव।

अग्र **Agra**

अंगों का अग्र भाग।

अग्रायणी **Agrayaṇī**

अंगों के अग्र अर्थात् प्रधानभूत पदार्थों का वर्णन करने वाला पूर्व ग्रंथ।

अचक्षुदर्शन **Acakṣudarśana**

चक्षु-इंद्रिय के अतिरिक्त अन्य शेष चार इन्द्रियों और मन के द्वारा होने वाला सामान्य अनुभव या अवलोकन।

अचक्षुदर्शनावरण **Acakṣudarśanāvaraṇa**

अचक्षुदर्शन का आवरण करने वाला कर्म।

अचक्षुस्पर्श **Acakṣusparśa**

चक्षु इंद्रिय के अतिरिक्त अन्य इंद्रियों के द्वारा स्थूल परिणाम वाले द्रव्य को ग्रहण करना।

अचरमसमय-सयोगिभवस्थ-केवलज्ञान **Acaramasamaya sayogibhavastha kevalajñāna**

सयोग केवली के अंतिम समय से पूर्ववर्ती शेष समयों में वर्तमान केवल ज्ञान।

अचलात्म **Acalātma**

काल का प्रमाणविशेष।

अचलावली **Acalāvalī**

काल का प्रमाण विशेष।

अचित्त **Acitta**

चैतन्य विशेष परिणाम से रहित पदार्थ।

अचित्तकाल **Acittakāla**

अत्यधिक शीत, उष्ण, वर्षा, धूलि आदि के निमित्त से युक्त काल।

अचित्तद्रव्यपूजा **Acittadravyapūjā**

जिनदेवादि के अचित्त-पौद्गलिक-जड़ शरीर की और द्रव्यश्रुत की पूजा।

अचित्तमंगल **Acittamaṅgala**

कृत्रिम एवं अकृत्रिम चैत्यालय आदि।

अचित्त योनि **Acitta Yoni**

देव-नारकी के उपपाद देश के पुद्गल प्रचयरूप योनि।

अचित्तयोनिक **Acittayonika**

अचित्त उपपाद स्थान पर उत्पन्न होने वाले देव व नारकी।

अचेतन **Acetana**

1. प्राणों का अभाव।
2. जीवादि के स्वभाव को नहीं जान सकना।

अचेद्य **Acedya**

एक प्रकार का वसति का दोष

अचेलकत्व **Acelakatva**

जिसके वस्त्र नहीं हैं, वह साधु अचेलक है। अचेलक का भाव-वस्त्राभूषणादि परिग्रह का त्याग।

अचौर्यमहाव्रत **Acauryamahāvrata**

ग्राम, नगर, वन आदि किसी भी स्थान पर किसी के रखे, भूले या गिरे हुए द्रव्य के ग्रहण करने की इच्छा नहीं करना।

अचौर्याणुव्रत **Acauryāṇuvrata**

किसी के रखे हुए, गिरे हुए या भूले द्रव्य को न स्वयं ग्रहण करना और न दूसरे को देना, यह स्थूल चोरी के त्याग स्वरूप तीसरा अचौर्याणुव्रत है।

3—416 Min. of HRD/2014

अच्छेज्ज **Acchejja**

एक प्रकार का वसति का दोष।

अच्युता **Acyutā**

एक प्रकार की विद्या।

अजीव **Ajīva**

चेतना एवं ज्ञान गुण से रहित द्रव्य।

अजीवकाय **Ajīvakāya**

जो द्रव्य अजीव भी हैं और काय भी हैं वे अजीवकाय हैं, जैसे–धर्म, अधर्म, आकाश और पुद्गल।

अजीवबंध **Ajīvabandha**

अचेतन का अचेतन द्रव्य के साथ बंध, जैसे - लाख व काष्ठ आदि का बंध।

अजीवविचयधर्मध्यान **Ajīvavicayadharmadhyāna**

पुद्गल, धर्म और अधर्म आदि अचेतन द्रव्यों के अनंत पर्यायात्मक स्वभाव का चिंतन करना।

अज्ञान **Ajñāna**

1. ज्ञानावरण कर्म के उदय से पदार्थ का बोध नहीं होना अज्ञान है। मिथ्यात्व के कारण विद्यमान ज्ञान भी अज्ञान है, जैसे - मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान और विभंग।
2. ज्ञान का अभाव या कमी।
3. मिथ्याज्ञान।

अज्ञान (अतिचार) **Ajñāna (Aticāra)**

अज्ञ जीवों का आचरण देखकर स्वयं भी वैसा आचरण करना, उसमें क्या दोष हैं इसका ज्ञान न होना अथवा अज्ञानी के लाये उद्गमादि दोषों सहित उपकरण आदि का सेवन करना।

अज्ञान (औदयिक) **Ajñāna (Audayika)**

ज्ञानावरण कर्म के उदय से होने वाला अज्ञान।

अज्ञान (क्षायोपशामिक) **Ajñāna(kṣāyopaśamika)**

कर्म के क्षयोपशम से होनेवाला अज्ञान।

अज्ञानपरीषहजय **Ajñānaparīṣahajaya**

अज्ञानता के कारण यह अज्ञ है, यह पशु है, इत्यादि तिरस्कारपूर्ण वचनों को सहते और परम दुश्चर तपश्चरण को करते हुए भी विशिष्ट ज्ञान के उत्पन्न न होने पर उसके लिए संक्लेश नहीं करना।

अज्ञानमिथ्यात्व **Ajñānamithyātva**

विचार करने पर जीव-अजीव आदि पदार्थ न नित्य सिद्ध होते हैं और न अनित्य ही सिद्ध होते हैं, इसलिए सब अज्ञान ही है, ऐसा अभिनिवेश।

अज्ञानवाद **Ajñānavāda**

वस्तु को पूर्ण रूप से नहीं जाना जा सकता है, अतः शुद्ध पदार्थ नहीं है–इस प्रकार का अज्ञान धारण करने वालों का मत।

अट्ट **Aṭṭa**

चौरासी लाख अट्टांगों का एक अट्ट होता है।

अट्टांग **Aṭṭaṅga**

चौरासी त्रुटितों का एक अट्टांग होता है।

अढाई द्वीप **Aḍhāī dvīpa**

जम्बू द्वीप धातकी खण्ड और पुष्कर द्वीप का अंदरवाला आधा भाग। मनुष्य का निवास एवं गमनागमन इसी के अंदर होता है। अतः यह मनुष्य लोक भी कहलाता है।

अणिमा **Aṇimā**

अत्यंत सूक्ष्म शरीर रूप विक्रिया करने को अणिमा ऋद्धि कहते हैं। इस ऋद्धि का धारक साधु कमलनाल में प्रवेश करके उसके प्रभाव से वहाँ पर चक्रवर्ती के परिवार व विभूति की भी रचना कर सकता है।

अणुव्रत **Aṇuvrata**

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पापों का स्थूल रूप से त्याग।

अतत्त्वशक्ति **Atattva śakti**

तत् स्वरूप न होने की शक्ति।

अतिक्रम **Atikrama**

1. स्वीकृत प्रमाण का उल्लंघन करना अतिक्रम है। दिग्व्रत में जो दिशाओं का प्रमाण स्वीकार किया गया है, उसका उल्लंघन करना इत्यादि।

2. मानसिक शुद्धि का अभाव भी अतिक्रम है।

अतिचार **Aticāra**

1. चारित्र संबंधी स्खलनों (विराधना) का नाम अतिचार है।
2. व्रत में असंयम (शिथिलता) का सेवन अतिचार है।

अतिथि **Atithi**

संयम की पालना हेतु तिथि-पर्व आदि का विचार न कर गमन की प्रवृत्ति करना अतिथि है। आहार आदि के लिए साधु की चर्या अतिथिचर्या है।

अतिथिसंविभाग **Atithisaṃvibhāga**

श्रद्धालु श्रावक के द्वारा संयत जनों को उत्तम आहार, औषधि आदि चार प्रकार का दान देना अतिथिसंविभाग है।

अतिप्रसंग **Atiprasaṅga**

वचन का विलासमात्र, अतिगौरव।

अतिव्याप्तिदोष **Ativyāptidoṣa**

लक्ष्य में और अलक्ष्य में लक्षण के रहने को अतिव्याप्ति दोष कहते हैं।

अतींद्रिय प्रत्यक्ष **Atīndriya pratyakṣa**

लोक में उत्कृष्ट निश्चय स्वरूप आत्मज्ञान अतींद्रिय प्रत्यक्ष है, जो अतिशय निर्मल, यथार्थ, इन्द्रिय-व्यापार से निरपेक्ष, देशादि व्यवहार से रहित तथा निज को एवं बाह्य अर्थ दोनों को ही विषय करने वाला है।

अतींद्रिय सुख **Atīndriya sukha**

इंद्रिय व मन की अपेक्षा न रखकर आत्मा मात्र की अपेक्षा से होने वाला निराकुल सुख।

अतीर्थंकरसिद्ध **Atīrthaṅkara siddha**

सामान्य केवली होकर सिद्ध होने वाले जीव।

अथालंद **Athālanda**

सल्लेखना की एक विधि।

अदंतधोवन **Adantadhovana**

1. जैन मुनि के अट्ठाईस मूलगुणों में एक मूलगुण।
2. जैन मुनि का दांतों को साफ न करना।

अदत्तादान **Adattādāna**

स्वामी की आज्ञा के बिना पराई वस्तु को लेना।

अदत्तादान विरति **Adattādāna virati**

बिना दी हुई वस्तु का त्याग। इसे अदत्तादान विरमण भी कहते हैं।

अदर्शनपरीषह **Adarśanaparīṣaha**

समस्त पाप-स्थानों से विरत, घोर तपश्चरण करने वाला और समस्त परिग्रह से रहित साधु जब धर्म-अधर्म स्वरूप देवभाव व नारकभाव को नहीं देखता है तब वह अदर्शनपरिषह है।

अदृष्ट दोष **Adṛṣta doṣa**

गुरु की दृष्टि से ओझल होकर अथवा पिच्छी से प्रतिलेखना न कर वंदना करना।

अदेव **Adeva**

वीतरागता, सर्वज्ञता और प्रामाणिकता से रहित देव।

अद्धा **Addhā**

काल की अवधि।

अद्धा असंक्षेप **Addha asaṁkṣepa**

सबसे छोटा कालखंड।

अद्धाच्छेद **Addhāccheda**

अंतिम निषेक का काल।

अद्धानशन **Addhānaśana**

उपवास का नियमित काल, एक दिन से लेकर छह मास पर्यंत।

अद्धापल्य **Addhāpalya**

उद्धारपल्य के प्रत्येक रोम खंड को सौ वर्षों के समयों से गुणित करके उनसे परिपूर्ण गड्ढे को अद्धापल्य कहते हैं।

अद्धायु **Addhāyu**

अनादि काल से अनंत काल तक चलने वाला आयु का एक भेद।

अद्धासागर **Addhāsāgara**

दस कोड़ा-कोड़ी अद्धा पल्य।

अद्वैत **Advaita**

एक रूपता, दो का अभाव।

अधःकरण **Adhahkaraṇa**

करण लब्धि का एक भेद, जिसमें ऊपर के समयवर्ती जीवों के परिणाम नीचे के समयवर्ती जीवों के परिणामों - अर्थात् संख्या और विशुद्धि की अपेक्षा समान होते हैं।

अधःप्रवृत्तकरण **Adhaḥpravṛttakaraṇa**

1. अधस्तन समयवर्ती परिणामों की अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती साधक के उपरितन समयवर्ती परिणामों के साथ कदाचित् समानता।
2. अपरनाम अथाप्रवृत्तकरण।

अधर्म **Adharma**

1. मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योगरूप कर्मबंध का कारणभूत आत्मपरिणाम अधर्म है।
2. सकल दुःख का कारण अधर्म है।
3. जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस् की सिद्धि न हो वह भाव या कार्य अधर्म है।

अधर्मद्रव्य **Adharmadravya**

स्थिति स्वभाव में परिणत जीव और पुद्गल द्रव्यों के ठहरने में सहायक द्रव्य।

अधाकर्म **Adhākarma**

1. उपद्रावण, विद्रावण, परितापन और आरंभ; इन कार्यों से उत्पन्न – उनके आश्रय भूत औदारिक शरीर।
2. षट्काय के जीवों को बाधा पहुँचाकर स्वयं आहार-पान, वसति आदि का उपयोग करना साधु के लिए अधाकर्म है।

अधिकरणक्रिया **Adhikaraṇakriyā**

हिंसा के उपकरणों को ग्रहण करना।

अधोलोक **Adholoka**

नरक लोक का निचला भाग, जहाँ सात राजू में सात नरक विद्यमान हैं।

अधोलोक सिद्ध **Adholoka siddha**

अधोलोक अर्थात् सम भूमि भाग के नीचे से मुक्त हुए जीव।

अधोव्यतिक्रम **Adhovyatikrama**

दिग्व्रत का एक अतिचार। अज्ञान एवं प्रमाद से कुआं, बावड़ी आदि नीचे स्थानों में जाने हेतु की गई मर्यादा का उल्लंघन।

अध्ययन **Adhyayana**

धार्मिक अथवा लौकिक शास्त्रों को विनय आदि गुणों सहित पढ़ना।

अध्ययन कुशल साधु **Adhyayana kuśala sādhu**

साधु के द्वारा स्वाध्याय करके दो कोश गमन करना और जहाँ आहार मिले, ऐसी वसतिका में जाकर ठहरना।

अध्यवसान **Adhyavasāna**

स्व और पर का ज्ञान न होने से निश्चय न होना।

अध्यवसाय **Adhyavasāya**

वे अभिप्राय, परिणाम, या कषायभाव, जिनसे कर्मों में स्थिति एवं अनुभाग पड़ता है।

अध्यवसाय स्थान **Adhyavasāya sthāna**

कर्मों के बंध के फलस्वरूप प्राप्त हुआ स्थान।

अध्यात्म **Adhyātma**

आत्मा को आधार बनाकर शुद्ध संयम की चर्या।

अध्यात्म पद्धति **Adhyātma paddhati**

आत्म-स्वरूप को जानने की शैली।

अध्यात्मभाषा **Adhyātma bhāṣā**

शुद्ध भाव की भावना का कथन।

अध्यात्मरति **Adhyātmarati**

आत्मा में रत होना।

अध्यात्मशास्त्र **Adhyātmaśāstra**

अभेद रत्नत्रय की मुख्यता से आत्मस्वरूप का व्याख्यान करने वाला शास्त्र, जैसे समयसार, समाधिशतक आदि।

अध्यात्म-स्थान **Adhyātma sthāna**

विशुद्ध आत्म-तत्त्व को प्राप्त करने का स्थान।

अध्यास **Adhyāsa**

मिथ्यारोपण करना।

अध्रुव कर्म प्रकृति **Adhruva Karmaprakṛti**

एक सौ अड़तालीस कर्म प्रकृतियों में तिहत्तर कर्म प्रकृतियाँ जिनका बंध निरंतर नहीं होता।

अध्रुव बंध **Adhruva bandha**

बंध का निरंतर न होना।

अध्वगत **Adhvagata**

प्रत्याख्यान का एक भेद।

अध्वर **Adhvara**

पूजा के अर्थ में प्रयुक्त शब्द।

अध्वा **Adhvā**

द्वीप-सागरों की एक दिशा का विस्तार, जिसे दुगुना करने पर रज्जू का प्रमाण निकले।

अध्वान **Adhvāna**

आकाश, अंतरिक्ष, नक्षत्र आदि का मार्ग।

अध्रुवानुप्रेक्षा **Adhruvānuprekṣā**

लोक की नश्वरता और सांसारिक ऋद्धियों की अस्थिरता का चिंतन करना।

अध्रुवावग्रह **Adhruvāvagraha**

कभी बहुत, कभी अल्प अथवा कभी बहुत प्रकार के पदार्थों का तो कभी एक ही प्रकार के पदार्थ का हीनाधिक रूप से अवग्रह होना।

अनंगक्रीडा **Anaṅgakrīḍā**

काम-सेवन के अंग (प्रजनन और योनि) से भिन्न अंगों से काम-क्रीड़ा करना।

अनंगप्रविष्ट **Anaṅgapraviṣṭa**

स्थविरों — भद्रबाहु आदि आचार्यों द्वारा रचित आगम साहित्य। जैसे—आवश्यक निर्युक्ति आदि।

अनंत **Anaṅta**

1. आय रहित और निरंतर व्यय सहित होने पर भी जो राशि कभी समाप्त न हो।

2. जो राशि एक मात्र केवलज्ञान का ही विषय हो।

अनंतकाय **Anaṅtakāya**

जिन अनंत जीवों का एक साधारण शरीर हो तथा जो अपने मूल शरीर से छिन्न-भिन्न होने पर भी पुनः उत्पन्न हो जायें, ऐसे स्नुही (थूवर), गुडूची (गुरबेल) आदि।

अनंतकायिक **Anaṅta kāyika**

अनंत जीवों से उपलक्षित, मूल, अग्र एवं पोर आदि से उत्पन्न होने वाले वनस्पतिकायिक जीव।

अनंतगुण हानि **Anantaguṇa hāni**

अगुरुलघु गुण की छह हानि रूप पर्यायों में एक पर्याय

अनंत जीव **Ananta jīva**

अदृश्य सिराओं और संधियों से युक्त पत्र (पत्ता) अनंत जीव (अनंतकाय) हैं। उसके मूल को तोड़ने पर चक्र-आकार भंग होता है तथा गांठ के भंग होने पर पपड़ी जैसा चूर्ण उड़ता है।

अनंत ज्ञान **Anantajñāna**

केवलज्ञान।

अनंत द्रव्य **Ananta dravya**

लोकाकाश में पाये जाने वाले समस्त द्रव्य।

अनंतधर्म **Anantadharma**

जीव द्रव्य या किसी भी वस्तु में पाये जाने वाले अनंत गुण।

अनंतधर्मत्व शक्ति **Anantadharmatva śakti**

परस्पर भिन्न लक्षण स्वरूप अनंत स्वभावों से मिला हुआ एक भाव।

अनंत धर्मात्मक **Anantadharmātmaka**

जिसमें अनेक गुण एवं पर्याय पाये जाएं वह द्रव्य।

अनंतपर्यायमयत्व **Anantaparyāyamayatva**

द्रव्य के एक गुण द्वारा उसमें होने वाला अनंत पर्याय रूप परिणमन।

अनंतभाग हानि **Anantabhāga hāni**

अगुरुलघुगुण की स्वभाव अर्थपर्यायों में छह हानि रूप पर्यायों में से एक पर्याय।

अनंतभाव **Anantabhāva**

किसी संख्या में अनंत का भाग देने पर आनेवाली राशि।

अनंतर क्षेत्र स्पर्श **Anantara kṣetra sparśa**

1. एक आकाश प्रदेश में स्थित अनंत पुद्गल स्कंधों का संयोग संबंध द्वारा स्पर्श होना।
2. द्रव्य का अनंतर द्रव्य के साथ स्पर्श।

अनंतर गति सिद्ध **Anantaragati siddha**

केवल मनुष्य गति से ही सिद्ध होना।

अनंतरबंध **Anantara baṅdha**

कार्मण वर्गणा रूप में स्थित पुद्गल स्कंधों का मिथ्यात्वादिक प्रत्ययों द्वारा कर्म स्वरूप से परिणत होने के प्रथम समय में होने वाला बंध।

अनंतरागम **Anantarāgama**

तीर्थंकरों के मुख से निकली दिव्यध्वनि।

अनंतरोपनिधा **Anantaropanidhā**

जहाँ पर निरंतर अल्पबहुत्व की परीक्षा की जाए।

अनंत वर्ग **Anantavarga**

अनंत का अनंत में गुणा।

अनंतविज्ञान **Anantavijñāna**

केवलज्ञान।

अनंत वियोजक **Anantaviyojaka**

जो अनंतगुणा खंडित हो जाए।

अनंत वृद्धि **Ananta vṛddhi**

अगुरुलघुगुण के अविभाग प्रतिच्छेदों की छह वृद्धि रूप प्रतिसमय परिणमन होने वाली अर्थ पर्यायों में एक पर्याय।

अनंतसंसारी **Ananta saṇsārī**

जो गुरु के प्रतिकूल, बहुमोही, हीन आचार वाले और कुशील (व्रतरक्षा से रहित), समाधि के बिना आर्त्त-रौद्र परिणाम से मरते हैं, वे अनंत संसारी अर्द्धपुद्गल परावर्तन प्रमाण-काल तक संसार परिभ्रमण करने वाले होते हैं।

अनंत सम्यक्त्व **Ananta samyaktva**

क्षायिक सम्यक्त्व। नौ लब्धियों में से एक।

अनंताणुवर्गणा **Anantāṇuvargaṇā**

अभव्यों से अनंतगुणे और सिद्धों से अनंतवें भाग प्रमाण से गुणित प्रदेशों वाली वर्गणा

अनंतानंत प्रदेशी वर्गणा **Anantānanta pradeśī vargaṇā**

एक परमाणु रूप वर्गणा से लेकर एक-एक परमाणु की वृद्धि करते हुए एक प्रदेशी वर्गणा से लेकर अनंतानंत क्रम पर आने वाली वर्गणा।

अनंतानुबंधी **Anaṅtānubandhī**

1. सम्यग्दर्शन की उपघाती कषाय।
2. अनंत भवों की परंपरा को चालू रखने वाली कषाय।

अनंतानुबंधी चतुष्क **Anaṅtānubandhī catuṣka**

क्रोध, मान, माया और लोभ का समुदाय।

अनंतावधि जिन **Anaṅtāvadhi jina**

जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त जिन।

अनंतानुबंधी प्रकृति **Anaṅtānubandhī prakṛtī**

जिसके उदय से जीव का अनंत संसार का बंध हो।

अनंतानुबंधी वियोजक **Anaṅtānubandhī viyojaka**

अनंतानुबंधी कषाय का विसंयोजन करने वाला।

अनंतावधि ज्ञान **Anaṅtāvadhi jñāna**

उस पुद्गल द्रव्य का ज्ञान, जिसका अंत और अवधि नहीं होती है।

अनक्षरगता भाषा **Anakṣaragatābhāsā**

द्वीन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत जीवों की अपने-अपने संकेत को प्रकट करने वाली भाषा।

अनक्षर वचन **Ankṣara vacana**

संकेत या इशारे से समझाना।

अनक्षरश्रुत **Anakṣarśruta**

उच्छ्वास, निःश्वास, थूक, खांसी, छींक, अव्यक्त शब्द, हुंकार आदि ध्वनि एवं चीत्कार आदि शब्द-संकेत विशेष।

अनगार **Anagāra**

1. जिसका अगार विद्यमान नहीं है और जो भावों से भी अगार का त्यागी है।
2. गृह-त्यागी साधु।

अनगार धर्म **Anagāra Dharma**

अट्ठाईस मूलगुणों से युक्त मुनि-चर्या

अनधिगत चारित्र **Anadhigata cāritra**

दूसरे के उपदेश के बिना प्राप्त चारित्र।

अनध्यवसाय **Anadhyavasāya**

स्पर्श आदि मात्र से पदार्थ का अनिश्चयात्मक ज्ञान।

अननुगामी **Ananugāmī**

अवधिज्ञान का एक भेद। जो अवधिज्ञान जीव के साथ अन्य क्षेत्र या अन्य भव में नहीं जाता है।

अननुगामी अवधि **Ananugāmī Avadhi**

क्षेत्रांतर या भवांतर में अपने स्वामी के साथ नहीं जाने वाला अवधिज्ञान।

अननुभाषण **Ananubhāṣaṇa**

1. एक निग्रह स्थान
2. वादी के तीन बार कहने पर भी और सभासद के द्वारा जाने गये अर्थ को सुनकर भी प्रतिवादी द्वारा कुछ न कहा जाना।

अनपवर्ति आयुष्क **Anapavarti āyuṣka**

आयु नहीं घटने वाले जीव।

अनपायी **Anapāyī**

अनुगामी अवधिज्ञान का पर्यायवाची।

अनय परिणाम **Ananya pariṇāma**

अभिन्न परिणाम, शुद्ध नय से आत्मा का ज्ञान दर्शन रूप परिणाम ।

अनभिगृहीतमिथ्यात्व **Anabhigṛhītamithyātva**

परोपदेश के बिना भी मिथ्यात्व के उदय से उत्पन्न हुआ अश्रद्धान।

अनभिग्रहिक **Anabhigrahika**

विवेचना न किये जा सकने योग्य।

अनभिसंधिज **Anabhisandhija**

अनुबंध रहित, अनिहितार्थ।

अनभ्यावृत्ति **Anabhyāvṛtti**

पुनरुक्ति का अभाव।

अनयंकरा भाषा **Anayaṅkarā bhāṣā**

शील खंडन करने वाली एवं विद्वेष करने वाली भाषा।

अनय **Anaya**

नय रहित।

अनर्थक पदत्व **Anarthaka padatva**

आगम के अनुसार वस्तु-व्यवस्था का प्ररूपण न होना।

अनर्थदंड **Anarthadaṅḍa**

1. निष्प्रयोजन की जानेवाली निरर्थक दोषयुक्त क्रिया।
2. पाप का अर्जन करने वाली निष्प्रयोजन क्रिया।

अनर्थसंतति **Anarthasaṅtati**

मिथ्यात्व एवं पाप को बढ़ानेवाली परंपरा।

अनर्पित **Anarpita**

गौण, अप्रधान।

अनवसर्पिणी सिद्ध **Anavasarpiṇīsiddha**

अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी आदि काल के विभाजन से रहित विदेह क्षेत्र से होनेवाले सिद्ध।

अनवेक्ष्याप्रमृज्योत्सर्ग **Anavekṣyāpramṛjyotsarga**

मलमूत्र, कफ और नासिका-मल आदि को बिना देखे–शोधे जहाँ कहीं भी क्षेपण करना।

अनशन **Anaśana**

1. चारों प्रकार के आहार (खाद्य, पेय, लेह्य, चूस्य) का त्याग करना।
2. भोजन नहीं करने रूप बहिरंगतप का एक भेद।

अनस्तमित व्रत **Anastamita vrata**

प्रतिदिन सूर्योदय से अड़तालीस मिनिट बाद तथा सूर्यास्त से अड़तालीस मिनिट पहले भोजन करना और शेष समय में चारों प्रकार के आहार का त्याग करना।

अनाकांक्षक्रिया **Anākāṁkṣakriyā**

शठता या आलस्य के वश होकर आगम निर्दिष्ट आवश्यक कार्यों के करने में अनादर का भाव।

अनाकार **Anākāra**

विकल्प से रहित उपयोग।

अनाकार उपयोग **Anākāra upayoga**

निराकार दर्शनरूप उपयोग।

अनागत प्रत्याख्यान **Anāgata pratyākhyāna**

आगामी काल के लिए त्याग करना।

अनागतावीक्षण **Anāgatāvīkṣaṇa**

भविष्य की गवेषणा।

अनाचार **Anācāra**

1. विषयों में अत्यन्त आसक्ति।
2. लिए हुए व्रतों को किसी कारण से पूरी तरह छोड़ देना।

अनाचिन्न **Anācinna**

यदि तीन या सात घरों के अतिरिक्त आगे के घरों से साधु के द्वारा आहार लाया गया है तो वह आहार साधु के लिए अनाचिन्न (= ग्रहण करने के अयोग्य) होता है।

अनात्मभूत **Anātmabhūta**

वस्तुस्वरूप से भिन्न।

अनात्मवाद **Anātmavāda**

आत्मा को नहीं माननेवाला मिथ्या मत।

अनादिनय **Anādinaya**

अनादि वस्तुओं को स्वीकार करनेवाला नय।

अनादिनिधन **Anādinidhana**

जिसका न प्रारंभ हो और न अंत हो।

अनादिबंध **Anādibandha**

अनादिकाल से चला आ रहा बंध।

अनादि बंधक **Anādi bandhaka**

अनादिकाल से जिसके बंध हो रहा है वह जीव।

अनादिबंधी प्रकृति **Anādibandhi prakṛti**

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, नाम, गोत्र और अंतराय - ये छह कर्म प्रकृतियां।

अनादि मिथ्यादृष्टि **Anādi mithyādṛṣṭi**

अनादिकाल से संसार में मिथ्यात्व सहित भ्रमण करने वाला मिथ्यादृष्टि जीव।

अनादि सांत **Anādi sānta**

अनादिकालीन, किंतु अंत सहित।

अनादृत **Anādṛta**

1. वंदना का एक अतिचार
2. आदर से रहित
3. जम्बूद्वीप का व्यंतर देव।

अनादेय **Anādeya**

नाम कर्म की तिरानवे प्रकृतियों में एक, जिसके उदय से प्रभारहित निस्तेज शरीर हो।

अनादेयनामकर्म **Anādeyanāmakarma**

जिस कर्म के उदय से युक्तियुक्त वचन को प्रमाण न माना जाय, आदर का पात्र होने पर भी आदर न मिले अथवा जिसके उदय से आदर योग्य शरीर–गुण प्राप्त न हो।

अनाभोगक्रिया **Anābhogakriyā**

बिना शोधी और बिना देखी भूमि पर सोना व उठना-बैठना आदि शरीर संबंधी क्रिया।

अनायतन **Anāyatana**

मिथ्यादर्शन आदि के आश्रय या आधार को अनायतन कहते हैं।

अनारंभ **Anāraṁbha**

योग के व्यापार से निवृत्त हो जाना।

अनार्य **Anārya**

1. गुणवत्ता से रहित व्यक्ति।

2. क्षेत्र, भाषा और कर्म से बहिष्कृत, निंद्य विपरीत आचरण वाले प्रदेश विशेषों में रहने वाले व्यक्ति।

अनार्ष यज्ञ **Anārṣayajña**

हिंसा आदि दोष सहित यज्ञ।

अनालब्ध **Anālabdha**

1. वंदना का एक अतिचार।
2. उपकरणादि की आशा से वंदना करना।

अनालोच्य वचन **Anālocya vacana**

अविचारित कथन।

अनाहार **Anāhāra**

आहार नहीं करना।

अनाहारक **Anāhāraka**

जीव का औदारिक, वैक्रियिक, आहारक–इन तीन शरीरों व आहारादि छह पर्याप्तियों के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण न करना।

अनिंद्रिय **Aniṅdriya**

इंद्रिय के ही कार्य (ज्ञानोत्पादन) को करने वाला अन्तःकरण रूप मन।

अनिंद्रिय जीव **Anindriya jīva**

इंद्रिय रहित - सिद्ध।

अनिंद्रिय निबंधन **Aniṅdriya nibaṅdhana**

मन पर नियंत्रण करना।

अनिंन्द्रियप्रत्यक्ष **Aniṅdriyapratyakṣa**

1. स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, अभिनिबोध रूप ज्ञान।
2. इंद्रियनिरपेक्ष मन से उत्पन्न होने वाला ज्ञान।

अनिंद्रिय सुख **Aniṅdriya Sukha**

इंद्रियों के बिना आत्मा से अनुभव किया जाने वाला अक्षय सुख।

अनिःसृत **Aniḥsṛta**

1. मतिज्ञान का एक भेद।
2. वस्तु के एक भाग को देखकर पूरी वस्तु को जानना।

अनिकाचित करण **Anikācitakaraṇa**

उदीरणा, उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण—इन चारों ही अवस्थाओं को प्राप्त-कर्म।

अनिकेत **Aniketa**

1. गृहहीन।
2. साधु।

अनित्थं संस्थान **Anitthaṁ saṁsthāna**

कोई विशेष प्रकार का आकार न होना।

अनित्य **Anitya**

1. क्षणभंगुर।
2. अनुप्रेक्षा (भावना) का एक भेद।

अनित्य नय **Anitya naya**

47 नयों में से एक। जैसे आत्मद्रव्य अनित्य नय से राम-रावण की भाँति अनवस्थायी है।

अनित्य निगोत **Anitya nigota**

त्रस-पर्याय को प्राप्त कर चुके व आगे प्राप्त करने वाले हैं वे अनित्य निगोत जीव हैं।

अनित्यवाद **Anityavāda**

एकांत से वस्तु को क्षणभंगुर मानने वाला सिद्धांत।

अनित्य समाजाति **Anitya samājāti**

सामान्य धर्म सिद्ध होने पर पदार्थों में अनित्यत्व मानना।

अनित्यानुप्रेक्षा **Anityānuprekṣā**

यह शरीर तथा इंद्रियां और उनके विषयभूत भोग-उपभोग द्रव्य जल के बुद्बुदों के समान क्षणभंगुर है। आत्मा के ज्ञान-दर्शनमय उपयोग स्वभाव को छोड़कर और कोई वस्तु नित्य नहीं है, इस प्रकार का चिंतन करना।

अनिदान **Anidāna**

आगामी भव में भोग आदि की आकांक्षा का न होना।

अनिबद्ध मंगल **Anibaddhamaṅgala**

1. ग्रंथ में जो निबद्ध न हो ऐसा ग्रंथकार द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया गया मंगल।

4—416 Min of HRD/2014

2. ग्रंथों को लिखते या वाचना प्रारंभ करते समय ग्रंथकर्ता द्वारा मौखिक किया गया देवता का नमस्कारात्मक मंगल।

अनियतचारी **Aniyatacārī**

जिनका विहार निश्चित न हो।

अनियतवास **Aniyata vāsa**

जिनका निवास नियत न हो।

अनियत विपाक **Aniyata vipāka**

कर्मों का अनिश्चित समय पर उदय में आना।

अनियतविहार **Aniyatavihāra**

अनियत क्षेत्र में रहना या विचरण करना।

अनियत वृत्ति **Aniyata vṛtti**

नियम रहित क्रियाएँ।

अनिवर्चनीय **Anirvacanīya**

वचनों से कथन न करने योग्य।

अनिवृत्तिकरण **Anivṛttikaraṇa**

विशिष्ट आत्म-परिणाम के द्वारा अतिशय आनंद-जनक सम्यक्त्व को प्राप्त करना।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान **Anivṛttikaraṇa Guṇasthāna**

जिस गुणस्थान में विवक्षित एक समय के भीतर वर्तमान सब जीवों के परिणाम परस्पर भिन्न न होकर समान हों।

अनिश्रितावग्रह **Aniśritāvagraha**

पूर्व अनुमान रूप अनुभव के बिना पदार्थ को जानना।

अनिष्टनिवृत्ति **Aniṣṭa nivṛtti**

पाप क्रिया को छोड़ना।

अनिह्नवाचार **Anihnavācāra**

गुरु से पढ़-सुनकर ज्ञात श्रुत को प्रकाशित करना।

अनीक **Anīka**

सेना के रूप में परिणित होने वाले देव। वृषभ, रथ, तुरग, हाथी, नर्तक, गंधर्व और भृत्य वर्ग – ये सौधर्म इंद्र की सात सेनाएँ।

अनीकिनी **Anīkinī**

प्राचीनकालीन सेना के नौ भेदों में से एक।

अनुकंपा **Anukaṁpā**

1. दया।
2. पर पीड़ा के परिहार की इच्छा।
3. सब प्राणियों के प्रति मैत्री की भावना।

अनुकृष्टि **Anukṛṣṭi**

1. स्थितिबंध, अपसरण आदि के कारण विरचित परिणामों की पुनरुक्तता एवं अपुनरुक्तता की खोज करना।
2. अधस्तन समय के परिणामों की उपरितन परिणामों से समानता।
3. अधःप्रवृत्तकरण के प्रथम समय से अंतिम समय तक परिणामों में एकरूपता।

अनुक्त **Anukta**

शब्द के उच्चारण के बिना अभिप्राय से ही पदार्थ का ग्रहण करना।

अनुगम **Anugama**

जिस अधिकार में या जिसके द्वारा वक्तव्य पदार्थ की प्ररूपणा की जाती है।

अनुगामी अवधि **Anugāmī avadhi**

जो अवधिज्ञान सूर्य के प्रकाश के समान देशांतर या भवांतर में साथ जाए।

अनुग्रह **Anugraha**

अपना एवं दूसरे का उपकार।

अनुजीवी गुण **Anujīvī guṇa**

द्रव्य के साथ-साथ रहने वाले गुण जैसे सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, चेतना आदि।

अनुत्कषायी **Anut kaṣāyī**

अल्प कषायी।

अनुत्कृष्ट **Anutkṛṣṭa**

उत्कृष्ट और जघन्य के बीच की संख्या।

अनुत्कृष्ट अनुभाग बंध **Anutkṛṣṭa anubhāga bandha**

उत्कृष्ट से कम अनुभाग बंध।

अनुत्कृष्ट प्रकृतिबंध **Anutkṛṣṭa prakṛti bandha**

उत्कृष्ट प्रकृति बंध से कम प्रकृति बंध होना।

अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध **Anutkṛṣṭa pradeśa bandha**

उत्कृष्ट प्रदेश बंध से कम बंध होना।

अनुत्कृष्ट स्थितिबंध **Anutkṛṣṭa sthiti bandha**

उत्कृष्ट स्थिति से कम बंध होना।

अनुत्तर गति **Anuttara gati**

सर्वोत्तम गति या सिद्ध गति।

अनुत्तर ज्ञान **Anuttara jñāna**

केवलज्ञान।

अनुत्तर देव **Anuttara deva**

पाँच अनुत्तर विमानों (विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित तथा सर्वार्थसिद्धि) में रहने वाले देव।

अनुत्तर विमान **Anuttara vimāna**

विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि, ये पांच विमान।

अनुत्तरोपपादिक **Anuttaropapādika**

मरण कर पाँच अनुत्तरों में उपपाद जन्म से पैदा होने वाले साधु।

अनुत्तरोपपादिकदशांग **Anuttaropapādikadaśāṅga**

प्रत्येक तीर्थंकर के समय में दस महामुनि उपसर्ग सहकर अनुत्तर विमानों में जन्म लेते हैं। उनका वर्णन करने वाला अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान का नौवां भेद।

अनुत्पादानुच्छेद **Anutpādānuccheda**

असत्त्व का अभाव होना।

अनुत्सेक **Anutseka**

ज्ञान, तप आदि गुणों के होने पर भी उनका मद न करना।

अनुदीरित **Anudīrita**

सुख-दुःख देनेवाले कर्मों का उदय नहीं होना।

अनुदीर्णोपशामना **Anudīrṇopaśāmanā**

1. अकरणोपशामना।
2. एक प्रकार के कर्म का उपशमन।

अनुपक्रमायुष्क **Anupakramāyuṣka**

आयु पूर्णकर मरने वाले देव, नारकी, भोगभूमि के जीव एवं मोक्षगामी जीव।

अनुपचरित असद्भूत नय **Anupacarita Asadbhūta naya**

संश्लेष सहित वस्तुओं के संबंध को विषय करनेवाला नय, जैसे शरीर जीव का है, ऐसा कहना।

अनुपचरित असद्भूतव्यवहारनय **Anupacarita asadbhūta vyavahāranaya**

1. जो नय संश्लेष (संयोग) युक्त वस्तु के संबंध को विषय करे। जैसे-जीव का शरीर।
2. अबुद्धिपूर्वक होने वाले क्रोधादिक भावों में जीव की भावों की विवक्षा करना।

अनुपचरित नय **Anupacarita naya**

उपचार रहित कथन करने वाला नय।

अनुपचरित सद्भूत नय **Anupacarita sadbhūta naya**

शुद्धगुण एवं गुणी में भेद का कथन करना। जैसे केवलज्ञान आदि जीव के गुण हैं।

अनुपचरित सद्भूत व्यवहारनय **Anupacarita sadbhūta vyavahāranaya**

उपाधि रहित गुण-गुणी के भेद को विषय करने वाला नय। जैसे जीव के केवलज्ञानादि गुण।

अनुपलंभ **Anupalambha**

अप्रत्यक्ष होना, बोध का अभाव।

अनुपलब्धि (हेतु) **Anupalabdhi (hetu)**

साध्य को सिद्ध करने के लिए उसमें हेतु की प्राप्ति न होना।

अनुपवास **Anupavāsa**

जल के अतिरिक्त सब आहार छोड़कर उपवास करना।

अनुपस्थापन **Anupasthāpana**

परिहार प्रायश्चित्त का एक भेद।

अनुपहारक **Anupahāraka**

1. जिनकल्प को धारण करने में असमर्थ साधुसंघ में 405 साधु।
2. परिहार विशुद्धि संयम धारण करने वाले।

3. आचार्य पश्चात् संयम धारण करने वाला साधक।

अनुपात्त **Anupātta**

आत्मा के द्वारा कर्म-नोकर्म रूप में ग्रहण न करने योग्य परमाणु।

अनुपाप **Anupāpa**

सूक्ष्मता अथवा चतुराई से किया गया पाप।

अनुप्रेक्षा **Anuprekṣā**

1. शरीरादि के स्वभाव का चिंतन करना।
2. जाने हुए पदार्थ का मन से अभ्यास करना।

अनिह्नव **Anihnava**

जिस गुरु या शास्त्र से ज्ञान प्राप्त किया है, उसका नाम नहीं छिपाना।

अनुभव **Anubhava**

कर्म पुद्गलों में उनकी फलादान शक्ति में अपेक्षाकृत होनेवाली हीनाधिकता।

अनुभय असत्य **anubhaya asatya**

जो न सत्य हो और न असत्य हो।

अनुभागकांडकघात **Anubhāgakaṇḍakaghāta**

अनुभाग का घात प्रारम्भ होने के प्रथम समय से लेकर अंतर्मुहूर्त काल में निष्पन्न होने वाला घात।

अनुभाग कृष्टि **Anubhāga kṛṣṭi**

कर्म की अनुभाग शक्ति को घटाना।

अनुभाग बंध **Anubhāga bandha**

कषायों के निमित्त से कर्म बंध में तीव्र या मंद फलदान शक्ति का पड़ना।

अनुभाग रचना **Anubhāga racanā**

कर्मों की फलदान शक्ति की स्थिति में आबाधा काल को छोड़ कर समस्त कर्म वर्गणाओं का बंट जाना।

अनुभाग सत्त्व **Anubhāga sattva**

अनुभाग बंध का आत्मा में अवस्थित रहना।

अनुभाग स्थान **Anubhāga sthāna**

कर्मों में फलदान शक्ति के अंशों का स्थान।

अनुभाग स्वामित्व सन्निकर्ष **Anubhāga swāmitva sannikarṣa**

कर्मों की फलदान शक्ति से इंद्रिय संपर्क का अधिकार होना।

अनुभाषण **Anubhāṣana**

कर्मों में फलदान शक्ति के अंशों का स्थान।

अनुभाषण शुद्ध प्रत्याख्यान **Anubhāṣaṇa śuddha pratyākhyāna**

गुरु के कहने के अनुसार अक्षर इत्यादि का शुद्ध उच्चारण करते हुए प्रत्याख्यान करना।

अनुभूत्यावरण कर्म **Anubhūtyāvaraṇa karma**

अनुभूति को आवृत्त करने वाला कम।

अनुमति **Anumati**

स्वयं कोई कार्य न करके अन्य को उसे करने की राय देना अथवा उसके द्वारा किए जाने पर प्रसन्न होना। इसके तीन भेद हैं— (i) प्रतिसेवा, (ii) प्रतिश्रवण और (iii) संवास।

अनुमति (प्रतिश्रवण) **Anumati pratiśravaṇa**

यह आहार आपके निमित्त बनाया गया है - आहार से पहले या पीछे इस प्रकार के वचन दाता के मुख से सुन लेने पर आहार कर लेना या संतुष्ट होकर ठहरना।

अनुमति (प्रतिसेवना) **Anumati (pratisevanā)**

उदिद्ष्ट आहार का भोजन करने वाले साधु का दोष।

अनुमति (संवास) **Anumati (Saṁvāsa)**

साधु का आहार के निमित्त ऐसा ममत्व भाव करना कि ये गृहस्थ लोग हमारे हैं, इस प्रकार की अनुभूति।

अनुमतित्याग प्रतिमा **Anumatityāga pratimā**

आरंभ, परिग्रह और ऐहिक कार्यों में पूछे जाने पर अनुमति न देने वाला श्रावक।

अनुमतिविरत **Anumativirata**

आरंभ, परिग्रह और ऐहिक कार्यों में अनुमति नहीं देने वाला श्रावक।

अनुमान **Anumāna**

साध्य के साथ अविनाभाव संबंध रखने वाले साधन से साध्य का ज्ञान अनुमान (प्रमाण) है।

अनुमान (उदाहरण) **Anumāna (udāharaṇa)**

हेतु की सिद्धि में साधनभूत कोई दृष्ट पदार्थ, जिससे वादी और प्रतिवादी दोनों सहमत हों।

अनुमान (उपनय) **Anumāna (upanaya)**

किसी पदार्थ को अनुमान का विषय बनाना। हेतु का उपसंहार।

अनुमान (निगमन) **Anumāna (nigamana)**

हेतु की सिद्धि।

अनुमान (परार्थ) **Anumāna (padārtha)**

स्वार्थानुमान के विषयभूत हेतु और साध्य को अवलंबन करने वाले वचन से उत्पन्न हुआ ज्ञान।

अनुमान (पूर्ववत्) **Anumāna (pūrvavat)**

कारण से कार्य का अनुमान करना-जैसे बादलों को देखने से आगामी वृष्टि का अनुमान करना।

अनुमान (प्रतिज्ञा) **Anumāna (pratijñā)**

साध्य का संदेह रूप वचन।

अनुमान (शेषवत्) **Anumāna (śeṣavat)**

कार्य से कारण का अनुमान करना। जैसे नदी की बाढ़ को देखकर उससे पहले हुई वर्षा का अनुमान होना।

अनुमान (स्वार्थ) **Anumāna (swārtha)**

अन्यथानुपपत्ति रूप एक लक्षणवाले हेतु को ग्रहण करने के संबंध से स्मरण पूर्वक साध्य का ज्ञान।

अनुमान (हेतु) **Anumāna (hetu)**

1. कारण उपस्थित करना।
2. साध्य का अविनाभाव।

अनुयोग **Anuyoga**

अर्थ के साथ सूत्र की जो अनुकूल योजना की जाती है, उसका नाम अनुयोग है।

अनुयोगद्वार समास **Anuyogadvāra samāsa**

अर्थलिंगज श्रुतज्ञान के बीस भेदों में से एक।

अनुयोगद्वार श्रुतज्ञान **Anuyogadvāra śrutajñāna**

प्रतिपत्तिसमास श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि के होने पर होने वाला ज्ञान।

अनुयोग समास **Anuyoga samāsa**

श्रुतज्ञान का एक भेद।

अनुवृत्ति प्रत्यय **Anuvṛtti pratyaya**

समानता का भाव या कारण।

अनुवाद **Anuvāda**

आचार्य परंपरागत प्रसिद्ध अर्थ का तदनुसार कथन करना ।

अनुवीचीभाषण **Anuvīcībhāṣaṇa**

निर्दोष वचन बोलना।

अनुवीचि याचना **Anuvīci yācanā**

विनयपूर्वक प्रार्थना करना

अनुशिष्टि **Anuśiṣṭi**

निर्यापकाचार्य के द्वारा आराधक का शिक्षण।

अनुश्रेणी **Anuśreṇi**

लोक के मध्य भाग से लेकर ऊपर, नीचे और तिरछे रूप में अनुक्रम से अवस्थित आकाश प्रदेशों की पंक्ति।

अनुसमयापवर्तना **Anusamayāpavartanā**

एक ही समय में अनंत कांडकों का युगपत् घात करना।

अनुसारी ऋद्धि **Anusārī ṛddhi**

दूसरे से किसी एक पद के अर्थ को सुनकर उस ग्रंथ के आंद, मध्य और अंत का अर्थ धारण कर लेना।

अनुसूर्य तप **Anusūrya tapa**

कड़ी धूप वाले दिन में पूर्व से पश्चिम की ओर चलना।

अनुस्नान **Anusnāna**

विशेष पूजादि क्रिया में किया जाने वाला मंत्रस्नानादि।

अनुस्मृति **Anusmṛti**

1. भोगोपभोग शिक्षाव्रत का दूसरा अतिचार।

2. इंद्रिय-विषयों के सुखों को बार-बार याद करना।

अनृत **Anṛta**

अप्रशस्त (अयथार्थ) वचन व्यवहार।

अनृतवचन **Anṛtavacana**

असत्य वचन, हिंसाकारी वचन।

अनृतानंद (रौद्रध्यान) **Anṛtananda (raudradhyāna)**

प्रबल राग-द्वेष और मोह के कारण अप्रशस्त वचन में आनंद मानना।

अनृद्धि प्राप्तार्य **Anṛddhiprāptārya**

ऋद्धि रहित आर्य।

अनेकांत **Anekānta**

एक वस्तु में मुख्यतः एवं गौणता की अपेक्षा अस्तित्व, नास्तित्व आदि परस्पर विरोधी धर्मों का होना।

अनेषण **Aneṣaṇa**

भोजन नहीं करना/खोजना।

अनैकांतिक हेत्वाभास **Anaikāṅtika hetvābhāsa**

हेतु का पक्ष, विपक्ष और सपक्ष तीनों में रहना।

अन्नपान निरोध **Annapāna nirodha**

1. अहिंसाणुव्रत का एक अतिचार।
2. अपने अधीन पशु व मानव का अन्न-पान रोक देना।

अन्यत्वानुप्रेक्षा **Anyattvānuprekṣā**

जीव से शरीर आदि की भिन्नता का चिंतन करना।

अन्यथानुपपत्ति **Anyathānupapatti**

साध्य के अभाव में हेतु का घटित न होना।

अन्यापोह **Anyāpoha**

स्वभावांतर से विवक्षित स्वभाव की भिन्नता।

अन्यदृष्टि प्रशंसा **Anyadṛsti praśaṃsā**

1. सम्यग्दर्शन का अतिचार।
2. मिथ्यादृष्टियों की मिथ्या श्रद्धा, ज्ञान व चारित्र की मन से सराहना।

अन्यदृष्टि संस्तव **Anyadṛṣṭi saṃstava**

1. सम्यग्दर्शन का एक अतिचार।
2. मिथ्यादृष्टियों के ज्ञान, तप आदि की वचनों से प्रशंसा करना।

अन्योन्य गुणाकार शलाका **Anyonya guṇākāra śalākā**

विरलनदेय विधान करने से प्राप्त शलाकायें।

अन्योन्याभ्यस्त राशि **Anyonyābhyasta rāśi**

नाना गुणहानि प्रमाण को लिखकर परस्पर में गुणा करने से आनेवाली राशि।

अन्वयदत्ति **Anvayadatti**

अपने कुल की परंपरा को स्थिर रखने के लिए पुत्र या सगोत्री को धर्म के साधनभूत चैत्यालय एवं धनादि प्रदान करना।

अन्वय दृष्टांत **Anvaya dṛṣṭānta**

साधन की विद्यमानता में साध्य का विद्यमान होना।

अन्वय दृष्टांताभास **Anvayadṛaṣṭāntābhāsa**

साधन की विद्यमानता में साध्य की विद्यमानता का न होना।

अन्वय व्यतिरेकी **Anvayavyatirekī**

हेतु या साधन में अन्वय और व्यतिरेक दोनों दृष्टांत होना।

अन्वय व्याप्ति **Anvayavyāpti**

साधन की विद्यमानता में साध्य की विद्यमानता का कथन करना।

अन्वयी **Anvayī**

सब अवस्थाओं में साथ रहने वाला गुण।

अपकर्षण **Apakarṣaṇa**

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के कारण पूर्वोपार्जित कर्मों की स्थिति व अनुभाग कम हो जाना।

अपकर्ष-समा **Apakarṣasamā**

साध्य में दृष्टांत धर्म का अभाव होना।

अपकार **Apakāra**

अनुग्रह का अभाव।

अपक्रम **Apakrama**

गमन-आगमन का नियम।

अपगतवेद **Apagataveda**

स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद रूप परिणामों के वेदन से रहित जीव।

अपगम **Apagama**

अवाय, निश्चय।

अपदिन्न **Apadinna**

छल, माया आदि से रहित।

अपदेश **Apadeśa**

जिसके द्वारा अर्थ निर्देशित किए जाय।

अपध्यान **Apadhyāna**

दूसरों के वध-बंधन, छेदन को करना और परस्त्री आदि के हरने का विचार करना।

अपर-व्यवहार **Apara vyavahāra**

आगम के सात नयों में संग्रह नय का एक भेद।

अपर-संग्रहाभास **Aparasaṁgrahābhāsa**

धर्म-अधर्म आदि को तत्त्व रूप में स्वीकार करके भी उनके विशेषों को नहीं स्वीकार करना।

अपरिगृहीता **Aparigṛhītā**

पति रहित वेश्या या व्यभिचारिणी स्त्री।

अपरिगृहीतागमन **Aparigṛhītāgamana**

जो किसी के अधीन नहीं है, ऐसी व्यभिचारिणी स्त्री के यहाँ आना-जाना।

अपरिग्रह **Aparigraha**

1. मोह के उदय से उत्पन्न 'यह वस्तु मेरी है' इस प्रकार के भाव का न होना।
2. समस्त पदार्थों में मूर्च्छा का त्याग।

अपरिग्रह महाव्रत **Aparigraha mahāvrata**

सब प्रकार के धन-धान्य आदि बाह्य एवं कषाय आदि अंतरग परिग्रह का जीवन भर के लिए मन-वचन-काय से त्याग करना।

अपरिणत दोष **Apariṇata doṣa**

अग्नि आदि से जिन पदार्थों के रूप, रस, गंध आदि नहीं बदले हैं, ऐसे पदार्थों को आहार में ग्रहण करना।

अपरिमितकाल सामायिक **Aparimita kāla sāmāyika**

ईर्यापथ आदि में ग्रहण किया जाने वाली सामायिक।

अपरिशेष-प्रत्याख्यान **Apariśeṣapratyākhyāna**

सार्थक प्रत्याख्यान के दस भेदों में एक।

अपरिस्रावित **Aparisrāvitā**

आचार्य का एक गुण। क्षपक के दोषों को सुनकर, दूसरे के पूछने पर भी उन दोषों को प्रकट न करना।

अपरीत वर्गणा **Aparītavargaṇā**

अनंत एवं अनंतानंत से अतिरिक्त उपलब्ध न होने वाली वर्गणा।

अपरीत संसार **Aparīta saṃsāra**

अनंत संसार की परमितता से रहित अनादि मिथ्यादृष्टि।

अपर्याप्त **Aparyāpta**

अपर्याप्त नाम कर्म से युक्त पृथ्वीकायिक आदि जीव।

अपर्याप्त नाम **Aparyāpta nāma**

जिस कर्म के उदय से जीव अपनी यथायोग्य पर्याप्तियों को पूरा न कर सके, वह नामकर्म।

अपवर्तन **Apavartana**

घटना, कम होना।

अपवर्तनाघात **Apavartanāghāta**

अकाल मरण।

अपवर्तनोद्वर्तन **Apavartanodvartana**

कर्म के प्रथम अंश का घात होने पर चारित्र मोह के क्षय में संज्वलन चतुष्क पूर्वक क्रोध-मान-माया लोभ का कम होना।

अपवर्त्य **Apavartya**

उपघात के कारणभूत शस्त्र, विष आदि रूप बाह्य निमित्त के मिलने पर हानि को प्राप्त आयु।

अपवाद मार्ग **Apavāda mārga**

शास्त्रोक्त मार्ग से भिन्न मुनियों की सराग चर्या।

अपवादिक लिंग **Apavādic liṅga**

परिग्रह सहित द्रव्यलिंगी साधु।

अपसरण **Apasaraṇa**

विशुद्धता की वृद्धि से स्थिति बंध का क्रम से घटना।

अपसिद्धांत **Apasiddhānta**

सिद्धांत से नियम-विरुद्ध कथन करना।

अपहृतसंयम **Apahṛtasaṃyama**

स्वयं के द्वारा, मयूरपिच्छी के द्वारा अथवा अन्य उपकरणों से जीवों की रक्षा करने का संयम।

अपात्र **Apātra**

राग-द्वेष से युक्त एवं सम्यक्त्व से रहित, मुक्तिमार्ग के लिए अयोग्य व्यक्ति।

अपाय विचय **Apāya vicaya**

जिनमत का आश्रय लेकर कल्याणप्रापक उपायों–त्रिरत्न आदि का चिंतन करना।

अपायानुप्रेक्षा **Apāyānuprekṣā**

हिंसादि रूप आस्रव से उत्पन्न होने वाले अनर्थों का बार-बार चिंतन करना।

अपुनर्भव **Apunarbhava**

दूसरा जन्म न लेना।

अपूर्वकरण **Apūrvakaraṇa**

मोहनीय कर्म का उपशम या क्षय करते हुए जीव के अपूर्व करण (परिणाम) होना।

अपूर्वकृष्टि **Apūravakṛṣṭi**

प्रथम समय में की गयी कृष्टियों की अपेक्षा द्वितीय समय में की गयीं नवीन कृष्टियाँ।

अपूर्व चैत्यक्रिया **Apūravacaityakriyā**

एक कृतिकर्म ; छह माह के बाद जो चैत्य-जिनप्रतिमा का दर्शन होता है वह अपूर्वचैत्य है। उनकी वंदना में भक्तिपाठ करना। इसमें सिद्ध भक्ति, श्रुत भक्ति, चरित्र भक्ति, चैत्य भक्ति, पंचगुरु भक्ति, शांति भक्ति की जाती है।

अपूर्व स्पर्धक **Apūrvaspardhaka**

कर्म परमाणुओं के समूहरूप स्पर्धक, जिनको अनिवृत्तिकरण परिणामों से अपूर्व रूप कर दिया जाये।

अपूर्वार्थ **Apūrvārtha**

पूर्व में किसी भी प्रमाण द्वारा निश्चित न हुआ पदार्थ।

अपृथक् विक्रिया **Aprathak vikriyā**

शरीर को ही नानारूप परिणमित कराना, शरीर से पृथक् अन्य विक्रिया का न होना।

अपोह **Apoha**

1. संशय आदि विकल्पों को दूर करने वाला विशेष ज्ञान।
2. निराकरण करना।

अपौरुषेय **Apauruṣeya**

जो किसी पुरुष द्वारा न बनाया गया हो। जैसे अकृत्रिम चैत्यालय, षट् द्रव्य आदि।

अप्काय **Apkāya**

अप्कायिक जीव के द्वारा छोड़ा गया जल शरीर।

अप्कायिक जीव **Apkāyika jīva**

जिनका जल ही शरीर है, ऐसे जीव। जैसे–ओस, बर्फ, शुद्ध जल।

अप्जीव **Apjīva**

अप्काय नामकर्म के उदय से जो जीव विग्रहगति में रहते हुए शरीरधारण नहीं करता, अपितु आगे ग्रहण करने वाला होता है।

अप्रणतिवाक् **Apraṇativāk**

जिस वचन को सुनकर व्यक्ति तप और विज्ञान में अधिक योग्य महापुरुष को प्रणाम नहीं करता, वह वचन।

अप्रतिकर्म **Apratikarma**

परम उपेक्षा संयम के कारण देह के प्रति ममत्व रहित होना।

अप्रतिक्रमण **Apratikramaṇa**

प्रतिक्रमण से रहित अवस्था। यह दो प्रकार की है-अज्ञानीजनों के आश्रित हेय-उपादेय के विवेक से शून्य बेरोक-टोक प्रवृत्ति रूप, ज्ञानी जीवों के आश्रित अभेद रत्नत्रय या त्रिगुप्ति रूप अर्थात् ध्यान रूप।

अप्रतिघात ऋद्धि **Apratighātaṛddhi**

पर्वत, शिला, वृक्ष, दीवार आदि के भीतर से आकाश के समान पार हो जाना।

अप्रतिपक्ष प्रकृति **Apratipakṣa prakṛti**

जिन कर्म प्रकृतियों की प्रतिपक्षी कर्म प्रकृतियाँ न हों।

अप्रतिपात **Apratipāta**

1. चारित्ररूपी पर्वत के शिखर से न गिरना।
2. क्षपक श्रेणी में आरोहण करने वाला क्षीणकषायी जीव।

अप्रतिपाति **Apratipāti**

नष्ट न होने वाला ज्ञान। सर्वावधि-परमावधि नाम के अवधिज्ञान एवं मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान होने तक नहीं छूटते, इसलिये ये अप्रतिपाति हैं।

अप्रतिपातिकी **Apratipātikī**

संयम परिणाम के वृद्धि होने से गिरावट का न होना।

अप्रतिबुद्ध **Apratibuddha**

आत्मा का कर्म नोकर्म में अहं बुद्धि का होना।

अप्रतिवीर्य **Aprativīrya**

अतुल्य शक्तिशाली।

अप्रतिश्रावी **Apratiśrāvī**

आचार्य द्वारा दूसरे की गुप्त बात को स्थिरता से धारण करना।

अप्रतिष्ठान **Apratiṣṭhāna**

सप्तम नरक का इंद्रक बिल

अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति **Apratiṣṭhita pratyeka vanaspati**

वह वनस्पति, जिसके आश्रय से साधारण निगोदिया जीव रहें।

अप्रत्यक्ष उपचार विनय **Apratyakṣa upacāra vinaya**

परोक्ष विनय।

अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण **Apratyvekṣita nikṣepādhikaraṇa**

प्रमार्जन के पश्चात् यहां पर जीव है या नहीं - इस प्रकार बिना देखे ही वस्तु को रखना।

अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जित संस्तरोपक्रमण **Apratyavekṣitā pramārjita saṃstaropakramaṇa**

बिना देखे और बिना शोधन किए बिस्तर आदि का बिछाना।

अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितादान **Apratyavekṣitāpramārjitādāna**

बिना देखे व बिना शोधन किए पूजन के उपकरणों को तथा वस्त्रादि को ग्रहण करना।

अप्रत्याख्यान **Apratyākhyāna**

व्रतों का एक देश ग्रहण।

अप्रत्याख्यान क्रिया **Apratyākhyāna kriyā**

संयम का घात करने वाले कर्म के उदय से विषय-कषायों से विरत न होना।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादि **Apratyākhyānāvaraṇa krodhādi**

जिन कर्मों के उदय से लेश मात्र भी संयमासंयम धारण न किया जा सके, उन्हें अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ कहते हैं।

अप्रदेश **Apradeśa**

एकप्रदेश परमाणु।

अप्रमत्त **Apramatta**

प्रमादरूप परिणाम से रहित।

अप्रमत्त विरत **Apramattavirata**

संज्वलन नोकषाय का मंद उदय होने से मुनि के प्रमादरूप परिणाम का अभाव होना। सातवाँ गुणस्थान।

अप्रमत्त संयत **Apramatta saṃyata**

सातवें गुणस्थानवाले साधु, जो संयम प्राप्त कर प्रमाद का अभाव होने से निरंतर अविचलित होते हैं।

अप्रमा **Apramā**

अयथार्थ ज्ञान।

अप्रमार्जित **Apramārjita**

बिना देखी और बिना प्रमार्जित वस्तुएं एवं स्थान आदि।

अप्रवीचार **Apravīcāra**

कामवेदना के प्रतीकार से रहित होना।

अप्रशस्त ध्यान **Aprasasta dhyāna**

पापास्रव के कारणभूत अतिरौद्र स्वरूप ध्यान।

5—416 Min. of HRD/2014

अप्रशस्त नोआगम भावोपक्रम **Aprasata no-āgama bhāvopakrama**

संसार बढ़ाने वाले गणिकादि के अप्रशस्त व्यवसाय से होने वाला परभाव का उपक्रम।

अप्रशस्त विहायोगति **Aprasasta vihāyogati**

जिस कर्म के उदय से ऊँट, गर्दभ और शृगाल आदि के समान निंद्य चाल उत्पन्न हो।

अप्रशस्तोपशामना **Aprasastopaśāmanā**

अप्रशस्त उपशम के द्वारा कर्म का जो प्रदेशाग्र उपशांत होता है, उसमें उत्कर्षण तथा संक्रमण तो होता है, लेकिन वह कर्म उदयावली के योग्य नहीं होता।

अप्रादेशिक **Apradeśika**

पुद्गल का एक प्रदेश, जिसके विभाग न हों।

अप्राप्यकारी **Aprāpyakārī**

इंद्रियों द्वारा स्पर्श न करने योग्य।

अप्रायोजक **Aprāyojaka**

अग्राह्य, अस्वीकृत।

अप्रावृत **Aprāvṛta**

आवरण रहित, नग्न।

अप्रासुक **Aprāsuka**

सचित्त, एकेंद्रिय जीवसहित।

अबाधा, अबाधाकाल **Abādhā, Abādhā kāla**

बँधने के पश्चात् भी कर्म जितने समय तक बाधा नहीं पहुँचाता-उदय में नहीं आता है उतना समय उसका अबाधाकाल कहलाता है।

अबुद्धिपूर्वा निर्जरा **Abuddhipūrvā nirjarā**

नरकादि गतियों में कर्मों के उदय से फल देते हुए कर्मों का झड़ना।

अब्बहुल **Abbahula**

प्रथम पृथ्वी (नरक) का एक भाग।

अब्रह्म **Abrahma**

1. जिसके कारण अहिंसादि गुण वृद्धि को प्राप्त न हों।
2. स्त्री-पुरुषों की रागपूर्ण चेष्टा (मैथुन क्रिया) है।

अभय दत्ति **Abhayadatti**

अभयदान।

अभयदान **Abhayadāna**

समस्त जीवराशि की मन, वचन और काय से रक्षा का प्रयत्न करना।

अभयमुद्रा **Abhayamudrā**

दायें हाथ की अँगुलियों को ऊँचा करके पताका (ध्वज) के आकार करने को अभयमुद्रा कहते हैं।

अभव्य **Abhavya**

भविष्य में सम्यग्दर्शनादि रूप न परिणत होने वाला जीव।

अभाव **Abhāva**

वैशेषिकों द्वारा मान्य एक पदार्थ। जैन दर्शन में यह अभाव पदार्थ सर्वथा निषेधकारी नहीं है, अपितु कथंचित् रूप से है।

अभाव भावशक्ति **Abhāva bhāva śakti**

आत्मा की अप्रवर्तमान पर्याय के अभाव रूप शक्ति।

अभाववाद **Abhāvavāda**

भावरूप वस्तु को न मानना

अभाषा **Abhāṣa**

वह शब्द जो भाषा रूप नही होता, जैसे बाँसुरी, शंख, वीणा, मेघ, आदि से उत्पन्न शब्द।

अभिकल्पना **Abhikalpanā**

सोद्देश्य कल्पना ।

अभिगम **Abhigama**

निर्णीत ज्ञान, समीप जाना।

अभिगृहीत **Abhigṛhīta**

परोपदेश सुनकर जीवादि तत्त्वों में अश्रद्धा होना।

अभिग्रह **Abhigraha**

जैन साधु द्वारा आहार से पूर्व ली गई प्रतिज्ञा।

अभिघट **Abhighata**

आहार का एक दोष, वसति का एक दोष।

अभिधेय **Abhidheya**

कथन करने योग्य।

अभिनिबोध **Abhinibodha**

अभिमुख और नियमित पदार्थों का बोध। स्थूल वर्तमान और व्यवधान रहित अर्थों का अभिमुख होना। चक्षुरिन्द्रिय में रूप नियमित है, श्रोत्रेन्द्रिय में शब्द घ्राणेन्द्रिय में गंध, जिह्वेन्द्रिय में रस, स्पर्शनेंद्रिय में स्पर्श और मन में दृष्ट, श्रुत और अनुभूत पदार्थ नियमित हैं।

अभिनिवेश **Abhiniveśa**

कर्मजनित स्वशरीर आदि द्रव्यों में आत्मीयपन का अभाव।

अभिनिषद्या **Abhiniṣadyā**

बैठने या पढ़ने का स्थान, आसन।

अभिन्न दशपूर्वी **Abhinna daśapūrvī**

रोहिणी आदि महाविद्याओं के पाँच सौ तथा अंगुष्ठ प्रसेनादि क्षुद्रविद्याओं के सात सौ देवता आकर विद्यानुवाद नामक दसवें पूर्व के पढ़ते समय आज्ञा देने के लिए प्रार्थना करते हैं, फिर भी जो उन्हें स्वीकार नहीं करते हैं ऐसे साधु।

अभिन्नपूर्वी **Abhinnapūrvī**

अभिन्न दश पूर्वी या अभिन्न चौदह पूर्वी।

अभिमान **Abhimāna**

मान कषाय के उदय से अंतःकरण में होने वाला अहंकार भाव।

अभियोग्य **Abhiyogya**

दास, वाहन आदि रूप से उपकार करने वाले एक विशेष प्रकार के देव।

अभियोगी भावना **Abhiyogi bhāvanā**

साधु द्वारा रसादि में आसक्त हो कर तंत्र-मंत्र, भूतकर्म व हास्य से आश्चर्य उत्पन्न करने की भावना।

अभिव्यापक आधार **Abhivyāpaka ādhāra**

आधार का एक भेद, जैसे तिल में तेल व्याप्त रहता है।

अभिषव **Abhiṣava**

जिनेंद्र प्रतिमा का अभिषेक।

अभिषवाहार **Abhiṣavāhāra**

गरिष्ठ पदार्थ का आहार ग्रहण करना।

अभीक्ष्णज्ञानोपयोग **Abhīkṣṇajñānopayoga**

जीवादि पदार्थ रूप स्वतत्त्व विषयक सम्यक् ज्ञान में निरंतर लीन रहना।

अभूतार्थ **Abhūtārtha**

1. जिसका विषय विद्यमान न हो।
2. असत्यार्थ।
3. सांयोगिक पदार्थ।

अभेद **Abheda**

द्रव्य व गुणों की युगपत् वृत्ति।

अभेद स्वभाव **Abheda svabhāva**

गुण व गुणी आदि में एकपना।

अभेदोपचार **Abhedopacāra**

पर्यायार्थिक नय के आश्रय से विभिन्न पर्यायों में परस्पर व्यतिरेक होते हुये भी उनमें एकत्व का अध्यारोप करना।

अभोक्तृत्व शक्ति **Abhoktṛtva śakti**

समस्त कर्मों से किये गये ज्ञातृत्वमात्र से भिन्न परिणामों के अनुभव का शमन होना।

अभ्यस्त **Abhyasta**

गणित की गुणकार विधि में गुण्य को गुणकार द्वारा गुणा करना।

अभ्याख्यान **Abhyākhyāna**

हिंसादि कार्य कर हिंसा से विरक्त मुनि या श्रावक को दोष लगाते हुये यह इसका कार्य है, ऐसा कहना।

अभ्यागत **Abhyāgata**

तिथि, पर्व तथा उत्सव आदि दिनों का जिस महात्मा ने त्याग किया है, उसे अतिथि कहते हैं और शेष व्यक्तियों को अभ्यागत कहते हैं।

अभ्युत्थान **Abhyutthāna**

गुरु आदि के आने जाने पर उनके सम्मान हेतु अपना आसन छोड़कर खड़े हो जाना।

अभ्युदय **Abhyudaya**

पूजा-प्रतिष्ठा, धन-संपत्ति, आज्ञा, ऐश्वर्य, बल, परिजन और कामभोग इत्यादि की प्रचुरता से प्राप्ति होना।

अभ्युदयावह **Abhyudayāvaha**

साता वेदनीय प्रशस्त कर्म प्रकृतियों के तीव्र अनुभाग के उदय से उत्पन्न हुआ दिव्य सुख और चक्रवर्त्यादिक संबंधी मानुष सुख।

अभ्युपगम सिद्धांत **Abhyupagama siddhānta**

बिना परीक्षा किये किसी पदार्थ को मानकर उस पदार्थ की विशेष परीक्षा करना। चार प्रकार के सिद्धांतों– सर्वतंत्र, प्रतितंत्र, अधिकरण एवं अभ्युपगमन में से एक।

अभ्रावकाश योग **Abhrāvakāśa yoga**

खुले आकाश में योग धारण करना।

अभ्रावकाश शयन **Abhrāvakāśa śayana**

गृह आदि के बाहर निरावरण स्थान में सोना।

अभ्रावकाशातिचार **Abhrāvakāśāticāra**

सचित्त, त्रस जीव बहुल एवं सछिद्र भूमि पर सोना; भूमि व शरीर के प्रमार्जन के बिना ही हाथ पैर आदि को सिकोड़ना व फैलाना, करवट बदलना, शरीर को खुजलाना तथा बर्फ व वायु से पीड़ित होने पर कब यह शांत होता है, ऐसा चिंतन करना, बांस के पत्तों आदि से ऊपर पड़ी ओस बिंदुओं को हटाना आदि अभ्रावकाशशयन के अतिचार हैं।

अभ्रोद्भव **Abhrodbhava**

1. आहार का एक दोष।
2. वसतिका का एक दोष।

अमनस्क **Amanaska**

द्रव्य भाव स्वरूप मन से रहित जीव।

अमम **Amama**

काल का एक प्रमाण। चौरासी लाख अममांग।

अमूढ़दृष्टि **Amūḍhadṛṣṭi**

समस्त कर्मभावों में मूढ़ नहीं होने वाला सम्यग्दृष्टि।

अमूर्त **Amūrta**

जीव के द्वारा इंद्रियों से न ग्रहण किए जाने योग्य विषय। नाम व गोत्र कर्मों का क्षय हो जाने पर रूपादिमय मूर्तिक शरीर से रहित मुक्त जीव।

अमृतास्त्रावी ऋद्धि **Amṛtāsravī ṛddhi**

जिसके प्रभाव से साधु के हाथ में दिया गया रूक्ष भी आहार अमृत के समान स्वादिष्ट हो जाय अथवा जिसके प्रभाव से मुख से निकले हुए वचन प्राणियों को अमृत के समान हितकारी हों, वह ऋद्धि।

अयश:कीर्ति **Ayaśahkīrti**

जिस कर्म के उदय होने पर सत् एवं असत् अवगुण प्रकट हों।

अयोगकेवली **Ayogakevalī**

शुक्लध्यान के द्वारा जिसके मन, वचन एवं काय ये तीनों योग क्षय हो गए हैं ऐसा केवली।

अरतिवाक् **Arativāk**

वह वचन, जिसे सुनकर द्वेष उत्पन्न हो।

अरति वेदनीय **Arati vedaniya**

नो कषाय वेदनीय कर्म के उदय से अरति का अनुभव करना।

अरहंत **Arahaṅta**

1. शरीर सहित जीवन्मुक्त वीतरागी साधक।
2. नमस्कार के योग्य, पूजा के योग्य, पंच परमेष्ठियों में प्रथम।
3. चार घातिया कर्मों का हनन करने वाले।
4. चार घातिया कर्मों का हनन कर केवलज्ञान को प्राप्त साधक/निर्ग्रंथ।

अरतिपरीषहजय **Aratiparīṣahajaya**

संयमी मुनि का काम, कषाय आदि के प्रति विरक्ति का भाव।

अरूपी **Arūpī**

रूप, रस, गंध, शब्द एवं स्पर्श से रहित द्रव्य।

अर्थ **Artha**

1. ज्ञान का विषय।
2. प्रति क्षण उत्पाद - व्यय - ध्रौव्य युक्त द्रव्य।
3. शब्द द्वारा वाच्य।

4. पुरुषार्थचतुष्टय में से एक।
5. अभीष्ट वस्तु।
6. सम्यक्त्व का एक प्रकार।

अर्थकर्ता **Arthakartā**

अठारह भाषाओं और सात सौ उपभाषाओं से युक्त द्वादशांग के बीज पदों के उपदेष्टा।

अर्थक्रिया **Arthakṛyā**

1. जिसके द्वारा कोई पदार्थ या वस्तु ज्ञान का विषय बनती है।
2. प्रयोजन संसिद्धि हेतु की जाने वाली परपीडनात्मक क्रिया।

अर्थनय **Arthanaya**

अर्थ एवं व्यंजन पर्यायों के साथ लिंग, संख्या, काल आदि के भेद से अभिन्न केवल वर्तमान वस्तु को विषय बनाने वाला नय।

अर्थपद **Arthapada**

अर्थ का ज्ञान कराने वाले अक्षरों का समुदाय।

अर्थपर्याय **Arthaparyāya**

अगुरुलघु गुण के कारण षट्गुणी हानि-वृद्धि रूप प्रतिक्षणवर्ती पर्यायें।

अर्थ शुद्धि **Arthaśuddhi**

सूत्र को अक्षर शुद्धि, अर्थ शुद्धि अथवा दोनों की शुद्धि पूर्वक सावधानी से पढ़ना।

अर्थसंक्रान्ति **Arthasaṁkrānti**

ध्यानकाल में द्रव्य का चिंतन करते समय पर्याय में संक्रमण तथा पर्याय का चिंतन करते समय द्रव्य में संक्रमण।

अर्थसम **Arthasama**

1. बीजपद से उत्पन्न समस्त श्रुतज्ञान।
2. अर्थसम द्रव्य निक्षेप।

अर्थांतर **Arthaṅtara**

प्रकृत अर्थ से संबंध न रखने वाला अर्थ।

अर्थाचार **Arthācāra**

1. अष्टविध ज्ञानाराधना का एक प्रकार।

2. नयाश्रित शास्त्रपाठ की पद्धति।

अर्थाधिगम **Arthādhigama**

प्रमाण और नय के द्वारा पदार्थ का ज्ञान होना।

अर्थापत्ति **Arthāpatti**

स्थिति विशेष को देखकर किसी अर्थ का अनुमान लगाना।

अर्थापत्ति दोष **Arthāpatti**

जहां पर अभीष्ट अर्थ से अनिष्ट की आपत्ति उपस्थित हो।

अर्थापदत्व **Arthāpadatva**

आगमोक्त तत्त्व-व्यवस्था का निरूपण न करना।

अर्धनाराच **Ardhanārāca**

एक प्रकार का शारीरिक संहनन।

अर्धफालक **Ardhaphālaka**

श्वेतांबर संप्रदाय के जैन साधुओं द्वारा प्रारंभ में धारण किया जाने वाला अधोवस्त्र।

अर्धमागधी भाषा **Ardhamāgadhī Bhaṣā**

1. प्राकृतभाषाओं का एक प्रमुख भेद।
2. अट्ठारह देशी भाषाओं एवं उपभाषाओं से समन्वित आधे मगध प्रदेश में बोली जाने वाली प्राकृत भाषा।

अर्पित **Arpita**

प्रयोजन के अनुसार किसी एक धर्म का विवक्षा से कथन करना।

अर्हंत (तीर्थंकर) **Arhanta (tīrthaṅkara)**

1. विशेष पुण्य सहित अरहंत, जिनके कल्याणक महोत्सव मनाये जाते हैं।
2. विशेष पुण्य से तीर्थंकर नामकर्म प्रकृति के उदय को प्राप्त केवलज्ञानी साधक।

अर्हंत (भेद) **Arhanta (bheda)**

1. पाँच, तीन या दो कल्याणक युक्त।
2. सातिशय केवली अर्थात् गंधकुटीयुक्त केवली।
3. सामान्य केवली अर्थात् मूक केवली।

4. उत्सर्ग केवली।
5. अंतकृत् केवली।

अर्हंत (सामान्य) **Arhaṅta (Sāmānya)**

तीर्थंकर अरहंत के अतिरिक्त शेष केवलज्ञानी।

अर्ह (सूत्र) **Arha (Sūtra)**

योग्य। सविचार भक्त प्रत्याख्यान सल्लेखना के लिये कौन व्यक्ति योग्य है और कौन नहीं, इसका वर्णन करने वाला ग्रंथ।

अर्हत् **Arhat**

अर्हन्, अरहंत, अरिहंत, अरुहंत अर्हन्त का समानार्थी शब्द।

अर्हन् **Arhan**

1. अरहंत भगवान्।
2. ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय एवं अंतराय-इन चार घाति-कर्मों के नष्ट हो जाने पर प्राप्त विशिष्ट अवस्था वाला जीव।

अलाभपरीषह **Alābhaparīṣaha**

1. अभीष्ट पदार्थ की अप्राप्ति।
2. बाईस परीषहों में से एक।

अलोकाकाश **Alokākāśa**

आकाश का वह भाग, जिसमें शेष द्रव्य नहीं पाए जाते।

अल्पबहुत्व **Alpabahutva**

परस्पर हीनाधिकता का बोध।

अवक्तव्य **Avaktavya**

सप्तभंगी में एक भंग, जिसमें स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा से परद्रव्य क्षेत्र काल भाव का कथन न होना।

अवगाढ सम्यक्त्व **Avagāṛha samyaktva**

द्वादशांग के अध्ययन से होने वाला दृढ़ श्रद्धान।

अवग्रह **Avagraha**

पदार्थ का सामान्य प्रतिभास होने के बाद उस वस्तु का प्रथम बोध।

अवग्रह (अर्थ) **Avagraha (Artha)**

व्यक्त पदार्थों का बोध।

अवग्रह (अविशद) **Avagraha (Aviśada)**

भाषा, आयु व रूपादि विशेषणों को न ग्रहण कर व्यवहार के कारणभूत पुरुष मात्र के सत्त्वादि को ग्रहण करने वाला तथा ईहा आदि उत्पत्ति में कारण रूप बोध।

अवग्रह (विशद) **Avagraha (Viśada)**

पदार्थों का निर्णयात्मक रूप बोध।

अवग्रह (व्यंजन) **Avagraha (Vyaṅjana)**

अव्यक्त शब्दादि विषयों का स्पर्शन, रसना, घ्राण और श्रोत्र द्वारा वस्तु का प्रथम बोध।

अवच्छिन्न **Avacchinna**

अन्य धर्मों में व्यावृत्तिपूर्वक निजस्वरूप का निश्चय करने वाले धर्म विशेष की संयुक्तता।

अवच्छेदक **Avacchedaka**

अन्य धर्मों की व्यावृत्तिपूर्वक धर्मी के स्वरूप का बोध कराने वाला धर्मविशेष।

अवतारक **Avatāraka**

उपशम श्रेणी से नीचे उतारने वाला भाव या कार्य।

अवदान **Avadāna**

अन्य पदार्थों से अलग कर पदार्थ के विवक्षित अर्थ को जानना।

अवद्य **Avadya**

गर्ह्य, निंद्य कार्य।

अवधारणा **Avadhārṇā**

वाक्य में एवकार द्वारा निश्चित अर्थ का प्रकाशन।

अवधि (अनुगामी-भेद) **Avadhi (Anugāmī bheda)**

अनुगामी अवधिज्ञान तीन प्रकार का होता है:

1. क्षेत्रानुगामी : जो अवधिज्ञान एक क्षेत्र में उत्पन्न होकर स्वतः या पर प्रयोग से जीव के स्वक्षेत्र या परक्षेत्र में विहार करने पर विनष्ट नहीं होता।
2. भवानुगामी : जो अवधिज्ञान उत्पन्न होकर उस जीव के साथ अन्य भव में जाता है।

3. क्षेत्रभवानुगामी: जो भरत, ऐरावत और विदेह आदि क्षेत्रों में तथा देव नारक, मनुष्य और तिर्यंच भव में भी साथ जाता है।

अवधि (अनवस्थित) **Avadhi (Anavasthita)**

जो अवधिज्ञान वायु-वेग से प्रेरित जल तरंगों के समान सम्यग्दर्शन आदि गुणों की कभी वृद्धि और कभी हानि होने से जितने परिमाण में उत्पन्न होता है, उतना बढता है जहाँ तक उसे बढना चाहिये और घटता है, जहाँ तक उसे घटना चाहिये।

अवधि (अवस्थित) **Avadhi (Avasthita)**

1. जो अवधिज्ञान सम्यग्दर्शन आदि गुणों के समान रूप से स्थिर रहने के कारण जितने परिमाण में उत्पन्न हो, उतने ही परिमाण में बना रहे।
2. पर्याय के नाश होने तक या केवलज्ञान के उत्पन्न होने तक मस्सा आदि शरीर के चिह्नों के सदृश न घटता है, न बढ़ता है।

अवधि (क्षायोपशमिक) **Avadhi (Kṣāyopaśamika)**

सम्यग्दर्शन या चरित्र की विशुद्धता के प्रभाव से साधकों को उत्पन्न होने वाला एक प्रकार का विशेष ज्ञान, जिससे इन्द्रिय की सहायता के बिना मूर्तिक पदार्थों का ज्ञान हो।

अवधि (गुणप्रत्यय) **Avadhi (Guṇapratyaya)**

सम्यक्त्व से अधिष्ठित अणुव्रत और महाव्रत गुणों के कारण होने वाला अवधिज्ञान।

अवधि (देश) **Avadhi (Deśa)**

सम्यक्त्व की मर्यादा वाला अवधिज्ञान।

अवधि (परम) **Avadhi (Parama)**

असंख्यात संयम भेद की मर्यादा को लेकर होने वाला ज्ञान।

अवधि (मिथ्या) **Avadhi (Mithyā)**

मिथ्यादृष्टि का विभंग अवधिज्ञान।

अवधि (वर्धमान) **Avadhi (Vardhamāna)**

जंगल की वृद्धिंगत अग्नि के समान सम्यग्दर्शन के विशुद्ध रूप परिणामों से उत्पन्न असंख्यात लोकप्रमाण तक बढ़ने वाला ज्ञान।

अवधि (सम्यक्) **Avadhi (Samyak)**

अवधिज्ञान के द्वारा सम्यग्दृष्टि को होने वाला रूपी पदार्थों का ज्ञान।

अवधि (सर्व) **Avadhi (sarva)**

1. सर्व का अर्थ केवलज्ञान है। सर्व के एक देशरूपी द्रव्य में वर्तमान ग्रहण।
2. आकुंचन और विसर्पण आदि को प्राप्त पुद्गल द्रव्य जिसकी मर्यादा है, वह ज्ञान।

अवधि (हीयमान) **Avadhi (Hīyamāna)**

जो अवधिज्ञान परिमित उपादान सन्तति वाली अग्निशिखा के समान सम्यग्दर्शन आदि गुणों की हानि से हुए संक्लेश परिणामों के बढ़ने से जितने परिमाण में उत्पन्न होता है, उससे लेकर मात्र अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण जानने की योग्यता तक घटता चला जाय।

अवधि जिन **Avadhi jina**

1. अवधिज्ञान स्वरूप जिन।
2. रत्नत्रयधारी अवधिज्ञानी जिन।

अवधिज्ञातार्थ **Avadhijñātārtha**

अप्रसिद्ध, शीघ्र उच्चारण एवं अप्रतीति वाले शब्दों के कारण प्रतिवादी को समझ में न आने वाला वाद ।

अवधिज्ञान **Avadhijñāna**

1. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा अपने विषयभूत रूपी पदार्थ को जानने वाला ज्ञान।
2. परमित विषय वाला होने से यह ज्ञान अवधि ज्ञान कहलाता है।

अवधि (अननुगामी) **Avadhi (Ananugāmī)**

स्वामी के साथ अनुसरण न करने वाला अवधिज्ञान।

अवधिज्ञान (अनुगामी) **Avadhijñana (Anugāmī)**

सूर्य के प्रकाश के समान स्वामी के साथ अनुगमन करने वाला अवधिज्ञान।

अवधिज्ञान (भवप्रत्यय) **Avadhijñāna (Bhavapratyaya)**

भव के निमित्त से होने वाला अवधिज्ञान।

अवधि ज्ञानावरण **Avadhai jñānāvaraṇa**

अवधिज्ञान को आवृत करने वाला कर्म।

अवधि दर्शन **Avadhi darśana**

अवधिजिन से पूर्व होने वाला दर्शन।

अवधि दर्शनावरण **Avadhi darśanāvaraṇa**

जो आवरण कर्म अवधिदर्शन को न होने दे।

अवधिमरण **Avadhimaraṇa**

जो प्राणी जिस तरह का मरण वर्तमान काल में प्राप्त करता है, वैसा ही मरण आगे भी उसको प्राप्त होगा तो ऐसे मरण को अवधिमरण कहते हैं।

अवधिस्थान **Avadhisthāna**

सप्तम नरक का इंद्रक।

अवधृत **Avadhṛta**

भोजन बेला के अनुसार विभिन्न प्रकार की अवधियों में भोजन त्याग करना। इसे अवधृत काल अनशन भी कहते हैं।

अवमौदर्य **Avamaudarya**

बत्तीस ग्रास प्रमाण स्वाभाविक आहार से क्रमशः एक-दो ग्रास कम करते हुए एक ग्रास तक आहार का ग्रहण करने वाला तप।

अवर्णवाद **Avarṇavāda**

गुणी पुरुषों में दोष न होने पर भी उनमें दोषों का उद्भावन करना।

अवसर्पिणी **Avasarpiṇī**

जीवों के अनुभव, आयु और शरीर आदि के क्रमशः ह्रास को प्राप्त होने वाला कालखण्ड।

अवाय **Avāya**

1. भाषा आदि विशेष के ज्ञान से पदार्थ का निश्चित हो जाना।
2. अवाय मतिज्ञान का एक भेद है।

अविनाभाव **Avinābhāva**

सहभाव नियम तथा क्रमभाव नियम जिसके बिना जिसकी सिद्धि न हो।

अविनेय **Avineya**

जिनमें जीवादि पदार्थों को सुनने व ग्रहण करने का गुण नहीं है।

अविपाक निर्जरा **Avipāka nirjarā**

उदयकाल के पूर्व तपश्चरण आदि के द्वारा कर्मों को झड़ा देना।

अविभागप्रतिच्छेद **Avibhāgapraticcheda**

सभी जड़ और चेतन पदार्थों के गुणों में देखे जाने वाले अंतिम शक्ति के अंश।

अविरतसम्यग्दृष्टि **Aviratasamyagdṛṣṭi**

जिनवाणी पर श्रद्धा रखने वाला, चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव जो इंद्रियों के विषयों और हिंसा से विरत नहीं है।

अव्याघात **Avyāghāta**

जहाँ स्थितिकाण्ड का घात न पाया जाय।

अव्याबाध **Avyābādha**

कामविकार आदि से उत्पन्न होने वाली बाधाओं से रहित लौकान्तिक देव।

अशरणानुप्रेक्षा **Aśaraṇānuprekṣā**

मरण से रक्षा करने वाला कोई नहीं है, ऐसा चिंतन करना।

अशुचित्वानुप्रेक्षा **Aśucitvānuprekṣā**

शरीर की अपवित्रता का चिंतन करना।

अशुद्ध अर्थ पर्याय नैगम **Aśuddha artha paryāya naigama**

अशुद्ध द्रव्य व उसकी किसी एक अर्थ पर्याय को गौण-मुख्य रूप से विषय करने वाला नय।

अशुभ काययोग **Aśubha kāyayoga**

पाप रूप क्रियाओं द्वारा होने वाला योग।

अशुद्ध चेतना **Aśuddha cetana**

इष्ट-अनिष्ट बुद्धि पूर्वक पर पदार्थों को अहंकार से युक्त जानना। यह अशुद्ध चेतना दो प्रकार की है- (i) कर्म चेतना (ii) कर्मफल चेतना।

अशुद्ध द्रव्य व्यंजन पर्याय नैगम **Aśudha dravya vyaṅjana parayāya naigama**

अशुद्ध द्रव्य के आकार का संकल्प करने वाला नय।

अशुद्ध द्रव्यार्थिक नय **Aśuddha dravyārthika naya**

अशुद्ध द्रव्य को ग्रहण करने वाला नय।

अशुद्ध निश्चय नय **Aśuddha niścaya naya**

अशुद्धस्वभाव का ग्रहण करने वाला नय।

अशुद्ध द्रव्य नैगम **Aśuddha dravya naigama**

अशुद्ध द्रव्य का संकल्प करने वाला नय।

अशुद्ध परिणाम **Aśuddhapariṇāma**

जीव का शुभ-अशुभ भाव।

अशुद्ध पर्याय **Aśuddha paryāya**

देव-नरक-तिर्यक् मनुष्य स्वरूप पर्याय, जो पर द्रव्य के संयोग से उत्पन्न होती है।

अशुद्ध पर्यायार्थिक नय **Aśuddha paryāyarthika naya**

चिरकालस्थायी संयोगी व स्थूल पर्याय ही जिसका प्रयोजन है।

अशुद्ध पारिणामिक भाव **Aśuddha pāriṇāmika bhāva**

जीवत्व, भव्यत्व एवं अभव्यत्व, तीनों भाव विनाशक पर्याय के आश्रित होने से अशुद्ध पारिणामिक भाव है।

अशुद्ध सद्भूत **Aśuddha sadbhūta**

अशुद्ध गुण व अशुद्ध गुणी में अशुद्ध पर्यायी व अशुद्ध पर्यायी में भेद का कथन करना।

अशुद्ध सद्भूत व्यवहारनय **Aśuddha sadbhūta vyavahāranaya**

गुण-गुणी या अशुद्ध पर्याय व पर्यायवान् का भेद करने वाला नय, जैसे संसारी जीव का देव पर्याय।

अशुद्धोपयोग **Aśuddhopayoga**

आत्मा का वह भाव जो शुद्ध वीतराग न हो, किंतु शुभ-अशुभ रूप हो।

अशुभ गति **Aśubha gati**

नरक व तिर्यंच गति।

अशुभ तैजस **Aśubha taijasa**

क्रोधवश साधु के बांये कंधे से तैजस शरीर सहित आत्म प्रदेशों का फैलना और उससे नगर आदि व साधु का भस्म हो जाना।

अशुभ नाम कर्म प्रकृति **Aśubhanāmakarma prakṛti**

जिस कर्म के उदय से रमणीयपना न होकर आंगोपांग में अशुभ लक्षण का प्रकट होना।

अशुभ परिणाम **Aśubha pariṇāma**

पाप बंधक कारक भाव।

अशुभ मनोयोग **Aśubha manoyoga**

पाप रूप विचारों के द्वारा होने वाला योग।

अशुभ योग **Aśubha yoga**

1. अशुभ कार्यों में मन-वचन-काय की प्रवृत्ति।
2. कुत्सित परिणाम से उत्पन्न मन-वचन-काय की क्रिया।

अशुभ लेश्या **Aśubha leśyā**

कषायों के अशुभ भाव। अशुभ लेश्याएँ तीन हैं– कृष्ण, नील, कापोत।

अशुभ वचनयोग **Aśubha vacanayoga**

पाप रूप वचन-क्रिया से होने वाला योग।

अशुभ विहायोगति **Aśubha vihayogati**

नाम कर्म की एक प्रकृति। जैसे-ऊँट आदि की गति।

अशुभ श्रुत **Aśubha śruta**

अनर्थदंड का एक भेद, जिसके सुनने से जीव का कल्याण न हो।

अशुभोपयोग **Aśubhopayoga**

विषय कषाय से युक्त जीव के संपर्क से होने वाली उन्मार्ग में प्रवृत्ति।

अशून्यता **Aśūnyatā**

आत्मा का बाह्य पदार्थों के अवलंबन तथा राग द्वेषादि से युक्त होना।

अशैलेषी **Aśaileṣī**

जो ध्यान मुद्रा शैल के समान स्थिर न हो।

अशौच **Aśauca**

सभी प्रकार के लोभ से मुक्त होना।

अश्रद्धा **Aśraddhā**

तत्वार्थों के प्रति आस्था, विश्वास और रुचि नहीं होना।

अश्रुत निःसृत **Aśrutaniḥsṛta**

शास्त्रों के प्रमाण-ज्ञान से सहमत नहीं होना।

अश्रेणी **Aśreṇī**

अक्रमवार, वक्र संयत गुणस्थानों के विभाजन का एक रूप।

अश्वक्रान्ता **Aśvakrāntā**

कर्म परमाणुओं की अनुभाग शक्ति को घटाने की प्रक्रिया।

अष्टकर्म **Aṣṭa karma**

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम , गोत्र और अंतराय।

6—416 Min. of HRD/2014

अष्टद्रव्य **Aṣṭa dravya**

जिन-पूजन में प्रयुक्त आठ द्रव्य - जल, चंदन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप एवं फल।

अष्ट प्रवचन मातृका **Aṣṭa pravacana matṛkā**

माता के समान मुनि की रक्षा करने वाली पाँच समितियाँ एवं तीन गुप्तियाँ।

अष्ट प्रातिहार्य **Aṣṭa prātihārya**

छत्र, चमर, अशोक वृक्ष, दुन्दुभि, सिंहासन, भामण्डल, दिव्य-ध्वनि, पुष्प-वृष्टि ये आठ प्रातिहार्य हैं।

अष्ट मंगल द्रव्य **Aṣṭa maṅgala dravya**

जिन प्रतिमा के समीप स्थित आठ मंगल द्रव्य– भृंगार, कलश, दर्पण, चँवर, ध्वजा, बीजना, छत्र और ठौना (सुप्रतिष्ठत)।

अष्ट मध्यप्रदेश **Aṣṭa madhya pradeśa**

आत्मा और विश्व के चलायमान मध्यवर्ती आठ प्रदेश।

अष्टम भक्त **Aṣṭama bhakta**

तीन दिन तक निरंतर चतुर्विध आहार का त्याग। इसे तेला भी कहते हैं।

अष्टम वसुधा **Aṣṭama vasudhā**

सिद्धशिला, लोकाकाश का अंतिम भाग।

अष्टमी क्रिया **Aṣṭamī kriyā**

प्रत्येक अष्टमी को जैन साधु द्वारा की जाने वाली सिद्ध, श्रुत, चारित्र आदि की स्तुति व वंदना।

अष्टमूलगुण **Aṣṭamūlaguṇa**

1. जैन श्रावकों द्वारा मद्य, मांस और मधु का त्याग, रात्रि भोजन त्याग, जीवदया, प्रतिदिन देवदर्शन करना और जल छानकर पीना।
2. अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह-इन पांच अणुव्रतों के पालन के साथ मधु, मद्य और मांस का त्याग।
3. पांच उदुम्बर फलों एवं तीन मकार-मद्य, मांस और मधु का त्याग।

अष्टांक **Aṣṭāṅka**

जैन कर्म सिद्धांत की गणना में अनंत गुण की वृद्धि।

अष्टांग **Aṣṭāṅga**

शरीर के प्रमुख आठ अंग– हृदय, मस्तिष्क, पीठ, नितंब, दो हाथ तथा दो पैर।

अष्टांग सम्यक् ज्ञान **Aṣṭāṅga Samyak Jñāna**

सम्यक् ज्ञान के शब्दाचार आदि आठ अंग। यथा-स्वाध्याय का काल, शास्त्र का विनय, सत्कार पूर्वक पाठ करना (उपधान), गुरु एवं शास्त्र का नाम प्रकट करना (बहुमान), वर्ण और पद से शुद्ध पढना (व्यंजन शुद्धि), अनेकांत स्वरूप अर्थ निश्चय (अर्थशुद्धि), अर्थ और पाठ-दोनों को शुद्ध पढ़ना (उभयशुद्धि)

अष्टाह्निका पर्व **Aṣṭāhnikā parva**

जैन परंपरा में कार्तिक, फाल्गुन एवं आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिनों में मनाये जाने वाला धार्मिक पर्व। इस पर्व में धार्मिक जन और साधु वर्ग नंदीश्वर, सिद्धचक्र आदि विधान व भक्ति-कार्य में संलग्न होते हैं।

असंकुट **Asaṅkuṭa**

केवली जिन द्वारा केवली समुद्घात के समय आत्मा के प्रदेशों से संपूर्ण लोकाकाश को व्याप्त करना।

असंक्षेपाद्धा **Asaṅkṣepāddhā**

सब से लघु कालावधि।

असंख्यात **Asaṁkhyata**

न गिने जाने योग्य / संख्यातीत। इसके असंख्य भेद हैं– पल्य, सागर आदि।

असंख्यात गुणवृद्धि **Asaṁkhyāta guṇavṛddhi**

गणित की किसी संख्या में असंख्यात का गुणा करने पर जो गुणनफल आये उतना किसी अन्य संख्या में जोड़ देना।

असंख्यात गुण हानि **Asaṁkhyāta guṇahāni**

गणित की किसी संख्या में असंख्यात का गुणा करने पर जो गुणनफल आये उतना किसी संख्या में से घटा देना।

असंख्यात भाग वृद्धि **Asaṁkhyāta bhāgavṛddhi**

किसी संख्या में असंख्यात का भाग देने पर जो राशिफल आये।

असंख्यातासंख्यात **Asaṁkhyātāsaṅkhyāta**

जिसकी गणना न की जा सके वह राशि। यह काल प्रमाण का एक भेद है।

असंख्येयाद्धा **Asaṁkhyeyāddhā**

आयु कर्म की आबाधाकाल, जघन्यकाल आवली का असंख्यात भाग प्रमाण।

असंग **Asaṅga**

पर पदार्थ में किसी प्रकार का ममत्व न होना। परिग्रह का त्याग।

असंचार **Asañcāra**

न्याय विषयों में किसी निर्णय को न कर पाने की असमर्थता।

असंज्ञी **Asaññī**

जो हेय-उपादेय का भेद न कर सके ऐसा मन रहित-संज्ञारहित जीव।

असंप्राप्तासृपाटिका संहनन **Asamprāptāsṛpātikā saṃhanana**

परस्पर में अस्थियों को नशों से बांधने वाला नाम कर्म।

असंयत गुणस्थान **Asaṃyata guṇāsthana**

जहाँ पर संयम संभव नहीं है ऐसे प्रथम से लेकर चतुर्थ गुणस्थान।

असंयत सम्यग्दृष्टि **Asaṃyata samyagdṛṣṭi**

अव्रत सम्यग्दृष्टि चतुर्थ गुणस्थान वाला जीव, जो संयम से रहित है।

असंसार **Asaṃsāra**

1. मुक्त अवस्था, जहाँ संसार के दुख नहीं हैं।
2. संसार में पुनः जन्म न लेने की स्थिति।

असतीपोषकर्म **Asatīpoṣakarma**

हिंसा आदि पापकर्मों में लिप्त हिंसक जानवर एवं अधीनस्थ कर्मचारियों एवं व्यक्तियों के परिपालन में सहयोग।

असत् **Asat**

अस्तित्व से रहित, अविद्यमान, मिथ्या, अभाव को व्यक्त करने वाला शब्द।

असत्प्रतिपक्षहेतु **Asatpratipakṣa hetu**

असत् एवं प्रतिपक्षी (प्रतिकूल) हेतु।

असत्य **Asatya**

वास्तविकता से रहित, अहितकारी, झूठ, घातक वचन।

असत्य मनोयोग **Asatyamanoyoga**

प्रमादयुक्त , असत्य मन से सम्पन्न होने वाली क्रिया।

असत्य वचन योग **Asatya vacana yoga**

मिथ्या वचन द्वारा होने वाला योग।

असत्यार्थ उपचरित **Asatyārtha upcarita**

जो वस्तु अपनी नहीं है उसे स्वयं की मानना। यथा-किसी नगर या देश को मात्र वहां पर रहने के कारण मेरा देश या मेरा नगर ऐसे झूठे कथन करना।

असत्यासत्य **Asatyāsatya**

दूसरों की वस्तु को अपनी कह कर या मान कर किसी को दान करना या करने का कथन करना।

असत्योपचार **Asatyopacāra**

जो द्रव्य भिन्न-भिन्न हैं, उन्हें एक मानना।

असद्गुणोद्भावन **Asadguṇodbhāvana**

जो गुण अपने में नहीं है उन्हें प्रकट करना। यह नीच गोत्र के आस्रव का कारण है।

असद्भूत **Asadbhūta**

भेद रूप पदार्थों को अभेद रूप ग्रहण करना, जैसे– आत्मा और शरीर को एक मानना।

असत्त्व **Asattva**

जिसका अस्तित्त्व (सत्ता) न हो।

असद्रूप **Asadrūpa**

1. वस्तु के विभिन्न विरोधी धर्मों में से किसी एक धर्म को प्राथमिकता देना।
2. असंबद्ध होना ।

असद्वाद **Asadvāda**

अस्तित्व हीनता का सिद्धांत।

असद्वेद्य **Asadvedya**

जिसके फलस्वरूप अनेक प्रकार के दुःख मिलते हैं, ऐसा असातावेदनीय कर्म।

असमाधि **Asamādhi**

धर्म ध्यान एवं शुक्ल ध्यान में रत नहीं होना।

असमीक्ष्याधिकरण **Asamīkṣyādhikaraṇa**

प्रयोजन के विचार किये बिना व्रत की मर्यादा के बाहर अधिक प्रवृत्ति करना।

असावद्यकर्म **Asāvadya karma**

जैन मुनियों के द्वारा की जाने वाली क्रियाएँ, जिनमें आरंभ आदि पापबंध न हो।

असिद्ध **Asiddha**

संसारी जीव, जो सिद्ध नहीं हैं।

असिद्धत्व **Asiddhatva**

सिद्ध पर्याय की प्राप्ति न होने रूप असिद्ध भाव है। यह औदयिक भाव का एक भेद है।

असिद्ध साध्य **Asiddha sādhya**

अन्य प्रमाण से सिद्ध नहीं होने वाला साध्य।

असिद्ध हेतु **Asiddha hetu**

जिस हेतु से साध्य की सिद्धि न हो।

असिपत्र **Asipatra**

तलवार की धार के समान पैने पत्तों वाले नारकीय वृक्ष (नरक में होने वाले वृक्ष)।

असिरत्न **Asiratna**

चक्रवर्ती की तलवार।

असुरकुमार **Asurakumāra**

जो नरक तक जाकर नारकियों को उनके पूर्व संबंधी बैर का स्मरण कराकर परस्पर में लड़ाते हैं, ऐसे भवनवासी देव।

असूत्र Asūtra

तर्क विरुद्ध या तर्कहीन, आगम विहीन।

अस्तिकाय **Astikāya**

बहुप्रदेशी द्रव्य।

अस्तित्व **Astitva**

1. पदार्थ का सत्ता रूप मौलिक धर्म।
2. जीवादि पदार्थों का अनादि पारिणामिक भाव।

अस्तिद्रव्य **Astidravya**

स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल एवं स्वभाव की अपेक्षा से विवक्षित द्रव्य।

अस्तिनास्ति पूर्व **Astināsti pūrva**

1. भाव पर्याय एवं अभाव पर्याय विधि से छहों द्रव्यों का द्रव्यार्थिक एवं पर्यायार्थिक नय से वर्णन करने वाला पूर्व।
2. चतुर्दश पूर्वों में से एक।

अस्ति-नास्ति प्रवाद **Asti nāsti pravāda**

चौदह पूर्व में चौथे पूर्व का नाम – इसमें सात अंगों में जीवादि वस्तु का स्वरूप है, इसके साठ लाख पद हैं।

अस्ति-नास्ति भंग **Asti nāsti bhanga**

द्रव्य में अपने द्रव्यादि की अपेक्षा अस्तिपना है एवं पर की अपेक्षा नास्तिपना है-इन दोनों को कहना अस्ति-नास्ति है।

अस्तेय व्रत **Asteya vrata**

दूसरों के द्वारा न दी गई या भूली हुई वस्तु को ग्रहण न करना। सर्वदेश एवं एकदेश स्तेय के त्याग से यह महाव्रत एवं अणुव्रत कहा जाता है।

अस्थिर नाम कर्म प्रकृति **Asthira nāma karma prakṛti**

जिस कर्म के उदय से शरीर के धातु-उपधातु यथास्थान नहीं रहते।

अस्नातक **Asnātaka**

बंधन सहित संसारी जीव।

अहिंसा **Ahiṃsā**

1. राग आदि भावों की उत्पत्ति का न होना।
2. प्रमाद के योग से किसी भी प्राणी की द्रव्य या भाव हिंसा न करना।

अहिंसा व्रत **Ahiṃsā vrata**

मन, वचन एवं काय से कृत, कारित एवं अनुमोदना से हिंसा का त्याग अहिंसा व्रत है। त्रस जीवों की सांकल्पिक हिंसा का त्याग अहिंसाणुव्रत तथा सभी जीवों की हिंसा का पूर्ण त्याग अहिंसा महाव्रत कहलाता है।

आकम्पित **Ākampita**

1. कंपनसहित।
2. गुरु वंदना करके उनकी अनुकंपा उत्पन्न कर फिर दोष कहना। आलोचना का एक दोष

आकाश **Ākāśa**

जीव आदि सब द्रव्यों को अवगाह (स्थान) देने वाला द्रव्य।

आकाशगता चूलिका **Ākāshagatā cūlikā**

श्रुतज्ञान, आकाश में गमन करने की विद्या एवं जप-तप आदि का वर्णन करने वाली चूलिका।

आकिंचन्य **Ākincanya**

बाह्य एवं आभ्यंतर चौबीस प्रकार के परिग्रहों से रहित, मुनि का निराकुल भाव।

आक्रंदन **Ākrandana**

परिताप के कारण आँसू गिरने के साथ विलापपूर्वक खुलकर रोना। असाता वेदनीय कर्मों के आस्रव का कारण भूत - पश्चाताप से अश्रुपात करते हुए रोना।

आक्रोशपरीषह **Ākrośaparīṣaha**

क्रोधोत्पादक, गर्हित एवं निंद्य वचनों के प्रतिकार की सामर्थ्य होने पर भी सहनशील बने रहना।

आक्षेपिणी कथा **Ākṣepiṇī kathā**

ऐकांतिक दृष्टियों के निराकरणपूर्वक षड्द्रव्यों एवं नव पदार्थों का निरूपण करने वाली कथा।

आगम **Āgama**

पूर्वापर विरोधादि से रहित आप्त के वचन।

आगम द्रव्य **Āgama dravya**

विवक्षित प्राभृत का ज्ञाता, किन्तु वर्तमान में तद्विषयक उपयोग से रहित जीव।

आगम द्रव्य निक्षेप **Āgamadravya nikṣepa**

जो जीव किसी शास्त्र का ज्ञाता हो, परन्तु वर्तमान में उपयोग उधर न हो, तब भी उसे उस शास्त्र का ज्ञाता कहना।

आगमबाधित **Āgamabādhita**

आगम के विरुद्ध तथ्य।

आगमभावनिक्षेप **Āgama bhāva nikṣepa**

जिस शास्त्र का ज्ञान हो, उधर उपयोग लगाना।

आगमाभास **Āgamābhāsa**

वीतराग पुरुषों से भिन्न के द्वारा उपदिष्ट या लिखित वचन।

आगाल **Āgāla**

द्वितीय स्थिति के द्रव्य का अपकर्षण करका उसके प्रथम स्थिति में निक्षेप करना।

आग्नेयी धारणा **Āgneyī dhāraṇā**

पिंडस्थ ध्यान की पांच धारणाओं में दूसरी धारणा, इसमें कर्मों को जलाने की विधि का चिंतन होता है।

आचाम्ल (आहार) **Ācāmla (āhāra)**

काँजी सहित केवल भात के आहार, जिसे क्षपक अधिकतर लगातार उपवास में ही लेता है।

आचारवर्धन व्रत **Ācāravardhana vrata**

एक प्रकार का व्रत जिसमें सौ दिन उपवास एवं उन्नीस पारणा शामिल हैं।

आचारांग **Ācārāṁga**

मुनियों के आचार का निरूपण करने वाला प्रथम अंग ग्रंथ।

आचार्य **Ācārya**

स्वयं विहित आचरण का परिपालन करते हुए भव्य जीवों को व्रतों का आचरण कराने वाले महाव्रती परमेष्ठी।

आचार्य निमंत्रण **Ācārya nimantraṇa**

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं पूजन-विधान आदि के प्रारंभ में यजमान द्वारा प्रतिष्ठाचार्य को श्रीफल आदि देकर विशेष सम्मानपूर्वक पूजा-पाठ करने का निवेदन करना।

आचार्यपदप्रतिष्ठापन क्रिया **Ācāryapadapratiṣṭhāpana kriyā**

आचार्य पद ग्रहण करते समय सिद्ध भक्ति, आचार्य भक्ति, शांति भक्ति करना।

आचार्यभक्ति **Ācārya bhakti**

आचार्यों के प्रति भावशुद्धिपूर्वक अनुराग।

आचार्य वंदना **Ācārya vandanā**

साधुओं का एक कृतिकर्म - लघु सिद्ध, श्रुत एवं आचार्य भक्तिपूर्वक सिद्धांतवेत्ता आचार्यों को नमस्कार करना।

आचेलक्य **Ācelakya**

महाव्रती द्वारा वस्त्रादि समस्त परिग्रहों का परित्याग।

आजीवक **Ājīvaka**

मक्खलि गोशाल द्वारा प्रवर्तित एक प्राचीन संप्रदाय।

आज्ञा **Ājñā**

1. आदेश।
2. श्रुतज्ञान।
3. जीव, अजीव आदि पदार्थ जिसके द्वारा जाने जाते हैं, वह आप्त की आज्ञा आगम या जिनशासन।

आज्ञा कनिष्ठता **Ājñā kaniṣṭhatā**

श्रुतज्ञान में हीनता तथा असंयम की बहुलता होना।

आज्ञाचक्र **Ājñācakra**

मनुष्य के शरीर में सात चक्रों में से ललाट का चक्र।

आज्ञापनी भाषा **Ājñāpanī bhāṣa**

1. ऐसा वचन जिसमें आज्ञा सूचित हो।
2. आठ प्रकार के अनुभय वचन का दूसरा भेद।

आज्ञारुचि **Ājñaruci**

सम्यग्दर्शन के दस भेदों में एक भेद, जो वीतराग सर्वज्ञ की आज्ञानुसार श्रद्धा करने से हो।

आज्ञाविचय **Ājñāvicaya**

जिनागम के अनुसार पदार्थ का विचार करने वाला ध्यान।

आज्ञाव्यापादिकी क्रिया **Ājñāvyāpādikī kriyā**

शास्त्रोक्त आज्ञा का पालन न कर सकने के कारण उसका अन्यथा निरुपण करना।

आज्ञासम्यक्त्व **Ājñāsamyaktva**

सर्वज्ञप्रणीत आगम के निमित्त से होने वाला श्रद्धान।

आज्ञासम्यक्त्व आर्य **Ājñāsamyaktv ārya**

आर्यों का एक प्रकार। जिनेंद्र कथित वचनानुसार सम्यग्दर्शन को प्राप्त करने वाला।

आठवीं पृथ्वी **Āthavīṃ parthvī**

सिद्ध शिला।

आतपन **Ātapana**

तृतीय नरक का चौथा पटल।

आतपन योग **Ātapana yoga**

तप का एक प्रकार। सूर्य के सम्मुख खड़े होकर योग धारण करना।

आत्मद्रव्य **Ātma dravya**

चेतना लक्षणात्मक द्रव्य।

आत्मप्रवाद **Ātmapravāda**

आत्मा के विभिन्न धर्मों एवं छह जीवनिकायों का निरूपण करने वाला पूर्व नामक ग्रंथ।

आत्मरक्ष **Ātmarakṣa**

देव का एक भेद, जो अंगरक्षक के समान हो।

आत्मांगुल **Ātmāngula**

भरत-ऐरावत क्षेत्र में उत्पन्न तत्कालवर्ती मनुष्यों का अंगुल।

आत्मा **Ātmā**

दर्शन, ज्ञान, चरित्र रूप चैतन्य गुण समन्वित सत्ता, जिसमें दर्शन ज्ञान चारित्र को प्राप्त करने की शक्ति हो।

आत्मानुशासन **Ātmānuśāsana**

शम-दम आदि गुणों के द्वारा आत्मा को अनुशासित करना।

आदाननिक्षेपणसमिति **Ādānanikṣepaṇasamiti**

ज्ञान, संयम और शौच के साधनभूत उपकरणों को देखभाल कर रखना और उठाना।

आदेयनामकर्म प्रकृति **Ādeyanāmakarma prakarti**

नाम कर्म की एक प्रकृति जिसके उदय से शरीर कान्ति सहित होता है।

आधिकारिणी क्रिया **Ādhikārani kriyā**

हिंसा के उपकरणों को ग्रहण करना।

आनपान पर्याप्ति **Ānapāna paryāpti**

नोकर्म वर्गणाओं के कुछ स्कंधों को श्वासोच्छ्वास रूप परिणमाने की जीव की शक्ति की पूर्णता।

आनर्थक्य **Ānarthakya**

1. भोग-उपभोग के लिए आवश्यकता से अधिक वस्तु रखना।
2. भोग उपभोग परिमाण व्रत का अतिचार।

आनुपूर्वी **Ānupūrvī**

1. अनुलोम क्रम। इसके तीन भेद हैं- पूर्वानुपूर्वी-पश्चादानुपूर्वी तथा यथातथानुपूर्वी।
2. नाम कर्म की एक प्रकृति, जिसके उदय से विग्रहगति में आत्मप्रदेशों का आकार छोड़े हुए शरीर के आकार का हो।

आनुपूर्वी संक्रम **Ānupūrvī saṁkrama**

एक नियतक्रम में संक्रम, अंतरकरण करने के प्रथम समय में मोहनीय कर्म संबंधी सात करणों में प्रथम करण।

आपृच्छना **Āpṛcchanā**

गुरु की आज्ञानुसार आतापनादि योग धारण करना या अन्य ग्राम आदि की ओर गमन करना।

आप्त **Āpta**

वीतराग, सर्वज्ञ एवं हितोपदेशी पुरुष।

आबाधा **Ābādhā**

कर्म प्रकृति बंध होने के बाद जब तक उदय रूप या उदीरणा रूप वह कर्म प्रकृति हो तब तक का काल।

आबाधा आवली **Ābādhā āvalī**

अचलावली, उदीरणा की अपेक्षा सब कर्मों की आबाधा एक आवली प्रमाण होती है।

आबाधा कांडक **Ābādhā kāṇḍaka**

कर्मस्थिति के जितने भेदों में एक प्रमाण काल आबाधा है, उतने स्थिति के भेदों को आबाधा कांडक कहते हैं।

आबाधा काल **Ābādhā kāla**

कर्मरूप होकर आया हुआ द्रव्य जब तक उदय या उदीरणा रूप न हो तब तक का काल।

आभास **Ābhāsa**

मिथ्या प्रतीति अथवा भ्रम।

आभिग्रहिक **Ābhigrahika**

पूर्व निश्चित।

आभिग्रहिक मिथ्यादर्शन **Ābhigrahika mithyādarśana**

पूर्व निश्चित गलत श्रद्धान या गृहीत मिथ्यादर्शन।

आभिनिबोध **Ābhinibodha**

इंद्रिय और मन की सहायता से अभिमुख और नियमित पदार्थ का ज्ञान होना।

आभिनिबोधिक ज्ञान **Ābhinibodika jñāna**

मतिज्ञान।

आभिनिवेशक मिथ्यादर्शन **Ābhiniveśaka mithyādarśana**

परोपदेश बिना शुद्ध जीवादि पदार्थों के विषय में विपरीत श्रद्धान होना।

आभियोग्य (देव) **Ābhiyogya (deva)**

सवारी आदि में काम आने वाले दास के समान देव विशेष।

आभोग **Ābhoga**

जान करके भी अकार्य का सेवन करना।

आभ्यंतर **Ābhyaṅtara**

अंतरंग उपधि (परिग्रह) का एक प्रकार।

आभ्यंतर उपकरण **Ābhyaṅtara upakaraṇa**

द्रव्येंद्रिय की रक्षा करने वाला भीतरी अंग।

आभ्यंतर प्राण **Ābhyantara prāṇa**

भाव प्राण।

आभ्यंतर रचना **Ābhyantara racanā**

आंतरिक रचना।

आमंत्रणी **Āmaṅtarṇī**

आठ प्रकार के अनुभयवचन में पहली भाषा बुलाने वाले वचन।

आमर्शौषधि ऋद्धि **Āmarśauṣadhi ṛddhi**

साधु के स्पर्श मात्र से रोग दूर करने वाली शक्ति।

आमर्षण **Āmarṣaṇa**

शरीर के किसी एक भाग को स्पर्श करना।

आमोक्ष **Āmokṣa**

संसार से मुक्ति या सिद्धावस्था की प्राप्ति।

आम्नाय **Āmnāya**

1. पंथ या परंपरा
2. उच्चारण की शुद्धिपूर्वक पाठ को पुनः पुनः दोहराना।
3. आचार-शास्त्र के ज्ञाता द्वारा किया गया निर्दोष स्वाध्याय (पाठ का परिशीलन)।

आयंबिल **Āyambila**

स्वादरहित रूखा भोजन या नीरस भोजन।

आयत **Āyata**

चतुरस्राकार।

आयतन **Āyatana**

1. किसी स्थान का त्रिविमीय माप।
2. आवासीय स्थान।
3. सम्यग्दर्शन आदि गुणों का आधार या आश्रय।
4. सच्चे देव, शास्त्र, गुरु और इन तीनों के उपासक - ये छह आयतन कहलाते हैं।

आयु कर्म **Āyu karma**

मनुष्य आदि भवों को प्राप्त कराने वाला कर्म।

आयुक्तकरण **Āyuktakaraṇa**

नपुंसकवेद की क्षपणा एवं उपशामना के लिए उद्यत होकर प्रवृत्त होना।

आयोध्य **Āyodhya**

चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में सेनापति रत्न की संज्ञा विशेष।

आयोपाय **Āyopāya**

क्षपक के दोषों को दूर करने का आचार्यों का एक गुण।

आरंभकथा **Ārambhakathā**

1. विकथा के पच्चीस भेदों में एक भेद।
2. असि, मसि आदि कार्यों संबंधी कथा।

आरंभकोपदेश **Ārambhakopadeśa**

खेती आदि करने वालों को पृथ्वी, जल, अग्नि और पवन आदि के आरंभ का उपाय बताना।

आरंभक्रिया **Ārambha kriyā**

प्राणियों के छेदन-भेदन आदि क्रियाओं में स्वयं की प्रवृत्ति तथा अन्य की प्रवृत्ति देखकर हर्षित होना।

आरंभत्याग प्रतिमा **Ārambhatyāga-pratimā**

1. श्रावक की आठवीं प्रतिमा।
2. जीव हिंसा के कारण नौकरी, खेती, व्यापारादि के आरंभ से विरक्त होना।

आरंभवाद **Ārambhavāda**

कारण और कार्य के अस्तित्व का एक दर्शन।

आरंभीहिंसा **Ārambhī-himsā**

1. हिंसा के चार भेदों में एक भेद।
2. गृहस्थ के आरंभजनित कार्यों में होने वाली हिंसा।

आरण (इंद्र) **Āraṇa (Indra)**

कल्पवासी इंद्रों का एक भेद।

आरण (स्वर्ग) **Āraṇa (Swarga)**

1. स्वर्ग का पंद्रहवां कल्प।
2. आरण स्वर्ग का द्वितीय पटल।
3. इंद्रक विमान।

आराधना **Āradhanā**

1. परमार्थ को सिद्ध करने वाली क्रियायें।
2. सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक्तप– ये चार आराधनाएँ हैं।
3. सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप का उद्योतन, उद्यापन, निर्वहण, साधन एवं निस्तरण करने की क्रिया।

आराधित **Ārādhita**

परमार्थ सिद्ध करने के लिए उपायभूत अरहंत–सिद्ध आदि।

आराम **Ārāma**

साधुओं के रहने योग्य विविक्त स्थान का नाम।

आरोप **Āropa**

दोष लगाना, अध्यारोपण, एक वस्तु के गुणों को दूसरी वस्तु में आरोपित करना।

आरोहक-अवरोहक **Ārohaka avarohaka**

चढ़ने-उतरने वाला, उपशम श्रेणी पर चढ़ने वाला तथा उतरने वाला।

आरोहण **Ārohaṇa**

1. चढ़ना।
2. गुणस्थानों का एक बढ़ता हुआ क्रम।

आर्जव धर्म **Ārjava dharma**

माया कषाय से रहित निर्मल अन्तःकरण की सरल प्रवृत्ति।

आर्तध्यान **Ārta dhyāna**

अनिष्ट का संयोग और इष्ट का वियोग होने पर उनके परिहार के लिए बार-बार चिंतन करना तथा आगामी भवों में सुख की इच्छा का पुनः-पुनः चिंतन।

आर्य **Ārya**

गुणों से युक्त अथवा गुणी-जनों से सेवित व्यक्ति।

आर्यिका **Āryika**

उपचरित महाव्रतों की धारक संयमी साध्वी।

आर्षयज्ञ **Ārṣayajña**

तीर्थंकर, गणधर एवं अन्य केवलियों के शरीर संस्कार हेतु अग्नि कुमार इंद्र के मुकुट से उत्पन्न त्रिविध अग्नियों के प्रतीक रूप में हवन कुण्ड बनाकर मंत्र-उच्चारण पूर्वक आहुति देना।

आर्षवचन **Ārṣavacana**

आगम की प्रामाणिकता का निर्देश करने वाला वचन।

आर्हंत्यक्रिया **Ārhantya kriyā**

1. अरहंत के भाव अथवा कर्म रूप क्रिया।
2. केवलज्ञान होने पर देवों द्वारा की जाने वाली पूजा आदि क्रिया।

आलब्ध **Ālabdha**

कायोत्सर्ग तप का एक अतिचार।

आलुंच्छन **Āluñcchana**

1. आलोचना का एक भेद।
2. समभाव रूप स्वाधीन निज परिणाम।

आलोकित-पानभोजन **Ālokitapāna bhojana**

प्रकाश में देखकर किया जाने वाला भोजन - पान।

आलोचना **Ālocanā**

1. गुरु के सम्मुख अपने प्रमाद-जनित दोषों का निवेदन करना।
2. शुभाशुभ कर्म के उदय होने पर उन्हें आत्म-स्वरूप से पृथक् दोष रूप समझना।

आवर्जितकरण **Āvarjitakaraṇa**

केवली समुद्घात के अभिमुख होना।

आवर्त **Āvarta**

सामायिक करते समय जोड़े हुए हाथों को बायीं ओर से दायीं ओर ले जाना।

आवलि **Āvali**

असंख्यात समय समूह।

आवश्यक **Āvaśyaka**

मुनि और श्रावक के द्वारा दिन-रात में अवश्य करणीय विधि।

आवश्यकापरिहाणि **Āvaśyakāparihāṇi**

1. तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली सोलह कारण भावनाओं में एक।
2. समता, वंदना आदि षट् आवश्यक क्रियाओं का नियत-काल पर पालन करना।

आवश्यक निर्युक्ति **Āvaśyaka niryukti**

साधु-साध्वियों के दिन-रात के आवश्यक कर्तव्यों का प्रतिपादक शास्त्र।

आवाहनी मुद्रा **Āvāhanī mudrā**

दोनों हाथों से अंजलि को बांधकर प्राकाममूल (पहुंचे) पर्व और अंगुष्ठ को परस्पर मिलाने की मुद्रा।

आवीचिका मरण **Āvīcikā maraṇa**

जीव की आयु का प्रतिक्षण क्षीण होने रूप नित्य मरण।

7—416 Min. of HRD/2014

आश्चर्यपंचक **Āścaryapañcaka**

रत्नवृष्टि, पुष्पवृष्टि, देव दुदुंभि, मंद सुगंधित वायु का प्रवाह, जय-जयकार ध्वनि - तीर्थंकर या विशिष्ट महामुनियों के आहार के समय देवों द्वारा प्रकट किए जाने वाले ये पाँच आश्चर्य।

आष्टाह्निक पर्व **Āṣṭāhnika parva**

कार्तिक, फाल्गुन, और आषाढ़ के अंतिम आठ दिनों में किया जाने वाला अनुष्ठान - पूजा आदि करना।

आसंग **Āsaṅga**

परिग्रह में आसक्ति।

आसन्न भव्य **Āsannabhavya**

थोड़े भव धारण कर मोक्ष प्राप्त करने वाला जीव।

आसन्न मरण

संघ बाह्य स्वछंद कुशील साधु का मरण।

आसातना **Āsātanā**

कुचारित्र का क्षपण करना।

आसादन **Āsādana**

1. ज्ञान के प्रकाश का शरीर या वचन से निषेध करने वाले ज्ञानावरणीय तथा दर्शनावरणीय कर्म के आस्रव का कारण।
2. काय एवं वचन से प्रकाशित करने योग्य दूसरे के ज्ञान को रोक देना।
3. ज्ञानावरण एवं दर्शनावरण के बंध का कारण।
4. अनंतानुबंधी कषाय के वेदन रूप द्वितीय गुणस्थान।

आसिका **Āsikā**

मुनियों के आचार या समाचार का एक भेद, ठहरने की जगह से निकलते हुए देवता, गृहस्थ आदि से पूछकर गमन करना अथवा पाप क्रियाओं से मन को रोकना।

आसीधिका **Āsīdhikā**

जिनमंदिर अथवा यति का निवास अथवा मठ से लौटते समय उच्चारण करने का शब्द, जिसका अर्थ वहाँ रहने वाले भूत-यक्षादि से पूछकर बाहर आना है। इसके लिए असही शब्द का भी प्रयोग होता है।

आसेवनाकुशील **Āsevanākuśila**

संयम के विपरीत आराधना करने वाला साधु।

आस्तिक्य **Āstikya**

जीवादि पदार्थों को यथायोग्य अपने स्वभाव से युक्त मानने की बुद्धि।

आस्थानांगण **Āsthānāṅgaṇa**

समवसरण की एक भूमि जहाँ बैठ कर मनुष्य व देव मानस्तंभों की पूजा करते हैं।

आस्यनिर्विषऋद्धि **Āsyanirviṣa ṛddhi**

विशेष ऋद्धि, जिसके प्रभाव से विष निर्विष बन जाय।

आस्रव **Āśrava**

1. काय, वचन और मन की क्रिया।
2. शुभ-अशुभ कर्मों का आगम द्वार।

आस्रवद्वार **Āsravadvāra**

कर्म वर्गणा के आने के सत्तावन द्वार- पाँच मिथ्यात्त्व, बारह अविरत, पच्चीस कषाय, एवं पंद्रह प्रमाद।

आस्रवभावना **Āsrava bhāvanā**

1. बंध के कारणों का निरंतर चिंतन करना।
2. आस्रवजन्य दोषों का चिंतन।

आस्रवानुप्रेक्षा **Āsravānuprekṣā**

आस्रव भावना का चिंतन।

आहार **Āhāra**

तीन शरीर और छह पर्याप्तियों के योग्य पुद्गलों का ग्रहण करना।

आहारक **Āhāraka**

1. तीन शरीर वर्गणाओं में से किसी एक वर्गणा को तथा भाषा वर्गणा एवं मनोवर्गणा को नियम से ग्रहण करने वाला।
2. ओज, लोभ और प्रक्षेप आहार में से किसी एक प्रकार के आहार को ग्रहण करने वाला जीव।
3. आहारक शरीर लब्धि से संयुक्त जीव।

आहारक चतुष्क **Āhārakacatuṣka**

आहारक शरीर, आहारक आंगोपांग, बंधन एवं संघात।

आहारक द्विक **Āhārakadvika**

आहारक शरीर तथा आहारक आंगोपांग।

आहारक मार्गणा **Āhārakamārgaṇā**

चौदहवीं मार्गणा, जिसमें जीवों के आहारक एवं अनाहारक का कथन है।

आहारक मिश्रकाययोग **Āhāraka miśrakāyayoga**

आहारक शरीर की उत्पत्ति प्रारंभ होने के प्रथम समय से लेकर शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने तक अन्तर्मुहूर्त के मध्यवर्ती अपरिपूर्ण शरीर के द्वारा उत्पन्न योग।

आहारक योग **Āhāraka yoga**

सूक्ष्म तत्त्व के विषय में होने वाले संदेह को केवली के पास जाकर दूर करने की मुनि की क्रिया।

आहारक लब्धि **Āhārakalabdhi**

ऋद्धि विशेष। प्रमत्तगुणस्थानवर्ती मुनि को आहारक शरीर निर्माण करने की शक्ति का प्रगट होना।

आहारक वर्गणा **Āhāraka vargaṇā**

वह पुद्गल स्कंध, जिनसे औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीन शरीर बनते हों।

आहारक शरीर **Āhāraka śarīra**

सूक्ष्म तत्त्व के विषय में जिज्ञासा होने पर छठे गुणस्थानवर्ती प्रमत्त संयत साधु जिस शरीर के द्वारा केवली भगवान् के पास जाकर जिज्ञासा का समाधान करता हैं।

आहारक शरीर अंगोपांग **Āharaka śarira aṅgopāṅga**

वह नामकर्म, जिसके उदय से मुनि के मस्तक से जो आहारक शरीर निकलता है, उसमें अंगोपांग होते हैं।

आहारकशरीरनाम प्रकृति **Āhārakaśarīranāmaprakṛti**

आहारक शरीर बनाने वाली नामकर्म की प्रकृति।

आहारक शरीर बंध **Āhārakaśarīrabaṅdha**

आहारक शरीर बनने के लिए आहारक वर्गणाओं का परस्पर मिल जाना।

आहारकसमुद्घात **Āhārakasamudghāta**

सूक्ष्म तत्त्व के विषय में जिज्ञासा उत्पन्न होने पर ऋषि के मस्तक से मूल शरीर से संपर्क रखते हुए एक हाथ ऊँचा सफेद रंग का सर्वांग सुंदर पुतला निकलकर अन्तर्मुहूर्त में जहाँ कहीं भी केवली भगवान को देखता है वहाँ जाकर उनके दर्शन मात्र से ऋषि की जिज्ञासा का समाधान पा कर उसका पुनः अपने स्थान में लौट आना।

आहारकसमुद्घात **Āhāraka samudghāta**

आहारक शरीर की रचना के लिए होने वाला आत्म-प्रदेशों का बहिर्गमन।

आहारकाल **Āhārakāla**

दिगंबर जैन साधुओं का भोजन काल। यह तीन मुहूर्त जघन्य, दो मुहूर्त मध्यम, एक मुहूर्त उत्कृष्ट काल होता है।

आहारचर्या **Āhāra caryā**

श्रावक के द्वारा नवधाभक्तिपूर्वक जैन साधु को आहार के लिए आमंत्रित करने पर साधु द्वारा विधिपूर्वक उनके घर में दिन में एक बार खड़े होकर पाणि-पात्र में भोजन लेना।

आहारदान **Āhāradāna**

श्रद्धा भक्तिपूर्वक प्रासुक अन्न आदि आहार सुपात्र को देना।

आहारपर्याप्ति **Āhāraparyāpti**

1. एक शरीर को छोड़कर, दूसरे नवीन शरीर के बिना कारणभूत जीव का नो कर्मवर्गणाओं को ग्रहण करना।
2. आहारवर्गणा के परमाणुओं को खल और रस भाग के रूप में परिणमन कराने वाली शक्ति।

आहार पर्याप्ति नामकर्म **Āhāraparyāptināmkarma**

आहारवर्गणा के परमाणुओं को खल और रसभागरूप परिणमाने के कारण भूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

आहार्यविपर्यय **Āhārya viparyaya**

दूसरे के गलत उपदेश से विपरीत शास्त्रज्ञान का ग्रहण।

आहारशुद्धि **Āhāra śuddhi**

मन, वचन, काय, द्रव्य क्षेत्र व काल से आहार का शुद्ध होना।

आहार संज्ञा **Āhārasañjñā**

1. अन्नादि आहार ग्रहण करने की इच्छा होना।
2. आहार को देखने, उसके उपयोग की ओर जाने तथा पेट के खाली होने पर असातावेदनीय की उदीरणा से आहार की इच्छा का होना।

आहृतादान **Āhṛtādāna**

अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार। चोर से चोरी का माल खरीदना।

आह्वानन **Āhvānana**

भावों की एकाग्रता के लिए पूजा के प्रारंभ में जिनेंद्र भगवान् को हृदय में आमंत्रित कर इसके प्रतीक रूप में पुष्प से स्थापना करना।

इंगिनीमरण **Iṅginīmaraṇa**

परकृत सेवा आदि को स्वीकार न करके स्वयं शरीर की सेवा करते हुए प्राप्त होने वाला मरण।

इंद्रिय **Indriya**

1. आत्मा का लिंग या चिह्न।
2. जीव को पदार्थ की उपलब्धि में निमित्त कारण।
3. सूक्ष्म आत्मा के सद्भाव की सिद्धि का कारण।
4. नामकर्म के निमित्त से निर्मित होने वाली शरीर की रचना विशेष।

इंद्रावतार **Indrāvatāra**

गर्भान्वयादि क्रियाओं में एक इंद्र द्वारा सिद्ध भगवान को नमस्कार कर सोलह स्वप्नों द्वारा माता को उनके अवतार की सूचना देना।

इंद्रिय अवग्रह **Indriya avagraha**

इंद्रियों के द्वारा पदार्थ का प्राथमिक रूप में ग्रहण होना।

इंद्रिय अवाय **Indriya avāya**

इंद्रियों के द्वारा विशेष चिह्नों को देखकर पदार्थ का निर्णय कर लेना।

इंद्रियपर्याप्ति **Indriya paryāpti**

1. आहारवर्गणा के परमाणुओं को इंद्रियाकार परिणमन कराने तथा इंद्रिय द्वारा विषय ग्रहण करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

2. जिस शक्ति के द्वारा धातुरूप से परिणत आहार इन्द्रियों के आकार रूप परिणत हो।

इंद्रिय प्रत्यक्ष **Indriya Pratyakṣa**

1. हित की प्राप्ति और अहित के परिहार में समर्थ श्रोत्र आदि इन्द्रियों से उत्पन्न होने वाला आंशिक विशद ज्ञान।
2. सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष, जो इंद्रिय और मन की सहायता से पदार्थ को रूप में एकदेश स्पष्ट जानता है।

इंद्रियमार्गणा **Indriyamārgaṇā**

एकेंद्रियादि जाति नामकर्म के उदय से जीव की एकेंद्रिय आदि अवस्था।

इंद्रियवशार्त्तमरण **Indriyavśarttamaraṇa**

पंचेंद्रियों के इष्ट विषयों में आसक्त तथा अनिष्ट विषयों के प्रति द्वेष करने वाले प्राणी का मरण।

इंद्रियसंयम **Indriyasaṃyama**

पाँच इंद्रियों के विषयों में राग-द्वेष एवं आसक्ति न होना।

इषुगति **Iṣugati**

पूर्व शरीर को त्यागकर अग्रिम शरीर को प्राप्त करने के लिए जीव की एक समय वाली सीधी गति।

ईर्यापथकर्म **Īryāpathakarma**

ईर्या अर्थात् योग के द्वारा आने वाला कर्म।

ईर्यापथशुद्धि **Īryāpathaśuddhi**

प्राणिपीड़ा परिहार के प्रयास पूर्वक ज्ञान एवं सूर्य के प्रकाश से आलोकित मार्ग पर निर्दोष गमन।

ईर्यासमिति **Īryāsamiti**

प्राणियों को पीड़ा न हो इस भाव से भूमि को चार हाथ प्रमाण आगे देखकर चलना।

ईशित्व **Īśitva**

समस्त संसार पर प्रभाव डालने वाली शक्ति।

ईषत्प्राग्भार **Īṣatprāgbhāra**

सर्वार्थसिद्धि इंद्रक के ध्वजदल से ऊपर बारह योजन पर स्थित खुले हुए छत्र के समान आठवीं पृथिवी।

ईहा **Īhā**

1. मतिज्ञान का एक भेद।
2. अवग्रह से ज्ञात पदार्थ के विशेष जानने की इच्छा।

उच्च गोत्र **Ucca Gotra**

1. जिसके उदय से लोकपूजित कुल में जन्म हो, ऐसा गोत्र कर्म।
2. जिस कर्म के द्वारा व्यक्ति जगत् में पूजा-सत्कार आदि को प्राप्त हो।

उच्चारप्रस्त्रवणसमिति **Uccārprasravaṇasamiti**

1. दो इंद्रिय आदि जीवों से रहित, ऊसर एवं निर्जन स्थान में मलमूत्रादि को विसर्जन करने की संयमी व्यक्ति की क्रिया।
2. इसका एक पर्यायांतर व्युत्सर्ग/उत्सर्ग भी है।

उच्छादन **Ucchādana**

विरोधी कारणों के मिलने पर गुणों को प्रकट नहीं करना।

उच्छ्लक्षणश्लक्ष्णिका **Ucchlakṣaṇaślakṣṇikā**

1. एक माप विशेष।
2. अनंतानंत व्यावहारिक परमाणुओं के समुदाय के मिलने से होने वाली एकरूपता।

उच्छ्वास **Ucchvāsa**

संख्यात आवलि प्रमाण काल।

उत्कर्षण **Utkarṣaṇa**

कर्म-प्रदेशों की स्थिति का बढ़ना।

उत्कालिक **Utkālika**

अंगबाह्य श्रुत के स्वाध्याय का अनियत काल।

उत्कीर्तना **Utkīrtanā**

किसी ग्रंथ आदि का स्पष्ट उच्चारण।

उत्कृष्ट अंतरात्मा **Utkṛsta aṅtaratmā**

महाव्रतों का धारक, अप्रमादी तथा धर्म एवं शुक्ल ध्यान में स्थित संयमी व्यक्ति।

उत्कृष्ट ज्ञान **Utkṛṣta jñana**

निर्वाण पद की निरन्तर भावना कराने का ज्ञान।

उत्कृष्ट मंगल **Utkṛṣṭa maṅgala**

अहिंसा, संयम और तप रूप धर्म।

उत्कृष्ट श्रावक **Utkṛṣṭa śravaka**

ग्यारहवीं प्रतिमा का धारक श्रावक (क्षुल्लक)।

उत्तरगुण **Uttara guṇa**

मूलगुणों से भिन्न पिण्डशुद्धि आदि गुण।

उत्तरप्रकृति **Uttar prakṛti**

पर्यायार्थिक-नय के आश्रय से किए जाने वाले पृथक्-पृथक् कर्मप्रकृति के भेदों का नाम।

उत्थितोत्थितकायोत्सर्ग **Utthitotthitakayotsarga**

धर्मध्यान और शुक्ल ध्यान में परिणत संयमी जीव की कायमुद्रा।

उत्पाद **Utpāda**

बाह्य एवं आभ्यंतर निमित्त के कारण चेतन-अचेतन द्रव्यों का अपनी जाति को न छोड़कर अवस्थांतर को प्राप्त होना।

उत्पादपूर्व **Utpādapūrva**

काल, पुद्गल और जीव आदि की पर्यायार्थिक-नय की अपेक्षा होने वाली उत्पत्ति का वर्णन करने वाला पूर्वग्रंथ।

उत्संज्ञासंज्ञा **Utsañjñasañjña**

अनंतानंत परमाणुओं के समुदाय प्रमाण एक माप।

उत्सर्ग समिति **Utsarga samiti**

देखें - उच्चारप्रस्रवणसमिति

उत्सर्पिणी **Utsarpiṇī**

जिस काल में जीवों की आयु, शरीर की ऊँचाई और विभूति आदि की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

उत्सूत्र **Utsūtra**

तीर्थंकर एवं गणधरों द्वारा अनुपदिष्ट तत्त्व का स्वाभिप्राय से कल्पित कथन करना।

उत्सेक **Utseka**

ज्ञानादि की अधिकता के होने पर तद्विषयक अभिमान करना।

उत्सेधांगुल **Utsedhāṅgula**

आठ यवमध्य प्रमाण एक माप।

उदधिकुमार **Udadhikumāra**

उरु एवं कटिभाग में अतिशय रूपवान्, वर्ण से श्याम और मकर के चिह्न से युक्त देव।

उदय **Udaya**

द्रव्य आदि का निमित्त पाकर प्राप्त होने वाला कर्म का फल।

उदराग्निप्रशमन **Udarāgniprasamana**

असातावेदनीय कर्म की उदीरणा से उत्पन्न उदराग्नि को साधु द्वारा सरस-नीरस आहार द्वारा शांत करना।

उदीरणा **Udīraṇā**

अधिक स्थिति एवं अनुभाग वाले कर्म की स्थिति एवं अनुभाग को हीन करके फल देने के उन्मुख करना।

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा **Uddiṣṭatyāga pratimā**

1. ग्यारहवीं प्रतिमा।
2. स्वाध्याय एवं ध्यान में उद्यत श्रावक का उद्दिष्ट आहारादि का त्याग।

उद्धार पल्य **Uddhāra palya**

व्यवहार पल्य के जितने रोमच्छेद हैं, उनमें से प्रत्येक रोमच्छेद को असंख्यात कोटि वर्षों के समयों से छिन्न करके उनसे भरे गये गड्ढों को उद्धार पल्य कहते हैं।

उद्धारसागरोपम **Uddhārasāgaropama**

दस कोड़ाकोड़ी उद्धार पल्य।

उद्भेदिम **Udbhedima**

पृथिवी, काष्ठ और पत्थर आदि को भेदकर उत्पन्न होने वाले जीव।

उद्यवन **Udyavana**

निरंतर दर्शन, ज्ञान एवं चारित्रादि रूप परिणति करना।

उद्योत **Udyota**

1. पुद्गल द्रव्यों की एक पर्याय।
2. चंद्रमा, मणि एवं जुगनू आदि से होने वाला प्रकाश।

उद्वर्तन **Udvartana**

1. स्थिति एवं अनुभाग की वृद्धि करना।
2. एक गति से निकलकर जीव का दूसरी गति में गमन करना।
3. तैल, जल आदि से मिश्रित मसूर आदि के चूर्ण से शरीर का मर्दनकरना।

उद्वेलनसंक्रम **Udvelanasaṅkrama**

अध:करण आदि परिणामों के बिना रस्सी के उकेलने के समान कर्मपरमाणुओं का परप्रकृति रूप से निक्षेपण।

उन्मिश्र दोष **Unmiśra doṣa**

सजीव पृथिवी, जल, हरितकाय, बीज और त्रस जीव– इन पाँच से मिला हुआ आहार का दोष।

उपकरण **Upakaraṇa**

जिस साधन के द्वारा इन्द्रिय संयम का कार्य किया जाता है।

उपकरणबकुश **Upakaraṇabakuśa**

उपकरणों में मुग्ध होता हुआ अनेक प्रकार के विचित्र परिग्रह से युक्त तथा विशेष प्रकार के योग्य उपकरणों का अभिलाषी भिक्षु।

उपगूहन **Upagūhana**

1. अज्ञानी एवं असत्य जनों के द्वारा मोक्ष मार्ग की होने वाली निंदा को दूर करने का उपाय करना।
2. सम्यग्दर्शन का एक अंग।

उपग्रह **Upagraha**

द्रव्यों की अन्य शक्ति के आविर्भाव में कारण रूप अनुग्रह।

उपघात **Upaghāta**

प्रशस्त ज्ञान में दोष लगाना।

उपचय **Upacaya**

कर्म-पुद्गलों के आबाधा काल को छोड़कर ज्ञानावरणादि कर्म पुद्गलों का निषेक।

उपदेशरुचि **Updeśaruci**

तीर्थंकर, बलदेव आदि के चरित के सुनने से उत्पन्न श्रद्धान वाला सम्यग्दृष्टि।

उपधान **Upadhāna**

1. आगाढ़ आदि योग विशेष।
2. शास्त्र में कथित आहार आदि की क्रिया का नियम करना।

उपधानाचार **Updhānacāra**

जब तक शास्त्र का स्वाध्याय पूरा न हो तब तक विशिष्ट वस्तु के उपयोग न करने की प्रतिज्ञा।

उपधि **Upadhi**

1. क्रोधादि की उत्पत्ति में कारणभूत बाह्य पदार्थ।
2. चित्त का कपट रूप परिणाम।
3. माया कषाय।
4. ज्ञान और संयम के उपकरण।

उपपाद **Upapāda**

1. विवक्षित गति से निकलकर अन्य गति में जन्म लेना।
2. संपुट शय्या एवं उष्ट्रमुख आदि के आकार वाली नरक की भूमियों में जीव का जन्म लेना।

उपभोगपरिभोगपरिमाणव्रत **Upabhogaparibhogaparimāṇavrata**

अन्न-पान आदि उपभोग एवं वस्त्र, अलंकार आदि परिभोग का परिमाण करना।

उपमालोक **Upamāloka**

घन राजु प्रमाण माप।

उपयोग **Upayoga**

बाह्य और आभ्यंतर कारण से चेतनता का अनुसरण करने वाले ज्ञान एवं दर्शन रूप परिणाम।

उपवास **Upavāsa**

1. असन, स्वाद्य, खाद्य और पेय इन चार प्रकार के आहार का धर्मसाधना के लिये त्याग।

2. आत्मा के समीप निवास करना।

उपशमक **Upaśamaka**

1. अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण एवं सूक्ष्म सांपराय इन तीन गुणस्थानवर्ती जीव।
2. उक्त तीन गुणस्थानों में अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव उपचार से उपशमक है।

उपशमक श्रेणी **Upaśamaka śrenī**

अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसांपराय और उपशांतमोह गुणस्थानवर्ती जीव चरित्रमोहनीय को उपशांत करता हुआ जिस श्रेणी पर आरोहण करता है, वह उपशमक श्रेणी है।

उपशम सम्यग्दृष्टि **Upaśama samyagdṛṣṭi**

औपशमिक लब्धि से अनन्तानुबन्धी चार और दर्शनमोहनीय की तीन इन सात प्रकृतियों के उपशम से प्राप्त सम्यग्दर्शन वाला जीव।

उपशांत कषाय **Upsāntakaṣāya**

संपूर्ण मोहनीय कर्म का उपशम करने वाले ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जीव के भाव।

उपशांतमोह **Upśāntamoha**

देखें- उपशांतकषाय

उपशांताद्धा **Upśāntāddhā**

उपशांत मिथ्यात्व वाला काल, जिस काल में मिथ्यात्व उपशांत रहता है।

उपसंपदा **Upsampadā**

आचार्य के समीप जाकर आत्मसमर्पण करना।

उपस्थापना **Upsathāpanā**

बड़ा अपराध हो जाने पर व्रतों का मूलोच्छेद करके पुनः दीक्षा देना।

उपांशुजप **Upāṃśujapa**

जिस मंत्रोच्चार की ध्वनि दूसरों को सुनाई न दे।

उपादान कारण **Upadāna kāraṇa**

जिसके विनष्ट होने पर विवक्षित कार्य उत्पन्न होता है तथा जो कार्य के साथ तादात्म्य संबंध से रहता है।

उपाधिवचन **Upādhivacana**

परिग्रह के अर्जन और संरक्षण में आसक्ति के कारणभूत वचन।

उपाध्याय **Upādhyāya**

रत्नत्रय से सम्पन्न होकर जिनप्ररूपित पदार्थों का निष्पृहवृत्ति से उपदेश देने वाले साधु।

उपासक **Upāsaka**

श्रमणों की उपासना करने वाले श्रावक।

उपासकदशा **Upāsakadaśā**

जिस अंगश्रुत में दर्शन प्रतिमाधारी आदि ग्यारह प्रकार के श्रावकों के लक्षण, ग्रहण विधि आदि का विधान हो।

उपेक्षा-असंयम **Upekṣā-asaṃyama**

असंयम में प्रवृत्ति अथवा संयम में अप्रवृत्ति।

उभयप्रायश्चित्त **Ubhaya-prāyaścitta**

गुरु के समक्ष आलोचना करके गुरुसाक्षीपूर्वक अपराध से आत्मनिवृत्ति।

उभयवध **Ubhayavadha**

संकल्पित जीव का घात करना।

उभयश्रुत **Ubhayaśruta**

श्रुतबुद्धि से दृष्ट पदार्थों का मतिसहित व्याख्यान करने वाला श्रुत।

उपसन्नासन्न **Upasannāsanna**

अनन्तानन्त बहुत प्रकार के परमाणुओं का पिंड।

ऊर्ध्वकपाट **Ūrdhvakapāta**

ऊर्ध्वस्थित कपाट के समान चौदह राजु ऊँचा, सात राजु विस्तृत, एक राजु मध्य एवं एक राजु उपरिम, पाँच राजु ब्रह्मलोक के समीप तथा सात राजु नीचे बाहुल्य वाला लोक।

ऊर्ध्वप्रचय **Ūrdhvapracaya**

समयसमूह।

ऊर्ध्वरेणु **Ūrdhvareṇu**

आठ श्लक्ष्ण श्लक्ष्णिकाओं का समूह।

ऊर्ध्वलोक **Ūrdhva loka**

मध्यलोक के ऊपर खड़े मृदंग के समान आकार वाला लोक।

ऊहा **Ūhā**

ईहा मतिज्ञान का नामांतर।

ऋजुता **Ṛjutā**

मायाचार से रहित मन-वचन-काय की सरल प्रवृत्ति।

ऋजुमति **Ṛjumati**

1. मनःपर्यय ज्ञान का भेद।
2. पर के मन में स्थित अर्थ के ज्ञान से निर्वर्तित सरल बुद्धि।

ऋजुसूत्र **Ṛjusūtra**

तीनों कालों के पूर्वापर विषयों को छोड़कर केवल वर्तमान काल के विषय को ग्रहण करने वाला नय।

ऋजुसूत्रनयाभास **Ṛjusūtranayābhāsa**

गौणता और प्रधानता का अपलाप करके एकांत रूप से अभेद का निराकरण करने वाला नय।

ऋद्धि **Ṛddhi**

भोगोपभोग की साधक संपदा तथा संपदा के कारण।

ऋद्धिगौरव **Ṛddhigaurava**

विशिष्ट पदों की अभिलाषा से उत्पन्न अभिमान तथा अप्राप्ति से उत्पन्न अशुभ भावों की गुरुता।

ऋषभनाराच **Ṛṣabhanārsāca**

कीलिकारहित संहनन।

ऋषि **Ṛṣi**

1. ऋद्धिप्राप्त साधु।
2. क्लेशों के समूह को नष्ट करने वाला तपस्वी।

एकत्व भावना **Ekatva bhāvanā**

जीव के एकाकीपन (अकेला उत्पन्न होने, अकेला मरण करने आदि) का विचार करने वाली भावना।

एकत्व विक्रिया **Ekatva vikriyā**

अपने शरीर से अभिन्न सिंह-व्याघ्र आदि रूप विक्रिया करना।

एकत्ववितर्कवीचार **Ekatvavitarkavīcāra**

1. मोह का समूल नाश करने के इच्छुक साधु द्वारा ज्ञानावरण की सहायक अनेक प्रकृतियों का ह्रास एवं क्षय कराने वाला शुक्ल ध्यान।
2. श्रुतज्ञानोपयोग से अर्थ, व्यंजन एवं योग की संक्रान्ति से रहित केवल एक द्रव्य , गुण, पर्याय का चिंतन कराने वाला शुक्ल ध्यान।
3. क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती मुनि को होने वाला निश्छल शुक्ल ध्यान।

एकत्वानुप्रेक्षा **Ekatvānuprekṣā**

जीव के अकेलेपन का चिंतन करने वाली अनुप्रेक्षा।

एकपदस्थान **Ekapadasthāna**

एक पैर से स्थित होकर तपश्चरण रूप एक प्रकार का कायक्लेश तप।

एकप्रत्यय **Ekapratyaya**

एक नाम और व्यवहार का कारण प्रत्यय।

एकभक्त **Ekabhakta**

1. दिन की उदय एवं अस्तमन काल की तीन घड़ियों को छोड़कर शेष दिवस काल में तीन मुहूर्तों में केवल एक बार भोजन करना।
2. दिन-रात में से केवल दिन में एक बार भोजन करना एकभक्त है।

एकविहारी **Ekavihārī**

तप, श्रुत, सत्त्व, एकत्व, भाव, संहनन, धैर्य आदि गुणों से संयुक्त वह आगम का ज्ञाता तपोवृद्ध साधु जिसे अकेला विहार करने की गुरु से अनुज्ञा प्राप्त है।

एकांत मिथ्यात्व **Ekānta mithyātva**

पदार्थ में अस्ति, नास्ति आदि रूप केवल एक ही धर्म के अभिनिवेश का आग्रह।

एकासन **Ekāsana**

धर्माराधना के लिये नियम विशेष द्वारा दिन में एक आसन से अथवा एक भोजन को स्वीकार करना।

एकेंद्रिय **Ekendriya**

जो जीव केवल स्पर्शनेन्द्रिय के द्वारा जानता, देखता एवं विषय सेवन करता है।

एवंभूत नय **Evambhūta naya**

जो द्रव्य जिस प्रकार की क्रिया से परिणत हो, उसी प्रकार से निश्चय कराने वाला नय।

एवंभूत नयाभास **Evambhūta nayābhāsa**

क्रियावाचक शब्दों में क्रियानिरपेक्ष काल्पनिक व्यवहार।

एषणा समिति **Eṣaṇā samiti**

कृत, कारित, अनुमोदना के दोषों से रहित दूसरे के द्वारा बनाये गये प्रासुक एवं प्रशस्त भोजन को ग्रहण करना।

ओघ **Ogha**

सामान्य श्रुत का कथन।

ओघ संज्ञा **Ogha sañjñā**

ज्ञानावरण कर्म के अल्प क्षयोपशम से होने वाला अव्यक्त ज्ञानोपयोग।

औत्पत्तिकी **Autpattikī**

इस भव में पढ़ने, सुनने अथवा पूछने आदि के व्यापार के बिना सहज स्वभाव से उत्पन्न प्रकृष्ट बुद्धि।

औत्सर्गिक लिंग **Autsargika liṅga**

सकल परिग्रह से रहित यथाजात वेश।

औदयिक अज्ञान **Audayika ajñāna**

ज्ञानावरण कर्म के उदय से होने वाला पदार्थों का अज्ञान।

औदयिक भाव **Audāyika bhāva**

कर्म के उदय से उत्पन्न भाव।

औदयिक मिथ्यादर्शन **Audayika mithyādarśana**

मिथ्यात्व कर्म के उदय से होने वाला तत्त्वार्थ के अश्रद्धान रूप परिणाम।

औदारिक शरीर **Audārika śarīra**

1. स्थूल अथवा स्थूल प्रयोजन वाला अथवा स्थूल द्रव्य से निर्मित शरीर।
2. औदारिक नाम कर्म के उदय से उत्पन्न शरीर।

औपशमिक चारित्र **Aupaśamika cāritra**

समस्त मोहनीय कर्म के उपशम से प्रादुर्भूत चारित्र।

8—416 Min. of HRD/2014

औपशमिक भाव **Aupaśamika bhāva**

जिस भाव का प्रयोजन कर्म की शक्ति का उपशम हो।

औपशमिक सम्यक्त्व **Aupaśamika Samyaktva**

मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व-इन तीन दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों तथा अन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया एवं लोभ-इन चार चारित्रमोहनीय की प्रकृतियों के उपशम से होने वाला सम्यक्त्व।

कपोत लेश्या **Kapotaleśya**

1. लेश्या के दस भेदों में से एक ।
2. मत्सरभाव रखना, चुगली करना, परनिंदा, स्वप्रशंसा, हानि-लाभ का विचार न करना, जीवन से निराश होना, प्रशंसा करने वाले को धन देना और युद्ध में मरने का उद्यम करना, आदि भाव। ऐसे भाव को कबूतर रंग से व्यक्त किया गया है।

करण **Karaṇa**

1. कर्मबंध आदि के परिवर्तन कराने में समर्थ जीव की विशिष्ट शक्ति।
2. जीव का परिणाम विशेष।
3. अतिशय साधक कारक।

करणानुयोग **Karaṇānuyoga**

लोक-अलोक के विभाग, युगों के परिवर्तन और चतुर्गतियों के स्वरूप को स्पष्ट दिखाने वाला ज्ञान।

करुणा **Karuṇā**

जीवों के दुखों को दूर करने की इच्छा/भावना।

कर्ता **Kartā**

1. जीव का क्रिया करने का भाव।
2. जो परिणमन करता है।
3. क्रिया के करने में स्वतंत्र कारक।

कर्म **Karma**

1. जीव परिणाम के अनुसार बंध को प्राप्त होने वाला पुद्गलों का समूह।
2. आत्मा का परिणाम।

3. भगवान ऋषभदेव द्वारा प्रतिपादित षट् कर्म–असि , मसि, कृषि, वाणिज्य, विद्या और शिल्प।

कर्म (क्रिया) **Karma (Kṛiya)**

एक देश से दूसरे देश की प्राप्ति में कारणभूत पदार्थ के परिस्पंदात्मक परिणाम का नाम।

कर्मकिल्विष **Karmakilviṣa**

निकृष्ट कार्य करने वाले जीव।

कर्मक्षयसिद्ध **Karmakṣayasiddha**

ध्यान रूपी अग्नि से अष्टकर्मों को भस्म करके सिद्ध अवस्था को प्राप्त जीव।

कर्मचेतना **Karmacetanā**

अपने स्वभावभूत ज्ञान को छोड़कर पर पदार्थों में, 'मैं करता हूँ', इस प्रकार का अनुभव।

कर्मजा प्रज्ञा **Karmajā prajñā**

1. गुरूपदेश के बिना तपश्चरण की शक्ति से उत्पन्न होने वाली बुद्धि।
2. औषधि सेवन के बल से उत्पन्न बुद्धि।

कर्मद्रव्यपुद्गलपरिवर्तन **Karmadravya pudgalaparivartana**

जीव के द्वारा अनंत बार गृहीत, अगृहीत और मिश्र परमाणुओं को अनंत बार ग्रहण करने के पश्चात् निर्जीर्ण कर देने पर उसी जीव के जब वही कर्मपुद्गल परमाणु कर्मरूपता को प्राप्त होते हैं,तब इतने काल में उसका कर्मद्रव्यपुद्गलपरिवर्तन पूरा होता है।

कर्मद्रव्यभाव **Karma dravyabhāva**

ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्मों में अज्ञानादि उत्पन्न करने की शक्ति।

कर्मद्रव्य-संसार **Karma dravya-saṃsāra**

ज्ञानावरणादिरूप आठों कर्मों के पुद्गल परमाणु।

कर्मनारक **Karmanāraka**

नरक गति के साथ आये हुए कर्मद्रव्य का समूह।

कर्मफलचेतना **Karmaphalacetanā**

जीवों के द्वारा चेतन स्वभाव से एकमात्र सुख-दुःख रूप कर्मफल का अनुभव करना।

कर्मभावचेतना **Karmabhāvachetanā**

अज्ञानी जीव की वह चेतना जिसके द्वारा वह ऐसा विचार करता है कि यह कर्म मेरा है व उसे मैंने किया है।

कर्मयोग **Karmayoga**

1. मन, वचन व कायपूर्वक की जाने वाली क्रिया।
2. कार्मणशरीरभूत कर्म के द्वारा आत्मप्रदेशपरिस्पंदन होना।

कर्मवर्गणा **Karmavargaṇā**

अष्ट कर्मरूप में परिणत होने वाले पुद्गल-स्कंध ।

कर्मसिद्ध **Karmasiddha**

असि, मसि, कृषि आदि लौकिक कर्मों में कुशल।

कर्मार्य **Karmārya**

यजन-याजन, अध्ययन-अध्यापन, प्रयोग, कृषि, लेखन, व्यापार आदि योनिपोषण कर्मों से आजीविका करने वाले व्यक्ति। इसके तीन भेद हैं:

(i) सावद्यकर्मार्य- असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प एवं विद्या से आजीविका करने वाले।

(ii) अल्पसावद्यकर्मार्य- देशविरति के परिपालक श्रावक और श्राविकायें।

(iii) असावद्यकर्मार्य- सर्वकर्मक्षय में उद्यत महाव्रती।

कर्मेंद्रिय **Karmendriya**

वचनादि क्रिया की कारणभूत इंद्रियाँ–वचन, पाणि, पाद, पायु और उपस्थ।

कल्प **Kalpa**

1. सौधर्म से लेकर अच्युतपर्यन्त स्वर्ग, इन्द्र-सामानिक दश भेदों की जहाँतक कल्पना है, वहाँ तक देव विमानों की कल्प संज्ञा है।
2. विवेकपूर्वक सावधानी के साथ बाह्य वस्तुओं का सेवन करना।
3. दश कोडाकोड़ीसागर–प्रमाण अवसर्पिणी और उतना ही उत्सर्पिणी,ये दोनों मिलकर कल्प-काल कहे जाते हैं।

कल्याणनामधेयपूर्व **Kalyāṇanāmadheyapūrva**

सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारागण से संचार, उपपाद एवं विपरीत गति के फल तथा शकुन-अपशकुन के फल व तीर्थंकर, बलदेव, वासुदेव एवं चक्रवर्ती आदि के गर्भादि महाकल्याणों की प्ररूपणा करने वाला पूर्व।

कषाय **Kaṣāya**

1. कर्म अथवा संसार को प्राप्त कराने वाले कलुषित भाव।
2. कषायवेदनीय के उदय से क्रोधादिरूप कलुषता द्वारा आत्मा का विघात करने वाले भाव।

कषायकुशील **Kaṣāyakuśīla**

केवल संज्वलनकषाय के वशीभूत होने वाले श्रमण।

कषायलोक **Kaṣāyaloka**

जिस जीव के क्रोध, मान, माया, लोभरूप चारों कषायों का उदय विद्यमान हो।

कषायसमुद्घात **Kaṣāyasamudghāta**

कषाय की तीव्रता से जीवप्रदेश का शरीर से तिगुना फैल जाना।

कषायसल्लेखना **Kaṣāyasallekhanā**

1. भावों की विशुद्धि।
2. क्रोधादि कषायों को कृश करना।

कांक्षा **Kāṅkṣhā**

1. आसक्ति, लोलुपता, इहलोक-परलोक के विषयों की इच्छा, कुल, रूप, धन, स्त्री-पुत्रादि वैभव की इच्छा।
2. सम्यग्दर्शन को दूषित करने वाला एक कारक।
3. लोक एवं परलोक संबंधी विषयों की अभिलाषा।

काम **Kāma**

1. स्त्रियों के द्वारा पर-पुरुष अथवा अविवाहित पुरुषों के संबंध में दुरभिप्राय रखना तथा पुरुषों के द्वारा परस्त्री अथवा अविवाहित स्त्रियों के विषय में दुरभिप्राय रखना।
2. अरिषड्वर्ग (आंतरिक छह शत्रुओं) में से एक।
3. चार पुरुषार्थों में से एक।

कामकथा **Kāmakathā**

सुंदररूप, युवावस्था, आकर्षक वेशभूषा, मृदुता (दाक्षिण्य), विषयों की शिक्षा, दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, परिचय के आश्रय से की जाने वाली चर्चा।

कामतीव्राभिनिवेश **Kāmatīvrābhiniveśa**

1. कामसेवन की वृद्धिगत परिणति।

2. ब्रह्मचर्य व्रत के अतिचारों में से एक।

कामतीव्राभिलाष **Kāmatīvrābhilāṣa**

1. मैथुन क्रिया विषयक उत्कट इच्छा।
2. शब्द और रूप को काम तथा गंध, रस व स्पर्श को भोग कहा जाता है। इन पांचों के विषय में उत्कट इच्छा।
3. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतिचार।

कामविनय **Kāmavinaya**

पांचों इंद्रियों के अभीष्ट विषयों में विभिन्न प्रकार से की गई प्रवृत्ति।

काय **Kāya**

स्वप्रवृत्ति से संचित पुद्गलपिंड, पृथ्वीकाय आदि नामकर्म के उदय से प्राप्त अवस्था विशेष।

कायक्रिया **Kāyakriyā**

शरीर संबंधी क्रिया का कारणभूत आत्मा का परिणमन।

कायक्लेश **Kāyaklesa**

1. कायोत्सर्ग, एक करवट से सोना, उत्कुटिका, वीरासनादि द्वारा आतापनयोग से शरीर को क्लेश पहुँचाना।
2. बाह्य तप का एक भेद।

कायगुप्ति **Kāyagupti**

आसन, शयन, गमन, आदान-निक्षेप आदि क्रियाओं में शरीर की प्रवृत्ति का संयमन।

कायदु:प्रणिधान **Kāyaduḥpraṇidhāna**

1. क्रोधादि के वश शरीर के अवयवों का पापपूर्ण प्रयोग।
2. सामायिक व्रत का एक अतिचार।

कायबलऋद्धि **Kāyabalaṛddhi**

वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न हुए असाधारण शरीरिक बल से संयुक्त होने के कारण मासिक, चातुर्मासिक और वार्षिक प्रतिमायोग के धारण करने पर भी किसी प्रकार के परिश्रम व खेद का अनुभव नहीं करने वाली शक्ति।

काययोग **Kāyayoga**

वीर्यांतराय के क्षयोपशम के सद्भाव में औदारिक व औदारिकमिश्र आदि सात

प्रकार की वर्गणाओं में किसी एक का आलंबन लेकर आत्मप्रदेशों का परिस्पंद होना।

कायविनय **Kāyavinaya**

शिष्य द्वारा आचार्य की अपेक्षा विभिन्न क्रियाओं - जैसे नीची शय्या पर शयन, आसन, ग्रहण, अनुगमन करना, चरणवंदना आदि में नम्रीभूत होना।

कायशुद्धि **Kāyaśuddhi**

वस्त्र, आभरण और शरीर-संस्कार से रहित, अंगविकार से रहित यत्नपूर्ण प्रवृत्ति।

कायसंयम **Kāyasaṃyama**

आवश्यक क्रियाओं के अतिरिक्त शेष क्रियाओं में इंद्रियों का संयमन।

कायस्वभाव **Kāyasvabhāva**

अनित्यता, दुःखहेतुता, निःसारता और अपवित्रता आदि शरीर की प्रकृति।

कायोत्सर्ग **Kāyotsarga**

दैवसिक आदि आगमोक्त नियमों में नियत समय में जिनगुणस्मरणपूर्वक शरीर से ममत्व का त्याग।

कारक **Kāraka**

क्रिया से युक्त कर्ता।

कारित **Kārita**

दूसरे के द्वारा कार्य की सिद्धि कराना।

कारुण्य **Kāruṇya**

शारीरिक और मानसिक दुःखों से पीड़ित दीन प्राणियों के प्रति अनुग्रहरूप भाव।

कार्मण **Kārmaṇa**

1. कर्म के विकारभूत या कर्मरूप शरीर का नाम।
2. समस्त शरीरों की उत्पत्ति का बीजभूत शरीर।
3. शरीर के पांच भेदों में से एक।

कार्मणकाययोग **Kārmaṇakāyayoga**

कार्मणशरीर के द्वारा किया गया योग।

कार्मणशरीरनामकर्म **Kārmaṇaśariranāmakarma**

समस्त कर्मों का आधारभूत कर्म का उदय।

काल **Kāla**

स्वयं परिणमन करते हुए द्रव्यों के परिणमन में सहकारिता स्वभाव वाला द्रव्य।

काल कायोत्सर्ग **Kāla kāyotsarga**

1. सावद्य काल में किये गये आचरण के दोषों का परिहार करना।
2. साधु द्वारा कायोत्सर्ग में रत काल।

काल-काल **Kāla kāla**

1. प्राणी का आयु की समाप्ति पर मरण।
2. स्वाध्याय में बाधक काल।

कालकृत परत्वापरत्व **Kālakṛtaparatvāparatva**

काल के आश्रय से पर-अपर (छोटा-बड़ा) का व्यवहार।

कालक्रमोत्तर **Kālakramottara**

काल के क्रम से एक एक समय की अधिकता से होने वाली स्थितियाँ।

कालचतुर्विंशति **Kāla caturviṃśati**

चौबीस समयों (आवली व मुहूर्त आदि) में स्थित रहने वाला द्रव्य।

कालचार **Kālacāra**

जिस काल में या जितने काल में आचरण किया जाता है उसे कालचार कहते हैं।

कालज्ञानाचार **Kālajñānācāra**

1. निश्चित एवं नियत काल में अंगप्रविष्ट आदि श्रुत का स्वाध्याय करना और अन्य काल में न करना।
2. जिस स्वाध्याय काल में शास्त्र का पठन, परिवर्तन (पुनरावर्तन) और व्याख्यान आदि किया जाता है उस काल को भी कारण में कार्य उपचार से कालज्ञानाचार कहते हैं।

कालदोष **Kāladoṣa**

अतीत काल के विपरीत प्रयोग। जैसे- 'रामवन में प्रविष्ट हुए' इस विवक्षा में राम वन में प्रविष्ट होते हैं ऐसा कहना, यह बत्तीस सूत्रदोषों में इक्कीसवाँ दोष है।

कालनिधि **Kālanidhi**

कालनिधि के आश्रय के समस्त ज्योतिष शास्त्र संबंधी ज्ञान तथा तीर्थंकरवंश, चक्रवर्तीवंश और बलदेव-वासुदेव-वंशों के भूत-भविष्य और वर्तमान का ज्ञान प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त कालनिधि के द्वारा कुम्हार, लुहार, चित्रकार, जुलाहा और नाई की 20-20 कलाओं का तथा वाणिज्य आदि कर्मों का कथन किया गया है।

कालपरिक्षेप **Kālaparikṣepa**

वर्षाकाल में बारिस के पानी से घिर जाने वाले तथा ग्रीष्मकाल में जल के अभाव वाले ग्राम-नगरादि काल अपेक्षित हैं।

कालपरिवर्तन **Kālaparivartana**

उत्सर्पिणी एवं अवसर्पिणी काल के विभिन्न समयों (प्रथम, द्वितीय आदि) में आयु की समाप्ति पर मरने एवं जन्म लेने का क्रम।

काल पूजा **Kāla pūjā**

तीर्थंकरों के पंचकल्याणक दिवसों पर तथा अष्टाह्निक पर्व आदि के समय की जाने वाली पूजा।

कालप्रतिक्रमण **Kālapratikramaṇa**

रात्रि, तीन संध्याओं तथा स्वाध्याय और आवश्यक कालों में गमनागमनादि न करना।

काल प्रतिसेवना **Kālapratisevanā**

आवश्यक क्रिया को नियत काल में न करके उसे अन्य समय में करना।

काल प्रत्याख्यान **Kālapratyākhyāna**

संध्याकाल में अध्ययन तथा गमनादि क्रियाओं के त्याग का विचार।

कालमंगल **Kālamaṅgala**

तीर्थंकरादि महापुरुषों का दीक्षा, केवलज्ञान, निर्वाणादि काल पापविनाशक होने से कालमंगल कहा जाता है।

काललब्धि **Kālalabdhi**

प्रथम सम्यक्त्व के ग्रहण करने योग्य काल।

काललोक **Kālaloka**

समय-आवली आदि काल।

काल वर्गणा **Kālavargaṇā**

कर्मद्रव्य की अपेक्षा एक समय अधिक आवली से लेकर कर्मस्थिति तक तथा नोकर्मद्रव्य की अपेक्षा एक समय से लेकर असंख्यात लोक प्रमाण काल तक की वर्गणाएं।

कालविप्रकृष्ट **Kālaviprakṛṣta**

काल के व्यवधान वाले लाभ-अलाभ, सुख-दुख और सूर्य चंद्रमादि का ग्रहण आदि।

कालशुद्धि **Kālaśuddhi**

आगम में निषिद्ध कालों को छोड़कर स्वाध्याय के योग्य काल।

कालसंक्रम **Kālasaṅkrama**

एक काल में स्थित द्रव्य का अन्य काल में प्राप्त होना।

काल संस्थान **Kālasaṃsthāna**

मनुष्यलोक प्रमाणकाल का क्षेत्र।

कालाणु **Kālāṇu**

लोकाकाश के प्रदेशों के ऊपर रत्नराशि के समान स्थित एक-एक काल।

काष्ठा Kāṣṭha

पंद्रह बार पलक झपकने रूप काल का प्रमाण।

किल्विषिक **Kilviṣika**

सर्वाधिक हीन प्रवृत्ति वाले एक प्रकार के देव।

कीलिका संहनन **Kilikā saṃhanana**

नाराच एवं वलयबंधन की अंत में कीलों सहित शारीरिक संरचना।

कुधर्म **Kudharma**

मिथ्यादृष्टियों के द्वारा प्ररूपित धर्म।

कुपात्र **Kupātra**

व्रतों का पालन करने वाले मिथ्यादृष्टि जीव।

कुब्जक संस्थान **Kubjakasaṃsthāna**

जिसके नाम कर्म के उदय से शरीर कुबड़ा हो।

कुमतिज्ञान **Kumatijñāna**

मिथ्यादर्शन के उदय से युक्त मतिज्ञान।

कुल **Kula**

दीक्षा देने वाले आचार्य की शिष्य-परंपरा।

कुलकर **Kulakara**

कर्मभूमि के प्रारंभ में कुलों की व्यवस्था करने में कुशल व्यक्ति।

कुशलमूलनिर्जरा **Kuśalamūlanirjarā**

परीषहजय से होने वाली कर्मों की निर्जरा।

कृतिकर्म **Kṛtikarma**

1. अरहंत, सिद्ध, आचार्य और उपाध्याय की वंदना पूर्वक की जाने वाली क्रिया।
2. साधुजन की पादमर्दना आदि रूप वैयावृत्ति।

कृतुपद **Kṛtupada**

विवाह करके भी केवल संतान उत्पत्ति के लिए ऋतुकाल में स्त्री का सेवन करने वाला व्यक्ति।

कृष्णपाक्षिक **Kṛṣṇapākṣika**

दीर्घकाल तक संसार में परिभ्रमण करने वाला जीव।

कृष्णलेश्या **Kṛṣṇaleśyā**

1. निर्दयी, क्रूरस्वभावी, लम्पटी एवं युद्धासक्त व्यक्ति के परिणाम। ऐसे भाव को काले रंग से व्यक्त किया गया है।
2. लेश्या के छह भेदों में से एक ।

केवलज्ञान **Kevalajñāna**

1. लोक और अलोक के सर्व तत्त्वों को जानने वाला अतिशय निर्मल ज्ञान।
2. ज्ञान का पाँचवां भेद।

केवलदर्शन **Kevaladarśana**

तीनों कालों की विषयभूत अनंत पर्यायों से युक्त निज के स्वरूप का संवेदन करने वाला दर्शन।

केवली **Kevalī**

केवलज्ञान को प्राप्त साधक, जो लोकालोक को एक साथ जानता है।

केवली अवर्णवाद **Kevalīavarṇavāda**

केवली पर दोषारोपण।

केवली समुद्घात **Kevalisamudghātā**

आयुकर्म की स्थिति कम और वेदनीय कर्म की स्थिति अधिक होने पर अनाभोगपूर्वक आत्मप्रदेशों का मूल शरीर से अलग हो जाना।

कैवल्य **Kaivalya**

कर्मरहित एवं केवलज्ञान को प्राप्त आत्मा की अवस्था।

कोष्ठबुद्धि **Koṣṭhabuddhi**

गुरु उपदेश के बिना विस्तार पूर्वक शब्दरूप बीजों को अपनी बुद्धि में स्थापित करना।

क्रमभाव **Krambhāva**

कार्य-कारण में अविनाभाव संबंध।

क्रिया **Kriyā**

1. बाह्य और आभ्यंतर कारणों से उत्पन्न होने वाली द्रव्य की पर्याय।
2. गति का अपर नाम।

क्रियानय **Kriyānaya**

क्रिया की प्रधानता को प्रकट करने वाला नय।

क्रियारुचि **Kriyāruci**

सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप, विनय, समिति और गुप्ति में भावपूर्वक रुचि।

क्रियाविशाल **Kriyāviśāla**

1. तेरहवाँ पूर्व ग्रंथ।
2. लेखन आदि 72 कलाओं तथा स्त्री संबंधी 64 कलाओं के गुण-दोष, छंद अलंकार, क्रिया-फल आदि का व्याख्यान करने वाला पूर्व ग्रंथ।

क्रोध **Krodha**

1. मोहनीय कर्म के उदय से अप्रीतिरूप द्वेषमय परिणाम।
2. क्रूरता रूप परिणाम।

क्रोधकृतकायसंरम्भ **Krodhakṛitakāyasaṃrambha**

क्रोध के वशीभूत होकर घातविषयक प्रयत्न।

क्लेशवाणिज्य **Kleśavāṇijya**

दासी-दास आदि को बेचने का व्यापार।

क्षण **Kṣaṇa**

1. एक परमाणु का दूसरे परमाणु के अतिक्रमण का काल
2. स्तोक का नाम क्षण है। यह स्तोक सात उच्छ्वास प्रमाण होता है।

क्षणलवप्रतिबोधनता **Kṣaṇalavapratibodhanatā**

1. काल का एक भेद।
2. तीर्थंकर प्रकृति की बंधक षोडशकारण भावनाओं में से एक।
3. सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत, शील और गुणों का निर्मल करना अथवा कलंक (कर्ममल) का धोना या भस्म कर देना प्रतिबोधनता है और प्रत्येक क्षण या लव में ऐसी प्रतिबोधनता का रहना क्षण-लव-प्रतिबोधनता है।

क्षपक **Kṣapaka**

कर्म क्षपण में प्रवृत्त जीव।

क्षपक श्रेणी **Kṣapaka śreṇi**

मोहनीय कर्म का क्षय करते हुए आत्मा जिस श्रेणी (अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और क्षीणमोह इन चार गुणस्थानों रूप नसैनी) पर आरूढ़ होना।

क्षपण **Kṣapaṇa**

1. अष्ट कर्मों का आत्यंतिक विनाश।
2. जीव के आठों कर्मों की मूल व उत्तर भेदभूत प्रकृतियों के प्रकृति,स्थिति, अनुभाग और प्रदेश बंधों का निर्मूल विनाश।
3. क्रोध, मान, माया और मद का क्षय करने वाला जीव।

क्षमा **Kṣamā**

1. क्रोध के बाह्य कारण मिलने पर भी क्रोध के उत्पन्न न होने का भाव।
2. प्रतिकूल स्थिति में भी कलुषता का उत्पन्न न होना अर्थात् समता भाव में स्थित रहना।

क्षपितकर्मांशिक **Kṣapitakarmāṅśika**

संयम का परिपालन करते हुए थोड़ी-सी आयु के शेष रह जाने पर क्षपण में उद्यत अंतिम समयवर्ती छद्मस्थ - क्षीणकषाय गुणस्थान के अंतिम समय को प्राप्त जीव क्षपितकर्मांशिक कहलाता है। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अंतराय कर्मों की जघन्य द्रव्यवेदना इसी क्षपितकर्मांशिक को होती है।

क्षय **Kṣaya**

प्रतिपक्षी कर्मों का अत्यंत अभाव।

क्षमण **Kṣamaṇa**

दूसरों के द्वारा किये गये अपराधों को स्वयं क्षमा करना।

क्षमापण **Kṣamāpaṇa**

आचार्य आदि गुरुजनों से क्षमा मांगने के भाव रखना।

क्षयोपशमनिमित्त अवधि **Kṣayopaśamanimitta avadhi**

1. अवधिज्ञानावरणकर्म के सर्वघाति स्पर्द्धकों का उदयाभावी क्षय, अनुदयप्राप्त उन्हीं का सदवस्था रूप उपशम और देशघाति स्पर्द्धकों का उदय होने पर उत्पन्न अवधिज्ञान।
2. यह गुण प्रत्यय अवधि भी कहलाता है तथा मनुष्य और तिर्यचों को होता है।

क्षयोपशमलब्धि **Kṣayopaśamalabdhi**

पूर्वसंचित कर्मों के अनुभागस्पर्द्धकों का विशुद्धि के वश प्रतिसमय अनंतगुणे हीन होकर उदीरणा को प्राप्त होना।

क्षयोपशम सम्यक्त्व **Kṣayopaśama samyaktva**

1. उदय को प्राप्त मिथ्यात्व का क्षय और उदय को अप्राप्त मिथ्यात्व का उपशम रूप मिश्र अवस्था।
2. क्षयोपशम से उत्पन्न तत्त्वार्थश्रद्धान क्षायोपशामिक या क्षयोपशम सम्यक्त्व कहलाता है।

क्षान्ति **Kṣānti**

1. क्रोध आदि का अभाव।
2. क्षमा, शांति आदि का सद्भाव।

क्षायिक **Kṣāyika**

कर्मों के क्षय से उत्पन्न होने वाला भाव।

क्षायिक-अनन्त-उपभोग **Kṣāyika-ananta-upabhoga**

उपभोग-अंतराय कर्म के निःशेष क्षय से केवली को सिंहासन, चामर और छत्रत्रय आदि रूप विभूतियाँ का प्राप्त होना।

क्षायिक-अनन्त भोग **Kṣāyika-anantabhoga**

भोगांतराय कर्म के संपूर्ण विनाश से केवली को पुष्पवृष्टि आदि रूप अतिशयवान अनंत सामग्री का प्राप्त होना।

क्षायिक अनन्त वीर्य **Kṣāyika anantavīrya**

वीर्यांतराय नामक कर्म के सर्वथा नष्ट हो जाने पर केवली आदि को प्रकट होने वाली अनंत शक्ति।

क्षायिक अभयदान **Kṣāyika abhayadāna**

दानांतरायकर्म के संपूर्ण नष्ट होने पर केवली को उत्पन्न त्रिकालवर्ती अनंत प्राणियों का अनुग्रह करने वाला दान।

क्षायिक उपभोग **Kṣāyika upabhoga**

उपभोगांतराय कर्म के सर्वथा विनष्ट हो जाने पर उपभोग के यथेष्ट साधनों का उपस्थित रहना।

क्षायिक चारित्र **Kṣāyika cāritra**

चारित्रमोहनीय कर्म के सम्पूर्ण नष्ट होने पर उत्पन्न होने वाला यथाख्यात चारित्र।

क्षायिकदान **Kṣāyikadāna**

दानांतराय कर्म के क्षय से देते समय किसी प्रकार की बाधा की उपस्थिति से रहित दान।

क्षायिकभाव **Kṣāyika bhāva**

ज्ञानादि के विघातक पुद्गलों (ज्ञानावरणादि कर्मस्कंधों) के अत्यंत विनाश से उत्पन्न अध्यवसाय (आत्मपरिणाम)।

क्षायिक भावलोक **Kṣāyika bhāvaloka**

कर्म के क्षय से उत्पन्न होने वाले भाव।

क्षायिकभाव सिद्ध **Kṣāyika bhāvasiddha**

सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र के प्रभाव से कर्म का सर्वथा क्षयकारक जीव के द्वारा प्राप्त भाव।

क्षायिक भोग **Kṣāyika bhoga**

पुरुषार्थ के साधनों की प्राप्ति में संभव विघ्नों को दूर करने वाली भोग सामग्री।

क्षायिक लाभ **Kṣāyika lābha**

1. लाभांतराय कर्म के संपूर्ण क्षय से कवलाहार क्रिया से रहित केवलियों के शरीर को बल प्रदान करने वाले अत्यंत शुभ व सूक्ष्म अनंत असाधारण पुद्गलों का प्रतिसमय संबंध को प्राप्त होना।
2. प्राप्ति में संभव विघ्नों को दूर करने वाला साधन।

क्षायिक वीर्य **Kṣāyika vīrya**

वीर्यांतराय कर्म के समस्त क्षय से उत्पन्न शक्ति विशेष।

क्षायिक सम्यक्त्व **Kṣāyika samyaktva**

अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया व लोभ तथा सम्यक्त्व, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन सात प्रकृतियों के अत्यंत क्षय से उत्पन्न सम्यक्त्व।

क्षायोपशमिक संयमासंयम **Kṣāyopaśamika saṃyamā saṃyama**

अनंतानुबंधी एवं अप्रत्याख्यान रूप आठ कषायों के उदय, क्षय और उपशम के साथ प्रत्याख्यान के उदय, संज्वलन कषाय के देशघातिस्पर्द्धकों के उदय तथा नो कषायों के यथासंभव उदय होने पर विरत-अविरत रूप परिणाम।

क्षायोपशमिकी लब्धि **Kṣāyopaśamikī labdhi**

पूर्वसंचित कर्मपटल के अनुभाग स्पर्द्धकों की शुद्धि के योग से प्रतिसमय अनंतगुणी हीन होती हुई उदीरणा।

क्षितिशयन व्रत **Kṣitiśayana vrata**

स्त्री, पशु आदि से रहित प्रासुक भूमि प्रदेश में सीधे अथवा धनुष के समान एक करवट से शयन करना।

क्षयोपशम **Kṣayopaśama**

कर्मों का एक देश क्षय व एकदेश उपशम होना।

क्षीणकषाय **Kṣiṇakaṣāya**

1. कषाय का निःशेष रूप से क्षीण होना।
2. गुणस्थानों में बारहवाँ गुणस्थान।
3. समस्त मोह का क्षय करने वाला।

क्षुधापरीषह **Kṣudhāpariṣaha**

1. परीषह का एक भेद।

2. आहार न मिलने पर अथवा अल्प मात्रा में मिलने पर या अंतराय हो जाने पर क्षुधा (भूख) की वेदना को सहन करना।
3. क्षुधाजन्य बाधा का चिंतन न करना।

क्षुल्लक **Kṣullaka**

1. क्षुल्लक शब्द का अर्थ है अपेक्षाकृत छोटा।
2. ग्यारहवीं प्रतिमाधारी उत्कृष्ट श्रावक ।
3. कौपीन एवं चादर युक्त वेशधारी तथा पिछी-कमंडलु का धारक उत्कृष्ट श्रावक।

क्षेत्र **Kṣetra**

1. पुद्गल आदि द्रव्यों से युक्त स्थान।
2. जीव का स्वरूप।
3. लोकाकाश रूप, अलोकाकाश रूप।
4. जीव की अवस्था की अपेक्षा- स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद।
5. प्रदेश की अपेक्षा- सामान्य व विशेष।

क्षेत्र कायोत्सर्ग **Kṣetra Kāyotsarga**

1. सावद्य क्षेत्र के सेवन से लगे दोषों को दूर करने के लिए कायोत्सर्ग करना।
2. कायोत्सर्ग युक्त जीव द्वारा सेवित क्षेत्र।

क्षेत्रचरण **Kṣetra caraṇa**

जिस क्षेत्र में चरण (चारित्र) का व्याख्यान किया जाता है उसे द्रव्य निक्षेप से क्षेत्रचरण कहते हैं।

क्षेत्रचार **Kṣetracāra**

गमन (चार) किया जाने वाला क्षेत्र।

क्षेत्रज्ञ **Kṣetrajña**

आत्मस्वरूप अथवा छह द्रव्य स्वरूप लोक को जानने वाला।

क्षेत्रतः जीव **Kṣetrataḥ jīva**

असंख्यात प्रदेशों से अवगाहित जीव।

क्षेत्रतः वर्गणा **Kṣetrataḥ vargaṇā**

एक प्रदेश से असंख्यात प्रदेश तक अवगाह वाले परमाणुओं का समूह।

क्षेत्र धर्म **Kṣetra dharma**

आकाश रूप क्षेत्र का अमूर्तत्व आदि आत्मस्वभाव ।

क्षेत्र परावर्त **Kṣetraparāvarta**

जीव के मरण द्वारा लोकाकाश के समस्त प्रदेशों का व्याप्त होना।

क्षेत्रपरिवर्तन **Kṣetraparivartana**

जिसका शरीर आकाश के सबसे कम प्रदेशों पर स्थित है। ऐसा एक सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तक जीवलोक से आठ मध्यप्रदेशों को अपने शरीर के मध्य में करके उत्पन्न हुआ और क्षुद्र भव ग्रहण काल तक जीवित रहकर मर गया। पश्चात् वही जीव पुनः उसी अवगाहना से वहाँ दूसरी, तीसरी, चौथी बार उत्पन्न हुआ। इस प्रकार अंगुल के असंख्यातवें भाग में आकाश के जितने प्रदेश प्राप्त हों उतनी बार वहीं उत्पन्न हुआ। पुनः उसने आकाश का एक-एक प्रदेश बढ़ाकर सब लोक को अपना जन्म क्षेत्र बनाया। इस प्रकार वह सब मिलकर एक क्षेत्र परिवर्तन होता है।

क्षेत्रपूजा **Kṣetrapūjā**

तीर्थंकरों के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान प्राप्ति और तीर्थ के चिह्न स्वरूप निषीधिका स्थानों में की जाने वाली विधिपूर्वक पूजा।

क्षेत्रप्रतिक्रमण **Kṣetrapratikramaṇa**

1. जल, कीचड़ तथा त्रस-स्थावर जीवों से व्याप्त क्षेत्रों में गमनागमन का परित्याग।
2. स्वाध्याय तथा ध्यान में विघ्न उत्पन्न करने वाले प्रचुर त्रस-स्थावर जीवों से युक्त क्षेत्र का परिहार।

क्षेत्रप्रत्याख्यान **Kṣetrapratyākhyāna**

अयोग्य व अनिष्ट प्रयोजन वाले तथा जो क्षेत्र संयम का विनाश और संक्लेश को उत्पन्न करते हैं उनके त्याग के नियम का नाम।

क्षेत्रप्रमाण **Kṣetrapramāṇa**

अंगुलादि अवगाहनाओं को क्षेत्र प्रमाण कहते हैं।

क्षेत्रमंगल **Kṣetramaṅgala**

1. जिन स्थानों पर साधुजनों ने ध्यानस्थ होकर दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण प्राप्त किया है, वे पवित्र क्षेत्र। जैसे- पावापुरी, गिरनार आदि।

2. साढ़े तीन हाथ से लेकर पाँच सौ पच्चीस धनुष तक के शरीर में स्थित और केवलज्ञान से व्याप्त आकाश प्रदेश।

क्षेत्रवर्गणा **Kṣetravargaṇā**

एक आकाश प्रदेश अवगाहना से लेकर प्रदेशादिक क्रम से कुछ कम घनलोक जितने विकल्प हैं वे सब क्षेत्रवर्गणाएं हैं।

क्षेत्रवृद्धि **Kṣetravṛddhi**

ग्रहण किए गए दिशा के प्रमाण से लोभवश उससे अधिक का अभिप्राय।

क्षेत्रशुद्धि **Kṣetraśuddhi**

शास्त्रव्याख्याता की चारों दिशाओं में 28 हजार धनुष लंबे क्षेत्र में मल, मूत्र, चमड़ा एवं पंचेन्द्रियकाय की गीली हड्डी, मांस, रक्त आदि का अभाव क्षेत्रशुद्धि है।

क्षेत्रसमाधि **Kṣetrasamādhi**

1. जिस क्षेत्र में समाधि का वर्णन किया जाये।
2. क्षेत्र विशेष में अवस्थित किसी साधक के चित्त की एकाग्रतारूप समाधि उत्पन्न हो, उसे क्षेत्र की प्रधानता से क्षेत्रसमाधि कहते हैं।

क्षेत्रसामायिक **Kṣetrasāmāyika**

नगर, खेट, कर्बट, मटंब, पट्टन, द्रोणमुख और जनपद तथा स्व निवास स्थान विषयक राग-द्वेष को दूर करना।

क्षेत्रस्तव **Kṣetrastva**

1. निर्वाणभूमियों (जैसे कैलाश पर्वत, सम्मेदाचल, पावापुर आदि) एवं समवसरणस्थानों का गुणकीर्तन।
2. चतुर्विंशतिस्तव सहित क्षेत्र का नाम।

क्षेत्रानुपूर्वी **Kṣetrānupūrvī**

द्रव्य की अवगाहना से उपलक्षित क्षेत्र।

क्षेत्रार्य **Kṣetrārya**

1. काशी, कौशल आदि देशों में उत्पन्न हुए मनुष्य।
2. जो पंद्रह कर्मभूमियों में तथा भरत क्षेत्रों में वर्तमान साढ़े पच्चीस देशों में तथा शेष क्षेत्रगत चक्रवर्ती विजयों में उत्पन्न हुए हों।

क्षेमंकर **Kṣemaṅkara**

शांति अथवा रक्षा करने के स्वभाव वाला।

क्षोभ **Kṣobha**

1. विकार रहित एवं स्थिर चित्तवृत्ति वाले चारित्र का विनाशक चारित्रमोह।
2. चारित्र मोह के कारण निश्चल चित्तवृत्ति की विनाशक वृत्ति।

क्ष्वैलौषधि **Kṣvailauṣadhi**

एक ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से जीवों के कफ, आंख एवं नासिका का मल आदि रोग शीघ्र दूर होते हैं।

खगचर **Khagacara**

स्वभावतः विद्या के बिना आकाश में गमन करने में समर्थ।

खरभाग **Kharabhāga**

अधोलोक की चित्रा पृथ्वी के प्रथम भाग का नाम।

खेट **Kheta**

1. पर्वत और नदी से घिरा हुआ क्षेत्र।
2. नगर के चारों ओर मिट्टी से बना हुआ कोट।

गच्छ **Gaccha**

1. एक आचार्य के नेतृत्व में रहने वाले साधुओं का समूह।
2. तीन से अधिक साधु पुरुषों का समूह।

गण **Gaṇa**

मर्यादा के उपदेशक या श्रुत में वृद्ध साधुओं का समूह।

गणधर **Gaṇadhara**

1. गण का रक्षक।
2. अनुपम ज्ञान दर्शनादिरूप धर्मगण का धारक।
3. गुरु की आज्ञानुसार साधु-समूह के साथ पृथक् विहार करने वाला।

गणाधिप **Gaṇādhipa**

धर्माचार्य अथवा उसके समान गृहस्थाचार्य।

गणी **Gaṇī**

ग्यारह अंगों का ज्ञाता, गच्छ का स्वामी।

गतरूपध्यान **Gatarūpadhyāna**

समस्त व्यापार रहित निरालंब रूप ध्यान। चित्त का व्यापार, इंद्रियादि व्यापार समाप्त होकर ध्यानस्थ होना।

गति **Gati**

1. गतिनाम कर्म के उदय से निर्मित चेष्टा।
2. नारक, तिर्यंच, मनुष्य देव आदि का उत्पत्ति स्थान।
3. गतिनामकर्म के उदय से उत्पन्न आत्मा की पर्याय।

गतिनाम (कर्म) **Gatināma (karma)**

1. नाम कर्म का एक भेद।
2. जिस कर्म के उदय से जीव अन्य भव को जाता है।

गमिकश्रुत **Gamikaśruta**

शास्त्र, जो अर्थ की भिन्नता होते हुए भी अक्षरों की समानता रखने वाले पाठों सहित हैं।

गरिमा **Garimā**

एक ऋद्धि विशेष जिसके प्रभाव से वज्र से भी गुरुतर शरीर बनाया जा सके।

गर्हा **Garhā**

1. दूसरों के समक्ष की जाने वाली आत्मनिंदा।
2. समस्त परिग्रह का छोड़ना, यह मुक्ति का मार्ग है। पर मुझ पापी ने परीषह से डरकर वस्त्र तथा पात्र आदि परिग्रह को ग्रहण किया है, इस प्रकार दूसरों से कथन करना।

गवेषणा **Gaveṣaṇā**

1. व्यतिरेक धर्म के स्वरूप की आलोचना।
2. ईहामतिज्ञान का पर्यायवाची।
3. अवग्रह से गृहीत अर्थ का अन्वेषण जिसके द्वारा किया जाये।

गव्यूति **Gavyūti**

दो हजार धनुष प्रमाण माप।

गारव **Gārava**

ऋद्धि, रस एवं सुखसामग्री में आसक्ति।

गुण **Guṇa**

1. द्रव्य के आश्रय से उसमें सदैव रहने वाली शक्ति विशेष गुण है। जैसे जीव द्रव्य में ज्ञान आदि एवं पुद्गल में रूप-रस आदि।
2. गुण के कारण ही द्रव्य दूसरे द्रव्य से भिन्न होता है।
3. द्रव्य का सहभावी धर्म गुण है।

गुणप्रतिपन्न **Guṇapratipanna**

संयम अथवा संयमासंयम गुण को प्राप्त जीव।

गुणप्रत्यय-अवधिज्ञान **Guṇa pratyaya avadhijñāṇa**

अवधिज्ञान में कारणभूत सम्यक्त्व से अधिष्ठित अणुव्रत एवं महाव्रत रूप गुण।

गुणप्रमाण **Guṇapramāṇa**

प्रमाण के हेतु और द्रव्य प्रमाणस्वरूप होने के कारण गुण समूह।

गुणव्रत **Guṇavrata**

अणुव्रतों के उपकारक दिग्व्रत, अनर्थदण्ड व्रत, भोगोपभोगपरिमाणव्रत।

गुणश्रेणी **Guṇaśreṇī**

परिणामों की विशुद्धि की वृद्धि से अपवर्तना करण के द्वारा उपरितन स्थिति से हीन करके अंतर्मुहूर्त काल तक प्रतिसमय उत्तरोत्तर असंख्यात गुणवृद्धि के क्रम से कर्म प्रदेशों की निर्जरा के लिए की जाने वाली रचना।

गुणस्थान **Guiṇasthāna**

1. कर्मों की उदयादि अवस्थाओं में होने वाले जिन भावों से जीव देखे जाते हैं, उनकी गुण संज्ञा विशेष।
2. शुद्धि-अशुद्धि के प्रकर्ष-अपकर्ष के द्वारा जीव के स्वभावभूत रत्नत्रय रूप गुणों के स्वरूप में भेद का नाम।

गुप्ति **Gupti**

1. मिथ्यात्व आदि जिन कारणों से संसार की वृद्धि होती है, उनसे आत्मा का संरक्षण करना।
2. सम्यक् प्रकार से योग (मन, वचन, काययोग) का निग्रह।

गुरु **Guru**

1. शास्त्र के अर्थ को ग्रहण एवं व्याख्यान करने वाला।
2. पाँच महाव्रतधारी, मद का मंथन करने वाला तथा क्रोध, लोभ व भय का त्याग करने वाला।
3. रत्नत्रय का धारी एवं संसार-समुद्र से पार उतारने वाला।
4. निर्दोष होकर आभ्यन्तर प्रयोजन की सिद्धि करानेवाला।

गुरुविनय **Gurūvinaya**

गुरु की वैयावृत्ति, गुरु के प्रति सद्भावना, उनके उपकारों को स्मरण में रखना तथा आज्ञा का यथार्थ रूप में पालन करना आदि।

गुरूपास्ति **Gurūpasti**

निश्छल मनोवृत्तिपूर्वक राजा के समान गुरु की इच्छानुसार उनके मन को अनुरंजायमान करना।

गृहमेधी **Gṛhamedhī**

सम्यग्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञान से युक्त श्रावक के बारह व्रतों को पालन करने वाला गृहस्थ।

गृहस्थ **Gṛhastha**

1. श्रावकोचित नित्य एवं नैमित्तिक अनुष्ठानों को करने वाला।
2. गृह में रहते हुए देव, गुरु, शास्त्र में श्रद्धा रखने वाला आंशिक व्रती।

गृहीतमिथ्यादर्शन **Gṛhītamithyādarśana**

पर के उपदेश से तत्त्वार्थ का अश्रद्धान।

गोचार **Gocāra**

गौ के समान वृत्ति, जैसे गाय उपलब्ध तृणसमूह का उपभोग करती है वैसे ही साधु भी आहारदाता के अंग, वेष-भूषा आदि पर दृष्टि न रखकर भोजन ग्रहण करता है।

गोत्र **Gotra**

1. कर्म का एक भेद, जिसके द्वारा जीव ऊँच एवं नीच कहा जाता है।
2. संतानक्रम से आये हुए आचरण का नाम।

ग्रंथ **Grantha**

1. गणधर देव द्वारा रचित द्रव्यश्रुत।

2. परिग्रह (आसक्ति) का अपर नाम।

ग्रंथि **Granthi**

कर्मोदय से उत्पन्न जीव के घनीभूत गाँठ के समान दुर्भेद्य राग-द्वेष परिणाम।

ग्रैवेयक **Graiveyaka**

लोकरूप पुरुष के ग्रीवास्थान पर अवस्थित विमान।

ग्लान **Glāna**

रोग आदि से अभिभूत शरीर। मंद, अकुशल व व्याधि से पराभूत।

घनलोक **Ghanaloka**

सात राजु प्रमाण आकाश की प्रदेशपंक्ति को जगश्रेणी, जगश्रेणी के वर्ग को जगप्रतर और जगप्रतर को जगश्रेणी से गुणित करने पर घनलोक होता है।

घातिकर्म **Ghātikarma**

अनुजीवी गुणों के घातककर्म-ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय कर्म घातिकर्म है।

घृतस्रावी **Ghṛtasrāvī**

1. एक ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से हाथ पर रखा हुआ रूक्ष भी आहार क्षण मात्र में घृतवाला हो जाता है।
2. जिसके प्रभाव से साधु के मुख से निश्रित दिव्य वचन-श्रवण से दुःखी जनों का क्लेश नष्ट हो जाता है।

घोरपराक्रमतप **Ghoraparākramatapa**

एक ऋद्धि विशेष, अनुपमतप जो उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होता है। इस तप के धारक तीनों लोकों के संहार करने की क्षमता से युक्त होते हुए कांटों, पत्थरों, अग्नि, पर्वत, धूम और उल्कादि के बरसाने में समर्थ तथा सहसा समुद्र के समस्त जल को सुखा देने की शक्ति।

घोरब्रह्मचारित्व **Ghorabrahmacāritva**

1. एक ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से मुनि के द्वारा अधिष्ठित क्षेत्र में भी चोर आदि की बाधाएं तथा महामारी व महायुद्ध आदि नहीं होते।
2. चारित्र मोहनीय के उत्कृष्ट क्षयोपशम के होने पर दुःस्वप्नों को नष्ट करने वाली ऋद्धि।

घ्राण **Ghrāṇa**

एक इंद्रिय विशेष, जिसके द्वारा आत्मा वीर्यांतराय और घ्राणेंद्रियमतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से और अंगोपांग नामकर्म की सहायता से वस्तुगत सुगंध और दुर्गंध को ग्रहण किया जाता है।

घ्राणनिरोध **Ghrāṇanirodha**

जीव या अजीवगत प्राकृतिक या प्रयोग रूप सुगंध में राग नहीं करना तथा दुर्गंध में द्वेष नहीं करना।

चक्रेश्वरी **Cakreśvarī**

आदि तीर्थकर भगवान् ऋषभदेव की शासन देवी, एक यक्षिणी।

चक्षु **Cakṣu**

वह बाह्य इंद्रिय, जिसके द्वारा आत्मा पदार्थों को देखता है।

चक्षुदर्शन **Cakṣu darśana**

पदार्थों को देखने में निमित्त सामान्य संवेदन शक्ति।

चक्षु दर्शनावरण **Cakṣu darśanāvaraṇa**

पदार्थ को देखने में निमित्त सामान्य स्वसंवेदन की शक्ति को रोकने वाला एक कर्म।

चतुरस्रनाम **Caturasranāma**

जिस कर्म के उदय होने पर जीव का शरीर चतुरस्र प्रमाण हो। पैर के अंगूठे से सिर के बालों तक की ऊंचाई वाला तथा फैली हुई भुजाओं की तरह तिरछे शरीर की आकृति।

चतुर्मुखमह **Caturmukhamaha**

मुकुटबद्ध राजाओं द्वारा की जाने वाली जिनेंद्र देव की पूजा।

चतुश्शरीरी जीव **Catuśśarīrī jīva**

जिस जीव के औदारिक, वैक्रियिक, तैजस और कार्मण शरीर होते हैं।

चरमशरीर **Carma śarira**

उसी भव में मोक्ष का कारणभूत वज्रवृषभ नाराच संहनन युक्त शरीर।

चारण **Cāraṇa**

एक विशेष प्रकार की ऋद्धि, जिसमें जल, जंघा, तन्तु (धागा), पुष्प, पत्र श्रेणी और अग्नि-शिखा आदि के आलंबन से साधु गमनागमन में समर्थ होता है।

चारित्र **Cāritra**

शुभ कर्म में प्रवृत्ति और अशुभ कर्म से निवृत्ति।

चारित्र मोहनीय **Cāritra mohanīya**

चारित्र को विकृत करने वाला कर्म।

चारित्राराधना **Cāritrārādhanā**

इंद्रिय-असंयम और प्राणी-असंयम का परित्याग। तेरह प्रकार के चारित्र के पालन रूप एक विशिष्ट आराधना।

चिदात्मा **Cidātmā**

गुण और पर्याय से युक्त, उत्पाद, व्यय एवं ध्रौव्य से समवेत तथा रूप, रस, गंध एवं स्पर्श से रहित आत्मा।

छर्दि **Chedopasthāpaka**

आहार करते समय वमन हो जाने पर भोजन के अन्तराय का एक दोष।

छेदोपस्थापक **Chedopasthāpaka**

मूल गुणों में प्रमाद करने वाला साधु।

छेदोपस्थापन **Chedopasthāpana**

व्रत भंग होने पर की जाने वाली विशुद्धि।

छेदोपस्थापना चारित्र **Chedopasthāpanā cāritra**

प्रमाद के कारण चारित्र में होने वाले दोषों को दूर करने का उपाय।

जंघाचारण **Jaṅghācaraṇa**

एक विशिष्ट ऋद्धि, जिसके प्रभाव से साधु चार अंगुल ऊपर आकाश में सीधा गमन करने में समर्थ होता है।

जंबूद्वीप **Jambūdvīpa**

मनुष्य लोक के मध्य में एक लाख योजन विस्तार वाला गोलाकार क्षेत्र।

जगत् श्रेणी **Jagat śreṇī**

सात राजू प्रमाण लोक पंक्ति।

जघन्य अन्तरात्मा **Jaghanya antarātmā**

जिनेंद्र भगवान् के गुणों का अनुरागी अविरत-सम्यग्दृष्टि भक्त।

जघन्य अन्तर्मुहूर्त **Jaghanya antarmuhūrta**

एक समय अधिक आवलिप्रमाण काल।

जरायु **Jarāyu**

गर्भस्थ जीव की देह को आवृत करने वाला रक्त एवं मांस का समूह।

जरायुज **Jarāyuja**

जरायु में उत्पन्न होने वाला जीव।

जाति **Jāti**

1. माता का वंश।
2. पदार्थ में रहने वाला सामान्य धर्म।
3. नरकादि गतियों में एकरूपता की प्रतीति कराने वाला गुण।

जाति कथा **Jāti kathā**

ब्राह्मण आदि जाति में उत्पन्न स्त्री की निंदा या प्रशंसा करने वाली कथा।

जिघ्रास मरण **Jighrāsa maraṇa**

नाक दबाकर सांस रोककर मरने की क्रिया।

जिन **Jina**

रागद्वेष रूप कषायों को जीतने वाला।

जिनकल्प **Jinakalpa**

उत्तमसंहनन के धारी उपसर्ग विजेता साधु, जो जिनेन्द्र भगवान की तरह विहार करते हैं।

जिनकल्पिक **Jina kalpika**

देखें—जिनकल्प।

जिनमुद्रा **Jina mudrā**

वस्त्रादि परिग्रह से रहित दिगंबर वेश।

जिनवचन **Jina vacana**

वीतराग, सर्वज्ञ एवं हितोपदेशी के वचन।

जीव **Jīva**

चेतना लक्षण वाला तत्त्व।

जीवन **Jīvana**

आयु आदि दश प्राणों को धारण करना।

जीवनैसृष्टिकी **Jīvanaisṛiṣṭikī**

1. रेंहट आदि यंत्रों के द्वारा कुएं से पानी निकालने की क्रिया।
2. गुरु के समक्ष विधिपूर्वक पुत्र या शिष्य के समर्थन की क्रिया।

जीवप्रादोषिकी **Jīvaprādoṣikī**

अपने-पराये पुत्र-कलत्र आदि विषयक क्रिया।

जीव बंध **Jīva bandha**

एक शरीर में स्थित अनन्तानन्त निगोद जीवों का बंधन।

जीव विचय **Jīva vicaya**

धर्म ध्यान का एक भेद, जिसमें जीव के स्वभाव का चिंतन किया जाता है।

जीव विप्रमुक्त **Jīva vipramukta**

विधि पूर्वक छोड़ा गया शरीर।

जीव समास **Jīva samāsa**

1. विविध जीवों और उनकी जातियों का ज्ञान कराने वाले।
2. जीवों का संक्षेप करने वाले चौदह गुणस्थान।

जीवादत्त **Jīvādatta**

माता-पिता के द्वारा गुरु के लिये प्रदत्त, प्रव्रज्या के परिणाम से हीन पुत्र आदि।

जीविताशंसा **Jīvitāśansā**

सल्लेखना का एक अतिचार, जिसमें हेय शरीर के प्रति आदर का भाव उत्पन्न होता है।

जुगुप्सा **Jugupsā**

अपने दोषों को छिपाने और दूसरे के दोषों को प्रकाशित करने वाली एक नोकषाय।

ज्ञ **Jña**

त्रैकालिक ज्ञाता आत्मा।

ज्ञशरीरद्रव्यश्रुत **Jña śarīra dravyaśruta**

श्रुत के अर्थाधिकारों के ज्ञाता पुरुष का च्युत, च्यावित या त्यक्त शरीर।

ज्ञशरीरद्रव्यानुपूर्वी **Jña śarīra dravyānupūrvī**

आनुपूर्वि पद के अर्थाधिकारों के ज्ञाता पुरुष का च्युत, च्यावित या त्यक्त शरीर।

ज्ञशरीरद्रव्यावश्यक **Jña śarīra dravyāvaśyaka**

1. आवश्यक पद के आज्ञाधिकार के ज्ञाता का च्युत, च्यावित या त्यक्त शरीर।
2. उपक्रम शरीर के ज्ञाता पुरुष का सिद्धत्व को प्राप्त च्युत, च्यावित या त्यक्त शरीर।

ज्ञशरीर-भव्यशरीर व्यतिरिक्तद्रव्यश्रुत **Jña śarīra bhavya śarīravyatiriktadravyaśruta**

ताड़पत्र, भोजपत्र या कागज की पुस्तक अथवा वस्त्र आदि पर लिखा हुआ श्रुत।

ज्ञातभाव **Jñāta bhāva**

अभिप्राय पूर्वक हिंसादि में प्रवृत्ति।

ज्ञातृ-कथा **Jñātṛkātha**

तीर्थंकर गणधर आदि की कथाओं का निरूपण करने वाला पाँच लाख पचास हजार पद प्रमाण शास्त्र।

ज्ञातृ धर्मकथा **Jñatṛ dharmakathā**

तीर्थंकरों की देशना और गणधरों के संदेह का निवारण करने वाली कथाओं के प्ररूपक अंगश्रुत का एक भेद।

ज्ञानकुशील **Jñāna kuśīla**

अष्टविध ज्ञानाचार की विराधना करने वाला साधु।

ज्ञान चेतना **Jñāna cetanā**

ज्ञान मात्र का अनुभव कराने वाली केवलज्ञानी की चेतना।

ज्ञान नय **Jñāna naya**

ज्ञान के महत्त्व को प्रगट करने वाला उपदेश, जिसमें लोक एवं परलोक में ज्ञान को ही सुख का साधन माना गया है।

ज्ञानपंडित **Jñāna paṇḍita**

पाँच प्रकार के ज्ञानों में से यथासम्भव सम्यग्ज्ञान रूप से परिणत जीव।

ज्ञानपरीषह जय **Jñāna prīṣahajaya**

चौदह पूर्व और ग्यारह अंग रूप श्रुतज्ञान का अभिमान न करना।

ज्ञानपुलाक **Jñānapulāka**

अतिचारयुक्त ज्ञान का आश्रय लेकर चारित्र से पतित साधु।

ज्ञानप्रवाद **Jñāna pravāda**

पाँच ज्ञानों की प्ररूपणा करने वाला पाँचवा पूर्व।

ज्ञानमूढ़ **Jñāna Mūḍha**

ज्ञानावरण कर्म के उदय वाला जीव।

ज्ञानमोह **Jñānamoha**

ज्ञान को आच्छादित करने वाला।

ज्ञानविनय **Jñānavinaya**

आठ प्रकार के ज्ञानाचार तथा सम्यग्ज्ञानी की विनय।

ज्ञानविराधना **Jñāna virādhanā**

ज्ञान के प्रतिकूल आचरण करना।

ज्ञानसमय **Jñānasamaya**

पाँचों अस्तिकायों का निश्चयात्मक बोध।

ज्ञानाकार **Jñānākāra**

शुद्ध दर्पणतल के समान ज्ञान का आकार।

ज्ञानाचार **Jñānācāra**

ज्ञान के आठों अंगों का अभ्यास करना।

ज्ञानातिचार **Jñānāticāra**

अक्षर, पद आदि में न्यूनता, अधिकता, पूर्वापर-विरोधी रचना, विपरीतार्थ निरूपण तथा अर्थवैपरीत्य रूप दोष।

ज्ञानानुभूति **Jñānānubhūti**

शुद्ध आत्मा का अनुभवन।

ज्ञानाराधना **Jñānārādhanā**

अष्टविध ज्ञानाचार में प्रवृत्तिपूर्वक श्रुतज्ञान का निरतिचार परिपालन।

ज्ञानावरण **Jñānāvaraṇa**

ज्ञान का आवरक एक कर्म।

ज्ञानोपयोग **Jñānopayoga**

पदार्थविषयक उपयोग।

ज्ञानोपयोगभावना **Jñānopayoga bhāvanā**

तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली षोडशकारण भावनाओं में से एक भावना, जिसमें जीवादि पदार्थों को विषय बनाने वाले सम्यग्ज्ञान में प्रवृत्ति रहती है।

ज्ञायक शरीर **Jñāyaka śarīra**

सर्वज्ञ का सिद्धशिलागत या निषीधिकागत निर्जीव शरीर।

ज्ञायक शरीर सिद्ध **Jñāyaka śarīra siddha**

सिद्ध प्राभृत के ज्ञाता का शरीर।

ज्ञेय **Jñeya**

सामान्य-विशेषात्मक वस्तु।

ज्ञेयाकार **Jñeyākāra**

प्रतिबिम्बाकार परिणत दर्पणतल की तरह ज्ञेय पदार्थ का आकार।

ज्योतिश्चारण **Jyotiścāraṇa**

सूर्य-चन्द्रमादि की किरणों का आश्रय लेकर आकाश में गमन कराने वाली एक ऋद्धि।

ज्योतिष्क **Jyotiṣka**

लोक को प्रकाशित करने वाले वैमानिक देव।

झल्लरीसंस्थान **Jhallarī saṃsthāna**

झालर के आकार का स्वयंभूरमण समुद्र से वेष्टित, चन्द्रमंडल की तरह गोल, असंख्यात योजन विस्तार वाला, एक लाख योजन ऊँचा क्षेत्र।

टंक **Ṭanka**

शिलामय पर्वतों पर उत्कीर्ण बावड़ी, कुआँ, तालाब और जिनगृह आदि।

टंकोत्कीर्ण **Ṭankotkīrṇa**

पत्थर पर टांकी से उत्कीर्ण की गई आकृति के समान अचल (आत्मा)।

टीका **Ṭīkā**

वृत्ति–सूत्रकार के ग्रंथ का विशद व्याख्यान।

टोलगतिबंधक **Ṭolagatibandhaka**

टिड्डी अथवा शलभ (पतंग) के समान उछल–उछल कर कभी आगे और कभी पीछे वंदना करना।

डमरकर **Ḍamarakara**

काय–वचन और मन के द्वारा विचित्र प्रकार से ताड़न करने वाला व्यक्ति।

ढूंढ़िया मत **Ḍhūṇḍhiyāmata**

श्वेताम्बर जैनों का एक सम्प्रदाय जो मूर्तिपूजा को नहीं मानता।

णमोकार मंत्र **Ṇamokāra mantra**

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय तथा साधु का नमस्कार परक महामंत्र, जो कि समस्त पापों का नाश करने वाला है तथा सभी मंगलों में प्रथम मंगल है।

डमरुकमुद्रा **Ḍamrukamudrā**

दाहिने हाथ की मुट्ठी बांधकर और कनिष्ठा एवं अंगूठे को पसार कर, डमरु के समान चलने वाली हाथ की आकृति।

डायस्थिति **Ḍāyasthiti**

स्थिति–स्थान में स्थित होकर, उसी प्रकृति की उत्कृष्ट स्थिति को बांधना।

ढड्ढर **Ḍhaḍḍhara**

उच्च स्वर से उच्चारण करते हुए वंदना करने का दोष।

तंडुल मत्स्य **Taṅḍula matsya**

स्वयंभूरमण समुद्र में रहने वाले तिमि-तिमिंगलादिक महामत्स्यों के कान में रहने वाले तथा उनके कान के मैल को खाकर जीवन-निर्वाह करने वाले तंडुल (चावल) के आकार के मत्स्य ।

तंतुचारण **Tantucāraṇa**

मुनियों को मकड़ी के तंतुओं की पंक्ति पर शीघ्रता से गमन कराने में समर्थ एक विशेष प्रकार की ऋद्धि।

तत **Tata**

चमड़ा के तनने के कारण भेरी, मृदंग और दर्दुर (एक बाजा) आदि से निकलने वाले शब्द।

तत्त्व **Tattva**

1. वस्तु का स्वभाव।
2. वस्तु का असाधारण रूप स्वतत्त्व।
3. जो पदार्थ जिस रूप से अवस्थित है, उसका उस रूप होना।
4. अविपरीत अर्थ का विषय।

तत्त्वज्ञ **Tattvajña**

वस्तुतत्त्व को जानने वाला।

तत्त्वार्थ **Tattvārtha**

पदार्थ का यथार्थ रूप।

तत्प्रतियोगी (प्रत्यभिज्ञान) **Tatpratiyogī (Pratyabhijñana)**

यह प्रदेश उस प्रदेश से दूर है, इस प्रकार का ज्ञान।

तत्प्रदोष **Tatpradoṣa**

तत्त्वज्ञान में हर्ष का न होना।

तदाहृतादान **Tadāhṛtādāna**

1. अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. अपने द्वारा अप्रयुक्त और अननुमत चोर के द्वारा लायी हुई वस्तु का ले लेना।

तदुभय **Tadubhaya**

1. आलोचना और प्रतिक्रमण-इन दोनों का संसर्ग होने पर दोषों का शोधन होना।
2. अपने अपराध की गुरु के सामने आलोचना करके गुरु की साक्षीपूर्वक अपराध से निवृत्त होना।

तद्भवमरण **Tadbhavamaraṇa**

नूतन शरीर की पर्याय को धारण करने के लिये पूर्व पर्याय का नष्ट होना।

तद्भवस्थ केवली **Tadbhavastha kevalī**

केवलज्ञान अवस्था की पर्याय में अवस्थित केवली।

तपःसंयम **Tapaḥ saṃyama**

अनशनादि तप की प्रधानता युक्त एवं पाँच आस्रवों से रहित होना।

10—416 Min. of HRD/2014

तपःसमाधि **Tapaḥ samādhi**

अनेक गुणयुक्त तप में सदा रत रहने वाला, इहलोकादि की आशा से रहित कर्म निर्जरा का अभिलाषी विशुद्ध तप से पुरातन कर्म को नष्ट करने वाले और नवीन कर्म को न बाँधने वाले साधु की समाधि।

तपःसिद्ध **Tapaḥsiddha**

बाह्य और आभ्यंतर तप से संक्लेश को प्राप्त न होने वाला।

तप **Tapa**

1. सम्यक् ज्ञानी के द्वारा कर्म-मल के विलय के लिये की जाने वाली साधना।
2. विषयों का निग्रह।
3. समस्त पदार्थों में इच्छाओं के त्यागपूर्वक अपने स्वरूप में प्रतपन करना।
4. चारित्र में उद्योग और उपयोग लगाना।

तप-आचार **Tapa-acāra**

अनशनादि तपश्चरण की परिणति।

तप-विद्या **Tapa-vidyā**

षष्ठ व अष्टमादि उपवासों के करने से सिद्ध हुई विद्यायें।

तप-विनय **Tapa-vinaya**

द्वादशविध तप एवं षड् आवश्यकों के परिपालन के प्रति- भक्ति, उत्साह, और विनय का भाव।

तपस्वी **Tapasvī**

1. तप प्रधान संयम में संलग्न साधक।
2. महोपवासादि का अनुष्ठान करने वाला।

तपोर्ह **Taporha**

छह माह तक के तपरूपप्रायश्चित्त के योग्य किया गया अपराध।

तप्त तप **Tapta tapa**

तपी हुई लोहे की कड़ाही पर गिरी हुई जल की बूँदों के समान खाये हुए आहार एवं शीघ्र सूख जाने से मल एवं रुधिर आदि रूप परिणत न कराने वाली ऋद्धि विशेष।

तम **Tama**

दृष्टि में प्रतिबंध का कारण तथा प्रकाश विरोधी अंधकार।

तर्क **Tarka**

1. उपलम्भ और अनुपलंभ के निमित्त से होने वाला व्याप्ति ज्ञान।
2. ज्ञान के द्वारा व्याप्ति से साध्य-साधन रूप अर्थों के संबंध का निश्चय करके अनुमान में प्रवृत्ति।

तर्कशास्त्र **Tarkaśastra**

दुर्गम मिथ्या मत रूप महान् कीचड़ को सुखा देने में सूर्य के समान समर्थ व्याप्ति का ज्ञान कराने वाला शास्त्र।

तर्काभास **Tarkābhāsa**

व्याप्ति रूप संबंध के न रहने पर भी उसका ज्ञान होना।

ताप **Tāpa**

1. निंदा आदि के निमित्त से कलुषित चित्त होने पर तीव्र पश्चाताप होना।
2. शोक के फलस्वरूप शरीर में पीड़ा होना।

तापस **Tāpasa**

बाहरी व्रत और विद्या के द्वारा लोगों के ठगने में कारण जटाधारी, वनवासी, पाषंडी साधु।

तिरोभाव **Tirobhāva**

संतान (परंपरा) रूप से अवस्थित स्वाभाविक विनाश।

तिर्यंच **Tiryañca**

1. समस्त कर्मों के उदय के अविनाभावी तिर्यग्गति नाम-कर्म के उदय से युक्त जीव।
2. तिर्यक् गमन करने वाले अथवा तिरोहित होकर स्वकर्म के वशवर्ती होते हुए समस्त गतियों में जाने वाले जीव।

तिर्यक्प्रचय **Tiryak pracaya**

प्रदेशों का समुदाय।

तिर्यक् सामान्य **Tiryak sāmanya**

1. अनेक द्रव्यों एवं पर्यायों में सादृश्यज्ञान का विषयभूत सदृश परिणाम।

2. प्रत्येक व्यक्ति में पाया जाने वाला समान परिणाम। जैसे शबल एवं शाबलेय आदि विभिन्न गायों में पाया जाने वाला गोत्व-सास्ना।

तिर्यगायु **Tiryagāyu**

जीव को तिर्यंच योनि में अवस्थित करने वाला आयु कर्म।

तिर्यग्गति **Tiryaggati**

1. तिर्यग्गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त होने वाली अवस्थाओं का समूह।
2. तिर्यंच जीवों की गति।

तिर्यग्गतिक्रम **Tiryaggatikarma**

भूमिगत बिल और पर्वत की गुफा आदि में प्रवेश करके दिग्व्रत की सीमा का उल्लंघन करना।

तिर्यग्गति प्रायोग्यानुपूर्वीनामकर्म **Tiryaggati prāyogyānupūrvī nāmakarma**

तिर्यंच गति को प्राप्त हुए जीव के विग्रहगति में वर्तमान होने पर तिर्यंचगति के योग्य आकार बनाने में निमित्त नाम कर्म।

तिर्यग्दिग्व्रत **Tiryagdigvrata**

पूर्व आदि तिरछी दिशाओं में जाने का परिमाण करना।

तिर्यग्योनि **Tiryagyoni**

तिर्यंच गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त जन्म।

तिर्यग्लोक **Tiryagloka**

एक लाख योजन के सातवें भाग मात्र सूच्यंगुल के विस्तार रूप जग प्रतर।

तिर्यग्वणिज्या **Tiryagvaṇijyā**

गाय-भैंस आदि पशुओं को लेकर दूसरे देश में बेचने पर अधिक लाभ होगा, इस प्रकार का उपदेश।

तिर्यग्व्यतिक्रम **Tiryagvyatikrama**

पूर्व आदि दिशाओं के जितने भाग में जाने का नियम किया गया है, उसका उल्लंघन करना।

तीर्थ **Tīrtha**

1. अपने जन्म रूप समुद्र से भयभीत हुए प्राणियों को पार उतारने का अग्रपथ।
2. चातुर्वर्ण्य संघ।

3. प्रथम गणधर।

तीर्थकर **Tīrthakara**

अनुपम पराक्रम के धारक, क्रोधादि कषायों के उच्छेदक, अपरिमित ज्ञानी, केवलज्ञान से संपन्न, संसार समुद्र से पारंगत, उत्तम गति को प्राप्त तथा सिद्धिपथ के उपदेशक, श्रुत एवं गणधररूप तीर्थ को तथा रत्नत्रयस्वरूप मोक्षमार्ग को प्रवर्तित करने वाले।

तीर्थकरनाम **Tīrthakaranāma**

अरहंत अवस्था की प्राप्ति रूप कारण, दर्शन ज्ञान चारित्र स्वरूप तीर्थ का प्रवर्तन करने वाला, आक्षेप, संक्षेप, संवेग एवं निर्वेग द्वार से भव्य जनों की सिद्धि के लिये मुनिधर्म व गृहस्थ धर्म का उपदेश देने वाला और चक्रवर्ती से पूजित कराने वाला नाम कर्म।

तीर्थकरसिद्ध **Tīrthakara siddha**

तीर्थंकर होकर सिद्ध होने वाले जीव।

तीर्थकर सिद्ध केवलज्ञान **Tirthakarasiddha kevālajñāna**

तीर्थंकर होकर सिद्ध होने वाले जीवों का केवलज्ञान।

तीर्थकरादत्त **Tīrthakarādatta**

तीर्थंकरों के द्वारा निषिद्ध आधाकर्मिक (पापकर्म) का ग्रहण करना।

तीर्थक्षत्रिय **Tīrthakṣatriya**

जीवन-निर्वाह के लिये राजमंत्री आदि पदों पर कार्य करने वाला।

तीर्थयात्रा **Tīrthayātrā**

1. अकार्य से निवृत्त होना।
2. परंपरा में प्रतिष्ठित धर्मस्थानों की यात्रा करना।

तीर्थव्यवच्छेद सिद्ध **Tirthavyavacchedasiddha**

सुविधिस्वामी आदि तीर्थंकरों के अंतराल में हुए तीर्थ के विच्छेद में जाति स्मरण आदि के द्वारा मोक्ष-मार्ग को प्राप्त करके सिद्ध होने वाले जीव।

तीर्थसिद्ध **Tirthasiddha**

संघ अथवा प्रथम गणधर रूप तीर्थ के उत्पन्न होने पर सिद्ध होने वाले जीव।

तीर्थसिद्धकेवलज्ञान **Tirthasiddhakevala jñāna**

तीर्थंकरों के तीर्थ रहते हुये जो सिद्ध हुये हैं, उनके केवलज्ञान को तीर्थ सिद्ध केवलज्ञान कहा जाता है।

तीव्रभाव **Tīvrabhāva**

अन्तरंग और बहिरंग कारणों की उदीरणावश उत्पन्न होने वाले उत्कट परिणाम।

तीव्रमंदभाव **Tīvramaṅdabhāva**

परिणामों की प्रकर्षता (तीव्रता) और अप्रकर्षता (मंदता)।

तुषित **Tuṣita**

विषयों से पराङ्मुख होकर आत्मसुख में संतुष्ट रहनेवाला ब्रह्मलोकवासी विशेष लौकान्तिक देवों का एक भेद।

तुष्टि **Tuṣṭi**

1. दाता का एक विशेष गुण।
2. आहारादि के दे देने पर और देते समय भी उत्कृष्ट हर्ष को प्राप्त होना।

तृणसंस्तर **Tṛṇasaṃstara**

1. तृण से निर्मित बिस्तर।
2. गाँठ से रहित, निश्छिद्र, अखण्डित, तृणों से निर्मित, जिसके ऊपर सोना, बैठना आदि भली भाँति हो सकता है, खुजली आदि को न करने वाला, जंतुरहित, सरलता से प्रतिलेखन योग्य और कोमल हो, वह अंतिम चतुर्थ तृणसंस्तर होता है।

तृणस्पर्शपरिषहजय **Tṛṇasparśapariṣahajaya**

शुष्क तृण, कठोर कंकड़, काँटा, तीखी मिट्टी और कील आदि के चुभने से शरीर के पैर वगैरह की वेदना को साधक के द्वारा सहन करना।

तृषा **Tṛṣā**

असाता वेदनीय की तीव्र, तीव्रतर, मंद अथवा मंदतर पीड़ा से उत्पन्न प्यास की बाधा।

तृषापरीषहजय **Tṛṣāparīṣahajaya**

चारित्रमोहनीय-वीर्यांतराय कर्म की अपेक्षा असातावेदनीय के उदय से जल पीने की इच्छा पर विजय प्राप्त करना।

तृष **Tṛṣa**

इन्द्रियविषयों में आसक्ति रखना।

तेज **Teja**

मूल में उत्पन्न होने वाली अग्नि आदि की उष्ण प्रभा।

तेजकाय **Tejakāya**

अग्निकाय जीव के द्वारा छोड़े गये भस्म आदि रूप काय।

तेजकायिक **Tejakāyika**

तेज रूप शरीर वाले जीव।

तेज जीव **Tejajīva**

विग्रह गति को प्राप्त अग्नि शरीर को धारण करने वाला जीव।

तेजोजराशि **Tejojarāśi**

चार का भाग देने पर तीन शेष बचने वाली राशि।

तेजोलेश्या **Tejoleśyā**

1. षट् लेश्या का एक भेद।
2. कार्य-अकार्य व सेव्य-असेव्य का जानना , सबको समान रूप से देखना, दान-दया में रत रहना तथा विद्वत्ता आदि वाली लेश्या लक्षण है।

तैजस **Taijasa**

1. तैजस नामकर्म के उदय के निर्मित तेज का संपादक शरीर।
2. समस्त प्राणियों के आहार का पाचक उष्णता रूप तेज का विकार।

तैजसशरीरनाम **Taijasaśarīranāma**

तैजस वर्गणा के स्कंध निरूसरण-अनिः सरण रूप (शरीर से बाहर निकलने वाले) और प्रशस्त-अप्रशस्त तैजस शरीर स्वरूप से परिणत कराने में कारण नाम कर्म।

तैजसशरीरबंधननाम **Taijasaśarīra bandhananāma**

1. तैजसशरीर के परमाणुओं को परस्पर बंध नामकर्म है।
2. गृहीत और गृह्यमाण तैजस पुद्गलों एवं कार्मण पुद्गलों का संबंध कराने वाला नाम कर्म।

तैजसशरीरसंघातनाम **Taijasaśarīrasaṃghātanāma**

शरीर अवस्था को प्राप्त हुये तथा बंधनाम कर्म के उदय से एकबंधनबद्ध हुये तैजस शरीर स्कंधों के चिक्कणता (ग्रष्टता) का कारण नामकर्म।

तैजस समुद्घात **Taijasa samudghāta**

जीवों के अनुग्रह और निग्रह करने में समर्थ तैजस शरीर का कारणभूत समुद्घात।

तैर्यग्योन **Tairyagyona**

1. तिर्यंच आयु।
2. तिर्यंचो में क्षुधा, तृषा, उष्ण, वातादिकृत उपद्रव उत्पन्न करने वाला आयु कर्म।

तोरण **Toraṇa**

नगरगत गोपुरों के प्रासादों पर वंदनमाला बाँधने के लिये स्थापित वृक्षविशेष (कदली स्तम्भादि)।

तौष्टिक **Tauṣṭika**

देय द्रव्य में अनासक्ति से संतुष्ट रहने वाला।

त्यक्त कृत्य **Tyakta kṛtya**

रोगादि के कारण या असमर्थ अवस्था में अपवादरूप से सेवन किये जाने वाले पदार्थों का निरोग या समर्थ होने पर भी सेवन करना।

त्यक्तदेह **Tyaktadeha**

जीवन एवं मरण की अभिलाषा के बिना आत्मस्वरूप की प्राप्ति के निमित्त बाह्य व आभ्यंतर परिग्रह का परित्याग कर देने वाले साधु का कदलीघात या अन्य प्रकार से शरीर छूटना।

त्यक्तदोष **Tyaktadoṣa**

दाता के द्वारा देते समय नीचे गिरने वाले छांछ, घी, जल आदि का लेना अथवा स्वयं अपने ही छेदयुक्त हाथों में से नीचे गिरते हुए भी देखकर आहार का ग्रहण करना।

त्यागी **Tyāgī**

1. शोभायमान प्रिय भोगों को प्राप्त करके भी स्वाधीनतापूर्वक उनसे विमुख व्यक्ति।
2. मार्ग में स्थित वृक्ष के समान सभी अभ्यागतों की बाधा को सहन करने वाला व्यक्ति।

त्रयी **Trayī**

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र।

त्रस **Trasa**

1. स्वयं चलने फिरने की शक्ति वाले जीव।

2. द्वीन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेंद्रिय तक के जीव।
3. त्रस नामकर्म के उदय वाले जीव।

त्रसनामकर्म **Trasanāmakarma**

1. द्वींद्रियादिकों में जन्म कराने वाला नामकर्म।
2. जीवों में गमनागमन के भाव को उत्पन्न करने वाला कर्म।

त्रसनाली **Trasnālī**

1. वृक्ष के मध्यगत सार के समान लोक के बहुमध्य भाग में स्थित एक राजु लम्बे चौड़े और कुछ कम (32162241-2/3 धनुष) तेरह राजु ऊँचा क्षेत्र।
2. उपपाद और मारणान्तिकगत त्रस और लोकपूरणसमुद्घातगत केवली की अपेक्षा समस्त लोक।

त्रस रेणु **Trasareṇu**

1. आठ त्रुटि रेणुओं का समुदाय।
2. आठ ऊर्ध्वरेणु प्रमाण।
3. आठ परमाणुओं का समूह।

त्रसस्थिति **Trasasthiti**

पूर्व कोटिक पृथक्त्व से अधिक दो हजार सागरोपम प्रमाण।

त्राण **Traṇa**

अनर्थ का विघात।

त्रायस्त्रिंश **Trayastriṃśa**

मंत्री-पुरोहित आदि स्थानीय देव।

त्रासनी **Trāsaṅi**

दाहिने हाथ की मुट्ठी बांधकर और तर्जनी को पसारकर ताड़ना।

त्रिक **Trika**

तीन ओर से आकार मिलने वाले मार्ग का स्थान (तिराहा)।

त्रिकावनत **Trikāvanata**

पादप्रक्षालन पूर्वक शुद्ध मन से जिनेंद्रदेव के दर्शन करके उनके आगे बैठना, उठकर पुनःस्तुति करके बैठना, फिर उठकर जिन, जिनालय एवं गुरु की स्तुति करते हुए भूमि पर बैठना।

त्रिलोचन **Trilocana**

केवलज्ञान रूप तृतीय नेत्र से तीन लोकों के जानने-देखने वाले अरिहंत।

त्रिवलित **Trivalita**

कटि, हृदय और ग्रीवा को भंगकर अथवा ललाट पर त्रिवली डाल करके आचार्यादि की वंदना करना।

त्रिशिखमुद्रा **Triśikhamudrā**

सामने की ओर दोनों हाथों को जोड़कर मध्यमा, अंगुष्ठ और कनिष्ठिका अंगुलियों का परस्पर जोड़ना।

त्रिस्थानबंधक **Tristhānabandhaka**

असातावेदनीय के अनुभाग को श्रेणी के आकार से स्थापित कर चार भाग करने पर प्रथम नीम के समान, दूसरा कांजीर के समान, तीसरा विष के समान और चौथा हलाहल के समान चार स्थानों में से तीन स्थानों वाला अनुभाग बंध।

त्रींद्रियजातिनाम कर्म **Trīndriyajatināma**

जीवों के त्रीन्द्रिय अवस्था से समानता को उत्पन्न करने वाला नामकर्म।

त्रींद्रिय जीव **Trīndriya jīva**

स्पर्शन, रसना और घ्राण इन्द्रियावरण और नोइन्द्रियावरण कर्म का उदय होने पर स्पर्श रस और गंध के जानने वाले जीव।

त्रुटितांग **Truṭitāṅga**

1. चौरासी लाख वर्ष पूर्व प्रमाण काल।
2. चौरासी लाख महाकुमुद प्रमाण काल।

त्रुटिरेणु **Truṭireṇu**

आठ संज्ञासज्ञ।

त्रेता, त्रेतोज **Traita, Traitoja**

चार का भाग देने पर तीन शेष रहने वाली राशि।

त्रैलोक्यगुरु **Trailokyaguru**

तीन लोक के प्राणियों के हित के लिये शास्त्र के अर्थ का कथन करने वाला।

त्र्योज **Tryoja**

चार का भाग देने पर एक शेष रहने वाली राशि।

त्र्योजकल्योज **Tryojakalyoja**

त्र्योज के अपहार समय वाली राशि।

त्र्योजकृतयुग्म **Tryojakrtayugma**

चार का भाग देने पर कुछ भी शेष न रहने वाली राशि के त्र्योज अपहार वाली राशि।

त्र्योजत्र्योज **Tryojatryoja**

चार का भाग देने पर तीन शेष रहने वाली और अपहार समय त्र्योज वाली राशि।

त्र्योजद्वापरयुग्म **Tryojdwāparayugma**

चार का भाग देने पर दो शेष वाली और उसके अपहार समय त्र्योज वाली राशि।

दंड **Daṇḍa**

1. दो रिक्कु (किष्कु) प्रमाण।
2. दो कुक्षि (कुक्षि-2 हाथ) प्रमाण।
3. दंड, धनुष, युग, नालिका, अक्ष एवं मूसल का समानार्थक।
4. परिक्लेश-अर्थहरण।
5. ज्ञानादि ऐश्वर्य का अपहरण कर किसी को देश से बाहर निकालना।
6. शरीर और धर्म का अपहार।
7. शत्रु का वध, अपहरण आदि।

दंडनीति **Daṇḍanīti**

यथादोष दंड व्यवस्था।

दंडपारुष्य **Daṇḍapāruṣya**

वध, परिक्लेश अथवा अर्थहरण।

दंडमुद्रा **Daṇḍamudrā**

दाहिने हाथ की मुठ्ठी को बांधकर तर्जनी को पसारने की मुद्रा।

दंडसमुद्घात **Daṇḍasamudghāta**

अन्तर्मुहूर्त मात्र आयु के शेष रह जाने पर संयोगकेवली के द्वारा किये जाने वाले अपने शरीर के विस्तार प्रमाण अथवा उससे तिगुने विस्तार विस्तार प्रमाण,

विस्तार से तिगुनी परिधि वाले तथा चौदह राजु प्रमाण लंबे दंड के आकार वाले समुद्घात।

दंडायतशयन **Daṇḍāyataśayana**

दंड के समान शरीर को लंबा करके सोना।

दंडासन **Daṇḍāsana**

बैठकर दोनों पैरों की अंगुलियों, गुल्फों (गांठों) और जंघाओं को फैलाकर किया जाने वाला आसन।

दंडुक्कल **Daṇḍukkala**

दंड के दृष्टांत द्वारा जीव के आदि, मध्य और अंत की प्ररूपणा करना एवं शरीर को छोड़कर जीव के अभाव को बतलाना।

दंभ **Dambha**

वेष, वचन आदि से अनुमेय छल-कपट।

दंतकर्म **Dantakarma**

हाथी के दांतों पर उकेरी गयी प्रतिमायें।

दक्षिणत्व **Dakṣiṇatva**

1. उपदेशों की सरलता।
2. वचन अतिशयों का छठा भेद।

दत्तिग्रासपरिमाण Dattigrāsaparimāṇa

1. एक ही दाता अथवा दो ही दाताओं के द्वारा दिए जानेवाले भोजन को ग्रहण करूँगा, इसप्रकार का दान क्रिया का परिमाण।
2. भिक्षा में इतने ही ग्रासों को ग्रहण करूँगा, इस प्रकार ग्रासों का परिमाण करना।

दम Dama

मनोज्ञ और अमनोज्ञ इन्द्रिय के विषय में राग-द्वेष को छोड़ना।

दया **Dayā**

1. करुणा
2. दुःखी जंतुओं के प्राणों की अभिलाषा।
3. प्राणियों के प्रति अनुकंपा।

दयादत्ति **Dayādatti**

अनुग्रह के योग्य प्राणिसमूह के लिये मन, वचन और काय की शुद्धिपूर्वक अभयदान।

दयाव्रत **Dayāvrata**

प्राणिहिंसा का एकदेश या सर्वदेश त्याग।

दर्दुरदोष **Darduradoṣa**

अपने शब्दों से दूसरों के शब्दों को दबाकर अतिशय बलपूर्वक महान् कल-कल करते हुये वंदना करना।

दर्प **Darpa**

1. निष्कारण अनादर।
2. निष्प्रयोजन दौड़कर, उछल-कूदकर और युद्धादि करके अपने बल का प्रदर्शन करना।
3. अविरति आदि रूप भाव से बाह्य वस्तु का प्रतिसेवन।

दर्पिका **Darpikā**

बिना कारण बाह्य वस्तु का सेवन।

दर्शन (उपयोग) **Darśana (Upayoga)**

1. सामान्य ग्रहण।
2. दर्शन-अनाकार उपयोग।
3. सामान्यावबोध।
4. विशेषों का निर्विशिष्ट ग्रहण।
5. आत्मविषयक उपयोग।
6. सामान्यविशेषात्मक स्वरूप ग्रहण।
7. आलोकनवृत्ति।
8. ज्ञान के लिये आत्मा की वृत्ति।
9. विषय-विषयी के संपात से पूर्व की अवस्था।
10. स्वरूपसंवेदन।
11. ज्ञानोत्पादक प्रयत्नानुविद्धस्वसंवेदन।

दर्शन (सम्यग्दर्शन) **Darśana (Samyagdarśana)**

1 मोक्षमार्ग, सम्यक्त्व, संयम और उत्तम धर्म को दिखलाना तथापरिग्रह रहित होकर ज्ञानस्वरूप होना।

2 आप्त, आगम तथा पदार्थों में मूढ़ता से रहित रूची, प्रत्यय, श्रद्धा।

3 वस्तु का यथार्थ श्रद्धान।

4 आत्मविनिश्चिति।

5 तत्त्व में रुचि।

6 दर्शन मोहनीय का क्षय अथवा क्षयोपशम।

7 दर्शन मोहनीय के क्षय आदि से आविर्भूत तत्त्व श्रद्धान।

धनुष **Dhanuṣa**

छियानवे अंगुल या चार हाथ प्रमाण माप। इसके दंड, युग, नालिका, अक्ष और मूसल अपर नाम हैं।

धर्म **Dharma**

1. मोह और क्षोभ से रहित आत्मा का शुद्ध परिणाम।
2. रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र) धर्म।
3. कषायों का निग्रह और जीवों की दया।
4. वस्तु का स्वभाव।

धर्मकथा **Dharmakathā**

1. सर्वज्ञ-कथित अहिंसादि धर्म का कथन।
2. एक अंग के एक अधिकार का उपसंहार।

धर्मचरण **Dharmacaraṇa**

उत्तमक्षमादि दस धर्मों का आचरण करना।

धर्मतीर्थंकर **Dharmatīrthaṅkara**

धर्म रूप या धर्मप्रधान तीर्थ का प्रवर्तन करने वाला।

धर्मदेव **Dharmadeva**

ईर्यासमिति से युक्त होकर ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखने वाला अनगार (साधु)।

धर्मद्रव्य **Dharmadravya**

1. जीव एवं पुद्गलों के गमनागमन में सहायक।
2. अजीव द्रव्य का एक भेद।

धर्मध्यान **Dharmadhyāna**

साम्यभाव से जीवादि पदार्थों का यथार्थरूप से ध्यान या चिंतन करना।

धर्मवर्ण जनन **Dharmavarṇa janana**

धर्म का कीर्तन करना।

धर्मवाद **Dharmavāda**

स्वसमय के ज्ञाता एवं परलोक में विश्वास करने वाले मध्यस्थ बुद्धिमान पुरुष के द्वारा की जाने वाली तत्त्व चर्चा।

धर्मानुकंपा **Dharmānukampā**

धर्मात्मा जनों के प्रति अनुकंपा/दयाभाव।

धर्मानुप्रेक्षा **Dharmānuprekṣā**

धर्म विषयक विचार करना। अहिंसा, सत्य, विनय, क्षमा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि जिनोपदिष्ट धर्म हैं; ऐसा चिंतन करना।

धर्मावर्णवाद **Dharmāvarṇavāda**

धर्म की निंदा करना।

धर्मास्तिकाय **Dharmāstikāya**

जीव और पुद्गलों के गमन में सहकारी द्रव्य।

धर्मास्तिकायप्रदेश **Dharmāstikāyapradeśa**

धर्मास्तिकाय के अविभागी अंश।

धर्मास्तिकायानुभाग **Dharmāstikāyānubhāga**

जीव और पुद्गलों के गमनागमन में सहकारी होना।

धर्मी **Dharmī**

1. प्रमाण से, विकल्प से या दोनों से प्रसिद्ध वस्तु के अनुमान का एक अंग
2. धर्म की अपेक्षा से द्रव्य।

धर्मोपदेश **Dharmopadeśa**

धर्मकथा आदि का व्याख्यान।

धारणा **Dhāraṇā**

1. मतिज्ञान का एक भेद।
2. अवाय से जाने हुए पदार्थ को भविष्य में नहीं भूलना।

धारणाव्यवहार **Dhāraṇāvyavahāra**

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और पुरुष प्रतिसेवना के विषय में देखकर संसार से

भयभीत आगमज्ञ आचार्य के द्वारा दिये गये प्रायश्चित्त का विचार करके अन्य आचार्य के द्वारा भी जो उक्त द्रव्य आदि के आश्रित है तो वैसे अपराध के होने पर वही प्रायश्चित्त देना।

धार्मिक **Dhārmika**

श्रुत एवं चारित्रस्वरूप धर्म में स्थित।

धूमचारण **Dhūmacāraṇa**

एक ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से ऋषि जन नीचे, ऊपर और तिरछे फैलने वाले धुएँ का आलंबन करते हुए अस्खलन पूर्वक गमन करते हैं।

धृति **Dhṛti**

1. मोक्षप्रदाता धर्म की भूमिका का कारण।
2. मन की एकाग्रता।

ध्याता **Dhyātā**

1. ध्यान में आत्मचिंतन करने वाला।
2. विषय एवं कषायों सहित मन का स्थिरीकरण कर स्वभाव में स्थित होने वाला।

ध्यान **Dhyāna**

आत्मपरिणामों की स्थिरता, चित्त की एकाग्रता, अथवा चिन्ता का निरोध।

ध्येय **Dhyeya**

ध्यान का विषय।

ध्रुव-अचित्त-द्रव्यवर्गणा **Dhruva acitta dravyavargaṇā**

लोक में सदैव प्राप्त अचित्त द्रव्य-वर्गणाएं।

ध्रुवप्रत्यय **Dhruvapratyaya**

'वहीं यह है, मैं ही वह हूँ,' इस प्रकार का विचार या प्रत्यय।

ध्रुवावग्रह **Dhruvāvagraha**

"यह यही है" इस तरह नित्य रूप से वस्तु का ग्रहण होना।

ध्रौव्य **Dhrauvya**

अनादि पारिणामिक स्वभाव की अपेक्षा व्यय और उत्पाद संभव न होने से द्रव्य की स्थिरता।

नंदीश्वर द्वीप **Nandīśvara dwīpa**

मध्यम लोक का अष्टम द्वीप।

नंदीश्वर सागर **Nandīśvara Sāgara**

नंदीश्वर द्वीप को घेरने वाला समुद्र।

नक्षत्र नाम **Nakṣatra nāma**

नक्षत्र के आश्रय से किसी का नामकरण।

नक्षत्रमाला व्रत **Nakṣatramālā vrata**

अश्विनी नक्षत्र से लेकर एकांतर क्रम से 54 दिन में 27 उपवासों वाला व्रत।

नक्षत्र मास **Nakṣatra māsa**

1. चंद्रमा के अभिजित् नक्षत्र तक के परिभ्रमण में लगने वाला समय।
2. सत्ताईस दिन-रात और इक्कीस/चौंतीस दिन प्रमाण समय।

नपुंसक **Napuṃsaka**

1. नोकषाय का एक भेद।
2. नपुंसक वेद। जिस नामकर्म के द्वारा न स्त्री हो न पुरुष।

नभ **Nabha**

अवकाश देने रूप स्वभाव वाला एवं सब द्रव्यों का आधारभूत आकाश द्रव्य।

नभोयान **Nabhoyāna**

आकाश में सुवर्णमय कमल के ऊपर चलना।

नमस्कार **Namaskāra**

जिनेंद्रदेव के चरणों में पंचांग नमन।

नमस्कार मंत्र **Namaskāra Mantra**

पंच परमेष्ठियों को नमस्कारात्मक णमोकार मंत्र नाम से प्रसिद्ध मंत्र।

नमि **Nami**

1. इक्कीसवें तीर्थंकर।
2. आदिनाथ भगवान् का एक साला।

नय **Naya**

1. प्रमाण के द्वारा गृहीत वस्तु के एक देश में वस्तु का निश्चय कराने वाला ज्ञान का साधन।

11—416 Min. of HRD/2014

2. अनंतधर्मात्मक वस्तु के विषय में विरोध के बिना हेतु मुख्यता से किया गया प्रयोग।

नयवाद **Nayavāda**

नयों का वर्णन करने वाला सिद्धांत।

नयविधि **Nayavidhi**

नैगम आदि नयों का निरूपण करने वाला विधान।

नयसप्तभंगी **Nayasaptabhaṅgī**

वस्तु के एक देश को ग्रहण करने वाली सप्तभंगी।

नयाभास **Nayābhāsa**

1. प्रतिपक्ष का निराकरण करने वाला नय।
2. परस्पर की अपेक्षा से रहित नय।

नयुत **Nayuta**

चौरासी लाख नयुतांग प्रमाण संख्या।

नयुतांग **Nayutāṅga**

चौरासी लाख प्रयुत प्रमाण संख्या।

नरक **Naraka**

असातावेदनीय कर्म के उदय से जीवों को दु:खी करने वाले अधोलोक।

नरकगति नामकर्म **Narakagati nāmakarama**

नारक पर्याय को प्राप्त कराने वाला गति नामकर्म का एक प्रभेद।

नरकायु **Narakāyu**

नरक पर्याय को धारण कराने वाला आयु कर्म।

नरत **Narata**

परस्पर प्रीति रहित नारकी जीव।

नरतगति **Naratagati**

नारकियों की गति।

नलिन **Nalina**

चौरासी लाख नलिनांग प्रमाण संख्या।

नलिनांग **Nalināṅga**

चौरासी लाख महालता प्रमाण संख्या।

नांतरीयक **Nāntarīyaka**

अविनाभाव संबंध।

नाग्न्यपरीषहजय **Nāgnya parīṣahajaya**

रात-दिन अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये निर्दोष अचेल व्रत का पालन।

नाम **Nāma**

1. अघातिकर्म का एक भेद।
2. गति-जाति आदि के अभिमुख कराने वाला कर्म।

नाम कायोत्सर्ग **Nāma kāyotsarga**

1. नाम मात्र का कायोत्सर्ग।
2. दोषों के संशोधन के लिये किया जाने वाला कायोत्सर्ग।

नाम जिन **Nāmajina**

1. जिनेंद्र भगवान के नाम।
2. जिन शब्द।

नाम जीव **Nāma jīva**

चेतन अथवा अचेतन द्रव्य का नामकरण।

नाम द्रव्य **Nāmadravya**

चेतन या अचेतन पदार्थ का जीव ,पुद्गल आदि नामकरण।

नाम निक्षेप **Nāma nikṣepa**

वस्तु में नाम के अनुरूप गुण न होना।

नाम पूजा **Nāmapūja**

परमेष्ठी का नाम-उच्चारण करके उसकी की जाने वाली पूजा।

नाम प्रतिक्रमण **Nāmapratikramaṇa**

स्वामिनी आदि नामों का उच्चारण नहीं करना, या उच्चारण करने पर उसका परिहार करना।

नाम प्रत्ययस्पर्धक प्ररूपण **Nāma pratyaya spardhaka prarūpaṇa**

शरीर नाम कर्म के उदय से बंध को प्राप्त हुए पुद्गलों के स्पर्धकों की प्ररूपणा करना।

नाम प्रत्याख्यान **Nāmapratyākhyāna**

अयोग्य नाम उच्चारण का त्याग।

नाम प्रमाण **Nāmapramāṇa**

एक जीव, एक अजीव, बहुत-बहुत जीव, बहुत-बहुत अजीव, एक-एक जीव-अजीव में से किया जाने वाला प्रमाण।

नाम बंध **Nāma bandha**

एक जीव, एक अजीव, बहुत जीव, बहुत अजीव, एक जीव, एक अजीव, एक जीव बहुत अजीव, बहुत जीव एक अजीव, बहुत जीव , बहुत अजीव, में से किया जाने वाला बंध नामकर्म।

नाम बंधक **Nāma bandhaka**

जीव-अजीवादि भंगों में से किया जाने वाला बंधक नामकरण ।

नाम भाव **Nāmabhāva**

बाह्य अर्थ से निरपेक्ष अपने आप में प्रवृत्त भाव।

नाम मंगल **Nāmamaṅgala**

अरहंत आदि पंचपरमेष्ठियों के नाम का स्मरण।

नाम लक्षण **Nāmalakṣaṇa**

लक्षण के द्वारा पदार्थ का लक्षित होना।

नाम लेश्या **Nāma leśyā**

लेश्या शब्द से अभिहित।

नामलोक **Nāmaloka**

लोक में यत्किंचित् शुभ-अशुभ नाम।

नाम वर्गणा **Nāmavargaṇā**

वर्गणा शब्द ही नामवर्गणा है।

नाम वेदना **Nāma vedanā**

जीव-अजीवादि अर्थ का अवलंबन करने वाला वेदना शब्द।

नाम व्रत **Nāmavrata**

पदार्थ की व्रत संज्ञा।

नाम श्रुत **Nāma śruta**

जीव-अजीव आदि पदार्थों में किया जाने वाला श्रुत अभिधान।

नामसंक्रम **Nāmasaṅkrama**

संक्रम शब्द।

नामसंख्या **Nāmasaṅkhyā**

एक जीव अथवा एक अजीव आदि में प्रयुक्त की जाने वाली संख्या।

नाम सत्य **Nāma satya**

व्यवहार के लिये चेतन-अचेतन द्रव्य का नामकरण।

नामसम **Nāmasama**

बारह अंगों में अनुयोगों के मध्यवर्ती द्रव्य/श्रुत ज्ञान के विकल्प हैं, इन्हें नाम कहा जाता है नाम रूप के साथ शेष आचार्यों में वर्तमान या भावी श्रुतज्ञान नामसम हैं।

नामसामायिक **Nāmasāmāyayika**

1. इष्ट-अनिष्ट नामों को सुनकर भी राग-द्वेष न करना।
2. जाति, द्रव्य, गुण और क्रिया निरपेक्ष सामायिक।

नाम स्तव **Nāma stava**

तीर्थंकरों की उनके एक हजार आठ नामों से की जाने वाली स्तुति।

नाम स्थापना **Nāma sthāpanā**

नाम के अनुरूप योग्य स्थान का नामकरण।

नामांतर **Nāmāntara**

बाहरी अर्थ को छोड़कर उसी अर्थ में प्रवृत्ति कराने वाला शब्द।

नामाजीव **Nāmājīva**

वह चेतन-अचेतन पदार्थ जिसका नाम अजीव है।

नामानुयोग **Nāmānuyoga**

1. नाम मात्र का अनुयोग।
2. अनुयोग नाम वाला।
3. नाम के अनुरूप योग।

नामाल्पबहुत्व **Nāmālpabahutva**

देखें, अल्पबहुत्व

नामावश्यक **Nāmāvaśyaka**

आवश्यक नाम वाला।

नामासंख्यात **Nāmāsaṅkhyata**

आठ संयोगी भंगों में असंख्यात नाम वाला।

नामास्रव **Nāmāsrava**

आस्रव नाम वाला।

नामोत्तर **Nāmottara**

उत्तर नाम वाले जीवादि पदार्थ।

नामोपक्रम **Nāmopakrama**

कार्य का निकटवर्ती काल

नारक **Nāraka**

1. नरकों में उत्पन्न होने वाले जीव।
2. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव में परस्पर प्रीति न रखने वाले जीव।

नारककालावीचिमरण **Nārakakālāvīcimaraṇa**

नारक जीवों की प्रत्येक समय में निरंतर होने वाली आयु की क्षीणता।

नारकक्षेत्रावीचिमरण **Nārakakṣetrāvīcimaraṇa**

नारकी जीवों की प्रत्येक समय में निरंतर होने वाली नारक क्षेत्र की निर्जीर्णता।

नारकायु **Nārakāyu**

देखें, नरकायु।

नारत **Nārata**

देखें, नारक।

नाराच **Nārāca**

हड्डियों का मर्कट बंध।

नाराचसंहनन **Nārācasaṃhanana**

नाराच युक्त हड्डियों का बंधक

नालिका **Nālikā**

साढ़े अड़तीस लाख प्रमाण काल।

नावागति **Nāvāgati**

नाव के द्वारा महानदी आदि में जलमार्ग से गमन।

नास्ति **Nāsti**

1. सप्तभंगी में दूसरा भंग।
2. अर्थांतर भूत पदार्थ से भिन्न पदार्थों की विवक्षा।

नास्ति अवक्तव्य **Nāsti avaktavya**

1. सप्तभंगी का छठा भंग।
2. एक साथ स्वद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और परद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से विवक्षित द्रव्य।

नास्तिक **Nāstika**

देव, शास्त्र, गुरु और धर्म के ऊपर श्रद्धा न रखने वाला।

नि:कांक्षा गुण **Niḥkaṅkṣā guṇa**

लोक और परलोक में आशारूप भोगाभिलाषा को छोड़कर मोक्ष के निमित्त ज्ञान, पूजा और तपश्चरण आदि का अनुष्ठान करना।

नि:कांक्षित **Niḥkaṅkṣita**

देशकांक्षा एवं सर्वकांक्षा से रहित सम्यग्दृष्टि जीव।

नि:शंक **Niḥśaṅka**

जिनदेव के वचनों में शंका से रहित दृढ़ श्रद्धा।

नि:श्रेयस् **Niḥsreyas**

जन्म, जरा, रोग, मरण, शोक, दुख और भय से रहित तथा निर्बाध सुख से युक्त निर्वाण (मोक्ष)।

निकाचित **Nikācita**

अपकर्षण, उत्कर्षण, परप्रकृतिरूप संक्रमण और उदय न होने वाले कर्म के प्रदेश पिण्ड।

निकाय **Nikaya**

नित्य काय अथवा अधिक काय।

निकायकाय **Nikāyakāya**

छहों निकायों का समुदाय।

निक्षिप्तदोष **Nikṣiptadoṣa**

सचित्त पर रखे हुये भोज्य पदार्थ को ग्रहण करने पर होने वाला दोष।

निक्षेप **Nikṣepa**

1. नाम, स्थापना आदि के भेद से जीवादि तत्त्वों को जानने के उपाय।
2. द्रव्यार्थिक एवं पर्यायार्थिक नयों के विषयभूत तत्त्वार्थ के ज्ञान हेतु।

निक्षेपणा समिति **Nikṣepaṇā samiti**

संयम के उपकरणों के रखे जाने वाले स्थान को देखकर मयूरपिच्छदि अथवा कोमल वस्त्र से प्रतिलेखन करना।

निक्षेपणीकथा **Nikṣepaṇīkathā**

1. धर्म कथा का एक भेद।
2. यथार्थ मत के प्रतिष्ठापन में समर्थ कथा।

निगडदोष **Nigaḍadoṣa**

दोनों पैरों में पर्याप्त अंतर कर ध्यान में स्थित व्यक्ति को कायोत्सर्ग में होने वाला दोष।

निगमन **Nigamana**

1. प्रतिज्ञा का उपसंहार।
2. प्रसाधित अर्थ के विषय में अध्यात्म-हेतुओं का फिर से कथन करना।

निगोद **Nigoda**

1. अनंतानंत जीवों का नियत क्षेत्र।
2. जीवों के आश्रय विशेष का नाम।
3. अनंतानंत जीवों को नियत क्षेत्र प्रदान करने वाला स्थान।

निगोद जीव **Nigodajīva**

अनंतानंत जीवों का साधारण रूप से एक शरीर।

निग्रह **Nigraha**

1. योग की स्वच्छंद प्रवृत्ति को दूर करना।
2. विजयाभिलाषी वादियों के अभिप्राय का निराकरण करना।

निग्रहबुद्धि **Nigrahabuddhi**

द्वेष के वश उपवासादि के द्वारा शरीरादि के पीड़ित करने का अभिप्राय।

नित्य **Nitya**

1. वस्तुस्वभाव का नाश न होना।
2. वस्तु के अन्वयी अंश का विनाश नहीं होना।

नित्यनिगोत (नित्यनिगोद) **Nityanigota (Nityanigoda)**

तीनों कालों में त्रसपर्याय को प्राप्त नहीं होने वाले जीव।

नित्यपूजा **Nityapūjā**

आम्नाय के अनुसार जिनेंद्रदेव की नित्य/प्रतिदिन पूजा करना।

नित्यमरण **Nityamaraṇa**

1. मरण का एक भेद।
2. प्रतिसमय आयु आदि प्राणों का बराबर क्षय होना।

नित्यमह **Nityamaha**

1. देखें, नित्यपूजा।
2. प्रतिमा और जिनालय आदि का भक्ति पूर्वक निर्माण, राज्यनियमानुसार दान देना तथा मुनियों की पूजा करना।

निदान **Nidāna**

1. आर्तध्यान का एक भेद।
2. विषय सुख की अभिलाषा रूप भोगाकांक्षा से किसी विषय में नियमित चित्त लगाना।
3. शल्य का एक भेद।
4. सल्लेखना का एक अतिचार।

निदानमरण **Nidānamaraṇa**

आगामी जन्म में किसी इच्छा की अभिलाषा पूर्वक मरण।

निद्रानिद्रा **Nidrānidrā**

नींद के उपरांत बार-बार नींद का आना।

निधत्त/निधत्ति **Nidhatta/Nidhatti**

उदय में न लाया जा सकने योग्य और अन्य प्रकृतियों में संक्रान्त भी न किये जा सकने योग्य कर्म के प्रदेश पिण्ड।

निमित्त **Nimitta**

1. अतीत, अनागत एवं वर्तमान काल संबंधी लाभ-अलाभ का हेतु।
2. प्रत्यय, कारण एवं निमित्त – ये एकार्थवाची हैं।
3. कारण का एक भेद।
4. व्यंजन, अंग, स्वर, छिन्न, भौम, अंतरिक्ष, लक्षण और स्वप्न – ये निमित्त के आठ भेद हैं।

निमित्तदोष **Nimittadoṣa**

आठ प्रकार के निमित्त द्वारा भिक्षा को उत्पन्न करके ग्रहण करना अथवा उपदेश द्वारा प्राप्त करना।

निमित्तसम्यग्दर्शन **Nimittasamyagdarśana**

देवप्रतिमादि रूप निमित्त से उत्पन्न होने वाला सम्यग्दर्शन।

नियतिवाद **Niyativāda**

जो, जिस समय में, जिससे, जैसे और जिसके नियम से होना है, वह उस समय, उसी के द्वारा, उसी प्रकार से और उसके होगा ही – इस प्रकार का कथन या विचार।

नियम **Niyama**

सदाचरण के पालन हेतु नियमित काल के लिये किया गया त्याग।

नियाग **Niyāga**

सदा आमंत्रित आहार को ही ग्रहण करना।

नियोग **Niyoga**

सूत्र के साथ अर्थ का अधिक योग।

निरतगति **Niratagati**

नारकों/निरतों की गति।

निरतिचार छेदोपस्थापन **Niraticāra Chedopasthāpana**

1. इत्वर सामायिक वाले शिष्य (साधु) की पूर्व पर्याय को छेदकर उसका फिर से आरोपण किया जाना।
2. एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ को प्राप्त होने वाले साधु का चरित्र।

निरपेक्षत्व **Nirapekṣatva**

विरोधी धर्म की अपेक्षा न करना।

निराकार उपयोग **Nirākāra upayoga**

आकार से रहित अथवा सामान्य-विषयक उपयोग।

निरालंब ध्यान **Nirālamba Dhyāna**

आत्मा को आत्मा के द्वारा आत्मस्थ किये जाने की अन्य अवलंबन रहित स्थिति विशेष।

निरुपक्रमा निर्जरा **Nirupakramā Nirjarā**

प्रयत्न विशेष के बिना संसारी जीवों के परिपाकोदय को प्राप्त कर्म का झर जाना।

निर्ग्रंथ **Nirgrantha**

1. ग्रंथ (परिग्रह) से रहित मुनि।
2. मोक्षमार्गस्थ, समीचीन संयम को प्राप्त शांत-दांत योगी।
3. वीतराग-छद्मस्थ योग संयम को प्राप्त मुनि।

निर्ग्रंथधर्म **Nirgranthadharma**

बाह्य एवं आभ्यंतर परिग्रह से रहित मुनियों का आचार।

निर्जरा **Nirjarā**

1. परिपाकवश अथवा तप के द्वारा कर्मों का आत्मा से पृथक्करकण।
2. आंशिक कर्मक्षय।
3. बंधे हुये कर्मों के प्रदेश-पिण्ड का गलना।

निर्जरानुप्रेक्षा **Nirjarānuprekṣā**

1. अनुप्रेक्षा का एक भेद।
2. अबुद्धि पूर्वक एवं कुशलमूलक – दोनों प्रकार की निर्जरा के गुण-दोषों का चिंतन।

निर्जराभाव **Nirjarābhāva**

तीव्रता या मंदता को प्राप्त जीवपरिणामों के द्वारा असंख्यातगुणित श्रेणी के क्रम से कर्मों का आत्मा से पृथ्क होना।

निर्देश **Nirdeśa**

1. विवक्षित वस्तु के स्वरूप का कथन।
2. ओघ एवं आदेश – ये दो भेद निर्देश के हैं। गत्यादि मार्गणाओं की विशेषता से रहित चौदह गुणस्थानों के प्रमाण का निरूपण ओघ निर्देश तथा श्रोताओं को जिस प्रकार से निश्चय होता है, उस कथन का नाम आदेश नामक निर्देश है।

निर्माण **Nirmāṇa**

1. चक्षुरादि शरीरावयों के स्थान और प्रमाण की रचना में कारणभूत एक प्रकार का नामकर्म।

2. जातिगत लिंग और आकार की व्यवस्था का नियामक नामकर्म।

निर्यापक **Niryāpaka**

1. आराधक की समाधि में सहायक साधु।
2. कल्प और अकल्प की (ग्राह्य और अग्राह्य भोजन की) परीक्षा में कुशल, समाधि कराने में उद्यत तथा ग्रंथों के रहस्य के ज्ञाता मुनि।

निर्युक्ति **Niryukti**

1. अभीष्ट तत्त्व का उपाय।
2. सूत्र में कथित जीवाजीवादि तत्त्वों की व्याख्या।

निर्लेपन **Nirlepana**

आहार, शरीर, इंद्रिय और आनपान अपर्याप्तियों की निवृत्ति।

निर्वर्गणा **Nirvargaṇā**

बंध और उदय संबंधी जघन्य कृष्टियों के अनंत गुणहानि के क्रम से होने वाले अपसरण भेद।

निर्वर्तना **Nirvartanā**

1. हिंसा के निमित्त से की जाने वाली रचना।
2. हिंसा के उपकरण रूप से की गई शरीर आदि की रचना।

निर्वर्तनाधिकरण **Nivartanādhikaraṇa**

दुष्टप्रवृत्ति युक्त शरीर की हिंसा के उपकरणरूप में रचना करना।

निर्वाण **Nirvāṇa**

1. परतंत्रता की निवृत्ति।
2. शुद्धात्म तत्त्व की उपलब्धि।
3. सम्पूर्ण कर्मों से आत्मा की मुक्ति।
4. देखें - मोक्ष

निर्विचिकित्सा **Nirvicikitsā**

1. सभी वस्तुधर्मों में जुगुप्सा अथवा ग्लानि नहीं करना।
2. शरीर आदि के अपवित्र स्वभाव को जानकर उसकी पवित्रता के मिथ्या संकल्प का निराकरण करना।

निर्वृत्यक्षर **Nirvṛtyakṣara**

जीवों के मुख आदि से निकले हुए शब्द।

निर्वृत्यपर्याप्त **Nirvṛtyaparyāpta**

जीव की शरीर पर्याप्ति की अपूर्णता।

निर्वेद **Nirveda**

संसार, शरीर और इंद्रिय भोगों से होने वाली विरक्ति।

निर्वेदनीकथा **Nirvedanīkathā**

1. धर्मकथा का एक भेद।
2. संसार, शरीर और भोगों से वैराग्य उत्पन्न करने वाली कथा।

निर्व्याघातपादपोपगमन **Nirvyāghgātapādapopagamana**

पादप (वृक्ष) के समान हलन-चलन से रहित प्राणों का विसर्जन होने तक प्रशस्त ध्यान में स्थित होने रूप अनशन विशेष की क्रिया।

निर्व्यूढ **Nirvyūḍha**

शुद्ध धर्म का समाचीनता से वर्णन करने वाला उत्तम श्रुत।

निवृत्तिगुणस्थान **Nivṛttiguṇasthāna**

1. अपूर्वकरण गुणस्थान का नामान्तर।
2. बादर कषाय से युक्त जीवों के परस्पर निवर्तमान परिणामों वाला गुणस्थान।

निश्चयकाल **Niścayakāla**

व्यवहारकाल का आधारभूत द्रव्य या कालाणु।

निश्चयचारित्र **Niścayacāritra**

1. औपाधिक रागादि विकल्पों से रहित स्वाभाविक सुख के स्वाद से युक्त चित्त की स्थिरता।
2. वीतरागचारित्र।

निश्चयज्ञान **Niścayajñāna**

समस्त शुभाशुभ संकल्प-विकल्पों से रहित परमानन्दरूप आत्मा के स्वरूप का वेदन।

निश्चयतपश्चरणाचार **Niścayatapascaraṇācāra**

समस्त परद्रव्यों की इच्छाओं को रोककर अनशन आदि बाह्य एवं प्रायश्चित्त आदि आभ्यंतर तपों को तपते हुये आत्मस्वरूप में तपना।

निश्चयदर्शनाचार **Niścayadarśanācāra**

चैतन्यस्वरूप शुद्धात्मा की उपादेयता के निश्चय श्रद्धानपूर्वक आचरण करना।

निश्चयनय **Niścayanaya**

1. सत्यार्थ का निरूपण।
2. शुद्ध द्रव्य का निरूपण करने वाला नय।

निश्चयप्रतिक्रमण **Niścayapratikramaṇa**

दृष्ट, श्रुत एवं अनुभूत भोगों की स्मृति-स्वरूप रागादि दोषों का निराकरण करना।

निश्चयप्रत्याख्यान **Niścayapratyākhyāna**

आगामी काल में भोगों की आकांक्षारूप रागादि का त्याग।

निश्चयमोक्षमार्ग **Niścayamokṣamārga**

शुद्धात्म तत्त्व की सम्यक् श्रद्धान, ज्ञान एवं आचरणरूप एकाग्र परिणति।

निश्चयवीर्याचार **Niścayavīryācāra**

निश्चय दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार और तपाचार की रक्षा के लिये अपनी शक्ति को नहीं छुपाना।

निश्चयश्रुतकेवली **Niścayaśrutakevalī**

भावश्रुतरूप स्वसंवेदन ज्ञान के द्वारा शुद्धात्मा को जानने वाला।

निश्चयसम्यक्त्व **Niścayasamyaktva**

1. आत्मा का श्रद्धान करना।
2. स्वकीय आत्मा के अनुभव स्वरूप वीतराग सम्यक्त्व।

निश्चयसम्यग्ज्ञान **Niścayasmyagjñāna**

भूतार्थस्वरूप से जाने गये जीवादि पदार्थों को यथार्थ बोध द्वारा शुद्धात्मा से भिन्न जानना।

निश्चयसुख **Niścayasukha**

आकुलता रहित सुख।

निषद्यापरिषहविजय **Niṣadyāpariṣahavijaya**

(साधु के द्वारा) श्मशान, उद्यान, सूना घर, पर्वत की गुफा और गह्वर (पर्वत का अकृत्रिम बिल) आदि अपरिचित स्थानों में नित्य कृत्य करना, हिंसक भयानक शब्दों से भयभीत न होना, उपसर्गों को सहते हुये शरीर को स्थिर रखना।

निषिद्धिका **Niṣiddhikā**

1. सामाचारी का एक भेद।
2. कंदर अथवा गुफा आदि में प्रवेश करते समय व्यंतर आदि से पूछकर प्रवेश करना।

निषेक **Niṣeka**

आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की स्थिति में से उन कर्मों का आबाधाकाल घटाकर शेष रहने वाले समय-प्रमाण कर्म।

निषेकक्षुद्रभवग्रहण **Niṣekakṣudrabhavagrahaṇa**

सूक्ष्म एकेंद्रिय अपर्याप्त नामकर्म के साथ जघन्य आयु का बंध होना।

निष्कलपरमात्मा **Niṣkala Paramātmā**

सिद्धस्वरूप को प्राप्त आत्मा, आठ कर्मों से रहित मुक्तात्मा।

निष्ठीवन **Niṣṭhīvana**

भोजन करते समय साधु के मुख से कफादि के निकलने से होने वाला अंतराय।

निसर्ग **Nisarga**

1. स्वभाव।
2. अपूर्वकरण परिणाम के अनन्तर तत्त्व श्रद्धान का कारणभूत अनिवृत्तिकरण का होना।

निसर्ग सम्यग्दर्शन **Nisarga Samyagdarśana**

बाह्य निमित्त/साधन के बिना उत्पन्न होने वाला सम्यग्दर्शन।

निह्नव **Nihnava**

ज्ञान का अपलाप करना।

नीच गोत्र **Nīcagotra**

1. लोक निंदित कुल में जन्म कराने वाला कर्म।
2. गोत्र कर्म का एक भेद।

नीरजस्क **Nīrajaska**

आठ प्रकार के कर्म रज से रहित जीव।

नीललेश्या **Nīlaleśyā**

1. कार्य में मंदता, विचारशून्यता, विशिष्ट ज्ञान रहितता, विषय लोलुपता, मान, मायाचार, आलस्य, प्रतारणा आदि में प्रवृत्ति कराने वाला भाव।

2. षट् लेश्या का एक भेद।
3. कषायों की कलुषता की तीव्रता के अनुसार नील द्रव्य से अभिव्यक्त होने वाली लेश्या।

नीलवर्ण-नामकर्म **Nīlavarṇa nāmakarma**

शरीर के पुद्गलों को नील वर्ण का बनाने वाला कर्म।

नीवी **Nīvī**

आय-व्यय से विशुद्ध द्रव्य।

नीहारचारण **Nīhāracāraṇa**

जलकायिक जीवों की विराधना न करते हुये गमन करना।

नीहारप्रायोपगमन **Nīhāraprāyopagamana**

उपसर्ग के द्वारा अपहृत होने पर अन्यत्र मरण को प्राप्त होना।

नेम **Nema**

भूभाग का ऊपरी प्रदेश।

नैगम **Naigama**

उत्पद्यमान पदार्थ का संकल्प मात्र से ग्रहण।

नैगमाभास **Naigamābhāsa**

गुण-गुणी, धर्म-धर्मी आदि में अत्यंत भेद का प्रतिपादन।

नैमित्तिक **Naimittika**

1. ज्योतिषी।
2. निमित्त शास्त्र को जानने वाला।

नैश्चयिक अवग्रह **Naiścayika avagraha**

सामान्य को ग्रहण करने वाला ज्ञान।

नैषेधिकी **Naiṣedhikī**

मूलगुण और उत्तरगुणों का निरतिचार पालन करने वाले साधु की आते समय की जाने वाली आवश्यक क्रिया।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी **Naiṣṭhika brahmacārī**

स्त्री से रहित होकर निष्ठा-पूर्वक जीवन पर्यंत ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला।

नैष्ठिक श्रावक **Naiṣiṣṭhika śrāvaka**

निष्ठा-पूर्वक श्रावकधर्म का निरतिचार पालन करने वाला।

नैसर्गिक सम्यग्दर्शन **Naisargika samyagdarśana**

1. देखें-, निसर्गज सम्यग्दर्शन।
2. बाह्य उपदेश के बिना दर्शन मोहनीय के क्षय, उपशम या क्षयोपशम से होने वाला सम्यक् तत्त्व श्रद्धान।

नैसर्प निधि **Naisarpa nidhi**

1. प्रासादों को दी जाने वाली निधि।
2. ग्राम, आकर, नगर, पट्टन, द्रोणमुख, मटंब, स्कंधावार, आपण और घर की स्थापना की विधि।

नो आगम **No āgama**

आगम से भिन्न।

नो आगम द्रव्य काल **No āgama dravya kāla**

जीव-अजीवादि आठ भंग स्वरूप द्रव्य।

नो आगम अचित्त द्रव्यभाव **No āgama achitta dravyabhāva**

पुद्गल, धर्म, अधर्म, काल और आकाश।

नो आगम कर्म प्रकृति प्राभृत **No āgama karma prakṛtiₖ rābhṛta**

आगम के बिना आगमार्थ में उपयोगयुक्त जीव।

नो आगम द्रव्य दोष **No āgama dravya doṣa**

द्रव्य के उपभोग को प्राप्त न होने देने में कारणभूत उपघात।

नो आगम द्रव्य विमोक्ष **No āgama dravya vimokṣa**

सांकल आदि बंधन से विमुक्ति।

नो आगम द्रव्य व्यतिरिक्त कर्म प्रतिक्रमण **No āgama dravyaryatirikta karma prati kramaṇa**

क्षयोपशम अवस्था को प्राप्त चारित्रमोहनीय कर्म।

नो आगम द्रव्य व्यतिरिक्त कर्म व्रत **No āgama dravya Vyatirikta karma vrata**

उपशम या क्षयोपशम अवस्था में स्थित चारित्रमोहनीय कर्म।

नो आगम द्रव्य श्रुत **No āgama dravya śruta**

श्रुत के ज्ञाता का भूत-भविष्यत् पर्याय वाला शरीर।

12—416 Min of HRD/2014

नो आगम भाव उपशामना **No āgama bhāva upaśāmanā**

शांत हुआ कलह या युद्ध।

नो आगम भाव कर्म **No āgama bhāva karma**

कर्मफल को भोगने वाला जीव।

नो आगम भाव च्यवन लब्धि **No āgama bhāvacyavanalabdhi**

आगम के बिना च्यवन लब्धि के अर्थ में प्रवृत्ति।

नो आगम भाव जीव **No āgama bhāva jīva**

जीवन रूप पर्याय से युक्त आत्मा।.

नो आगम भाव नारक **No āgama bhāvanāraka**

नरक पर्याय को प्राप्त जीव।

नो आगम भाव प्रतिक्रमण **No āgama bhāvapratikramaṇa**

अशुभ परिणाम को दोष मानकर उसके विरोधी परिणाम में प्रवृत्ति।

नो आगम भावमंगल **No āgama bhāvamaṅgala**

अत्यन्त विशुद्ध क्षायिक आदि भाव।

नो आगम भावराग **No āgama bhāvarāga**

राग वेदनीय कर्म के उदय से उत्पन्न परिणाम।

नो आगम भाव व्रत **No āgama bhāvavrata**

चारित्र मोहनीय के क्षय, उपशम या क्षयोपशम से अहिंसा रूप परिणामों में प्रवृत्ति।

नो आगम भावश्रमण **No āgama bhāvaśramaṇa**

चारित्र परिणाम वाला साधु।

नो आगम भाव सामायिक **No āgama bhāvasāmayika**

समस्त सावद्ययोग से निवृत्ति रूप परिणाम।

नो आगम भावसिद्ध **No āgama bhāvasiddha**

सर्व द्रव्यकर्म और भावकर्म को दूर करके समस्त क्षायिक भावों को प्राप्त करने वाले लोकशिखरस्थ मुक्त आत्मा।

नो आगम भावस्कंध **No āama bhāvaskaṅdha**

सामायिकादि छहों आवश्यकों के समुदायस्वरूप एक विशिष्ट परिणाम से निष्पन्न आवश्यक श्रुतस्कंध।

नो आगम भावस्पर्शन **No āgama bhāvasparśana**

स्पर्श गुण से परिणत पुद्गल द्रव्य।

नो आगम भावानंदी **No āgama bhāvānaṅdī**

पंचविध ज्ञान।

नो आगम भावानुयोग **No āgama bhāvānuyoga**

औदयिक आदि पाँच भावों में से किसी एक भाव या बहुत भावों का व्याख्यान।

नो आगम भावार्त **No āgama bhāvārta**

1. औदयिकभाव के वशीभूत रागद्वेष के वशीभूत, राग-द्वेष से परिणत और इष्टवियोग व अनिष्टसंयोग जनित दुःख से व्याप्त जीव।
2. विषविपाक के समय शब्दादि विषयों का अभिलाषी होकर हिताहित विचार से शून्य मन वाले जीव।

नो आगम भावार्हन् **No āgama bhāvārhan**

कैवल्य अवस्था को प्राप्त अरहंत।

नो आगमभावावश्यक **No āgama bhāvāvaśyaka**

1. ज्ञानोपयोग के साथ क्रिया को करता हुआ ज्ञान और क्रिया रूप शुभ उपयोग में परिणत जीव।
2. आवश्यक क्रियाओं के ज्ञान और आचरण रूप परिणाम।

नो आगमभावी दृष्टिवाद **No āgama bhāvīdṛṣṭivāda**

भविष्य में दृष्टिवाद स्वरूप से परिणत होने वाले जीव।

नो आगमभावी द्रव्यभाव **No āgama bhāvīdravyabhāva**

भावप्राभृत पर्यायस्वरूप से भविष्य में परिणत होने वाला जीव।

नो आगमभावोपक्रम (अप्रशस्त) **No āgama bhāvopakrama (Aprasasta)**

संसार को बढ़ाने वाले अध्यवसाय द्वारा परभाव का उपक्रम।

नो आगमभावोपक्रम (प्रशस्त) **No āgama bhāvopakrama (Praśasta)**

श्रुत आदि के निमित्त आचार्याभाव का अवधारण रूप उपक्रम।

नो आगम मिश्रद्रव्यभाव **No āgamamiśradravyabhāva**

कथंचित् जात्यंतर अवस्था को प्राप्त पुद्गल और जीव द्रव्यों का संयोग।

नोइन्द्रिय **Noindriya**

मन।

नोइन्द्रिय प्रणिधि **Noindriyapraṇidhi**

क्रोध, मान, माया, और लोभ-इन चार महानायक कषायों को रोकने वाला शुद्ध आत्मा।

नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष **Noindriya pratyakṣa**

इन्द्रिय आदि की सहायता के बिना जीव के स्वयमेव अवधि आदि रूप होने वाला ज्ञान।

नोकर्म **Nokarma**

1. कर्मोदय के कारण जीव के सुख-दुःख के पुद्गल परिणाम।
2. ईषत्कर्म

नोकर्मद्रव्यनारक **Nokarmadravyanāraka**

नारकभाव के कारणभूत पाश, पंजर और यंत्र आदि।

नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन **Nokarmadravyaparivartana**

तीन शरीर और छह पर्याप्तियों के योग्य जिन पुद्गलों को एक जीव ने एक समय में ग्रहण किया था, वे स्निग्ध, रूक्ष, स्पर्श, वर्ण और गंध आदि से तीव्र, मंद या मध्यम भाव से यथावस्थित होते हुये द्वितीय आदि समयों में निर्जीव हो गए। पश्चात् अनंत बार अगृहीत पुद्गल का अनंत बार मिश्र पुद्गलों का अतिक्रमण कर उनको ग्रहण करते हुये निर्जीर्ण करके जब वे ही पूर्वोक्त पुद्गल उसी प्रकार से उक्त जीव के नोकर्मरूपता को प्राप्त होते है, उतने समुदित काल का नाम।

नोकर्मद्रव्यसंसार **Nokarmadravyasaṃsāra**

छह पर्याप्तियों का विषय।

नोकर्मद्रव्यसमता **Nokarmadravyasamatā**

1. बाह्य पदार्थों की अवस्था को देखने वाले जीव के मिट्टी एवं सुवर्ण, पाषाण एवं माणिक्य तथा सर्प एवं माला आदि पदार्थों के प्रति समता का कारण।
2. नोकर्मद्रव्य सामायिक।

नोकर्मबंध **Nokarmabandha**

माता, पिता और पुत्र के स्नेह का संबंध।

नोकर्माहार **Nokarmāhāra**

अरहंत भगवान की शरीर की स्थिति के कारणभूत पुण्यरूप पुद्गल परमाणु।

नोकषायवशार्तमरण **Nokaṣāyavaśartamaraṇa**

हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद–इन नोकषायों में मुग्ध हुये जीव का मरण।

नोकषायवेदनीय **Nokaṣāyvedanīya**

स्त्रीवेद आदि नोकषाय रूप होने वाला वेदन।

नो कृति **No kṛti**

एक (1) अंक का वर्ग करने पर वृद्धि को प्राप्त नहीं होने वाला तथा वर्गमूल में घटाने पर निर्मूल नष्ट हो जाने वाला अंक।

नोगौण **Nogauṇa**

अंकुत-संकुत, अमुद्ग-समुद्ग, अमुद्र-समुद्र, अलाल-पलाल, अकुलिका-सकुलिका,अपलभक्षक-पलाश, अमातृवाहक -मातृवाहक, अबीजवाद-बीजवाद और नोइन्द्रगोप-इन्द्रगोप इत्यादि निरुक्त्यर्थ से रहित नाम जैसे- पूर्वोक्त नाम में कुन्त (माला) से रहित पक्षी को सकुन्त और मुद्गरहित डिब्बे को समुग्ग (समुद्ग) आदि कहना।

नोगौण्य पद **Nogauṇya pada**

गुणनिरपेक्ष अर्थात् अनुगत अर्थ से रहित पद। जैसे– चंद्रस्वामी, सूर्यस्वामी और इंद्रगोप।

नोश्रुत प्रत्याख्यान **Nośrutapratyākhyāna**

श्रुत प्रत्याख्यान से भिन्न प्रत्याख्यान।

नोसंज्ञाकरण **Nosañjñākaraṇa**

करण होकर भी संज्ञा से रूढ़ न होना।

नोसंसार **Nosaṃsāra**

सयोग केवली को मोक्ष-प्राप्ति के पूर्व शेष बचा ईषत् संसार।

न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान **Nyagrgodhaparimaṇḍala saṃsthāna**

वटवृक्ष के परिमंडल के समान शरीरसंस्थान।

न्यस्तदोष **Nyastadoṣa**

पकाये गये अन्न वाले पात्र से निकालकर साधु को देने के लिये भिन्न पात्र में रखना।

न्याय **Nyāya**

1. अर्थ के उपार्जन के उपायभूत स्व-स्व वर्णानुरूप सदाचार।
2. नय प्रमाणात्मक युक्ति।
3. जिससे अर्थ अत्यधिक रूप से जाना जाये।
4. प्रमाण से प्रमेय की संगति रूप युक्ति।

न्याय्य **Nyāyya**

न्याय से युक्त श्रुतज्ञान।

न्यास **Nyāsa**

1. जीवादि पदार्थों को जानने का उपाय।
2. सुरक्षा हेतु विश्वासपूर्वक सौंपी गयी धरोहर।

न्यासापलाप **Nyāsāpalāpa**

न्यास का अपहरण।

न्यासापहरण **Nyāsāpaharaṇa**

विश्वासपूर्वक सौंपी गयी धरोहर (न्यास) का अपहरण।

न्यासापहार **Nyāsāpahāra**

1. विस्मरणकृत परनिक्षेपग्रहण।
2. जिसने दूसरे के पास रक्षा के निमित्त सुवर्णादि द्रव्य को रोक दिया है, वह यदि पीछे भूल से कम प्रमाण में उसे वापस मांगता है तो, हाँ इतना ही है इस प्रकार कहकर रखे हुये द्रव्य से कम देना।
3. सत्याणुव्रत का एक अतिचार है।

न्यूनदोष **Nyūnadoṣa**

अक्षर एवं वचन आदि से हीन प्रमादवश अतिशय अल्पकाल में आवश्यकों के अंतर्गत वंदना आदि करना।

पंकगति **Paṅka gati**

ऋद्धि प्राप्त मुनि द्वारा कीचड़ या जल से ऊपर गमन करना।

पंचमी प्रतिमा **Pañcamī pratimā**

श्रावक द्वारा पूर्व चार प्रतिमाओं का परिपालन करते हुए घर पर अथवा उसके द्वारा या चौराहे पर पाँच महापर्यंत चारों पर्वों (अष्टमी एवं चतुर्दशी) के अवसर पर अचल रहना।

पंचांग नमस्कार **Pañcāṇga namaskāra**

दोनों हाथ, दोनों घुटनों एवं मस्तक को भूमि से स्पर्श करने की क्रिया।

पंचाग्निसाधक **Pañcāgni sādhaka**

काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, रूप पंचाग्नि को शांत करने वाला योगी।

पंचेन्द्रिय **Pañcendriya**

पांचों इंद्रियों वाले देव, मनुष्य, नारकी, जलचर, थलचर, नभचर तिर्यंच जीव।

पंचेंद्रिय जातिनाम **Pañcendriya jātināma**

1. नाम कर्म का एक भेद।
2. जिस कर्म के उदय से जीवों में पंचेंद्रियाँ पाई जायें।

पंडित **Paṇḍita**

1. पाप से दूर रहनेवाला।
2. शरीर और आत्मा को भिन्न-भिन्न मानने वाला।

पंडित-पंडित **Pañdita paṅdita**

ज्ञान, दर्शन और चारित्र विषयक अतिशय पाण्डित्य को प्राप्त केवली।

पंडित-पंडितमरण **Paṅdita-pañdita maraṇa**

क्षीणकषाय केवली का देह त्याग।

पंडितमरण **Pañditamaraṇa**

1. ज्ञान, दर्शन चारित्र पूर्वक मरण।
2. चारित्रवान् मुनियों का मरण।

पक्ष **Pakṣa**

1. श्रावकाचार विशेष।
2. धर्म के निमित्त की जाने वाली संपूर्ण वध-त्याग की प्रतिज्ञा।
3. धर्म और धर्मी का समुदाय रूप।

पक्ष धर्म **Pakṣa dharma**

धर्मी का धर्म।

पक्षधर्मता **Pakṣadharmatā**

1. अनुमान को उत्पन्न करने वाला हेतु।
2. हेतु का पक्ष में रहना।

पक्षाभास **Pakṣābhāsa**

अनिष्ट, बाधित और सिद्ध-साध्य धर्म से युक्त धर्मी।

पतद्ग्रह **Patadgraha**

जीव के द्वारा विवक्षित प्रकृति के प्रदेशों का परिणमन कराना।

पतंगवीथिका **Patańga vīthikā**

पतंगा के समान तीन-चार घरों को छोड़कर गोचरी के लिए साधु का अनियत गमन।

पतनांतराय **Patanāntarāya**

आहार करते समय मुनि का मूर्च्छा आदि के कारण भूमि पर गिर पड़ना।

पत्तन **Pattana**

1. जलमार्ग या स्थलमार्ग सहित प्रदेश।
2. रत्नमय भूमि।

पत्र **Patra**

प्रसिद्ध अवयवों से युक्त तथा अपने अर्थ का साधक वाक्य जिसमें पदों की गूढ़ता हो।

पत्र चारण **Patracāraṇa**

वह ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से जीवों की विराधना न करके उनके ऊपर से गमन किया जाता है।

पद **Pada**

1. अठारह हजार पद प्रमाण आचारादि ग्रंथ।
2. आपदाओं से रहित स्थान मोक्ष।
3. वर्णों का समुदाय।

पदनिक्षेप **Padanikṣepa**

समुत्कीर्तना और स्वामित्व आदि अनुयोग द्वारों का जघन्य और उत्कृष्ट पदों के द्वारा निश्चय करना।

पदमीमांसा **Padamīmāṃsā**

उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट जघन्य और अजघन्य आदि पदों का विचार करने वाला अनुयोगद्वार।

पदविग्रह **Padavigraha**

अनेक अर्थों की संभावना होने पर अपेक्षित अर्थ के नियमन के लिए समासविषयक दो या उसके अधिक पदों को अलग करना।

पदविभागी मुद्रा **Padavibhāgi mudrā**

प्रव्रज्या काल से लेकर अद्यावधि पर्यंत की जाने वाली आलोचना।

पदश्रुतज्ञान **Padaśrutajñāna**

अक्षरसमास श्रुत के ऊपर एक अक्षरज्ञान की वृद्धि होने पर प्रकट होने वाला श्रुतज्ञान।

पदश्रुतज्ञानावरणीय कर्म **padaśrutajñānāvarṇīya karma**

पदश्रुतज्ञान का आवारक कर्म।

पदसमास **Padasamāsa**

1. मध्यमपद श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि के कारण होने वाला श्रुतज्ञान।
2. दो या दो से अधिक पदों का समुदाय।

पदसमास ज्ञानावरणीय कर्म **Padasmāsajñānāvarṇiyakarma**

पदसमास श्रुतज्ञान को आवृत करने वाला कर्म।

पदस्थ ध्यान **Padastha dhyāna**

1. देशविरत गुणस्थान में निर्दिष्ट देवपूजा का विधान।
2. पंच परमेष्ठियों से संबद्ध एक अक्षर अथवा पद का जाप।
3. पवित्र पदों का अवलंबन लेकर किया जाने वाला ध्यान।
4. स्वाध्याय, मंत्र और गुरु या देव की स्तुति में चित्त की एकाग्रता।

पदस्फोट **Padasphoṭa**

पदार्थ के ज्ञानावरण और वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम से विशिष्ट आत्मा की पर्याय।

पदानुसारी **Padānusāri**

1. एक पद को सुनकर समस्त ग्रंथ को जानने की सामर्थ्य प्रदान करने वाली एक ऋद्धि विशेष।
2. एक सूत्र पद के द्वारा अनेक श्रुत का अनुसरण करना।

पदार्थदोष **Padārtha-doṣa**

1. वस्तु के पर्यायवाची पद के अन्य अर्थ का ग्रहण करना।
2. सूत्र दोषों का इकतीसवां दोष।

पद्म **Padma**

1. चौरासी लाख वर्षों से गुणित पद्मांग प्रमाण संख्या विशेष।
2. चक्रवर्ती की नौ निधियों में से एक।
3. राम का अपर नाम।

पद्म मुद्रा **Padma-mudrā**

पद्म अर्थात् कमल के आकार में दोनों हाथों को जोड़कर उनके बीच में कर्णिका के आकार जैसी दोनों अंगूठों की रचना।

पद्मलेश्या **Padmaleśyā**

1. त्यागी, भद्रपरिणामी, सरल व्यवहार करने वाला क्षमाशील और साधु-गुरुजनों की पूजा में रत जीव के ऐसे भाव को रक्त कमल के रंग से व्यक्त किया गया है।
2. छह लेश्याओं का एक भेद।

पद्मांग **Padmāṅga**

चौरासी लाख महानलिनों का एक संख्या प्रमाण।

पद्मासन **Padmāsana**

जंघा के मध्य भाग में जंघा से संश्लेष कराने वाला एक प्रकार का आसन।

परंपरसिद्धकेवलज्ञान **Parampara siddhakevalajñāna**

सिद्ध होने के दूसरे समय से लगाकर आगे अनन्त काल तक रहने वाला केवलज्ञान।

परंपरा दृष्टांत **Paramparā dṛṣṭānta**

आगमगम्य दृष्टांत से असिद्ध अर्थ की सिद्धि के लिए साक्षात् दिया जाने वाला अन्य दृष्टांत।

परंपरा बंध **Paramparā baṅdha**

बंध के दूसरे समय से लेकर कर्मरूप पुद्गल स्कंधों का और जीव प्रदेशों का होने वाला बंध।

परंपरा लब्धि **Paramparā labdhi**

1. लब्धियों की परंपरा को प्राप्त कराने वाला आगम विशेष।
2. लब्धियों की प्राप्ति के उपायों की प्ररूपणा करने वाला आगम विशेष।

परंपरोपनिधा **Paramparopanidhā**

1. परंपरा से स्थान आदि का अन्वेषण (उपनिधा) करने वाला प्रकरण।
2. दुगुने या चौगुने आदि की परीक्षा।

परकाय क्रिया **Parakāya kriyā**

अतिदुष्ट, मिथ्यादृष्टि जीव के द्वारा किया गया दूसरे का कायिक तिरस्कार।

परकायशस्त्र **Parakāya-śastra**

द्रव्य-निक्षेप की अपेक्षा से दूसरे के शरीर को घात करने वाले वनस्पति काय से भिन्न पत्थर व अग्नि प्रहारक पदार्थ।

परकृत संहरण **Para kṛta saṃharaṇa**

शत्रुता या अनुकंपा से प्रेरित होकर चारण ऋद्धिधारक, विद्याधर या देवों के द्वारा किसी व्यक्ति को किसी एक क्षेत्र से उठाकर अन्य क्षेत्र में छोड़ना।

परक्षेत्रसंसार **Parakṣetra saṃsāra**

सम्मूर्छन, गर्भ और उपपाद इन तीनों जन्मों एवं सचित्त आदि नौ योनियों के आलंबन से होने वाला जन्म-मरण रूप परिभ्रमण।

परक्षेत्र संसार **Parakṣetra saṃsāra**

सम्मूर्च्छन, गर्भ और उपपाद जन्म एवं सचित्त आदि योनियों में जन्म-मरण रूप परिभ्रमण।

परघातनाम **Paraghātnāma**

नामकर्म का एक भेद।

जिस नाम कर्म के उदय से दूसरे के घात करने वाले शरीर में पुद्गल आदि उत्पन्न हो।

परचरित्रचर **Paracaritracara**

राग के वशीभूत होकर पर द्रव्य में शुभ-अशुभ भाव से चारित्रभ्रष्ट आचरण।

परत्वापरत्व **Paratvāparatva**

प्रशंसा, क्षेत्र और काल की अपेक्षा से पर और अपर मानना। यह परत्व और अपरत्व तीन प्रकार का है-

1. प्रशंसा की अपेक्षा से धर्म व ज्ञान को पर और अधर्म और अज्ञान को अपर मानना।
2. क्षेत्र की अपेक्षा से एक दिशा में दूरवर्ती को पर और समीपवर्ती को अपर तथा।
3. काल की अपेक्षा से पचास वर्ष वाले की अपेक्षा से सौ वर्ष वाले में पर और पचास वर्ष वाले में अपर का व्यवहार करना।

परदारगमन **Paradāra gamana**

अन्य के अधीन स्त्री के साथ रमण करना।

परदृष्टि प्रशंसा **Paradṛṣṭi praśaṁasā**

एकांत दृष्टि से वस्तुतत्त्व का निर्धारण करने वाले मन की प्रशंसा करना।

परनिंदा **Paranindā**

दूसरे के विद्यमान एवं अविद्यमान दोषों को कलुषित दृष्टि से प्रगट करना।

परपरिवाद **Paraparivāda**

अन्य जनों के गुणों को दोष रूप में कथन एवं दोषों को सामूहिक रूप से प्रकट करना।

परपरितापकारिणी क्रिया **Paraparatāpakāriṇi kṛyā**

पुत्र-शिष्य और स्त्री आदि का ताड़न या कष्ट पहुंचाने की क्रिया।

परप्रणेय **Parapraṇeya**

दूसरों के कहने से कोप या प्रसाद को व्यक्त करने वाला राजा।

परप्राणातिपातजननी क्रिया **Paraprāṇātipāta jananī kriyā**

मोह, या लोभ के वशीभूत होकर दूसरे जीवों के प्राणों का घात करना।

परम **Parama**

केवल ज्ञान से युक्त, समस्त जीवों को संतोष प्रदायी, प्रातिहार्यों से सुशोभित एवं दिव्यवाणी से युक्त अर्हंत पद।

परमज्योति **Paramajyoti**

परमातिशय निरावरण ज्ञान से युक्त आप्त।

परमब्रह्म **Paramabrahma**

1. समस्त प्राणियों के प्रति अहिंसा भाव।

2. शुद्ध आत्मा के सुखरूपी स्वरूप से तृप्त, अखंड ब्रह्मचारी परम पुरुष।

परमभावग्राहकद्रव्यार्थिकनय Paramabhāvagrahaka dravyārthikanaya

अशुद्ध और शुद्ध के उपचार से रहित द्रव्य के स्वभाव को ग्रहण करने वाला नय।

परमभावजीव Paramabhāvajīva

अनुत्पन्न एवं कर्मों के क्षय से अप्रकट स्वभाव वाला जीव।

परमर्षि Paramarṣi

केवलज्ञानी जीव।

परमव्रत Paramavrata

शुद्धोपयोगरूप प्रकट चरित्र।

परमसमाधि Paramasamādhi

1. वीतराग भाव से वचन के उच्चारण की क्रिया के बिना आत्मा का ध्यान।
2. संयम, नियम और तप के आश्रय से धर्म और शुक्ल ध्यान के द्वारा आत्मा का ध्यान।

परमसुख Paramasukha

पर के संबंध से रहित आत्मारूप उपादान से उत्पन्न सिद्धात्मा का अनुपम, अतिशय युक्त अपरिमित सुख।

परमहंस Parama haṃsa

नीर-क्षीर को पृथक् करने वाले हंस के समान कर्म और आत्मा की भिन्नता को अनुभव करने वाला योगी।

परमागम Paramāgama

नय और प्रमाण के आश्रय से जीवादि पदार्थों के स्वरूप का निरूपण करने वाली जिनवाणी।

परमाणु Parāmāṇu

अविभागी, नित्य, शब्द रहित एक, पुद्गल।

परमात्मा Paramātmā

सर्व दोषों से रहित और केवलज्ञानादिरूप परमेश्वर्य से संपन्न शुद्ध आत्मा।

परमार्थ काल Paramārthakāla

वर्तना हेतु वाला काल।

परमार्थप्रत्याख्यान Paramārthapratyākhyāna

आगामी काल में उत्पन्न होने वाले समस्त राग-द्वेष मोहादि रूप विविध विकारी भावों का परित्याग।

परमावगाढ़रुचि Paramāvagāḍharuci

1. परमावगाढ़सम्यग्दृष्टि का अपरनाम।
2. परमावधि, केवलज्ञान और केवल दर्शन से प्रकाशित जीवादि पदार्थ विषयक आत्मप्रसन्नता को प्राप्त जीव।

परमावधि ज्ञान Paramāvadhi jñana

1. अवधिज्ञान का एक भेद।
2. असंख्यात लोक-प्रमाण संयम के विकल्प रूप उत्कृष्ट मर्यादा वाला अवधि ज्ञान।

परमेश्वर Parameśwara

महत्ता एवं ऐश्वर्य से युक्त, त्रिविध कर्ममल से रहित जीव।

परमेष्ठी Parameṣṭhi

1. मृत्यु, जरा, मद, विभ्रम, स्वेद और खेद से रहित होता हुआ उत्पत्ति और रति से विहीन आत्मा।
2. इन्द्रादि द्वारा वंदनीय परम पद में स्थित आत्मा।

परमेष्ठी मुद्रा Parameṣṭhī mudrā

दोनों हाथों को ऊँचा उठाकर वेणी के समान बाँधकर दोनों अंगूठों से दोनों कनिष्ठिकाओं को तथा दोनों तर्जनियों से दोनों मध्यमाओं को संग्रहीत कर दोनों अनामिकाओं का समीकरण।

परलोक Paraloka

1. अन्य भव में जीव का गमन।
2. स्वर्ग-अपवर्ग आदि।

परलोक भय Paraloka bhaya

1. परभव के आश्रय से होने वाला भय।
2. विजातीय तिर्यंच एवं देव आदि से मनुष्यों को होने वाला भय।

परलोकसंवेजनी कथा Paralokasaṃvejanī kathā

देव, तिर्यंचों आदि के दुःख को जानकर परलोक से संवेग उत्पन्न करने वाली कथा।

परलोकशंसाप्रयोग **Paralokaśaṃsāprayoga**

परभव में देवलोक की इच्छा से व्रत, तप आदि करना।

परवाद **Paravāda**

परमतों में दोष-दर्शन।

परविवाहकरण **Paravivāhakaraṇa**

1. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. स्नेहादि के कारण पर-संतान का विवाह कराना।

परविस्मापक **Paravismāpaka**

इंद्रजाल, प्रहेलिका और वक्रोक्ति आदि के द्वारा दूसरों को आश्चर्यचकित करना।

परव्यपदेश **Paravyapadeśa**

1. अतिथिसंविभाग व्रत का अतिचार।
2. अन्य दाता की देय वस्तु को देना।

परशरीरसंवेजनी कथा **Paraśarīrasaṃvejanī kathā**

अपने और दूसरे के शरीर को अपवित्र वर्णित करके, श्रोता को संवेग उत्पन्न करने वाली कथा।

परशु मुद्रा **Paraśu mudrā**

ध्वजा के समान दाहिने हाथ को पसार कर तर्जनी से अंगुष्ठ को मिलाने से बनने वाली आकृति।

परसंग्रह **Parasaṅgraha**

1. संग्रहनय का भेद।
2. समस्त विशेषों में उदासीन शुद्ध सन्मात्र द्रव्य का ग्राहक।

परसंग्रहाभास **Parasaṅgrahābhāsa**

सब विशेषों का निराकरण करके केवल सत्ताद्वैत को विषय बनाने वाला नय।

परसमय **Parasamaya**

कर्मजनित रागादि भावों को अपना मानना।

परसमयरत **Parasamayarata**

किंचित् अज्ञान के कारण अरिहन्त आदि की भक्ति से मुक्ति को मानने वाला ज्ञानी।

परसमयवक्तव्यता **Parasamayavaktavyatā**

मिथ्यात्व (परसमय) के वर्णन का प्रज्ञापन करने वाला प्राभृत या अनुयोग।

परस्परपरिहारलक्षणविरोध **Parasparaparihāralaksanā virodha**

एक ही वस्तु में पाया जाने वाला परस्पर विरोधी रूप और रस के समान पाया जाने वाला विरोध।

परम्पराश्रयचक्रक **Paramparāśrayacakraka**

पक्ष में प्रत्यक्षवृत्ति से व्यापक की अनुपलब्धि का विपक्षव्यावृत्ति से पक्ष में प्रत्यक्षवृत्ति का तथा प्रत्यक्षवृत्ति से पक्ष में विपक्षव्यावृत्ति का परस्पर आश्रित निर्णय कराने वाला दोष।

परांगनात्याग **Paraṅganātyāga**

मन, वचन, काय से परस्त्री के सेवन का त्याग।

पराघात **Parāghāta**

देखें- परघातनाम।

पराजय **Parājaya**

असिद्धि।

परात्मा **Paratmā**

1. संसारी जीवों से उत्कृष्ट आत्मा।
2. परमात्मा।

परानवकांक्षक्रिया **Parānavakāṅkṣakriyā**

अनादर को प्राप्त होकर दूसरों को भी नहीं चाहना।

परा प्राप्ति **Parā prāpti**

1. शुद्ध आत्मस्वरूप की प्राप्ति।
2. कर्मजनित औदयिक आदि भावों का अभाव होने पर आत्मस्वररूप की प्राप्ति।

परार्थ करण **Parārtha karaṇa**

विहित अनुष्ठान का यथार्थ पालन करते हुए मन, वचन, काय की शुद्धि पूर्वक भिक्षार्थ विचरण।

परार्थ गुण **Parārtha guṇa**

ज्ञान के अतिरिक्त सुख आदि गुण।

परार्थ श्रुत **Parārtha śruta**

दूसरों के विरोध को दूर करने वाला शब्द प्रयोग।

परार्थाधिगम **Parārthādhigama**

शब्द-रूप ज्ञान।

परार्थानुमान **Parārthānumāna**

साध्य के अविनाभावी हेतु को प्रतिपादक वचन।

परावर्त **Parāvarta**

अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी प्रमाण काल।

परावर्त दोष **Parāvarta doṣa**

धान्यादि देकर बदले में भात आदि लेकर साधु को आहार में प्रदान करना।

परावर्तन **Parāvartana**

ग्रंथ का पुनः पुनः अभ्यास।

परावर्तमान प्रकृति **Parāvartamāna prakṛiti**

अन्य प्रकृति के बंध या उदय को रोककर स्वयं बंध या उदय को प्राप्त होने वाली प्रकृति।

परावर्तित **Parāvartita**

देखें- परावर्तदोष।

परिकर्म **Parikarma**

1. द्रव्य के गुणविशेष का परिणमन।
2. योग्यता को उत्पन्न करने में कारणभूत शास्त्र।
3. गणित विषयक करण सूत्र वाला ग्रंथ।

परिकर्मकालोपक्रम **Parikarmakālopakrama**

चन्द्रग्रहण आदि के नियत काल से पहले ही उसे जानना।

परिकर्मक्षेत्रोपक्रम **Parikarmakṣhetropkrama**

1. नाव से समुद्र का उल्लंघन करना।
2. हल या कुलिक आदि से खेत का संस्कार।

परिकर्ममिश्रद्रव्योपक्रम **Parikarmamisradravyopakrama**

कटक आदि आभूषणों से विभूषित पुरुष का गुण विशेष।

13—416 Min. of HRD/2014

परिखा **Parikhā**

1. व्यंजनों के मध्य में स्थित अन्न।
2. दुर्ग के चारों ओर सुरक्षा के लिए की जाने वाली ऊपर विस्तृत तथा नीचे संकुचित खाई।

परिगृहीता **Parigṛhītā**

एकपुरुषभर्तृका स्त्री।

परिग्रह **Parigraha**

1. ममत्वभाव।
2. धर्मोपकरणों को छोड़कर अन्य वस्तुओं की स्वीकृति अथवा धर्मोपकरणों में आसक्ति भाव।

परिग्रह क्रिया **Parigraha kriyā**

विविध उपायों से भोगोपभोग की सामग्री का अर्जन, रक्षण और उसमें ममत्वभाव।

परिग्रहत्याग प्रतिमा **Parigrahatyāga pratimā**

1. श्रावक प्रतिमा का नवम भेद।
2. दस प्रकार के बाह्य परिग्रह में आसक्ति को छोड़कर संतोष धारण करने वाला श्रावक।

परिग्रहत्याग महाव्रत **Parigrahatyāga mahāvrata**

नियमपूर्वक मन-वचन-काय से कृत, कारित, अनुमोदना से साधु द्वारा सर्वप्रकार के बाह्य एवं आभ्यंतर परिग्रह का परित्याग

परिग्रहपरिमाणाणुव्रत **Parigrahaparimāṇaṇuvrata**

बाह्य परिग्रह का परिमाण करके उससे अधिक की इच्छा न करना।

परिग्रह संज्ञा **Parigraha saṁjñā**

विषयभोग की सामग्री को देखने, उनमें उपयोग को लगाने, आसक्ति और लोभ कषाय की उदीरणा से ममत्व बुद्धिपूर्वक परिग्रह विषयक अभिलाषा।

परिग्रहानंदी रौद्रध्यान **Parigrahānaṅdī raudradhyāna**

धन के संरक्षण में तत्पर चित्त की कलुषता।

परिचित **Paricita**

1. आगम के नौ अर्थाधिकारों में तीसरा अधिकार।

2. जिस विषय में प्रश्न किया जाता है, उसमें शीघ्रतापूर्ण प्रवृत्ति।
3. क्रमशः अथवा उत्क्रम से अन्यथा अनुभव रूप से भाव आगमरूप सागर में मत्स्य के समान चंचल वृत्ति वाला जीव।

परिचितसूत्रता **Paricitasutratā**

उत्क्रम या क्रम से प्रवृत्त वाचना आदि से सूत्र में स्थिरता।

परिजीत **Parijīta**

देखें- परिचित

परिज्ञा **Parijñā**

सर्वतः पापपरित्याग रूप ज्ञान।

परिज्ञातकर्म मुनि **Parijñāta karma muni**

कर्मसमारंभ एवं ज्ञानावरणादि कर्म के उपादान भूत बंध हेतुओं का ज्ञाता मुनि।

परिणाम **Pariṇāma**

1. द्रव्य का तद्भाव।
2. धर्म आदि द्रव्यों और गुणों का स्वभाव।
3. अध्यवसाय विशेष।
4. अपने-अपने कार्य का पर्यालोचन।

परिणामक साधु **Pariṇāmaka sādhu**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा जिनेंद्रदेव के द्वारा कथित उत्सर्ग या अपवाद मार्ग का श्रद्धान करने वाला साधु।

परिणामविशुद्ध प्रत्याख्यान **Pariṇāmaviśuddha Pratyākhyāna**

1. राग-द्वेष रूप चित्तवृत्ति के दूषण से रहित प्रत्याख्यान।
2. अपरनाम- भाव विशुद्ध प्रत्याख्यान।

परिणामानित्यता **Pariṇāmanityatā**

मृत्पिंड के समान पूर्व-पूर्व अवस्था को छोड़कर अन्य-अन्य अवस्था को प्राप्त होना।

परितापन **Paritāpana**

प्राणियों को संताप पहुँचाना।

परितापनिकी **Paritāpanikī**

खड्ग आदि के घात से दूसरों को पीड़ा पहुँचाने की क्रिया।

परित्यजन दोष **Parityajana doṣa**

1. छोटित या त्यक्त दोष का नामांतर।
2. बहुत अन्न गिराकर या देते समय गिरते अन्न को छोड़कर भोजन करना।

परिदेवन **Paridevana**

संक्लेश परिणाम से स्वपर के गुणों का स्मरण करते हुए दूसरों को दयार्द्र करा देने वाला रुदन।

परिधि **Paridhi**

1. विस्तार में 16 का गुणा करके उसमें 16 के जोड़ने पर उसे 113 से भाजित करके लब्ध में तिगुने विस्तार के जोड़ने पर प्राप्त होने वाला प्रमाण।
2. समान गोल क्षेत्र के विस्तार का वर्ग करके उसे 10 से गुणा करने पर लब्ध का वर्गमूल निकालने पर प्राप्त प्रमाण।

परिनिर्वाप्यवाचना **Parinirvāpya vācanā**

शिष्य को योग्य काल की प्रतीक्षा करके शक्ति के अनुरूप सूत्र को प्रदान करना।

परिनिर्वृत **Parinirvṛta**

कर्मकृत रागादि विकारों को दूर कर सर्वथा स्वस्थ (आत्मस्वरूप में स्थित) सिद्धि को प्राप्त।

परिनिर्वृति **Parinivṛti**

संसारबंधन से मुक्त जीव की उत्कृष्ट अवस्था।

परिपिण्डित दोष **Paripiṇḍita doṣa**

1. वंदना के बत्तीस दोषों में चौथा दोष।
2. अनेक आचार्य आदि की पृथक-पृथक वंदना न करके एक साथ वंदना करना।
3. जांघों के ऊपर दोनों हाथ रखकर हाथ-पैरों को संकुचित कर अव्यक्त सूत्र के उच्चारणपूर्वक वंदना करना।

परिपूणक शिष्य **Paripūṇaka śiṣya**

चलनी के समान दोषों को ग्रहण कर गुणों को छोड़ने वाला शिष्य।

परिभाषा **Paribhāṣā**

1. चक्रवर्ती भरत की चार दंडनीतियों में से एक।
2. अपराधी को आगे क्रोध न करने की चेतावनी देना।

परिभोग **Paribhoga**

बार-बार भोगी जाने वाली वस्तु।

परिभोगांतराय **Paribhogāntarāya**

परिभोग में विघ्न उपस्थित करने वाला कर्म।

परिमर्शन **Parimarśana**

हाथ से समस्त शरीर का स्पर्शन।

परिमितकाल सामायिक **Parimitakāla sāmāyika**

सीमित काल के लिए स्वाध्याय आदि में ग्रहण की जाने वाली सामायिक।

परिवर्त दोष **Parivarta doṣa**

1. धान्य आदि से भात आदि बदलकर साधु के लिए देना।
2. अपने निवास से अन्य का आवास बदल कर साधु के लिए देना।

परिवर्तन **Parivartana**

पठित भावागम का विस्मरण निवारण के लिए बार-बार परिशीलन।

परिवर्तमान परिणाम **Parivartamāna Pariṇāma**

एक परिणाम से अन्य परिणाम को प्राप्त होकर पुनः एक दो आदि समयों में उसी परिणाम को प्राप्त होना।

परिवर्तित **Parivartita**

देखें- परिवर्त

परिवाद **Parivāda**

स्वर्ग-मोक्ष की साधनभूत विशेष क्रियाओं के विषय में मिथ्या उपदेश देकर दूसरों की विपरीत प्रवृत्ति कराना।

परिव्राजक **Parivrājaka**

पापों के परित्यागपूर्वक प्रवृत्ति करने वाला।

परिशातना कृति **Pariśātanā kṛti**

औदारिकादि शरीर रूप पुद्गल स्कंधों की संचय के बिना होने वाली निर्जरा।

परिषह/परीषह **Pariṣaha/Parīṣaha**

शारीरिक एवं मानसिक उत्कृष्ट पीड़ा के कारण क्षुधादि को सहन करना।

परिष्ठापनासंयम **Pariṣṭhāpanā saṃyama**

अग्राह्य अन्न-पानादि एवं शरीर के लिए अनुपयोगी वस्त्र-पात्रादि आदि को प्रासुक भूमि पर रखना।

परिहरण **Pariharaṇa**

भयभीत होकर विधि या अविधि के साथ आधाकर्म का परित्याग करना।

परिहार **Parihār**

1. एक प्रकार का प्रायश्चित।
2. अपराधी साधु को पक्ष, मास आदि नियत काल के लिए संघ से दूर करना।

परिहार विशुद्धि **Parihāraviśuddhi**

प्राणिघात के परिहार से विशिष्ट शुद्धिवाला संयम।

परिहारि संयत (परिहारिक संयत) **Parihāri saṃyata (Parihairka saṃyata)**

परिहारपूर्वक अनुपम पाँच यमरूप धर्म का नियोग से परिपालन करने वाला।

परीक्षण **Parīkṣana**

1. भक्तप्रत्याख्यान के अंतर्गत अर्हादि लिंगों में से एक।
2. परीक्षा।

परीक्षा **Parīkṣa**

प्रमाण से वस्तु की यथार्थता का विचार करना।

परीत संसार **Parīta saṃsāra**

1. परिमित संसार वाले जीव।
2. जिनेंद्रदेव के वचनों में अनुरक्त, भक्तिपूर्वक गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला, संक्लेश परिणाम से रहित परिमित संसार वाला जीव.

परीतसंसारिक **Parītasamsārika**

देखें- परीत संसार।

परीवर्त **Parīvarta**

1. आम्नाय का नामान्तर।
2. उच्चारण की शुद्धिपूर्वक आचार्य परंपरागत स्वाध्याय करना।

परीषहजय **Parīṣahajaya**

भूख-प्यास आदि की तीव्र वेदना होने पर भी स्वानुभूति से चलायमान नहीं होना

परुष **Paruṣa**

रूखा, प्रेम से रहित, परपीड़ाकारक कठोर वचन।

परुषदोष **Paruṣadoṣa**

स्वगण में रहते हुए आचार्य द्वारा संयमहीन साधुओं के प्रति ममत्व बुद्धि के कारण कठोर वचन बोलना।

परोक्ष **Parokṣa**

पर (इंद्रिय एवं मन आदि) के निमित्त से होने वाला ज्ञान।

परोक्ष उपचार विनय **Parokṣa Upacāra Vinaya**

आचार्य आदि के सम्मुख न होने पर मन, वचन, काय से उनकी विनय करना।

परोक्ष दृष्टि **Parokṣa dṛṣṭi**

अनेक गुणों एवं पर्यायों से संयुक्त मूर्त-अमूर्त, चेतन-अचेतन सब द्रव्यों को अच्छी तरह नहीं देखने वाला।

परोक्षाभास **Parokṣābhāsa**

विशद प्रतिभास के होने पर भी उसे परोक्ष मानना।

परोपरोधाकरण **Paroparodhākaraṇa**

1. अचौर्याणुव्रत की एक भावना।
2. दूसरों के ठहरने में बाधक न होना अथवा दूसरों के ठहरने का आग्रह न करना।

पर्यंकासन **Paryaṅkāsana**

दोनों जाँघों के नीचे के भाग को पैरों के ऊपर करके नाभि के पास बाईं हथेली के ऊपर दाईं हथेली का रखना।

पर्याप्त (पर्याप्तक) **Paryāpta (Paryāptaka)**

आहारादि छहों पर्याप्तियों से पूर्ण जीव।

पर्याप्त **Paryāpta**

अवस्था विशेष।

पर्याप्तनाम (पर्याप्तकनाम) **Paryāptanāma (Paryāptakanāma)**

1. जिसके उदय से इन्द्रिय आदि की उत्पत्ति होती है।
2. जिसके उदय से जीव पर्याप्त (आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन पर्याप्तियों से परिपूर्ण) होता है।
3. जिसके उदय से एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय और संज्ञी पंचेंद्रिय जीवों के यथायोग्य चार पाँच और छः पर्याप्तियाँ होती हैं।

पर्याप्त भाषा **Paryāpta bhāṣā**

सत्य या असत्य में से किसी एक में निक्षेप की जाने वाली भाषा।

पर्याप्ति **Paryāpti**

1. क्रिया की समाप्ति।
2. पुद्गल द्रव्य के उपचय से उत्पन्न शक्ति।
3. आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन की शक्तियों की उत्पत्ति का कारण।

पर्याप्तिनामकर्म **Paryāptināmakarma**

आहारादि पर्याप्तियों की रचना कराने वाला नाम कर्म।

पर्यायच्छेद **Paryāyaccheda**

1. एक प्रकार का प्रायश्चित्त।
2. तप आदि को छोड़कर पुनः दीक्षा ग्रहण न करना।

पर्यायज्ञान **Paryāyajñana**

अविभागप्रतिच्छेद रूप श्रुतज्ञान का अंश।

पर्यायज्ञानावरणीय **Paryāyajñanāvaraṇīya**

पर्याय ज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

पर्यायसमास **Paryāyasamāsa**

1. पर्याय ज्ञान की अपेक्षा अनन्तवें भाग से अधिक श्रुतज्ञान।
2. अनेक ज्ञानांश।

पर्यायसमासज्ञानावरणीय **Paryāyasamāsajñanāvaraṇīya**

पर्यायसमास श्रुतज्ञान को आवृत करने वाला कर्म।

पर्यायार्थिक **Paryāyārthika**

पर्याय मात्र को विषय करने वाला नय।

पर्यायास्तिक **Paryāyāstika**

देखें- पर्यायार्थिक

पर्युषणकल्प **Paryuṣaṇakalpa**

वर्षाकाल में अन्यत्र गमन न करके एक ही स्थान में रहना।

पर्व **Parva**

1. धर्मसंचय की कारणभूत अष्टमी आदि विशेष तिथियाँ।

2. एक पर्व वर्षों (70560000000000) को एक लाख (1,00,000) से गुणा करने पर आने वाला काल प्रमाण।

पर्वराहु **Parvarāhu**

1. छह मासों में पूर्णिमा के अंत में अपनी गतिविशेष से चन्द्रबिम्बों को आच्छादित करने वाला।
2. जघन्य छह मासों में चन्द्र एवं सूर्य को तथा उत्कृष्ट बयालीस मासों में चन्द्र को तथा अड़तालीस वर्षों में सूर्य को आच्छादित करने वाला।

पल **Pala**

1. चार कर्ष प्रमाण।
2. एक पल - दस गद्याण।

पलित **Palita**

असंख्यात युगप्रमाण काल।

पल्यंकासन **Palyaṅkāsana**

देखें- पर्यंकासन।

पल्य **Palya**

प्रमाणांगुल के प्रमाण से एक योजन विस्तार, आयाम और गहराई वाला गोल गड्ढा।

पल्योपम **Palyopama**

एक योजन विस्तीर्ण एवं गहरे गड्ढे को एक दिन के उत्पन्न बालक के बालाग्रकोटियों के भरकर सौ-सौ वर्ष में एक एक बालाग्रकोटि के निकालने में लगने वाला काल।

पश्चात्संस्तव **Paścatasaṃstava**

1. एक उत्पादन दोष।
2. दानदाता की दान ग्रहण करने के पश्चात् प्रशंसा करना।

पश्चात्संस्तुति **Paścatasaṃstuti**

देखें- पश्चात्संस्तव।

पश्चादानुपूर्वी उपक्रम **Paścādānupuruvī Upakrama**

विपरीत क्रम से की जाने वाली प्ररूपणा।

पिंडकल्पिक **Piṅḍakalpika**

मन-वचन-काय और कृत, कारित, अनुमोदना से अशुद्ध आहार को ग्रहण नहीं करने वाला साधु।

पिंडप्रकृति **Piṅḍapṛakṛiti**

1. बहुत प्रकृतियों के समूहरूप प्रकृतियाँ।
2. अवान्तर अनेक भेद वाली कर्म-प्रकृतियाँ।

पिंडस्थध्यान **Piṅḍasthadhyāna**

1. अपने शरीर में पुरुष के आकार कें निर्मल गुण वाले जीवप्रदेशों के स्थित समुदाय का चिंतन।
2. नाभिक मलादिरूप स्थानों में योगियों द्वारा इष्ट देवता आदि का ध्यान।

पितामह **Pitāmaha**

अपने उपदेशों से भव्यजीवों को मुक्ति प्रदान करने वाला एवं जीवों को अभयदान देने वाला।

पिपासासहन **Pipāsāsahana**

शरीर और इन्द्रियों को पीड़ित करने वाली प्यास के प्रतिकार के लिए उत्सुक न होकर, धैर्यपूर्वक उसे सहन करना।

पिशाच **Piśāca**

सुरूप, सौम्यदर्शन, रत्नों के आभूषणों के धारक तथा कल्पवृक्ष से चिह्नित ध्वजाओं को धारण करने वाले व्यंतर देव।

पिशुन **Piśuna**

दो या बहुत से व्यक्तियों के सत्य या असत्य दोषों को अन्य से कहना।

पिशुल **Piśula**

सकल प्रक्षेप के अनन्तवें भाग-प्रमाण, उसके एक खंड का नाम।

पिहित दोष **Pihitadoṣa**

सचित्त पत्ते आदि-अथवा अचित्त वस्तु से ढके हुए भोज्य पदार्थ को ऊपर से आवरण हटाकर देना।

पिहिता दोष **Pihitādoṣa**

सचित्त मिट्टी आदि के आवरण को हटाकर वसति (गृह) प्रदान करना।

पाक्षिक श्रावक **Pakṣika śrāvaka**

हिंसादि पाँच पापों से विरत होने का पक्ष ग्रहण करते हुए अहिंसादि व्रतों के पालन में उद्यत।

पाक्षिकापाक्षिक **Pākṣikāpākṣika**

मास के दो पक्षों में से एक पक्ष में काम-वासना का उदय होना।

पीड़ाजनित आर्तध्यान **Pīḍajanita ārtadhyāna**

आसातावेदनीय से उत्पन्न दुःख में होने वाला पीड़ाजनित चिंतन।

पाखण्डिमूढता **Pākhaṇḍimuḍhata**

1. आरंभी एवं परिग्रही विवाहादि सांसारिक कार्यों में संलग्न साधुओं का आदर-सत्कार करना।
2. मंत्रादिक के द्वारा उत्पन्न चमत्कार की शक्ति को देखकर पाखंडी साधु की उपासना करना।

पाठ **Pāṭha**

1. पठन मात्र क्रिया।
2. अभिधेय अर्थ को स्पष्ट करना।
3. प्रवचन का पर्यायवाची शब्द।

पीतलेश्या **Pītaleśyā**

1. विद्यावान, दयालु, हिताहित विचारक, लाभालाभ में प्रसन्नचित्त व्यक्ति।
2. पीतवर्ण वाले द्रव्य के आश्रय से होने वाली आत्मपरिणति।

पुंडरीक **Puṇḍarīka**

छह कालों के आश्रय से तिर्यंच और मनुष्यों का देवों, असुरों और नारकियों में उत्पत्ति विषयक निरूपण करने वाला अंगबाह्य श्रुत।

पाठक परमेष्ठी **Pāṭhaka parameṣṭhī**

1. देखें- उपाध्याय
2. मुनिधर्म का पालन करते हुए धर्मोपदेश एवं अध्यापन कार्य में प्रवृत्त मुनि।

पाणिजंतुवध **Pāṇijantuvadha**

1. आहार ग्रहण करते समय हाथ के ऊपर जीव का स्वयं गिरकर मर जाना।
2. आहार अन्तराय।

पाणिपिंडपतन **Pāṅipiṇḍapatana**

आहार करते समय हाथ से ग्रास का गिर जाना।

पाणिमुक्तागति **Pāṇimuktagati**

संसारी प्राणियों की एक विग्रह वाली गति।

पांडित्य **Pāṇḍitya**

पदार्थों के गुण एवं दोषों का निश्चय करने की शक्ति।

पांडुनिधि **Pāṇḍunidhi**

धान्य प्रदान करने वाली निधि।

पांडुकनिधि **Pāṇḍukanidhi**

गणित, मान-उन्मान के प्रमाण, धान्य और बीजों की उत्पत्ति का कथन करने वाला शास्त्र।

पात्र **Pātra**

ज्ञान-ध्यान एवं तप में अनुरक्त, जितेंद्रिय, धीर तथा आत्मोन्मुखी श्रमण साधु।

पात्रदत्ति **Pātradatti**

1. मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका को निर्दोष आहार, औषधि, आवास, पुस्तक तथा तपश्चरण में उपयोगी उपकरण भक्तिपूर्वक देना।
2. नवधा भक्तिपूर्वक आहार, ज्ञान एवं संयम के उपकरण (पिच्छि-कमण्डलु, शास्त्र) प्रदान करना।

पात्र दान **Pātra dāna**

देखें- पात्रदत्ति

पात्रविशेष **Pātra viśeṣa**

1. मोक्ष के कारणभूत गुणों से युक्त होना।
2. सम्यग्दर्शन, ज्ञान चारित्र एवं तप से संपन्न साधु।

पाद **Pāda**

1. छह अंगुल प्रमाण, माप विशेष।

पादग्रहण **Pādagrahaṇa**

1. भूमि से पैरों के द्वारा रत्न-स्वर्ण आदि को ग्रहण करना।
2. आहार विषयक एक अन्तराय।

पादपतन **Pādapatana**

1. चरणों में गिरकर नमस्कार करना।

पादपोपगमन **Pādapopagamana**

चतुर्विध आहार का त्यागी, जंतु रहित शुद्ध भूमि का आश्रयी, प्रशस्त ध्यान में चित्त को स्थिर करने वाला, प्राणान्तपर्यंत वृक्ष के समान निश्चल अनशन में रत रहते हुए मरण को प्राप्त होना।

पादपोपगमन अनशन **Pādapopagamana anaśana**

देखें- पादपोपगमन

पादांतरपंचेन्द्रियागमन **Pādāntarapancendriyāgamana**

दोनों पैरों के मध्य से पंचेन्द्रिय प्राणी के जाने पर आहार का अन्तराय।

पादोपगमन मरण **Pādopagamna maraṇa**

वृक्ष के समान शरीर को निश्चल रखकर मरण को प्राप्त होना।

पाप **Pāpa**

1. अशुभ कर्म में प्रवृत्ति।
2. सम्यक्त्व, श्रुत, विरति और कषाय-निग्रह से विपरीत आचरण।
3. शुभकर्मों से विरति।

पापकर्म **Pāpakarma**

1. अशुभ कर्मप्रकृतियाँ।
2. घातिया कर्म की प्रकृतियाँ।

पापकर्मअबंधक **Pāpakarma abandhaka**

1. सावधानीपूर्वक गमन, स्थिति भोजन, भाषण आदि क्रियाओं को संपन्न करने वाला।
2. सभी प्राणियों में समभाव रखने वाला तथा हित-मित प्रिय वचन बोलने वाला।

पापकर्मबंधक **Pāpakarmabandhaka**

प्रमादपूर्वक की जाने वाली क्रियाओं का कर्ता।

पापकर्मोपदेश **Pāpakarmopadeśa**

निष्प्रयोजन कृषि आदि कर्मों का उपदेश देना।

पापजुगुप्सा **Pāpajugupsā**

1. पूर्वकृत पापों का पश्चाताप करना, वर्तमान में पापों को न करते हुए भविष्य में पाप का चिंतन न करना।
2. मन, वचन एवं काय से पापों का परित्याग करना।

पापप्रकृति **Pāpaprakṛti**

अशुभरूप कर्म प्रकृतियाँ।

पाप श्रमण **Pāpa śramaṇa**

1. आचार्यकुल को छोड़कर एकल (एकाकी) विहार करने वाला श्रमण
2. परपदार्थों में मुग्ध श्रमण।

पापोपदेश **Pāpopadeśa**

1. तिर्यंच व्यापार, क्लेश उत्पन्न करने वाले व्यापार तथा हिंसा, आरंभ, वंचना विषयक कथा के प्रसंग से पाप का उपदेश देना।
2. पाप के हेतु भूत व्यापार या क्रियाओं का उपदेश देना।

पारंचिक **Pārañcika**

1. राज्य विरुद्ध आचरण करने पर नव-दश पूर्वधारी आचार्यों के द्वारा कराये जाने वाला प्रायश्चित्त, जिसके अंतर्गत अपराधी मुनि को पुनः दीक्षित किया जाता है।
2. लिंग, क्षेत्र, काल और तप से बहिष्कृत की जाने वाली विधि।

पारंचित **Pārañcita**

देखें- पारांचक।

पारंची **Pārañcī**

प्रायश्चित्त विशेष।

पारमार्थिक प्रत्यक्ष **Pāramārthika pratyakṣa**

इन्द्रियादि से निरपेक्ष आत्मा से उत्पन्न होने वाला ज्ञान।

पारमार्थिक प्रत्यक्षाभास **Pārmārthika pratyakṣābhasa**

पारमार्थिक प्रत्यक्ष के समान दिखने वाला।

पारायण **Pārāyaṇa**

सूत्र और अर्थ का आद्योपान्त अध्ययन करना।

पारिग्राहिकी **Pārigrāhikī**

धर्मोपकरण से अतिरिक्त वस्तु को स्वीकार करना तथा धर्मोपकरण में भी अनुराग रखकर तत्संबंधी क्रिया करना।

पारिग्राहिकी क्रिया **Pārigrāhiki kriyā**

1. देखें- पारिग्राहिकी
2. परिग्रह के संरक्षण के निमित्त की जाने वाली क्रिया।

पारिणामिकत्व **Pāriṇāmikatva**

अवस्थान्तर को प्राप्त द्रव्य।

पारिणामिक भाव **Pāriṇamikabhāva**

1. द्रव्य को आत्म-लाभ प्राप्त कराने वाला विशेष।
2. वस्तु का एक अवस्था से दूसरी अवस्था को प्राप्त होना

पारिणामिकी **Pāriṇamikī**

1. अपनी-अपनी विशिष्ट जाति में वृद्धि उत्पन्न करने वाली बुद्धि।
2. अनुमान, हेतु एवं दृष्टांत के द्वारा अभीष्ट की साधक बुद्धि।
3. अभ्युदय और निःश्रेयस की साधिका बुद्धि।

पारितापनिकी क्रिया **Pāritāpanikī kriyā**

दुःख को उत्पन्न करने वाली क्रिया।

पारितापिकी क्रिया **Pāritāpikī kriyā**

देखें- पारितापनिकी क्रिया

पारिव्राज्य **Pārivrājya**

गृहस्थ धर्म का पालन करने के पश्चात् गृहवास से विरक्त होकर दीक्षा ग्रहण करने वाले परिव्राजक का अनुष्ठान।

पारिषद **Pāriṣada**

सभा में उपस्थित होने योग्य

पारिषद्य **Pāriṣadya**

देखें- पारिषद

पार्थिवी धारणा **Pārthivīdhāraṇā**

मध्यलोक के बराबर क्षीरसागर, उसके मध्य में जम्बूद्वीप के प्रमाण वाले सहस्रपत्रमय स्वर्णकमल, उसके परागसमूह के भीतर पीली कान्ति से युक्त सुमेरु

के प्रमाण कर्णिका और उसके ऊपर एक श्वेत वर्ण के सिंहासन पर स्थित होकर कर्मों के नष्ट करने में उद्यत आत्मा का चिंतन।

पार्श्व **Pārśva**

1. समस्त पदार्थों को देखने वाला।
2. तेईसवें तीर्थंकर का नाम।

पार्श्वमुद्रा **Pārśvamudrā**

उल्टे हाथों से वेणीबंध करके सामने दोनों तर्जनियों के मिलाने और शेष अंगुलियों के मध्य में दोनों अंगूठों को रखने से होने वाली मुद्राविशेष।

पार्श्वस्थ **Pārśvastha**

1. सुखाभिलाषी होने से अयोग्य का सेवन करने वाला।
2. दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और प्रवचन में पूर्णतया प्रयत्नशील न रहने वाला मुनि।

पार्षद्य **Pārṣadya**

देखें- पारिषद

पार्ष्णिग्राह **Pārṣṇigrāha**

विजिगीषु के चले जाने पर क्रोध करना।

पाशमुद्रा **Pāśamudrā**

दोनों तर्जनी और अंगूठे को मिलाकर शेष अंगुलियों को पसारना।

पाशस्थ **Pāśastha**

मिथ्यादर्शनादि बंध हेतुओं में स्थित जीव।

पाषण्डिमूढता **Pāṣaṇḍimūḍhatā**

देखें- पाखण्डिमूढ़ता

पुंलिंगसिद्ध **Puṃliṅgasiddha**

पुरुष शरीर में अवस्थित रहते हुए मुक्ति को प्राप्त करने वाला जीव।

पुंवेद **Puṃveda**

1. पुरुष भावों को प्राप्त कराने वाला कर्मोदय।
2. देखें, पुरुषवेद

पुण्य **Puṇya**

1. आत्मा को पवित्र करने वाली क्रिया अथवा आचरण।

2. शुभ कर्म।
3. सम्यक्त्व, श्रुत, विरति और कषाय निग्रह रूप परिणत गुण।

पुण्य प्रकृति **Punya prakṛti**

आह्लादकारक सातावेदनीय कर्म की शुभ प्रकृति।

पुण्यप्रकृति **Puṇyaprakṛti**

जीव को सुखानुभूति कराने वाली साता-वेदनीय आदि शुभ कर्म प्रकृतियाँ।

पुत्र **Putra**

1. उत्पन्न होकर वंश को पवित्र करने वाला।
2. पिता के आचरण का अनुपालन करते हुए स्वयं को पवित्र करने वाला।

पुद्गल **Pudgala**

1. स्पर्श, रस, गंध, वर्ण से युक्त द्रव्य।
2. स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश, अणु आदि।
3. पूरण और गलन स्वभाव युक्त द्रव्य।

पुद्गलक्षेप **Pudgalakṣepa**

1. किसी को लक्ष्य करके कंकण, पत्थर आदि पुद्गलों का फेंकना।
2. व्रती श्रावक द्वारा मर्यादित क्षेत्र के बाहर प्रयोजन के वशीभूत होकर कंकण, पत्थर आदि का फेंकना।
3. देशावकाशिक व्रत का अतिचार।

पुद्गलक्षेपण **Pudgalakṣepaṇa**

देखें- पुद्गलक्षेप।

पुरुषलिंग सिद्धकेवलज्ञान **Puruṣaliṅgasiddhakevaljñāna**

पुरुष लिंग के रहते हुए सिद्ध हुए जीवों का केवलज्ञान।

पुद्गलगति **Pudgalagati**

परमाणुरूप पुद्गलों से लेकर अनंत प्रदेशवाले स्कंधों तक पुद्गलों की गमनरूप प्रवृत्ति।

पुद्गल नोभवोपपातगति **Pudgalanobhavopapātagati**

एक समय में पूर्व दिशा के अंत से पश्चिम दिशा के अंत तक, पश्चिम दिशा के अंत से पूर्व दिशा के अंत तक, दक्षिण दिशा के अंत से उत्तर दिशा के अंत तक, उत्तर दिशा के अंत से दक्षिण दिशा के अंत तक, इसी प्रकार ऊपर के अंत भाग

14—416 Min. of HRD/2014

से नीचे के अंत भाग तक और नीचे के ऊपर तक जाने वाला पुद्गल परमाणु।

पुद्गलपरावर्त **Pudgalaparāvarta**

1. तीनों लोकों में स्थित समस्त पुद्गलों को औदारिकादि शरीर रूप से ग्रहण करना।
2. संसार के समस्त पुद्गलों का औदारिक, वैक्रियक, तैजस, भाषा, श्वासोच्छ्वास, मन और कर्म रूप में परिणमन होना।

पुद्गलपरिवर्तसंसार **Pudgalaparivartasaṃsāra**

जीव के द्वारा संसार में स्थित सभी पुद्गलों को अनंत बार भोगने के बाद परित्यक्त संसार।

पुद्गलप्रक्षेप **Pudgalaprakṣepa**

देखें- पुद्गलक्षेप।

पुद्गलबंध **Pudgalabandha**

1. दो या दो से अधिक पुद्गलों का समूह।
2. स्निग्ध और रूक्ष आदि गुणों से पुद्गलों का परस्पर मिलना।

पुद्गलयुति **Pudgalayuti**

वायु के द्वारा घूमने वाले पत्तों की तरह पुद्गलों का एक ही स्थान में मिलना।

पुद्गलविपाक **Pudgalavipāka**

कर्मों की फल देने की शक्ति।

पुद्गलविपाकिनी प्रकृति **Pudgalavipākiniprakṛti**

पुद्गल के विषय में होने वाली छत्तीस प्रकृतियों का विपाक।

पुद्गलानुभाव **Pudgalānubhāva**

1. ज्वर, कोढ़ और क्षय आदि रोगों को उत्पन्न और नष्ट करने की शक्ति
2. योनिप्राभृत में उल्लिखित तंत्र, मंत्र संबंधी शक्तियाँ।

पुन्नाग **Punnāga**

मध्य आर्य खंड का एक देश।

पुन्नाट **Punnāta**

कर्नाटक के समीपवर्ती देश।

पुमान् **Pumān**

अपने जैसी पर्यायों (संतानों) को उत्पन्न करने वाला पुरुष।

पुरतः अंतगत अवधिज्ञान **Puratah aṅtagata avadhijñāna**

आगे के देश को देखने वाला अवधिज्ञान।

पुरस्कार **Puraskāra**

विद्यमान समीचीन गुणों की प्रशंसा, वंदना, उठकर खड़े होकर आसनादि देने रूप व्यवहार।

पुराख्यान **Purākhyāna**

भरतादि क्षेत्रों में राजधानी का वर्णन करना।

पुराण **Puraṇa**

त्रेसठ शलाका पुरुषों पर आधारित चरित एवं कथा वर्णन करने वाले शास्त्र।

पुराणस्कंध **Purānaskaṅdha**

त्रेसठ शलाका पुरुषों को आधार बनाकर निर्देश करने वाले त्रेसठ अर्थाधिकारों से युक्त शास्त्र।

पुरु **Puru**

विजयार्ध की उत्तर श्रेणी का एक नगर।

पुरुरवा **Pururavā**

तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव में एक भील का नाम।

पुरुष **Puruṣa**

1. सुख-दुख से पूर्ण।
2. महान गुणों के प्रति सुप्त व्यक्ति की तरह उदासीन।
3. शरीररूपी पुर में प्रमाद युक्त रहने वाला व्यक्ति।

पुरुषकार **Puruṣakāra**

भाग्य के विपरीत पुरुष द्वारा किया गया प्रयत्न।

पुरुषज्ञान **Puruṣajñāna**

पुरुष की विशेषताओं को जानने वाला ज्ञान।

पुरुषप्रभ **Puruṣaprabha**

व्यंतर देवों का एक भेद।

पुरुषलिंग **Puruṣaliṅga**

1. देखें पुमान्।
2. पुरुष का ज्ञान कराने वाला चिह्नविशेष।

पुरुषवेद **Puruṣaveda**

1. देखें- पुमान्।
2. पुरुषवेद के उदय से पुरुष की स्त्री विषयक अभिलाषा।
3. महिलाओं के प्रति आकांक्षा उत्पन्न करने वाला पुद्गल कर्मस्कंध।

पुरुषवेदोत्कृष्टप्रदेशसत्कर्मस्वामी **Puruṣavedotkṛṣṭa pradeśasatkarmaswāmī**

गुणितकर्मांशिक क्षपक स्त्रीवेद को सर्वसंक्रमण के द्वारा पुरुषवेद में संक्रमित करने वाला उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म का स्वामी।

पुरुषार्थ **Puruṣārtha**

1. फल की सिद्धि में दैव की अपेक्षा पुरुष प्रयत्न की अधिकता का होना।
2. आत्मस्वरूप का यथार्थ निश्चय करने का प्रयत्न।

पुरुषार्थसिद्ध्युपाय **Puruṣarthasiddhyupāya**

1. मिथ्या अभिप्राय को नष्ट करके निजात्मा का निश्चय कर उससे विचलित न होना।
2. आचार्य अमृतचंद्रकृत एक ग्रंथ का नाम।

पुरुषोत्तम **Puruṣottama**

सभी प्राणियों के हितों की आकांक्षा करते हुए सर्वोत्कृष्ट गुणों से युक्त होकर उत्तम पद को प्राप्त करने वाला।

पुरोत्तम **Purottama**

विजयार्ध की दक्षिण श्रेणी का एक नगर।

पुरोहित **Purohita**

1. शांतिजनक अनुष्ठान को सम्पन्न कराने वाला।
2. उत्तम कुल शीलवाला, षडंग वेद का ज्ञाता, ज्योतिषशास्त्र, निमित्तशास्त्र और दण्डनीति का ज्ञाता तथा दैविक एवं मनुष्य-निर्मित आपत्तियों का प्रतिकार करने में समर्थ पुरुष।

पुलवि **Pulavi**

निगोद जीवों के शरीर जिसमें स्थित हों वह स्थान विशेष। इन स्थानों का क्रम है- स्कंध, अण्डक, आवास और पुलवि।

पुलाक **Pulāka**

1. उत्तर गुणों की भावनाओं से रहित और धारण किये गये व्रतों में भी कहीं किसी समय दोष लगाने वाला साधु।
2. जिनागम में श्रद्धा रखने वाला तथा अहिंसादि पाँच मूलगुणों और छठे रात्रि भोजन व्रत इनमें से किसी एक व्रत का दूसरे की प्रेरणा से पालन करने वाला साधु।

पुष्कर **Puṣkara**

मध्यलोक का द्वितीय द्वीप।

पुष्करावर्त **Puskarāvarta**

वर्तमान हस्तनगर (अफगानिस्तान में है)।

पुष्कल **Puṣkala**

पूर्व विदेह का एक क्षेत्र।

पुष्पक **Puṣpaka**

आनत-प्राणत स्वर्ग का तृतीय पटल व इंद्रक।

पुष्पचारण **Puṣpacāraṇa**

ऋद्धिविशेष के प्रभाव से साधु का अनेक प्रकार के पुष्पों में स्थित जीवों की विराधना न करते हुए गमन करना।

पुष्पदंत **Puṣpadanta**

1. पुष्पकलिका के समान सुन्दर दाँतों के धारक नौवें तीर्थंकर।
2. षट्खंडागम के आदिभाग के लेखक दिगम्बर जैनाचार्य।
3. अपभ्रंश भाषा में रचित महापुराण के कवि।

पुष्पदंतकुंभ **Puṣpadantakumbha**

1. छोटे मुख वाला घड़ा।
2. आचार्य के अभिषेक के समय मंडल पर लिखे जाने वाले सोलह कुंभों में बारहवाँ कुंभ।

पुष्पोपहित **Puṣpopahita**

पुष्पसमूह के समान व्यंजनों के मध्य में स्थित प्रक्षिप्त धान्यकण।

पूजक **Pūjaka**

प्रतिदिन पूजा करने वाला शांत और सप्त व्यसनों का त्यागी तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा सच्चरित्र शूद्र कुल में उत्पन्न भव्य जीव।

पूजकाचार्य **Pūjakācārya**

1. ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य होकर अनेक लक्षणों से युक्त, कुल व जाति आदि से शूद्र, सम्यग्दृष्टि, देशव्रती, जिनागम का ज्ञाता, आलस्य से रहित, बहुश्रुत, सरल, वक्ता, प्रसन्न चित्त, गंभीर, विनयशील, शौच और आचमन में उत्साहयुक्त, दाता, क्रियाशील, अंगोपांगो सहित, दाता, लक्ष्य, लक्षण का ज्ञाता, विवेकी, स्वदारसंतोषी या ब्रह्मचारी, नीरोगी, सदाचारी, जलस्नान से युक्त, मंत्र का ज्ञाता, व्रती, प्रोषधव्रतधारी, स्वाभिमानी, दैन्य भाव से दूर, मौनी, तीनों संध्याओं में देव वंदना करने वाला, श्रावकाचार परिपालक, दीक्षा-शिक्षागुणयुक्त, सोलह क्रियाओं से पवित्र, ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) आदि संस्कारों से युक्त, न हीनांग वाला, न अधिक अंग वाला, न लम्बा, न बौना, न कुरूप न मूर्ख, न वृद्ध, न अति बालक, न क्रोधादि कषायों वाला, न धनार्थी, न व्यसनी तथा श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं में अंतिम तीन का धारी न हो, न आदि की दो (दर्शन तथा व्रत) प्रतिमाओं का धारी हो तथा समयी (मुनि) न हो ऐसा श्रावक।
2. प्रतिष्ठाचार्य का अपर नाम

पूजन **Pūjana**

1. अष्ट द्रव्यों- चंदन, पुष्प, दीप आदि के द्वारा इष्टदेव का विधिपूर्वक अर्चन।
2. शरीर के अंगों के संयम को द्रव्य संकोच एवं निर्मल मन के संयम को भावसंकोच कहा जाता है। इन दोनों की पूजा पूजन है।

पूजा **Pūjā**

1. हाथ, पैर, शिर आदि के संकोच रूप द्रव्यसंकोच तथा निर्मल मन का नियमन रूप भावसंकोच
2. चरु, बलि, पुष्प, फल, गंध, धूप आदि के द्वारा इन्द्रध्वज, कल्पतरु, महामह और सर्वतोभद्र आदि के माहात्म्य का विधान।
3. देखें, पूजन

पूज्य **Pūjya**

अनन्त चतुष्टय के धारी, निःस्वेदत्व आदि गुणों से युक्त अरहंत भगवान्।

पूति, पूतिक **Pūti, pūtika**

1. सचित्त में अचित्त और अचित्त में सचित्त द्रव्य के मिलाने से होने वाला दोष।

2. अपने गृह निर्माण के लिए लाये गये बहुत से काष्ठ आदि के साथ साधु के लिए लाये गये काष्ठादि को मिलाकर घर का निर्माण करना रूप दोष।

पूरक **Pūraka**

1. प्राणायाम का एक भेद।
2. वायु को बारह अंगुल पर्यंत खींचकर पूर्ण किया जाने वाला प्राणायाम।

पूरिम **Pūrima**

पूरणक्रिया से सिद्ध तालाब के बाँध और जिनालय के अधिष्ठान (नींव) आदि द्रव्य।

पूर्व **Pūrva**

1. काल का प्रमाण विशेष।
2. चौरासी लाख पूर्वांग प्रमाण।
3. सत्तर लाख करोड़ और छप्पन हजार करोड़ वर्ष प्रमाण काल।

पूर्वकृत, पूर्वगत **Pūrvakṛta, Pūrvagata**

1. दृष्टिवाद नामक बारहवें अंग के पांच भेदों में चौथा भेद, जिसमें पंचानवें करोड़ पचास लाख पांच पद होते हैं।
2. उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य आदि की प्ररूपणा करने वाला श्रुत।

पूर्व पश्चात्संस्तवपिंड **Pūrva pascātsaṃstavapiṇḍa**

1. भिक्षा ग्रहण के समय होने वाला एक दोष।
2. साधु के द्वारा भिक्षा ग्रहण करते समय माता-पिता अथवा सास-श्वसुर के संबंध से अपना परिचय देने के बाद भिक्षा ग्रहण करना।

पूर्वरतानुस्मरण **Pūrvaratānusmaraṇa**

पूर्व काल में भोगे हुए भोगों का स्मरण करना।

पूर्वविद् **Pūrvavid**

श्रुतकेवली।

पूर्वविदेह **Pūrvavideha**

मेरु पर्वत के पूर्व की ओर स्थित क्षेत्र विशेष।

पूर्वश्रुतज्ञान **Pūrvaśrutajñāna**

वस्तुसमास श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि का होना।

पूर्वश्रुतप्रत्याख्यान **Pūrvaśrutapratyākhyāna**

प्रत्याख्यान नामक पूर्व का अपर नाम।

पूर्वश्रुतावरणीय **Pūrvaśrutāvaranīya**

पूर्व श्रुत का आवरक कर्म।

पूर्वसंस्तव **Pūrvasaṃstava**

1. साधु के आहार विषयक सोलह उत्पादन दोषों में से एक।
2. तुम दानपति हो एवं तुम्हारी कीर्ति दान के विषय में फैली हुई है, अथवा तुम प्रसिद्ध दाता रहे हो, इस समय तुम उसे कैसे भूल गये हो, इत्यादि प्रकार से स्तुति करना तथा विस्मृत होने पर उसे पुनः संबोधित करना।
3. दान ग्रहण करते समय माता-पिता आदि के रूप से परिचय देने रूप दोष।
4. इसका अपर नाम संबंधसंस्तव भी है।

पूर्वसंस्तुति **Pūrvasaṃstuti**

देखें, पूर्वसंस्तव।

पूर्वसमासश्रुतज्ञान **Pūrvasamāsaśrutjñana**

पूर्व श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि का होना।

पूर्वसमासावरणीयकर्म **Pūrvasamāsāvaranīyakarma**

पूर्वसमासश्रुत को ढकने वाला कर्म विशेष।

पूर्वांग **Pūrvāṅga**

चौरासी लाख वर्ष प्रमाण काल।

पूर्वातिपूर्वश्रुतज्ञान **Pūrvātipūrvaśrutajñāna**

1. श्रुत के इकतालीस पर्यायवाची नामों में से एक।
2. बहुत पूर्व वस्तुओं में अत्यन्त प्राचीन श्रुतज्ञान।

पूर्वानुज्ञा **Pūrvānujñā**

इन्द्रियादि पाँच प्रकार के अवग्रहों में जिस अवग्रह की प्राचीन साधुओं ने अनुज्ञा दी है, उसके उत्तरकालीन साधुओं के द्वारा फिर से अनुज्ञा न लेकर उसी प्रकार से उपभोग करना।

पूर्वानुपूर्वी **Pūrvānupūrvī**

उद्देश के अनुसार क्रम से प्ररूपणा करना

पृच्छना **Pṛcchanā**

1. सूत्र या अर्थ के विषय में पूछना।
2. आगमप्ररूपित अर्थ के अनिश्चत होने पर उसके विषय में प्रश्न करना।
3. स्वाध्यायं तप के पाँच भेदों में से एक।

पृच्छनी भाषा **Pṛcchani bhāṣā**

संदिग्ध पदार्थ विषयक अज्ञान को दूर करने वाले विद्वान के पास जाकर उसी भाषा में प्रश्न करना।

पृच्छाविधि **Pṛcchāvidhi**

1. द्रव्य, गुण, पर्याय, विधि और निषेध विषयक प्रश्नों का क्रम और अक्रम रूप प्रायश्चित्त का विधान करने वाली पद्धति।
2. पूछे गये अर्थ का निरूपण करने वाली पद्धति।

पृच्छाविधिविशेष **Pṛcchāvidhiviśeṣa**

अरिहंत, आचार्य, उपाध्याय और साधु से प्रश्न करने की विधि विशेष का नाम।

पृथक्त्व **Pṛthaktva**

तीन से आगे और नौ से पूर्व की चार, पाँच आदि संख्या।

पृथक्त्व क्रिया **Pṛthaktvavikriyā**

अपने शरीर से भिन्न भवन एवं मंडप आदि रूप विविध आकारों को बनाना।

पृथक्त्ववितर्कवीचारशुक्ल ध्यान **Pṛthaktvavitarkavīcāraśukla dhyāna**

1. शुक्लध्यान का एक भेद।
2. ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती चतुर्दशपूर्व के ज्ञाता संयमी को अनेक द्रव्यों का तीनों योगों के आश्रय से अर्थ, व्यंजन और योगों के परस्पर परिवर्तन रूप वीचार सहित होने वाला उत्कृष्ट ध्यान।

पृथग्विमात्रा **Pṛthagvimātrā**

हास्य से प्रारंभ होकर द्वेष से समाप्त होने वाले उपसर्ग।

पृथिवी **Pṛthivī**

1. अपना-अपना पृथक् अस्तित्व रखने वाले अनेक जीवों से युक्त चैतन्य गुणसंपन्न अथवा अल्प चेतना वाली भूमि।
2. स्वाभाविक परिणाम से निर्मित अचेतन और कठिन भूमि।

पृथिवीकाय **Pṛthivīkāya**

1. पृथिवी को शरीर रूप में ग्रहण करने वाले जीव।
2. पृथिवीकायिक जीव के द्वारा छोड़ा गया शरीर।

पृथिवीकायिक **Pṛthivīkāyika**

पृथिवीकायिक नामकर्म के उदय से पृथिवी को शरीर रूप से ग्रहण करने वाला जीव।

पृथिवीजीव **Pṛthivījīva**

पृथिवीकायनामकर्म के उदय से युक्त होकर कार्मण काय योग में स्थित अर्थात् विग्रह गति में वर्तमान किन्तु शरीर को ग्रहण न करने वाला जीव।

पृथिवीमंडल **Pṛthivīmandala**

1. बीजाक्षर से युक्त होकर पिंघले स्वर्ण के समान कांति वाली, वज्रचिह्न से संयुक्त और आकार में चौकोण पृथिवी।
2. इसका अपर नाम धरापुर भी है

पृथिवीराजिसदृश क्रोध **Pṛthivīrajisadṛśa krodha**

पृथिवीभेद के समान अनुत्कृष्ट (उत्कृष्ट से भिन्न) शक्ति से युक्त तिर्यंच गति में उत्पन्न कराने वाला और पृथ्वी पर खींची गई रेखा के समान क्रोध।

पृथ्वी **Pṛthvī**

1. ब्राह्मणादि वर्णों एवं ब्रह्मचर्य आदि आश्रमों से युक्त होती हुई धान्य (अन्न), हिरण्य (स्वर्ण आदि) पशु और कुप्य (वर्तन) आदि को प्रदान करने वाली भूमि।
2. देखें- पृथिवी

पृथ्वीतत्त्व **Pṛthvītattva**

देखे- पृथिवीमंडल

पृष्ठतः अन्तगत अवधि **Pṛṣṭhataḥ antagata avadhi**

अवधिज्ञान के द्वारा पीछे की ओर ही संख्यात या असंख्यात योजन पर अवस्थित पदार्थों को देखना।

पेटा **Peṭā**

1. आठ गोचर भूमियों में से पाँचवी भूमि।

2. साधु के द्वारा पेटा (पेटी) के समान गोचर क्षेत्र को चौकोण आकार में विभाजित करके मध्यवर्ती घरों को छोड़कर चारों ही दिशाओं में समश्रेणी से अवस्थित घरों में भिक्षा के लिए भ्रमण करना।

पेलविय **Pelaviya**

1. वृत्तिपरिसंख्यान तप के लिए लिया जाने वाला नियम विशेष।
2. वस्त्र और सुवर्णादि के रखने के लिए बाँस से निर्मित ढक्कन सहित पेटी के समान गोचरी के लिए चारों ओर भ्रमण करना।
3. देखें- पेटा

पैशाच विवाह **Paiśācavivāha**

सोई हुई अथवा प्रमाद युक्त कन्या को ग्रहण कर पत्नी बनाना।

पैशुन्य **Paiśunya**

1. पीठ पीछे किसी के दोषों को प्रगट करना।
2. गुप्त रूप से किसी के विद्यमान या अविद्यमान दोषों को प्रकट करना।
3. भ्रूविक्षेप आदि अंगविकारों के द्वारा दूसरों के अभिप्राय को जानकर ईर्ष्या आदि के कारण प्रगट करना।

पोत **Pota**

1. गर्भज जीवों का एक भेद।
2. बिना किसी आवरण के परिपूर्ण शरीरावयवों से युक्त होता हुआ जन्म लेते ही चलने-फिरने आदि क्रिया में समर्थ जीव।

पोतायिक **Potāyika**

उत्पत्ति के लिए गर्भ में आने वाला जीव।

पोतकर्म **Potakarma**

वस्त्र के ऊपर घोड़ा व हाथी, नर, नारी और सिंह आदि चित्रित करना।

पोषधव्रत **Poṣadhavrata**

पर्व विशेष में किया जाने वाला व्रत।

पोषधोपवास **Poṣadhopavāsa**

अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व के दिनों में किया जाने वाला उपवास।

पौनरुक्त्य **Paunaruktya**

1. अनुवाद को छोड़कर पहले कहे हुए शब्द या अर्थ के पुनः कथन करने रूप दोष।

2. अभिप्राय से ही प्रतीत होने वाले तत्त्व को अपने शब्दों के द्वारा पुनः कहना।

पौरुष **Pauruṣa**

पुरुष की चेष्टा अथवा प्रयत्न

पौर्णमासी **Paurṇamāsi**

1. जिस तिथि में चंद्रमा पूर्णता को प्राप्त होता है।
2. जिस तिथि में मास पूर्ण होता है।

पौषधप्रतिमा **Pauṣadhapratimā**

1. श्रावक की बारह प्रतिमाओं में चतुर्थ प्रतिमा।
2. अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या इन पर्व तिथियों में चार प्रकार के आहार का त्याग करना और शरीर संस्कार अब्रह्मचर्य तथा अन्य खोटे-व्यापारों को छोड़ना।

पौष्णकाल **Pauṣṇakāla**

जन्म नक्षत्र में चंद्रमा के प्राप्त होने पर तथा सूर्य के सम सातवें में प्राप्त होने वाला मृत्यु का निश्चायक काल।

प्रकरणसम जाति **Prakaraṇa sama jāti**

पक्ष एवं विपक्ष में समान प्रक्रिया।

प्रकीर्णक **Parkīrṇaka**

1. पुरवासी और जनपदवासी मनुष्यों के समान देवों का एक भेद।
2. विविध प्रकार की सूक्ति रूप रचना।
3. अर्धमागधी जैन श्वेतांबर आगम-ग्रंथों का एक प्रकार का संकलन।

प्रकृति **Prakṛti**

1. स्वभाव, भेद, शील।
2. अज्ञानादि रूप फल को उत्पन्न करनेवाला कर्म।
3. ज्ञानावरणादि कर्म प्रकृति रूप में प्रयुक्त शब्द।

प्रकृतिबंध **Prakṛtibandha**

1. कर्मबंध का एक भेद।
2. ज्ञानावरणादि कर्मों का ज्ञानादि आवरण रूप स्वभाव।

प्रकृतिमरण **Parkṛtimaraṇa**

आयुकर्म की समाप्ति पर देह का स्वाभाविक रूप से गलना।

प्रकृतिमोक्ष **Parkṛtimokṣa**

प्रकृति का निर्जीर्ण होना अथवा अन्य प्रकृति रूप परिणत होना।

प्रकृतिसंक्रम **Prakṛtisaṅkarama**

एक प्रकृति का अन्य प्रकृति रूप होना। जैसे सातावेदनीय कर्म का असातावेदनीय कर्म रूप या असातावेदनीय कर्म का सातावेदनीयकर्म रूप होना।

प्रकृतिस्थान **Parkṛtisthāna**

दो या तीन आदि प्रकृतियों का समुदाय।

प्रकृतिस्थानपतद्ग्रह **Parkṛtisthānapatadgraha**

अनेक प्रकृतियों में किसी एक प्रकृति का संक्रमण।

प्रकृतिस्थानसंक्रम **Parkṛtisthānasaṅkrama**

एक प्रकृति में अनेक प्रकृतियों का संक्रमण।

प्रकृत्यंतरनयनसंक्रम **Parkṛtyantaranayanasaṅkrama**

विवक्षित प्रकृति के रस को उस प्रकृति से खींचकर दूसरी प्रकृति में ले जाकर स्थापित करना।

प्रक्षेपक **Parkṣepaka**

पर्यायसमासज्ञान के प्रक्षेपक प्रथम भेद में पर्यायिज्ञ से बंधे, पृथक् किये पर्याय ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद मूल-जघन्य ज्ञान। इस जघन्य में जीवराशि मात्र अनंत का भाग देने पर जो प्रमाण आए।

प्रक्षेपक-प्रक्षेपक **Prakṣepaka prakṣepaka**

प्रक्षेपक में जीवराशि मात्र अनन्त का भाग देने पर जो प्रमाण आए।

प्रक्षेपाहार **Prakṣepāhāra**

मुख के द्वारा ऊपर से ग्रहण किया गया कवल या ग्रास रूप आहार।

प्रचला **Pracalā**

दर्शनावरणीय कर्म के नौ भेदों में से एक भेद। इस कर्म के तीव्र उदय में जीव को बैठे-बैठे अथवा खड़े-खड़े शोक या थकावट के कारण आनेवाली निद्रा विशेष।

प्रचला-प्रचला **Pracalā pracalā**

दर्शनावरणीय कर्म के नौ भेदों में से एक भेद। इस कर्म के तीव्र उदय में जीव को बैठे-बैठे अथवा खड़े-खड़े शोक व थकावट के कारण आनेवाली प्रगाढ़ निद्रा विशेष। इसमें जीव के मुख से लालारस (लार) गिरती है और बार-बार जगाने पर भी वह जागता नहीं है।

प्रच्छना **Pracchanā**

संदेह निवृत्ति के लिए और निश्चित अर्थ को दृढ़ करने के लिए किसी ज्ञानी से प्रश्न करना।

प्रच्छन्नदोष **Pracchannadoṣa**

आलोचना का एक भेद। अपने गुप्त दोष की शुद्धि के लिए ब्याजान्तर से साधु के द्वारा प्रश्न पूछ कर प्रायश्चित्त करना।

प्रज्ञा **Prajñā**

1. ज्ञानावरण कर्म के विशिष्ट क्षयोपशम से प्रकर्ष को प्राप्त ज्ञान।
2. परीषह का एक भेद। ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाले ज्ञान विशेष की लोगों द्वारा प्रशंसा करने पर भी उसे सहन करना।

प्रज्ञापक **Prajñāpaka**

चारित्र का प्रवर्तक।

प्रज्ञापना **Prajñāpanā**

1. अर्धमागधी उपांग साहित्य का एक भेद।
2. जीवादि पदार्थों का ज्ञान कराने वाला ग्रंथ।

प्रज्ञापनी-भाषा **Prajñāpanī bhāṣā**

1. बहुत लोगों को लक्ष्य करके की जानेवाली धमर्तत्त्व की चर्चा अथवा 'जो मैंने पूछा हैं उस विषय में आदेश देने के लिए गुरु से निवेदित की जाने वाली भाषा।
2. विनम्र शिष्य के लिए गुरु के द्वारा दिए गए उपदेश की भाषा।

प्रज्ञापरीषह **Prajñāparīsaha**

परीषह का एक भेद। ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाले ज्ञान (प्रज्ञा) विशेष की लोगों द्वारा प्रशंसा करने पर उसे सहन करना।

प्रज्ञापरीषहजय **Prajñāparīṣahajaya**

1. ज्ञान विषयक अभिमान को उत्पन्न न होने देना।
2. अभीप्सि ज्ञान की अप्राप्ति पर खिन्न नहीं होना।

प्रज्ञाभावच्छेदना **Prajñābhārvacchedanā**

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय एवं केवल इन पांच ज्ञानों के माध्यम से छह द्रव्यों को जानना।

प्रज्ञावशार्तमरण **Prajñāvaśārtamaraṇa**

मेरी बुद्धि तीक्ष्ण है और सर्वत्र उसकी गति है, इस प्रकार प्रज्ञामद को प्राप्त पुरुष का मरण।

प्रज्ञाश्रवण **Prajñāśravaṇa**

अदृष्ट एवं अश्रुतपूर्ण पदार्थ का ज्ञान कराने वाली आंतरिक बुद्धि रूप कर्णेंद्रिय वाला व्यक्ति।

प्रणिधान **Praṇidhāna**

चित्र की विशिष्ट एकाग्रतारूप योग।

प्रणिधि **Praṇidhi**

1. व्रतों को पालन न करने में आसक्ति होना।
2. माया कषाय का अपर नाम।

प्रणिधिमाया **Praṇidhi-māyā**

1. बहुमूल्य वस्तु में तत्सदृश अल्पमूल्य वाली वस्तु को मिलाना, तौल-माप के उपकरणों में हीनाधिक रखना और संयोग के द्वारा वस्तु को नष्ट करना।
2. माया के पाँच भेदों में एक।

प्रणिपातमुद्रा **Praṇipātamudrā**

घुटने, हाथ और उत्तमांग अर्थात् मस्तक को झुकाना।

प्रतनुकर्मा **Pratanukarmā**

प्रकृति, स्थिति, प्रदेश और अनुभाग कर्मों की हीनता को प्राप्त।

प्रतर **Pratara**

मेघ पटलादिकों का विघटन।

प्रतरगतकेवलिक्षेत्र **Prataragatakevalikṣetra**

समुद्घात विषयक केवली का क्षेत्र।

प्रतरभेद **Pratara-bheda**

बाँस, बेंत, नड (विशेष प्रकार की घास), कदलीस्तम्भ और मेघपटल का भेद।

प्रतरलोक **Prataraloka**

जगश्रेणी का दूसरी जगश्रेणी से गुणित करना।

प्रतरसमुद्घात **Pratarasamudghāta**

वातवलयों के द्वारा रोके गए क्षेत्र को छोड़कर शेष सर्व लोक को व्याप्त करने वाले केवली के आत्मप्रदेश।

प्रतरांगुल **Pratarāṅgula**

सूच्यंगुल को दूसरे सूच्यंगुल से गुणित करना।

प्रतिक्रमण **Pratikramaṇa**

1. पूर्वकृत कर्मों के शुभाशुभ भावों से अपने आत्मा को अलग करना।
2. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के आश्रय से पूर्व में किए गए अपराधों की निंदा और गर्हा (ग्लानि) करके मन-वचन-काय से आत्मशुद्धि करना।
3. छह आवश्यकों में चतुर्थ आवश्यक।
4. प्रमादवश हुए दुष्कृत्यों को पुनः न करने की भावना।
5. प्रायश्चित्त के नौ भेदों में दूसरा।
6. अतिचारों से निवृत्त होना।

प्रतिग्रह **Pratigraha**

आहार के लिए निकले साधु को अपने घर के द्वार पर आता हुआ देखकर प्रसन्न होइए। इस प्रकार प्रार्थना करते हुए नमोऽस्तु (नमस्कार हो) ठहरिए, ऐसा तीन बार कहते हुए पात्र को ग्रहण करना अथवा साधु के भोजन कराने के लिए आह्वान करना।

प्रतिघात **Pratighāta**

एक मूर्तिमान द्रव्य का अन्य मूर्तिमान द्रव्य के साथ रुकावट होना।

प्रतिज्ञा **Pratijṇā**

धर्म और धर्मी का समुदाय।

प्रतिज्ञार्थ **Pratijṇārtha**

साध्य धर्म और धर्मी का समुदाय।

प्रतिज्ञाविरोध **Pratijṇāvirodha**

हेतु से प्रतिज्ञा का विरोध प्रतीत होना।

प्रतिज्ञाहानि **Pratijṇāhāni**

हेतु के द्वारा प्रतिज्ञा के स्वरूप का निराकृत हो जाना।

प्रतिनीतदोष **Pratinītadoṣa**

देव, गुरु आदि की आज्ञा के प्रतिकूल होकर वंदना करना।

प्रतिपक्षपद **Pratipakṣapada**

विपक्षवाची पदों से सिद्ध होनेवाला पद। जैसे अशिवा (शृगाली) को शिवा, अग्नि को शीतल, विष को मधुर, रक्त को अलक्तक, लाबु को अलाबु आदि कहना।

प्रतिपत्ति **Pratipatti**

1. कान लगाकर सावधानी से उपदेश को ग्रहण करना।
2. हितरूप शिक्षा देना और यथा-समय अन्नपानादि प्रदान करना।
3. किसी पदार्थ की मामांसा के पश्चात् यह ऐसा ही है, इस प्रकार का निश्चयात्मक बोध।

प्रतिपत्तिश्रुतज्ञान **Pratipattiśrutajñāna**

1. एक गति, इन्द्रिय, काय और योग आदि की प्ररूपणा करने वाले पद।
2. संघात समास श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि के होने पर प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान होता है।

प्रतिपत्तिसमासश्रुतज्ञान **Pratipattisamāsaśrutajñāna**

1. प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि।
2. दो द्वार आदि मार्गणा विषयक ज्ञान।

प्रतिपत्तिसमासावरणीयकर्म **Pratipatti samāsāvaraṇīya karma**

प्रतिपत्ति समास श्रुतज्ञान को आच्छादित करनेवाला कर्म।

प्रतिपत्त्यावरणीयकर्म **Pratipattyāvaraṇīya karma**

प्रतिपात श्रुतज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

प्रतिपात **Pratipāta**

चारित्रमोह के उदय से उपशांत कषाय वाले संयमी का संयम से पतित होना।

15—416 Min. of HRD/2014

प्रतिपातसांपराय **Pratipāta sāmparāya**

सूक्ष्मसाम्परायिक संयमी जीव का उपशमश्रेणी से गिरना।

प्रतिपातस्थान **Pratipāta sthāna**

संयमी जीव जिस स्थान में मिथ्यात्व, असंयम-सम्यक्त्व अथवा संयमासंयम को प्राप्त होता है वह स्थान।

प्रतिपाति **Pratipāti**

जिस ज्ञान या ध्यान का स्वभाव अधःपतन रूप हो वह।

प्रतिपाति अवधिज्ञान **Pratipati avadhijñāna**

1. जघन्य से अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कर्ष से लोक को जानकर पतन को प्राप्त होने वाला अवधिज्ञान।
2. कुछ काल स्थिर रहकर विनाश को प्राप्त होने वाला अवधिज्ञान।

प्रतिपृच्छा **Pratipṛcchā**

करणीय विषय में गुरु आदि से पूछने के बाद साधुओं से पूछना।

प्रतिपृच्छ्यैकसंग्रह **Pratipṛacchyaika saṅgraha**

1. संघ की अनुमतिपूर्वक क्षपक को स्वीकार करना।
2. भक्त त्यागमरण को अंगीकार करने वाला क्षपक।

प्रतिबद्धशय्या **Pratibaddhaśayyā**

1. जिस उपाश्रय के पास में गृहस्थ का घर हो।
2. निर्ग्रंथ के लिए निषिद्ध आवास।

प्रतिबुद्ध **Pratibuddha**

मिथ्यात्व और अज्ञानरूप निद्रा के समाप्त होने पर सम्यक्त्व की विकसित अवस्था।

प्रतिबुद्धजीवी **Pratibuddhajīvī**

स्वहित विचार की प्रवृत्ति में संलग्न जितेन्द्रिय महापुरुष।

प्रतिबोधनता **Pratibodhanatā**

सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत और शील-इन गुणों को निर्मल करना।

प्रतिबोधी **Pratibodhī**

जो कुछ भी कथन किया जाए, उसे पूर्ण रूप से ग्रहण करना।

प्रतिभा **Pratibhā**

1. नवीन नवीन जानकारी से शोभित बुद्धि।
2. बिना कारण के अकस्मात् होने वाला विशेष ज्ञान।

प्रतिमा **Pratimā**

ग्रहण किए गए नियम को जीवन पर्यंत स्थिर करने की प्रतिज्ञा।

प्रतिमोद्वहनमुनि **Pratimodvahanamuni**

सर्व विद्याओं का ज्ञाता, धैर्यवान्, वज्रसंहननधारी, जिनमत विषयक सम्यग्ज्ञानी, स्थिर आशय वाला, गुरु की आज्ञानुसार चलने वाला, आगमोक्त तत्त्वों का ज्ञाता, निस्पृही तथा परीषहों को सहन करने वाला मुनि।

प्रतिरूपकव्यवहार **Pratirupaka vyavahāra**

1. अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. बनावटी सोना-चाँदी आदि के द्वारा धोखाधड़ी का व्यवहार करना।

प्रतिलेख **Pratilekhā**

आराधना की निर्विघ्न सिद्धि के निमित्त उस राज्य, देश, प्रांत, नगर आदि तथा उसके प्रमुख शुभाशुभ का विचार करना।

प्रतिलेखक **Pratilekhaka**

आगम के अनुसार आराधना की सिद्धि के लिए योग्य स्थान का निरीक्षण करने वाला साधु।

प्रतिलेखना **Pratilekhanā**

1. अक्षरों के अनुसार पुनः निरीक्षण करना और अनुष्ठान करना।
2. चारित्रपालन (संयमपालन) हेतु चोलपट्ट (कटि वस्त्र) आदि उपकरणों का शोधन करना।
3. उठते, बैठते अथवा शयन आदि करते समय जीवहिंसा न हो इसलिए मयूर पिच्छिका के द्वारा स्थान आदि का परिमार्जन।

प्रतिलोम **Pratiloma**

जो इन्द्रिय-विषय इष्ट न हो।

प्रतिलोम क्रम **Pratiloma krama**

विशेष की मुख्यता एवं सामान्य की गौणता लिए हुए अस्ति-नास्ति रूप वस्तु का प्रतिपादन।

प्रतिश्रवण **Pratiśravaṇa**

आधारकर्म आहार ग्रहण के प्रसंग में शिष्य के कथन का गुरु द्वारा अनुमोदन करना।

प्रतिश्रवणानुमति **Pratiśravaṇānumati**

पुत्रादि के द्वारा किए गए पाप को सुनकर उसका अनुमोदन करना, प्रतिषेध नहीं करना।

प्रतिश्रोतःपदानुसारिबुद्धि **Pratiśrotaḥpadānusāribuddhi**

ग्रंथ के अर्थ और विचार के संबंध में कुशल साधुओं की मति होना।

प्रतिषेध **Pratiṣedha**

सद् असदात्मक वस्तु में असद् अंश।

प्रतिषेध प्रत्याख्यान **Pratiṣedha pratyākhyāna**

देने की इच्छा होने पर भी विवक्षित द्रव्य के अभाव से अथवा विशिष्ट पात्र के अभाव से पदार्थ देने का त्याग।

प्रतिषे(से)वक **Pratiṣe(se)vaka**

1. निषिद्ध वस्तु का सेवन करने वाला।
2. अकल्प का सेवन करने वाला।
3. शीघ्र उत्तरगुणों का सेवक।
4. ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का आश्रय लेने वाला ।

प्रतिषेवना **Pratiṣevanā**

अकल्प्य समाचरण।

प्रतिषेवनादोष **Pratiṣevanādoṣa**

दूसरे के द्वारा लाकर दिए गए अधःकर्म संयुक्त आहार को जो खाता है तथा इसके लिए दूसरे के द्वारा निन्दा किए जाने पर, यह कहना कि मैं निर्दोष हूँ, दोष तो देने वाले का है।

प्रतिष्ठा **Pratiṣṭhā**

1. किसी संस्कार के आश्रय से पदार्थ का स्मरण बना रहना।
2. श्रुत के द्वारा समीचीन रूप से जाने गए स्थापना के विषयभूत वृषभादि तीर्थंकर की विधिपूर्वक साकार अथवा निराकार पाषाण आदि में स्थापना करना।

3. स्थापना न्यास।

प्रतिष्ठाचार्य **Pratiṣṭhācārya**

1. देश, जाति, कुल और आचार से श्रेष्ठ, उत्तम लक्षणों से संयुक्त, त्यागी वक्ता, शुद्ध सम्यग्दर्शन से युक्त उत्तम व्रतों का पालनकर्ता, युवा, श्रावकाचार ज्योतिषशास्त्र, वास्तुशास्त्र, पुराण का वेत्ता, निश्चय और व्यवहार का ज्ञाता, प्रतिष्ठा-विधि को जानने वाला, विनयशील, सुंदर, मंदकषायी, जितेन्द्रिय, जिनपूजा आदि में निष्ठावान् सम्पूर्ण अंगों वाला इत्यादि गुणों से विभूषित ब्रह्मचारी अथवा गृहस्थ श्रावक।
2. स्याद्वादधुर्य, अक्षरदोषवेत्ता, निरालस, रोग-विहीन देह, दया-दानशील, जितेन्द्रिय, देव-गुरु-प्रमाण, शास्त्रार्थसम्पत्तिविदीर्णवाद, धर्मोपदेशप्रणव, क्षमावान, राजादिमान्य, नय-योगभाषी, तपोव्रतानुष्ठितपूतदेह पूर्व निमित्तादि अनुमापक, अर्थसंदेहहारी, यजनैकचित्त, सद्ब्राह्मण, ब्रह्मविदों में प्रतिष्ठ, जिनैकधर्म, गुरुदत्तमन्त्र,रात्रि भोजन न करने वाला, विहितोद्यम, गतस्पृह तथा कुलक्रम से प्राप्त विद्या के द्वारा प्राप्तोपसर्ग का परिहार करने में समर्थ, प्रतिष्ठाविधियों का प्रयोक्ता।

प्रतिष्ठापक **Pratiṣṭhāpaka**

अपनी संपत्ति को खर्च कर अतिशय उत्साहपूर्वक प्रतिष्ठा कराने वाला।

प्रतिष्ठापन शुद्धि **Pratiṣṭhāpana śuddhi**

रोम, नाक का मल, थूक, वीर्य और मल-मूत्र के त्याग में तथा शरीर के परित्याग में देश-काल को जानते हुए, जीवों को पीड़ा न पहुँचाने का प्रयत्न करना।

प्रतिष्ठापन समिति **Pratiṣṭhāpana samiti**

1. गूढ़ तथा परोपरोध से रहित प्रासुक भूमि प्रदेश में उच्चार (मल-मूत्र) आदि का त्याग।
2. मल-मूत्र, कफ, नाक का मल और पसीने से संलग्न धूलि रूप मल आदि विषयक प्राणि-पीड़ा परिहार पूर्वक प्रवृत्ति (अपरनाम-उच्चारप्रस्रवण खेलसिंघाणजल्ल-परिस्थापनिका)।

प्रतिष्ठापनसमिति अतिचार **Pratiṣṭhāpana samiti aticāra**

शरीर व भूमि को शुद्ध नहीं करना, मल त्याग के स्थान का निरीक्षण नहीं करना।

प्रतिसारी **Pratisārī**

गुरु के उपदेश से ग्रंथ के आदि, मध्य या अंत के किसी एक बीजपद को ग्रहण करके उससे अधस्तनवर्ती शेष ग्रंथ को जान लेने वाली बुद्धि।

प्रतिसूर्यगमन **Pratisūryagamana**

1. प्रखर सूर्य ताप के समय पश्चिम दिशा से पूर्व दिशा की ओर जाना(अपरनाम-प्रतिसूरी गमन)।
2. इंद्रिय और अनिंद्रिय से निरपेक्ष, व्यभिचार रहित साकार ज्ञान ग्रहण।
3. स्पष्ट साकार और सरल ज्ञान, जो कि द्रव्य परिचयात्मक और सामान्य विशेषात्मक अर्थ का वेदन करता है।
4. स्व और पर का संवेदन कराने वाला स्पष्ट ज्ञान।

प्रत्यक्षोपचार विनय **Pratyakṣopcāra vinaya**

आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्तक और गणधर आदि गुरुजनों के सम्मुख आने पर उठ खड़े होना, उनके सम्मुख जाना, हाथ जोड़ना, वंदना करना, उनके जाने पर बाद में जाना, रत्नत्रय के प्रति बहुत आदर रखना, सब काल के योग्य अनुकूल क्रियाओं को यथाक्रम से करना; मन, वचन व काय को वश में रखना, उत्तम शील से युक्त होना, धर्मानुकूल कथा को कहना, उसके सुनने में भक्ति रखना, अरहंत, धर्मायतन और गुरु में भक्ति रखना, दोषों को छोड़ना, तथा जो गुणों में वृद्ध हैं उनकी सेवा करना, उनके साथ संभाषण करना, उनका अनुसरण और पूजा करना; यह सब प्रत्यक्षोपचार विनय है।

प्रत्यनीक **Pratyanīka**

1. आहार-नीहार आदि के समय गुरुजनों की वंदना करने में होने वाला दोष।
2. कृतिकर्म के बत्तीस दोषों में से सत्तरहवाँ दोष।

प्रत्यभिज्ञान **Pratyabhijñanā**

1 दर्शन और स्मरण के निमित्त से होने वाला संकल्पनात्मक ज्ञान। जैसे वह यही है, यह उसके समान है, यह उससे भिन्न है अथवा यह उसका प्रतियोगी है, इत्यादि आकार वाला ज्ञान।

2. अनुभव और स्मरण के निमित्त से तिर्यक् आदि का विषय करने वाला संकलपनात्मक ज्ञान।

प्रत्यभिज्ञानाभास **Pratyabhijñānābhāsa**

सदृश वस्तु में, यह वही है इस प्रकार का ज्ञान तथा उसी पदार्थ में यह उसके सदृश है, इस प्रकार का ज्ञान।

प्रत्ययकषाय **Pratyayakaṣāya**

1. क्रोधवेदनीय कर्म के उदय से जीव का क्रोधरूप परिणत होना।
2. कर्म रूप कषायों के बंध का कारण अभिप्रायविशेष।

प्रत्याख्यात सेवा **Pratyākhyātaseva**

देव या गुरु के समक्ष त्यागी हुई वस्तु खा लेना।

प्रत्याख्यान **Pratyākhyāna**

1. ज्ञान के द्वारा सब भावों को जानकर आत्म स्वरूप से भिन्न समझकर पर भाव का (परित्याग) करना है, अत; ज्ञान नियम से प्रत्याख्यान है।
2. शुभ-अशुभ कर्मों के बंधक मिथ्यात्व आदि भावों से निवृत्त होने वाला आत्मा ही निश्चय से प्रत्याख्यान कहलाता है।
3. नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के भेद से छह प्रकार के अयोग्य (पाप के कारणों का) वर्तमान और भविष्य की अपेक्षा मन, वचन और काय से परित्याग करना।
4. संयम अथवा महाव्रतों का धारण करना।
5. तीन प्रकार के आहार का त्याग करना।
6. अनागत और वर्तमान काल में द्रव्यादि दोष का परिहरण।

प्रत्याख्यान कषाय **Pratyākhyānakaṣāya**

सकल संयम का विघात करने वाली कलुषित भावनाएँ।

प्रत्याख्यान कुशल **Pratyākhyānakuśala**

श्रावकधर्म के अंतर्गत 147 प्रत्याख्यान भेदों का धारक।

प्रत्याख्यान पूर्व **Pratyākhyānapūrva**

व्रत, नियम, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन, तप, कल्प, उपसर्ग, आचार, प्रतिमाविराधन, प्रतिमा आराधन और अविशुद्धि के उपक्रम का; साध्वाचार के कारण का तथा परिमित एवं अपरिमित द्रव्य-भावरूप प्रत्याख्यान का निरूपण करने वाला एक पूर्व ग्रंथ जिसमें चौरासी लाख पद होते हैं।

प्रत्याख्यान प्रवाद **Pratyākhyāna pravāda**

चौरासी लाख पद प्रमाण प्रत्याख्यान के स्वरूप का वर्णन करने वाला नवम पूर्वगत श्रुत।

प्रत्याख्यानावरण **Pratyākhyānavaraṇa**

1. प्रत्याख्यान सर्वविरति लक्षण वाला है, उसके आवरण प्रत्याख्यानावरण हैं।
2. प्रत्याख्यान, संयम और महाव्रतादि एकार्थक हैं। प्रत्याख्यान का जो आवरण करें, वे क्रोध, मान, माया, लोभ प्रत्याख्यानावरणीय हैं। ये मूलगुण प्रत्याख्यान का विघात करते हैं।
3. सर्व सावद्यविरति प्रत्याख्यान है, उसका आवरण करने वाला कर्म प्रत्याख्यानावरण है।

प्रथमसमय सयोगिभवस्थ केवलज्ञान **Prathamasamaya sayogibhavastha kevalajñāna**

जिस समय में केवलज्ञान उत्पन्न हुआ हो उस समय में उस प्रथम समय में होने वाला ज्ञान।

प्रत्याख्यानी भाषा **Pratyākhyānībhāṣā**

1. किसी ने गुरु को अनुज्ञापित न करके यह कहा कि इतने काल के लिए इस दूध आदि का परित्याग किया है, इस प्रकार के वचन का नाम प्रत्याख्यानी भाषा है।
2. मैं कुछ का त्याग करता हूँ, इस प्रकार के त्याग को प्रत्याख्यानी भाषा कहते हैं।

प्रत्यागाल **Pratyāgāla**

प्रथम स्थिति के प्रदेशों के उत्कर्षणवश द्वितीय स्थिति में ले जाना।

प्रत्यामुंडा **Pratyāmuṇḍā**

मीमांसित पदार्थ का बुद्धि के द्वारा संकोच किया जाना। यह अवाय का नामांतर है।

प्रत्यावलिका **Pratyāvalikā**

आवली से उपरिम द्वितीय आवली।

प्रत्याहार **Pratyāhāra**

1. ध्याता द्वारा इन्द्रिय एवं मन को विषयों से हटाकर अन्यत्र लगाया जाना।

2. तालु आदि स्थान से वायु को खींचकर हृदय आदि अन्य स्थान में उत्कर्षण किया जाना।

प्रत्येककाय **Pratyekakāya**

एक ही शरीर वाला जीव।

प्रत्येकजीव **Pratyekajīva**

1. पत्ता, फूल, जड़, फल और स्कंद आदि के आश्रित एक एक जीव।
2. नारक, देव, मनुष्य, दो इंद्रिय आदि विकलेंद्रिय, पृथिवी आदि तथा कैथ आदि वृक्ष, ये प्रत्येक जीव माने जाते हैं।

प्रत्येकनाम **Pratyekanāma**

1. जिस नामकर्म के उदय से एक जीव एक ही शरीर की रचना करता है।
2. जिसके उदय से एक एक जीव के एक एक औदारिक आदि शरीर होता है।

प्रत्येकबुद्ध **Pratyekabuddha**

1. परोपदेश के बिना अपनी शक्ति विशेष से ही जो साधक ज्ञान और संयम में निपुणता प्राप्त करते हैं, वे प्रत्येकबुद्ध होते हैं। बाह्य कारण को देखकर उन्हें प्रबोध प्राप्त होता है। जैसे-करकंडु प्रत्येकबुद्ध हैं, उन्हे बैल आदि को देखकर प्रबोध प्राप्त हुआ था।
2. श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से परोपदेश के बिना ज्ञानातिशय को प्राप्त करने वाले साधक।

प्रत्येकबुद्ध सिद्ध **Pratyekabuddha siddha**

प्रत्येक बुद्ध होते हुये जो सिद्धि को प्राप्त हुये हैं।

प्रत्येकबुद्धसिद्ध केवलज्ञान **Patyekabuddha siddhaha kevalajñānā**

प्रत्येक बुद्ध होकर सिद्ध होने वाले जीवों के केवलज्ञान।

प्रत्येकबुद्धि ऋद्धि **Pratyekabuddhi ṛddhi**

1. जिस ऋद्धि के प्रभाव से जीव गुरु के उपदेश के बिना कर्मो के उपशम से ज्ञान और तप में अतिशय को प्राप्त करता है।
2. परोपदेश के बिना अपनी शक्ति विशेष से ज्ञान और संयम में निपुणता प्राप्त होना।

प्रत्येक शरीर **Pratyeka śarīra**

जिन जीवों का पृथक् शरीर होता है, वे प्रत्येक शरीर कहलाते हैं। जैसे-खैर

आदि वनस्पति। जिस एक जीव ने एक ही शरीर में स्थित रहकर सुख-दु:ख रूप अनुभवन को उपार्जित किया, वह जीव।

प्रत्येक शरीर द्रव्य-वर्गणा **Pratyekaśarīradravyavargaṇā**

1. एक जीव के एक शरीर में कर्म व नोकर्म रूप स्कंधों का उपचय होना।
2. प्रत्येक शरीर वाले प्राणियों के यथासंभव औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण शरीरनामकर्मो में से प्रत्येक में जो स्वभावत: सब जीवों से अनंतगुणे पुद्गल उपचय को प्राप्त होते हैं, उनका नाम प्रत्येक शरीर द्रव्यवर्गणा है।

प्रत्येक शरीर नाम **Pratyekaśarīranāma**

1. शरीर नामकर्म के उदय से रचा जाने वाला जो कि एक ही आत्मा के उपभोग का कारण होता है वह प्रत्येक शरीर नामकर्म है।
2. पृथक् शरीर निर्वर्तक नाम कर्म।

प्रत्येकांग (शरीर) **Pratyekaṅga (śarīra)**

जिस एक जीव का एक शरीर होता है, उसे प्रत्येकांग या प्रत्येक काय कहा जाता है।

प्रत्येषण **Pratyeṣaṇa**

परिचर्या करने वाले साधुओं के द्वारा अनुज्ञात किसी एक आराधक को ग्रहण करना।

प्रथम प्रतिमा **Prathama pratimā**

शंकादि दोषों से रहित, प्रथम संवेगादि चिह्नों से सहित और स्थैर्य आदि गुणों से विभूषित सम्यक्त्व को भय, लोभ और लज्जा आदि के वश में होकर भी मलिन न करते हुए, उसका एक मास तक परिपालन करना। यह श्रावक की प्रथम दर्शन प्रतिमा है, जिसमें प्रतिदिन जिन-दर्शन करने का विधान है।

प्रथम मूलगुण **Prathama mūlaguṇa**

मुनियों के द्वारा सूक्ष्म व बादर आदि सभी जीवों के प्राण-विघात से कृत-कारित-अनुमोदना पूर्वक निवृत्त होना मुनियों का प्रथम मूल गुण अहिंसा महाव्रत है।

प्रथम सम्यक्त्व **Prathama samyaktva**

1. अनादि मिथ्यादृष्टि जीव जब सब कर्मो की अंत: कोडाकोडि प्रमाण स्थिति को बाँधता है तथा उन्ही कर्मो की जब संख्यात हजार सागरोपमों से हीन अंत: कोडाकोडी प्रमाण स्थिति को स्थापित करता है, तब वह प्रथम सम्यक्त्व प्राप्त

करने के योग्य होता है। विशेष यह कि वह पंचेन्द्रिय, संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, पर्याप्तक और सर्वविशुद्ध होना चाहिये।

2. भव्य, पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याप्तक एवं सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीव द्वारा प्राप्त प्रथम सम्यक्त्व।

प्रथमानुयोग **Prathamānuyoga**

1. चरित्र और पुराणरूप श्रुत का नाम प्रथमानुयोग है। एक किसी विशिष्ट पुरुष के आश्रित कथा का नाम चरित और तिरसठ शलाकापुरुषों के आश्रित कथा का नाम पुराण है।
2. 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलदेव, 9 वासुदेव और 9 प्रतिवासुदेव, इनके चरित का निरूपण करने वाला पुराण प्रथमानुयोग का ग्रंथ है।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व **Prathamopaśama samyaktva**

कर्म रूप ग्रंथि को भेदने पर सर्वप्रथम जो सम्यक्त्व प्राप्त होता है, वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहलाता है, जो अंतर्मुहूर्त काल तक रहता है।

प्रदक्षिणक्रिया कर्म **Pradakṣiṇakriyākarma**

वंदना के समय गुरु, जिनदेव और जिनालय की प्रदाक्षिणा करके नमस्कार करना। यह छह प्रकार के कृतिकर्म में प्रदक्षिणा नाम का दूसरा कृतिकर्म है।

प्रदुष्टदोष **Praduṣṭadoṣa**

दूसरों के साथ प्रकृष्ट द्वेष, वैर एवं कलह आदि करके उससे क्षमा कराने के बिना वंदनादि रूप कृतिकर्म के करने पर होने वाला वंदना दोष।

प्रदेश **Pradeśa**

1. स्कंध देश या क्षेत्र का आधे से आधा भाग।
2. जितने क्षेत्र में एक परमाणु रहता है, उसका नाम प्रदेश है।
3. असंख्यात अथवा अनन्तवें भाग को प्रदेश कहते हैं।
4. जीव के कर्माणु।
5. पुद्गलास्तिकाय का सबसे सूक्ष्म निरंश भाग।

प्रदेशतः इतरेतर संयोग **Pradeśataḥ itaretara samyoga**

धर्मास्थितिकाय आदि पाँच अस्तिकायों का अपने-अपने प्रदेशों से तथा अन्य द्रव्यों के प्रदेशों के साथ संयोग होना।

प्रदेशदीर्घ **Pradeśadīrgha**

जीव के द्वारा बांधे जाने वाले सब प्रकृतियों के अपने-अपने योग्य उत्कृष्ट प्रदेश।

प्रदेशनामनिधत्तायु **Pradeśanāmanidhattāyu**

परिमित परिमाण वाले आयुकर्म के प्रदेशों का परिणमन तथा आत्मा के प्रदेशों से संबंध होना।

प्रदेशनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण **Pradeśaniṣpannakṣetrapramāṇa**

एक प्रदेश अवगाह वाला क्षेत्र, दो प्रदेश अवगाह वाला, तीन प्रदेश अवगाह वाला-इस क्रम से संख्यात व असंख्यात प्रदेश अवगाह वाला क्षेत्र।

प्रदेशबंध **Pradeśabandha**

1. योग विशेष के द्वारा सूक्ष्म अनंत-कर्म प्रदेश का एक एक आत्मप्रदेश पर एक क्षेत्रावगाह रूप से स्थित होना।
2. जीव प्रदेशों का और कर्म प्रदेशों का संबंध होना।

प्रदेशबंध स्थान **Pradeśabandhasthāna**

योगस्थान का अपर नाम।

प्रदेशमोक्ष **Predeśamokṣa**

1. अधःस्थिति के गलन से कर्म प्रदेशों की निर्जरा।
2. कर्मप्रदेशों का अन्य प्रकृतियों में संक्रमण होना।

प्रदेशवत्त्व **Pradeśavattva**

लोकाकाश के प्रदेशों के बराबर प्रदेशों वाला जो एक आत्मा होता है, वह जीव का प्रदेशवत्त्व गुण है। यह साधारण है क्योंकि वह धर्म-अधर्म द्रव्यों में भी पाया जाता है।

प्रदेशविपरिणामना **Pradeśaviparināmanā**

जो प्रदेश पिंड निर्जीर्ण हो चुका है या अन्य प्रकृति में संक्रमण को प्राप्त हो उसका नाम।

प्रदेशविरच **Pradeśaviraca**

1. कर्मरूप पुदगल प्रदेश की जिसमें रचना की जाती है, उसे प्रदेशविरच कहते हैं। इसका दूसरा नाम कर्म स्थिति है।
2. रचे जाने वाले कर्म प्रदेश ही प्रदेशविरच हैं।

प्रमत्त **Pramatta**

1. इन्द्रियों का विशेष शक्ति और गति को न जानकर व्यर्थ कार्यों में प्रवृत्त होना
2. कार्याकार्य, वाच्यावाच्य आदि से अनभिज्ञ होकर कषाय के उदय से हिंसा आदि प्रवृत्तियों से संलग्न होना।

3. चार विकथाओं, चार कषायों, पाँच इन्द्रियों, निद्रा तथा प्रणय से युक्त होकर प्रमाद करने वाला।
4. इन्द्रिय तथा कषायों का निग्रह न कर प्रमत्त के समान प्रवृत्ति करने वाला।

प्रमत्तविरत **Pramattavirata**

संज्वलन कषायों और हास्यादि कषायों के उदय से संयम तो होता है, किन्तु प्रमाद भी उसके साथ में रहता है, इसीलिए उसे प्रमत्तविरत या प्रमत्त संयत कहते हैं।

प्रमत्तसंयत **Pramattasaṃyata**

1. व्यक्त (स्थूल) और अव्यक्त (सूक्ष्म) प्रमाद वर्तमान होते हुए सम्यक्त्वादि समस्त गुणों व व्रतरक्षक शीलों से सहित होकर महाव्रतों का पालन करना।
2. संयम को प्राप्त कर भी विकथादि प्रमादों से युक्त होना।
3. जिसके बारह प्रकार की कषायों का उदय प्राप्त नहीं होता है तथा जो व्यक्ताव्यक्त प्रमादों से युक्त होता है।
4. संयम को प्राप्त करके भी प्रमादी होना।
5. विकथा, कषाय, निद्रा तथा शब्दादि में रत।

प्रमदा **Pramadā**

पुरुष को सदा प्रमत्त बना देने वाली।

प्रमाण **Pramāṇa**

1. प्रतिषेध रूप से संबल (सापेक्ष) विधि को प्रमाण कहा जाता है।
2. परस्परेच्छा अन्वय भेदरूप लिंग से प्रसिद्ध सामान्य तथा विशेष एवं स्व–पर का अवभासक ज्ञान।
3. त्रिकाल गोचर सर्वजीवादि पदार्थों का निरूपण प्रमाण है।
4. स्वपररूप की सिद्धि होने पर जो परापेक्ष नहीं है, वह प्रमाण है।
5. जो स्पष्ट है ऐसा व्यवसायात्मक अन्वय-व्यतिरेकानुविधायिज्ञान (प्रतिसंख्यानिरोध का अविसंवादक) प्रमाण है।
6. निर्वाह-बोध-विशिष्ट आत्मा प्रमाण है।
7. जिससे प्रक्षेप व्यवसाय स्वतः होता है, वह प्रमाण है।
8. स्व-पर व्यवसाय स्वभाव ज्ञान प्रमाण है।
9. स्व तथा पदार्थ का निर्णय करने रूप स्वभाव वाला ज्ञान प्रमाण है।
10. परनिरपेक्षतया वस्तु के तथाभाव का प्रकाशक प्रमाण है।

11. जो ज्ञान वस्तु के अविरुद्ध और सम्यक् रूप को ग्रहण करता है, वह प्रमाण है। उसके दो भेद है-प्रत्यक्ष और परोक्ष।
12. सप्तभंगात्मक वाक्य प्रमाण है।

प्रमाणकाल **Pramāṇakāla**

1. जिसके आश्रय से सौ वर्ष और पल्योपम आदि का परिज्ञान होता है वह प्रमाण स्वरूप काल।
2. पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी और कल्प आदि के भेद से प्रमाणकाल बहुत प्रकार का है।

प्रमाणगव्यूति **Pramāṇagavyūti**

दो हजार धनुष प्रमाण माप विशेष।

प्रमाण दोष **Pramāṇadoṣa**

1. बत्तीस ग्रास प्रमाण आहार से अधिक आहार ग्रहण करना।
2. साधु अपने उदर के अर्द्ध भाग को अन्न से तथा तृतीय भाग को जल से ओर शेष चतुर्थ भाग को वायु के संचार के लिये खाली रखे, इस प्रमाण का उल्लंघन करने अर्थात् अधिक आग्रह करने पर वह प्रमाणदोष का भागी होता है।

प्रमाण पद **Pramāṇapada**

1. सौ, हजार, द्रोण, खारी, पल, तुला और कर्ष आदि प्रमाण पद माने जाते हैं।
2. आठ अक्षरों का एक प्रमाण पद (श्लोक का एक चरण) होता है।

प्रमाण प्राप्त-आहार **Pramāṇaprāpta āhāra**

पुरुष का प्रमाण प्राप्त आहार बत्तीस ग्रास प्रमाण और महिला का अट्ठाईस ग्रास प्रमाण होता है।

प्रमाणफल **Pramāṇaphala**

1. प्रमाण का साक्षात् फल स्व और पदार्थ के निश्चय रूप सिद्धि है।
2. अज्ञान का विनाश, हान (परित्याग), उपादान (ग्रहण) अथवा उपेक्षा-रूप प्रमाण का फल है।

प्रमाणयोजन **Pramāṇayojana**

चार प्रमाण गव्यूति माप विशेष को प्रमाण योजन कहते हैं। वह मनुष्यों के उत्सेद्धंगुल सिद्ध-पाँच सौ योजन के बराबर होता है।

प्रमाणसप्तभंगी **Pramāṇasaptabhaṅgī**

सकलादेश स्वभाववाली अनेकान्तात्मक वस्तु की प्रतिपादक सप्तभंगी।

प्रमाणसंप्लव **Pramāṇasaṃplava**

एक ही पदार्थ के विषय में अनेक प्रमाणों की प्रवृत्ति।

प्रमाणसंवत्सर **Pramāṇasaṃvatsara**

1. जो संवत्सर (वर्ष) युग के प्रमाण का कारण है।
2. दिवस, रात्रि आदि के प्रमाण से उपलक्षित नक्षत्र, संवत्सरादि।

प्रमाणागुंल **Pramāṇaṅgula**

1. पाँच सौ उत्सेधांगुल प्रमाण का एक प्रमाणांगुल होता है। यह अवसर्पिणी के प्रथम चक्रवर्ती का अंगुल समझना चाहिये।
2. एक हजार से गुणित उच्छ्रयांगुल के बराबर एक प्रमाणांगुल होता है।

प्रमाणातिक्रम **Pramāṇatikrama**

तीव्र लोभ के वश होकर स्वीकृत परिग्रहप्रमाण के उल्लंघन करने को प्रमाणातिक्रम कहते हैं। यह प्रमाणातिक्रम क्षेत्र-वास्तु आदि के विषय में संभव है, जो क्रम से परिग्रहपरिमाणव्रत के क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रम आदि पाँच अतिचार रूप होता है।

प्रमाणातिरेक दोष **Pramāṇatirekadoṣa**

साधु के लिये जितनी भूमि का प्रमाण आगम में कहा गया है, उससे एक वितस्ति (बारह अंगुल) मात्र भी अधिक भूमि का उपयोग करना।

प्रमाणाभास **Pramāṇābhāsa**

जो ज्ञान प्रमाण के समान प्रतीत होते हैं, पर वस्तुतः वे प्रमाण नही है ऐसे ज्ञान आदि को प्रमाण मानना प्रमाणाभास है।

प्रमाता **Pramātā**

1. चेतन व परिणमन स्वभाव वाला जीव।
2. प्रत्यक्षादि प्रसिद्ध आत्मा।

प्रमाद **Pramāda**

1. कार्यों में अनादर।
2. स्मृति का अनवस्थान, कुशल क्रियाओं में अनादर।
3. प्रमाद स्वरूप महान् कर्म रूपी ईधन से उत्पन्न, जिसमें दुःख रूपी अग्नि की ज्वाला का समूह बुझाया नहीं गया है, ऐसे संसारवास रूपी गृह को देखते हुये, उसके मध्यवर्ती होने पर भी उससे निर्गमन का उपाय रूप वीतराग प्रणीत धर्मचिंतामणि के होने पर जिस विचित्र कर्मोदय के साचिव्य से जनित परिणाम विशेष से उस भय को न देखते हुये विशिष्ट परलोक क्रिया की अवहेलना करते हुए प्राणी का विमुख होना।
4. चार संज्वलन और नव नोकषायों का तीव्रोदय।
5. इन्द्रिय विकथा और अत्यधिक निद्रारूप कार्यों में प्रवृत्ति।
6. अयत्नाचरण।

7. मोक्षमार्ग के प्रति प्राणी का शिथिल उद्यम।
8. कुशल अनुष्ठानों से च्युत होना तथा सम्यग्दर्शन आदि रूप गुण, शील तथा कुशल अनुष्ठानों में ध्यान नही देना।
9. पाँच समितियाँ, तीन गुप्तियाँ, विनय, काय, वचन मन, ईर्यापथ, व्युत्सर्ग, भैक्ष्य, शयनासन शुद्धि लक्षण वाली आठ शुद्धियों में और दश लक्षण धर्मो में उद्यम नहीं करना।
10. सदुपयोग का अभाव।

प्रमादाचरित **Pramādācarita**

1. निष्प्रयोजन पृथ्वी का खोदना, जल का फैलाना, अग्नि का जलाना या बुझाना एवं वायु का करना या रोकना इत्यादि तथा वनस्पति का छेदन, व्यर्थ में गमन करना व दूसरे को गमन कराना। प्रमादचरित व प्रमादाचरित ये इसी के नामांतर हैं। यह एक अनर्थदंड का भेद है।
2. मद्यादि के प्रमाद से जो आचरण किया जाता है, उसे प्रमादाचरित कहा जाता है।
3. कौतूहल से गीतनृत्य, नाटक आदि का निरीक्षण करना, कामशास्त्र में आसक्ति, जुआ मद्यादि का सेवन, जलक्रीड़ा, हिंडोलना पर झूलना, प्राणियों को लड़ाना, शत्रु-पुत्रादि के प्रति बैर, भक्तकथा, स्त्रीकथा, देशकथा तथा राष्ट्रकथा, रोग तथा मध्यमार्ग में श्रम को छोड़ना, अन्य समय समस्त रात्रि में सोना आदि प्रमादाचरण है।

प्रमादाप्रमाद **Pramādāpramāda**

प्रमाद और अप्रमाद के स्वरूप, भेद, फल और विपाक के प्रतिपादन करने वाले अध्ययन का नाम प्रमादाप्रमाद है। यह उत्कालिक सूत्र के अंतर्गत है।

प्रमार्जन **Pramārjana**

जीवों के संरक्षणार्थ मृदु उपकरण के द्वारा पुस्तक, कमंडलु आदि उपकरणों के झाड़ने आदि रूप कार्य।

प्रमार्जनासंयम **Pramārjanāsaṃyama**

शुद्ध भूमि के देख लेने पर भी रजोहरण आदि से प्रमार्जन करके सोने एवं बैठने आदि रूप काम के करने तथा एक शुद्ध भूमि से अन्य शुद्ध भूमि को प्राप्त होते हुये अथवा सचित्त अचित्त व सचित्ताचित्त पृथ्वी पर धूलि से आच्छादित चरणों का प्रमार्जन करके गमन करना।

प्रमिति **Pramiti**

विशेषज्ञान का अभाव, संशय, विपर्यय लक्षण, रूप अज्ञान से निवृत्ति।

प्रमृज्य संयम **Pramṛjyasaṃyama**

शुद्ध भूमि के देख लेने पर रजोहरण के द्वारा प्रमार्जन करके-झाड़कर बैठना एवं शयन आदि कार्य का करना।

प्रमेय **Prameya**

प्रमाण का विषय।

प्रमोक्ष प्रमोदभावना **Pramokśa pramoda bhāvanā**

1. मुनिजनों के गुणों का चिंतन।
2. मुख की प्रसन्नता आदि के द्वारा अंतरंग भक्तिरूप अनुराग का प्रगट होना।,
3. जो गुणों में अधिक है ऐसे व्रतीजनों में प्रमोद का विचार करना। प्रमोद का अभिप्राय है विनय का योग जो साधुजन सम्यक्त्व, ज्ञान, चरित्र व तप में अधिक है, उनकी वंदना, स्तुति, प्रशंसा और वैयावृत्य आदि के आश्रय से स्वयं, दूसरों के द्वारा या दोनों के द्वारा की गई पूजा से सब इंद्रियों के द्वारा अन्त:करण का हर्ष प्रगट होना।
4. मुख की प्रसन्नता आदि के द्वारा गुणधिकों में अभिव्यंज्यमान भक्ति।

प्रज्ञाश्रमण **Prajñāśramaṇa**

श्रुतज्ञानावरण और वीर्यांतराय के प्रकृष्ट क्षयोपशम से प्रगट हुई असाधारण महाबुद्धि ऋद्धि से युक्त होकर जो बारह अंगों और चौदह पूर्वों का अध्ययन न करके भी चौदह पूर्व का धारक जिस अर्थ का निरूपण करता है, उस सूक्ष्म भी पदार्थ के विषय में अतिशय निपुण बुद्धि से युक्त होते हैं, वे प्रज्ञाश्रमण कहलाते हैं।

प्रदेशसंक्रम **Pradeśasaṅkrama**

1. विवक्षित कर्मप्रकृति का जो कर्मद्रव्य अन्य प्रकृति को प्राप्त कराया जाता है यह उसका प्रदेशसंक्रम कहलाता है।
2. जो प्रदेशपिंड जिस प्रकृति से अन्य प्रकृति को प्राप्त कराया जाता है, उसका वह प्रदेश संक्रम कहलाता है।
3. विध्यातसंक्रम, उद्वलनासंक्रम, यथाप्रवृत्त संक्रम, गुण संक्रम तथा सर्वसंक्रम-इन पाँच संक्रमों से जो कर्म परमाणुओं को अन्य प्रकृति रूप परिणमाता है एवं तत्स्वरूप व्यवस्थापित करता है, वह प्रदेश संक्रमण कहलाता है।

प्रदेशसंहारविसर्प **Pradeśasaṃhāravisarpa**

कार्मण शरीर के वश प्राप्त हुए छोटे या बड़े शरीर का अनुसरण करना अर्थात्

16—415 Min. of HRD/2014

छोटे शरीर के अनुसार आत्मप्रदेशों का संकुचित होकर उसमें रहना तथा बड़े शरीर के अनुसार उक्त आत्मप्रदेशों का विस्तृत होकर रहना।

प्रदेशह्रस्व **Pradesahrasva**

जो जीव सब प्रकृतियों के अपने-अपने जघन्य प्रदेशों को बाँध रहा हो, उसके प्रदेशह्रस्व होता है, सत्त्व की अपेक्षा क्षपित कर्मांशित स्वरूप से आकर गुणश्रेणिनिर्जरा के द्वारा जिसने कर्मप्रदेश को सबसे जघन्य कर दिया है, उसके प्रदेशह्रस्व होता है।

प्रदेशाग्र **Pradeśāgra**

प्रत्येक जीव को वेष्टित करने वाले आयुकर्म के अनन्तानंत पुद्गल प्रदेशों का अग्र भाग।

प्रदेशावीचिकामरण **Pradesavicikamarana**

आयु कर्म संबंधी पुद्गल परमाणुओं के जघन्य निषेक से लगाकर एक-दो आदि की वृद्धि के क्रम से अवस्थित वीचियों (तरंगों) के समान क्रमशः गलना या झड़ना।

प्रदेशोदय **Pradeśodaya**

उदय में नहीं आने वाली प्रकृतियों के आबाधाकाल के बीत जाने पर उनके कर्म प्रदेशों को स्तबक संक्रमण के द्वारा प्रति समय उदय को आने वाली प्रकृतियों में संक्रमित करके अनुभव करना।

प्रदोष **Pradoṣa**

1. तत्व ज्ञान मोक्ष का साधन है ऐसा कथन करने पर जो व्यक्ति कुछ कथन नहीं कर रहा है, उसके अन्तःकरण को मत्सर भाव या दुष्ट परिणाम उत्पन्न होना।

2. सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन तथा इन दोनों से युक्त पुरुष की किसी पुरुष के द्वारा प्रशंसा किये जाने पर उस प्रशंसा को सुनकर अन्य कोई पुरुष पैशुन्य से दूषित होकर स्वयं भी ज्ञान-दर्शन से युक्त पुरुष की न प्रशंसा करता है तथा न श्लाघा करता है, न कुछ भी उच्चारण करता है, वह अंतःपैशुन्य अंतर्दुष्टत्त्व प्रदोष कहा जाता है।

प्रद्वेष **Pradveṣa**

दुष्ट स्त्री और धन आदि के हरण करने से निमित्त से क्रोध उत्पन्न होना।

प्रधानद्रव्यकाल **Pradhānadravyakāla**

जो लोकाकाश के समान असंख्यात प्रदेश प्रमाण है, शेष पाँच द्रव्यों के परिवर्तन का कारण है, रत्नों की राशि के समान प्रदेश समूह से रहित है तथा अमूर्त और अनादि–निधन है उसे तद्व्यतिरिक्त जो आगम प्रधान द्रव्यकाल कहा जाता है।

प्रधानतया नाम पद **Pradhānatāyā nāmapada**

अशोक, सप्तपर्ण, चंपक, आम्र, नाग, पुंनाग, इक्षु, द्राक्षा और शालि आदि की प्रधानता से जो अशोक वन, सप्तपर्ण वन इत्यादि नाम बोले जाते हैं, उन्हें प्रधानतया नामपद कहा जाता है।

प्रधानभावशुद्धि **Pradhānabhāvaśuddhi**

दर्शन, ज्ञान एवं चारित्रविषयक शुद्धि और तप की शुद्धि की प्रधानता की अपेक्षा से भावों की शुद्धि। प्रधानता की अपेक्षा का अर्थ है कि जैसे क्षायोपशमिक की अपेक्षा क्षायिकदर्शनादि की तथा तप में अभ्यंतर तप की आराधना की प्रधानता होती है। इससे साधु निर्मल होता है।

प्रध्वंसाभाव **Pradhvaṃsābhāva**

1. आगामी काल अथवा अगली प्रर्याय से विशिष्ट कार्य।
2. दही में दूध का अभाव प्रध्वंसाभाव रूप है।

प्रपातन कुशील **Prapatanakusila**

त्रस जीवों, वृक्षादिकों और पुष्प–फलादिकों के गर्भ का विनाश करने वाला। अभिसरण क्रिया (प्रिय–समागम) करने वाला तथा शाप देने वाला।

प्रबंधनकाल **Prabandhankāla**

वक्रमाण (उत्पत्ति) और अवक्रमण कालों का योग।

प्रबोध **Probodha**

नींद से उठने पर होने वाली चित्त की अवस्था विशेष।

प्रभा **Prabhā**

शरीर से निकलने वाली किरणें।

प्रभाव **Prabhāvā**

1. शाप और अनुग्रह रूप.प्रबुद्ध भाव।
2. निग्रह और अनुग्रह की शक्ति।

प्रभावना **Prabhāvanā**

1. तिरसठ शलाका पुरुषों के चरित्र अथवा पाप–पुण्य के स्वरूप के कथन से निर्दोष आतापन आदि बाह्य योगों से तथा प्राणिदया के द्वारा धर्म को प्रकाश में लाना। यह सम्यग्दर्शन का आठवाँ अंग है।
2. संसार में फैले हुए अज्ञान–अंधकार के प्रसार को दूर कर यथायोग्य जिन शासन के माहात्म्य का प्रकाशन।
3. रत्नत्रय के प्रभाव से आत्मा को प्रकाशित करना।
4. धर्म कथादिकों के द्वारा धर्म तीर्थ को ख्यापित करना।
5. दान, तप, जिनपूजा और विद्यातिशय के द्वारा जिनधर्म का प्रकाशन करना।
6. महोपवास आदि लक्षण से देवेंद्र आदि के आसन को कंपन कराने वाले सत् तप से स्वसमय का प्रकटन करना और महापूजा, महादान आदि के द्वारा धर्म का प्रकाशन करना।

प्रभु–आच्छेद्य **Prabhu-ācchedya**

प्रभु का अर्थ गृह स्वामी है। जो गृहस्वामी अन्य कुटुंबीजनों के, जो कि देने के इच्छुक नहीं है – देय द्रव्य को बलपूर्वक लेकर देता है, यह प्रभुआच्छेद्य नाम का उद्गम दोष है।

प्रयत्न **Prayatna**

1. कर्मविशिष्ट आत्मप्रदेशों का हलन–चलन।
2. परिनिमित्तक भाव।
3. मुझे यह अवश्य करना है इस प्रकार दूसरे के द्वारा किये गये परार्थ में दिया गया चित्त।

प्रयुत **Prayuta**

चौरासी लाख प्रयुतांग।

प्रयुतांग **Prayutāṅga**

चौरासी लाख अयुत।

प्रयोग **Prayoga**

मन, वचन और काय का योग। यह ज्ञानावरण की वेदना के कारणे में से एक है।

प्रयोगकरण **Prayogakaraṇa**

जीव के व्यापार को प्रयोग कहते हैं, उस प्रयोग के द्वारा सजीव और अजीव का निर्माण करना।

प्रयोग किया **Prayoga kriyā**

1. सदसत्कार्य की सिद्धि के लिये कार्य आदि के द्वारा गमनागमनादि प्रवर्तन।
2. वचनादि विचित्र कार्यादि व्यापार।
3. आत्माधिष्ठित कार्यादि व्यापार प्रयोग है, तीनों योगों के द्वारा किये गये पुद्गलों का ग्रहण प्रयोग किया है अथवा धावन व मुड़ने आदि रूप शरीर का व्यापार।
4. हँसीजनक या कठोर वचन की प्रवृत्ति द्रोह, अभिमान और ईर्ष्या आदि रूप मन का व्यापार प्रयोग किया है।

प्रयोगगति **Prayogagati**

1. बाण, चक्र आदि की गति।
2. जीव के गति परिणाम से संबद्ध शरीर संबंधी आहार, वर्ण, रस, गंध और आकृति विषयक गति।

प्रयोगजपरिणाम **Prayogajapariṇama**

दूसरे के प्रयोग के निमित्त से चेतन या अचेतन पदार्थ में परिणमन होना। जैसे जीव में आचार्य आदि पुरुष विशेष के प्रयोग के आश्रय से ज्ञान, शील व भावना आदि रूप परिणाम होता है तथा अचेतन मिट्टी आदि का कुम्हार आदि के प्रयोग के निमित्त से घटाकारादि रूप परिणाम होता है।

प्रयोगज शब्द **Prayogajaśabda**

जीव के व्यापार से उत्पन्न होने वाले तत–विततादि छह प्रकार के शब्द।

प्रयोग परिणाम **Prayogapariṇāma**

वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम से अथवा क्षय से उत्पन्न होने वाली चेष्टा रूप परिणाम।

प्रयोगप्रत्ययस्पर्द्धकप्ररूपणा **Prayogapratyayasparddhakaprarupaṇā**

प्रयोग का अर्थ है प्रकृष्ट (तीव्र) योग, इस प्रयोग के निमित्त से ग्रहण किये गये कर्म पुद्गलों के स्नेह के आश्रय से स्पर्द्धकों की प्ररूपणा करना।

प्रयोगबंध **Prayogabandha**

1. पुरुषप्रयोग के निमित्त से जो अजीवविषयक– जैसे लाख और लकड़ी का बंध और जीवाजीव विषयक–कर्म नोकर्म का बंध होना।
2. जीवों के व्यापार से कर्मबंध और नोकर्मबंध उत्पन्न होना।

प्रयोगस्पर्द्धक **Prayogasparddhaka**

प्रकृष्ट योग का नाम प्रयोग है। जीव के स्थानों की वृद्धि के अनुसार जीवों के द्वारा बाँधे जाने वाले कर्म परमाणुओं में स्पर्द्धक के रूप से जीव जो रस को बढ़ाता है, वह प्रयोग स्पर्द्धक है।

प्रयोगस्पर्द्धकप्ररूपणा **Prayogasparddhakaparūpaṇā**

1. जीव प्रदेशों की विसदृशता से अपने वीर्य के निमित्त से ग्रहण किये गये कर्म पुद्गलों के स्नेह (रस या अनुभाग) की प्ररूपणा।
2. प्रकृष्ट योग के आश्रय से ग्रहण किये गये पुद्गलों के स्नेह की प्ररूपणा।

प्ररूपणा **Prarupaṇā**

ओघ और आदेश की अपेक्षा गुणस्थान, जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, गति, इंद्रिय आदि चौदह मार्गणा और उपयोग– इन में पर्याप्त–अपर्याप्त विशेषता के साथ जीवों की परीक्षा करना।

प्ररोहण **Prarohana**

जिसमें कर्म अंकुरित होते हैं वह कार्मण शरीर।

प्रवचन **Pravacana**

1. श्रुतज्ञान अथवा श्रुतज्ञान के उपयोग से अभिन्न होने के कारण संघ अथवा प्रथम गणधर को प्रवचन कहते हैं। यह यथावस्थित समस्त जीवाजीवादि पदार्थों का प्ररूपक होता है।
2. द्वादशांग सिद्धांत प्रवचन है। उससे उत्पन्न देवव्रती, महाव्रती तथा असंयत सम्यग्दृष्टि का प्रवचन होता है।
3. प्रकृष्ट वचन प्रवचन है।
4. प्रकर्ष से जीवादि पदार्थों का (अथवा द्वादशांग का), प्रमाणादि के विरोध से रहित होकर कथन करना।
5. नय, प्रमाण तथा निर्देश आदि के द्वारा जहाँ जीवादि पदार्थ व्याख्यात हों।
6. रागादि की परंपरा को जिन्होंने जीत लिया है अथवा जो रागादि से रहित हैं, उनके वचन।
7. जिनागम।

प्रवचन प्रभावना **Pravacanaprabhāvanā**

आगमार्थ का नाम प्रवचन है, उसकी प्रशंसा व वृद्धि करना।

प्रवचन भक्ति **Pravacanbhakti**

1. जिनसूत्र में अनुराग रखना।
2. रत्नत्रयादि प्रतिपादक लक्षण रूप प्रवचन में मनःशुद्धियुक्त अनुराग रखना।

प्रवचनवत्सलत्व **Pravacanavatsalatva**

1. जिस प्रकार सद्यः प्रसूता गाय बछड़े के प्रति स्नेह रखती है, उसी प्रकार साधर्मियों से स्नेह रखना।
2. अर्हत् शासन का अनुष्ठान करने वाले श्रुतकर तथा बाल वृद्ध, तपस्वी शैक्ष्य, ग्लान आदि का संग्रह उपग्रह तथा अनुग्रह करना।

प्रवचन सन्निकर्ष **Pravacanasannikarṣa**

जिसमें प्रकर्ष रूप से वचनों का सन्निकर्ष किया जाता है, वह प्रवचन। यह एक श्रुतज्ञान का नामांतर है।

प्रवचन संन्यास **Pravacanasaṃnyāsa**

जिसके द्वारा जीवादि पदार्थों का प्रकर्ष से संन्यास (अनेकांत रूप से प्ररूपणा) किया जाता है-वह श्रुतज्ञान।

प्रवचनाद्धा **Pravacanāddhā**

जिस श्रुति में प्रकृष्ट-शोभायमान-वचनों का काल है वह। यह श्रुतज्ञान का नामांतर है।

प्रवचनार्थ **Pravacanārtha**

जिसमें प्रकृष्ट वचन-द्वादशांग का वर्णसमूह और नौ पदार्थ रूप अर्थ है, उस आगम का नाम प्रवचनार्थ है अथवा द्वादशांग भावश्रुत प्रवचनार्थ कहा जाता है।

प्रवचनी **Pravacanī**

1. प्रकृष्टवचनों से युक्त भावागम।
2. प्रवचन नाम द्वादशांग का है, जिसे गणिपिटक भी कहा जाता है। वह प्रवचन जिसके अतिशययुक्त होता है, उसे प्रवचनी या युगप्रधान आगम कहा जाता है।

प्रवचनीय **Pravacanīya**

जिसका संदर्भ के साथ व्याख्यान किया जाता है, वह श्रुत।

प्रवरवाद **Pravarāvada**

स्वर्ग व मोक्ष के सर्गभूत रत्नत्रय को प्रवर कहा जाता है, उसका जिसके द्वारा निरूपण किया जाता है, उस श्रुतज्ञान का एक नाम।

प्रवर्तिनीपदार्हा व्रतिनी **Pravartinīpadārhā vratinī**

जितेंद्रिय, विनम्र, मन की एकाग्रता से युक्त, आगम में निपुण, प्रिय बोलने वाली, सरल, दयालु, धर्म के उपदेश में उद्यत, गुरु व गच्छ के विषय में स्नेह से संयुक्त, शांत, निर्मल शील की धारक, क्षमाशील, परिग्रह से रहित, लेखन आदि कार्यों में निरंतर उद्यत, करने योग्य धर्मध्वज आदि उपाधियों के विषय में अतिशय श्रेष्ठ, निर्दोष कुल में उत्पन्न हुई और निरन्तर स्वाध्याय करने वाली - इन गुणों से संपन्न प्रतिनी (साध्वी) प्रवर्तनी पद के योग्य - साध्वियों की अधिष्ठात्री होती है।

प्रवाद **Pravāda**

दर्शनमोहनीय कर्म के परवश हुए सर्वथा एकांतवादियों के द्वारा कल्पित वादों का नाम।

प्रविचक्षण **Pravicakṣaṇa**

चारित्र परिणाम से युक्त। अथवा पाप से डरने वाला।

प्रविचार **Pravicāra**

1. मैथुन सेवन।
2. स्पर्शन इंद्रिय से अनुरागपूर्वक की गयी सेवा।

प्रविद्ध दोष **Praviddha doṣa**

उपचार (भक्ति) के बिना ही अनियंत्रित (अभवस्थितचित्त) होकर गुरु की वंदना करता हुआ समाप्ति से पूर्व ही उसे छोड़कर चला जाता है, वह प्रविद्ध नामक वंदना दोष का भागी है।

प्रविष्ट दोष **Praviṣṭadoṣa**

जो पंच परमेष्ठियों के अत्यंत निकट होकर कृतिकर्म करता है उसके प्रविष्ट नाम का दोष उत्पन्न होता है।

प्रवृत्ति **Pravṛtti**

1. उपशम की प्रधानता से विधिपूर्वक स्थान व आलंबन आदि रूप पाँच प्रकार के योग का परिपालन।
2. बल-वीर्य के अनुसार अथवा योग्यता के अनुसार साधुओं की वैयावृत्ति आदि में प्रवृत्त होना।

प्रव्रजित **Pravrajita**

आरंभ व परिग्रह से सर्वथा छोड़ देने वाला।

प्रव्रज्या **Pravrajyā**

1. समस्त आसक्तियों को छोड़ देना।
2. गृह, परिग्रह व मोह से रहित, बाईस परीषहों सहित, कषायों को जीतने वाली, पाप जनक आरंभ से रहित; धन, धान्य, वस्त्र, हिरण्य, शयन, आसन और छत्र इत्यादि के दूषित दान से रहित शत्रु-मित्र, प्रशंसा-निंदा, लाभ-अलाभ और तृण-स्वर्ण इनमें रहने वाले समताभाव से युक्त, आहार के निमित्त उत्तम, मध्यम एवं दरिद्र व सम्पन्न घर की अपेक्षा न कर सभी जगह ग्रहण किए जाने वाले आहार सहित, मान व आशा से विहीन, सम्यक्त्व से विशुद्ध, तिल-तुषमात्र परिग्रह से रहित, स्वाध्याय एवं ध्यान से युक्त तप,

व्रत एवं गुणों से विशुद्ध तथा संयम एवं सम्यक्त्व गुणों से विशुद्धि को प्राप्त।

3. भावतः समस्त सावद्य योग के परित्याग रूप विरति परिणाम - संयम की स्वीकृति।

प्रव्रज्यार्ह **Pravrajyārha**

आर्य देश में उत्पन्न, उत्तम कुल व जाति से युक्त, क्षीण कर्ममल, निर्मल बुद्धि, संसार की निर्गुणता को जानने वाला, विरक्त, कृष कषाय, उपकार मानने वाला, विनीत, राजा, मंत्री एवं सम्यक् आचरण द्वारा सामीप्य को प्राप्त महापुरुष प्रव्रज्यार्ह होता है।

प्रव्राजक **Pravrājaka**

सामायिक, व्रतादि का आरोपयिता।

प्रशंसा **Praśaṃsā**

1. गुणों के उद्भावन का अभिप्राय।
2. मन से मिथ्यादृष्टि के ज्ञान-चारित्र गुण की उद्भावना।
3. सद्भूत अथवा असद्भूत गुण का उद्भावन।

प्रशम **Praśama**

1. रागादि का अनुद्रेक।
2. अनन्तानुबंधी राग आदि मिथ्यात्व तथा सम्यग्मिथ्यात्व का अनुद्रेक।
3. रागादि दोषों में चित्तवृत्ति का निर्वहण।
4. स्वभाव से ही क्रोधादि क्रूर कषाय।

प्रशस्त करणोपशामना **Praśasta karaṇopaśāmanā**

सर्व करणोपशामना - प्रशस्त परिणामों के द्वारा उदीरणादि आठ करणों का उपशांत होना।

प्रशस्तध्यान **Praśastadhyāna**

शुद्ध लेश्या के अवलंबन से पुण्यवश उत्पन्न हुआ वस्तुतत्त्व का चिंतन।

प्रशस्तनिदान **Praśastanidāna**

संयम के हेतुभूत मनुष्य पर्याय, सत्त्व (उत्साह), बल, वीर्य और संहनन तथा श्रावककुल और बंधुकुल में उत्पन्न होने की प्रार्थना करना।

प्रशस्तनिस्सरण तैजस **Praśastanissaraṇataijasa**

बारह योजन आयत, नौ योजन विस्तृत, सूच्यंगुल के संख्यातवें भाग प्रमाण बाहुल्य सहित और हंस के समान धवल वर्ण वाला जो तैजस शरीर अनुकंपावश साधु के दाहिने कंधे से निकल कर मारी आदि रोगों के शान्त करने में समर्थ होता है, वह प्रशस्तनिस्सरणतैजस है।

प्रशस्तनोआगमभावोपक्रम **Praśasta noāgamabhāvopakrama**

श्रुत आदि के निमित्त आचार्यत्व का निर्धारण।

प्रशस्त प्रभावना **Praśastaprabhāvanā**

जिसके आश्रय से जीव कर्म से छुटकारा पाता है वह प्रशस्त भावपिंड है, वह क्रमशः एक-दो आदि के भेद से दश प्रकार का है। जैसे - एक संयम, दो- ज्ञान व चारित्र, तीन - ज्ञान, दर्शन व चारित्र, इत्यादि क्रम से उत्तमक्षमा, मार्दव आदि दश।

प्रशस्तभावयोग **Praśastabhāvayoga**

सम्यग्दर्शनादि रूप उत्तम भाव।

प्रशस्त भावाशीति **Praśasta bhāvāśīti**

1. जिन हेतुओं के द्वारा जीव संयमादि स्थानों के उपरितन विशेष स्थलों पर आरोहण करता है। यह आरोहण क्रम केवलज्ञान प्राप्ति तक होता है।
2. केवल ज्ञान प्राप्ति तक जीव का संयमादि स्थानों में उपरितन क्रम से आरोहण करने वाले हेतु।

प्रशस्त विहायोगति **Praśasta vihāyogati**

जो कर्म उत्तम बैल व हाथी आदि की प्रशस्त गति के समान उत्तम गति (गमन) का कारण है।

प्रशस्त स्थिरीकरण **Praśasta sthirīkaraṇa**

चारित्र आदि के विषय में खेद को प्राप्त होने वाले प्राणी को उसमें स्थिर करना।

प्रशांतरस **Praśānta rasa**

निर्दोष-हिंसादि दोषों से रहित, मन के समाधान से - उसकी विषयविमुखता रूप स्वस्थता से होने वाले निर्विकार - हास्यादि विकारों से रहित रस।

यह रस क्रोधादि के परित्याग रूप शांतभाव से उत्पन्न होता है, इसीलिए उसका प्रशांतरस नाम सार्थक है।

प्रशस्तेंद्रियप्रणिधि **Praśastendriyapraṇidhi**

1. शब्द, रूप, गंध, रस और स्पर्श इन इष्ट व अनिष्ट इंद्रियविषयों में राग-द्वेष नहीं करना।
2. इंद्रियों के विषयसंचार को रोकना, इंद्रिय विषयगत पदार्थों में राग-द्वेष नहीं करना, कषायों के उदय को रोकना।

प्रशस्तोपवृंहण **Praśastopavṛṃhaṇa**

साधुओं में ज्ञान, दर्शन, तप, संयम, क्षमण (उपवास) और वैयावृत्य आदि में उद्यत साधु के उत्साह को बढ़ाना।

प्रश्न **Praśna**

1. संशय आ जाने पर असंशय के लिए विद्वानों की सन्निधि में स्वविवक्षा सूचक वाक्य।
2. अर्थिजन के द्वारा शुभाशुभ पूछे जाने पर उसके परिज्ञान के लिए विद्यादि देवता से जो पूछता है, वह प्रश्न है।
3. जो विद्यामंत्र विधिपूर्वक जपे जाने पर या पूछे जाने पर शुभाशुभ कहते हैं, उन्हें प्रश्न कहते हैं।
4. यह हम लोगों के द्वारा अनुग्रहीतव्य है, या नहीं है? इस प्रकार संघ को उद्देश्य कर की गई पृच्छा।

प्राजापत्य विवाह **Prājāpatyavivāha**

विवाह में संपत्ति के विनियोग के साथ कन्या को प्रदान करना।

प्राण **Prāṇa**

1. पुरुष के संख्यात आवलियों प्रमाण उच्छ्वास व निःश्वास, इन दोनों रूप काल विशेष का नाम प्राण है।
2. बल, इंद्रिय, आयु और उच्छ्वास से प्राण हैं।

प्राणवादपूर्व **Prāṇavādapūrva**

1. कायचिकित्सादि अष्टांग आयुर्वेद, भूतिकर्म-शरीर की रक्षा के लिए किए जाने वाले भस्मलेपन जांगुलिप्रक्रम (विषविद्या) और प्राणापानविभाग-प्राण व अपानरूप वायुओं के विभाग - का भी वर्णन करने वाला श्रुत।

प्राणातिपात **Prāṇātipāta**

1. मन वचन व काय के व्यापार से प्राणियों के प्राणों का वियोग करना।

2. पाँच इंद्रियाँ, तीन बल, उच्छ्वास-निःश्वास और आयु - जीव के दस प्राणों का धारण करना।

प्राणातिपातक्रिया **Prāṇātipātakriyā**

आयु, इंद्रिय और बल प्राणों का वियोग करने की क्रिया।

प्राणातिपात विरमण **Prāṇātipātaviramaṇa**

1. मुनियों (साधु) का प्रथम मूल गुण।
2. उत्तम विचारों के साथ सभी सूक्ष्मादि जीवों के प्राणघात का परित्याग करना।

प्राणापान **Prāṇāpāna**

वीर्यांतराय तथा ज्ञानावरण के क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामकर्म के उदय की अपेक्षा करने वाला यह जीव जिस कोष्ठवात को बाहर छोड़ता है, वह वायु प्राण है। यही उच्छ्वास कहलाता है। उस प्रकार का जीव जब वायु को नासिकादि के द्वारा अंदर करता है, वह अपान कहलाता है। इसका नाम निःश्वास भी है।

प्राणापानपर्याप्ति **Prāṇāpānaparyāpti**

प्राणापान क्रिया के योग्य द्रव्य का ग्रहण तथा निःसर्ग शक्ति का निर्वर्तनरूप क्रिया की परिसमाप्ति।

प्राणायाम **Prāṇāyāma**

1. उत्तम भावनापूर्वक मन, वचन और काय इन तीनों योगों का निग्रह करना।
2. ध्यान की सिद्धि और अंतरात्मा की स्थिरता होना। प्राणायाम पूरक, कुंभक और रेचक के भेद से तीन प्रकार का है।
3. श्वास प्रश्वास का निरोध।
4. प्राण, मुख तथा नासिका के अंदर संचरण करने वाली वायु का चारों ओर से गति-विच्छेद।

प्राणायु **Prāṇāyu**

1. जिस श्रुत में भेदों के साथ आयु प्राण की विधि तथा अन्य प्राणों का वर्णन भी किया जाता है।
2. प्राणवाद पूर्व का अपर नाम।

प्राणावायपूर्व **Prāṇāvāyapūrva**

देखें, प्राणवाद पूर्व।

प्राणासंयम **Prāṇāsaṃyama**

पृथ्वी, जल, तेज, वायु, वनस्पति और त्रस जीवों (इंद्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के जीव) का प्रमादाचरित के कारण जीवितव्यपरोपण।

प्राणिवध **Prāṇivadha**

प्रमाद के वश किया गया प्राणियों का वध।

प्राणिसंयम **Prāṇisaṃyama**

एकेंद्रिय आदि जीवों की पीड़ा का परिहार।

प्राणी **Prāṇī**

इंद्रिय, बल, आयु और श्वासोच्छ्वास इन चार प्राणों से युक्त जीव।

प्रात्ययिकी क्रिया **Prātyayikī kriyā**

हिंसा के प्रयोग हेतु नये-नये उपकरणों का बनाना।

प्रादुष्करण **Prāduṣkaraṇa**

साधुओं को उद्देश्य से गवाक्षादि का प्रकाश करना अथवा बाहर प्रकाश में आहार का व्यवस्थापन।

प्रादुष्कार दोष **Prāduṣkāra doṣa**

1. संक्रमण प्रादुष्कार दोष - पात्र व भोजन आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाना।
2. प्रकाशन प्रादुष्कार दोष - प्रकाश को रोकने वाले कपाट आदि का प्रकाश करना।
3. जो घर अंधकार बहुल हो, उसे मुनियों के निमित्त से प्रकाश उपलब्ध करने के लिए भित्तियों में छेद कराना, पटिये को हटाना, अथवा दीपक रखना। इस प्रकार से संस्कारित वसति (घर) प्रादुष्कार दोष से दूषित होती है। यह दोष संक्रमण और प्रकाशन के भेद से दो प्रकार का है।

प्रादुष्कृत दोष **Prāduṣkṛta doṣa**

मुनियों के आगमन को जानकर गृहसंस्कार के काल में कमी करके पूर्व में संस्कारित की गई अथवा प्रकाश युक्त की गई वसति प्रादुष्कार या प्रादुष्कृत दोष से दूषित मानी जाती है।

प्रादेशिक प्रत्यक्ष **Prādeśika pratyakṣa**

हित की प्राप्ति और अहित के परिहार में समर्थ ऐसे इंद्रियों के कार्यरूप अर्थज्ञान

को तथा ज्ञानों के स्वकीय स्वरूप के स्पष्ट ज्ञान को प्रादेशिक प्रत्यक्ष कहते हैं।

प्रादोषिकी क्रिया **Prādoṣikī kriyā**

क्रोध के आवेशवश प्रादुर्भूत क्रिया।

प्राद्वेषिकी क्रिया **Prādveṣikī kriyā**

कर्मबंध के कारणभूत जीव के अशुभ परिणाम के आश्रय से होने वाली क्रिया।

प्राधान्यद्रव्यशुद्धि **Prādhānyadravyaśuddhi**

वर्ण, रस, गंध और स्पर्श में होने वाली मनोज्ञता - सुंदरता अथवा अनुकूलता, जैसे - वर्ण में शुक्लवर्ण, रस में मधुर रस और गंध में सुगंध।

प्राधान्यपद **Prādhānyapada**

अन्यान्यवृक्षों के साथ अवस्थित कदंब, नीम और आम्र आदि वृक्षों की अधिकता को देखकर कदंब वन, नीम वन और आम्र वन आदि प्रसिद्ध होना।

प्राप्ति **Prāpti**

भूमि पर स्थित रहते हुए भी ऋद्धि के प्रभाव से अंगुली के अग्रभाग से सूर्य-चन्द्रमा, मेरुशिखर तथा अन्य वस्तुओं का स्पर्श करने की सामर्थ्य।

प्राभृत (प्राभृतक) **Prābhṛta (Prābhṛtaka)**

1. पृथक् अथवा स्पष्ट श्रुत।
2. जो प्रकृष्ट (तीर्थंकर) के द्वारा प्रस्थापित है, अथवा विद्यारूप धन के धारक प्रकृष्ट आचार्यों के द्वारा धारित, व्याख्यात अथवा लाया गया है।
3. प्राभृतप्राभृतसमास श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि के होने पर होने वाला श्रुतज्ञान।
4. वस्तु के अंतर्गत अधिकार विशेष का नाम।

प्राभृत दोष **Prābhṛta doṣa**

1. बेला, दिवस, मास, ऋतु, वर्ष आदि के नियम में परिवर्तन कर यतियों के लिए दिया गया अन्न।
2. 'संयत' इतने दिनों में आयेंगे, उनके प्रवेश के दिन समस्त गृह संस्कार करेंगे, इस प्रकार मन में रखकर घर का संस्कार करना।

प्राभृत प्राभृत **Prābhṛta prābhṛta**

1. अनुयोगसमास ज्ञान के ऊपर एक अक्षर रूप श्रुतज्ञान की वृद्धि होने पर प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान होता है।

2. प्राभृत श्रुतज्ञान के अंतर्गत एक अधिकार विशेष।

प्राभृतप्राभृतज्ञानावरणीय **Prābhṛta praābhṛta jñānāvarnīya**

प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान को आवृत करने वाला कर्म।

प्राभृतप्राभृतश्रुतज्ञान **Prābhṛta prābhṛtaśrutajñāna**

प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर के बढ़ने पर होने वाला श्रुतज्ञान। इसमें उत्तरोत्तर एक-एक अक्षर की वृद्धि होने पर एक अक्षर से हीन प्राभृतश्रुतज्ञान के प्राप्त होने तक प्राभृतप्राभृतश्रुतज्ञान के विकल्प चलते हैं।

प्राभृतप्राभृतसमासावरणीय **Prābhṛta prābhṛta samāsāvaraṇīya**

प्राभृतप्राभृतसमास श्रुतज्ञान का आवरण करने वाला कर्म।

प्राभृतिका **Prābhṛtikā**

1. साधु के निमित्त प्रकृत कार्य को बढ़ा लेने या घटा लेने वाला उत्पादन दोष।
2. कुछ काल के बाद होने वाले पुत्रविवाहादि की अपेक्षा साधुओं का आगमन समीपवर्ती है, अतः उनके उपयोग में भी आ जावे। इस विचार से इसी समय विवाहादि करना ठीक है, इस प्रकार समय के पूर्व में उनका करना अथवा विवाहादि यदि समीपवर्ती हों और साधुओं का आगम पीछे होने वाला हो तो उक्त विचार से उनके समय को बढ़ा लेना।

प्राभृतिकास्थापना **Prābhṛtikāsthāpanā**

भिक्षा का ग्राहक एक साधु एक घर में उपयोग करता है - उपयोग से पर्यालोचन करके एक पंक्ति में स्थित तीन घरों में से एक घर में हस्तगत भिक्षा को ग्रहण करता है। दूसरा साधु दो घरों में उपयोग करता है। तीन घरों के अतिरिक्त जहाँ तक अन्य घर नहीं है, वहाँ तक भिक्षा के ग्रहण में स्थापना दोष नहीं होता है। आगे गृहांतर में साधु के निमित्त हस्तगत भिक्षा के ग्रहण में उपयोग के असम्भव होने से प्राभृतिकास्थापना दोष होता है।

प्रामाण्य **Prāmāṇya**

ज्ञान का अपने विषयभूत पदार्थ का व्यभिचारी (अन्यथा) न होना - पदार्थ यथार्थ में जैसा है, उसी रूप से उसका जानना।

प्रामित्य **Prāmitya**

1. एक उद्गम दोष।

वृद्धि (ब्याज) से युक्त या वृद्धि से रहित थोड़ा सा ऋण करके साधु को

देने के लिए जो भात व मंडक (खाद्य विशेष) आदि लिया जाता है, वह प्रामृष्ट या प्रामित्य दोष से युक्त होता है।

2. प्रामित्य दोष दो प्रकार का होता है - (1) लौकिक (2) लोकोत्तर। उनमें भी प्रत्येक उसी द्रव्यविषयक या अन्यद्रव्य के भेद से दो प्रकार का है। भगिनी आदि के द्वारा खरीदी गई भोज्य-वस्तु के देने पर लौकिक प्रामित्य दोष होता है, तथा परस्पर साधुओं के ही वस्त्रादि विषयक लोकोत्तर प्रामित्य दोष होता है।

प्रायश्चित्त **Prāyaścitta**

1. प्रसाद दोष परिहार।
2. कर्त्तव्य के न करने, वर्जनीय का वर्जन न करने पर जो पाप होता है, वह अतिचार है, उसका शोधन। ज्ञान ही प्रायश्चित्त है, क्योंकि वही पाप को काटता है अथवा चित्त का शोधन करता है।
3. जिससे पाप गलता है - नाश होता है।
4. जिससे आचार रूप धर्म प्रकर्ष को प्राप्त होता है, ऐसा अनुष्ठान विशेष।
5. प्रायः बहुलता से व्रत का अतिक्रम चित्त में जानकर पुनः ऐसा आचरण न करना।
6. प्रशस्त कर्म के अनुष्ठान का परित्याग करने पर सम्यक् रूप से अपना चिरंतन भावों में आरोपण।
7. प्रायः लोक, उसके चित्त या मन की शुद्धि की क्रिया।
8. प्रायः- तप में चित्त- निश्चय।
9. अपराध को प्राप्त होने पर जिस तप से पूर्वकृत पाप से विशुद्धि होती है। पूर्वव्रतों से सम्पूर्ण होता है।
10. आभ्यंतर तप का एक प्रकार।

प्रायश्चित्तानुलोम्य **Prāyaścittānulomya**

गीतार्थ (विद्वान्) साधु के प्रायश्चित्तानु लोम्य होता है। कारण कि पंचक, दशक और पंचदशक के क्रम से गुरु और लघु अपराध के अनुकूल प्रायश्चित्त को जानकर जो अपराध गुरु (महान्) होता है, उसकी वह आलोचना प्रथम करता है, तत्पश्चात् लघु और लघूत्तर अपराध की आलोचना करता है।

प्रायोगमनमरण **Prāyogamanamaraṇa**

देखें, पादोपगमनमरण।

प्रायोग्यलब्धि **Prāyogyalabdhi**

1. सब कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति को घातकर अंतःकोडाकोडी प्रमाण स्थिति में तथा अनुभाग को घातकर द्विस्थान अनुभाग में - पाप स्वरूप घाति कर्मों के लता और दारु रूप अनुभाग में तथा अघाति कर्मों के नीम और कांजीररूप अनुभाग में स्थापित करना।
2. लब्धित्रय संपन्न कोई जीव प्रतिसमय विशुद्ध होता हुआ आयुकर्मरहित सात कर्मों की तत्कालीन स्थिति को एककांडकघात से काटकर कांडक द्रव्य के अंतःकोटाकोटि मात्र अवशिष्ट स्थिति में निक्षेप करता है। अथवा अप्रशस्त धाति कर्म के अनुभाग को बहुभाग प्रमाण खंड कर उस द्रव्य को लता और दारु के समान द्विस्थान मात्र में और अघाति कर्मों का बिंब-कांजीर के समान अवशिष्ट अनुभाग में निक्षेप करता है, तब जीव का वह करण प्रायोग्यलब्धि नाम वाला होता है।

प्रायोपगमन **Prāyopagamana**

पंडितमरण में आराधक शरीर से ममत्व छोड़कर उसे जहां जिस प्रकार से रखता है, जीवन पर्यंत उसे वहीं एक स्थिर (हलन-चलन क्रिया से रहित रखता है) इस प्रकार स्व और पर के प्रतीकार (सेवा-सुश्रूषा) से रहित जो उसका मरण होता है, उसे प्रायोपगमन मरण कहा जाता है। पादपोपगमन और पादोपगमन इसी के नामांतर हैं।

प्रारंभक्रिया **Prārambha kriyā**

प्राणियों के छेदन, भेदन और हनन आदि क्रियाओं में स्वयं प्रवृत्त होने तथा अन्य के उनमें प्रवृत्त होने पर हर्षित होना।

प्रावचन **Prāvacana**

1. श्रुतधर्म, तीर्थ, मार्ग, प्रावचन और प्रवचन ये समानार्थक शब्द हैं।
2. जीवादि पदार्थ विषयक वचन (श्रुत) को प्रावचन कहा जाता है।
3. प्रकृष्ट शब्दसमूह में होने वाले ज्ञान को अथवा द्रव्यश्रुत को प्रावचन कहते हैं।

17—416 Min of HRD/2014

प्राविष्कृत **Prāviṣkṛta**

1. एक प्रकार का उद्गम दोष।
2. साधु के निमित्त से घर में प्रकाश करना तथा वर्तनों आदि का संस्कार करना (भस्म आदि से उन्हें स्वच्छ करना और उन्हें स्थानांतरण करना)।

प्रासाद **Prāsāda**

1. जो भवन अपने आयाम की अपेक्षा ऊंचाई में दुगुना होता है, वह प्रासाद कहलाता है।
2. राजाओं और देवताओं के भवन।
3. भवन, जो ऊंचाई में अधिक होते हैं।
4. नरेंद्राध्यासित सप्तभूमादि आवासविशेष।

प्रासुक **Prāsuka**

1. कर्मास्रवों से रहित अथवा निष्कलंक - सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चरित्र।
2. जो अत्यंत प्रशस्त, मनोहर एवं वनस्पतिकाय आदि सूक्ष्म जीवों के संचार से रहित हो।

प्रासुक जल **Prāsuka jala**

1. योग्य वस्त्र से छाना गया, दो प्रहर तक की मर्यादा वाला जल।
2. गरम किया गया जल; दिन-रात तक की मर्यादा वाला जल।
3. प्रस्तरों से विदीर्ण, अरहट से ताड़ित, वापिका का तपा हुआ जल।

प्रासुकमार्ग **Prāsuka mārga**

1. शकट, यान, पालकी, रथ आदि बहुत से वाहन जहाँ से निकल चुके हैं, वह मार्ग।
2. हाथी, घोड़ा, गधा, ऊँट, गाय, भैंस, भेड़-बकरी आदि बहुत से पशु जहाँ से निकल चुके हैं, वह मार्ग।
3. बहुत से पुरुष और स्त्रियां जहाँ से निकल चुके हैं वह मार्ग।

प्रीतिदान **Prītidāna**

अपने नगर में तीर्थंकर या केवली के आगमन की सूचना देने वाले के लिए प्रीतिपूर्वक दिया जाने वाला दान।

प्रीतिगतकृत्य **Prītigatakṛtya**

अत्यंत प्रिय पत्नी के प्रति किये जाने वाला कार्य।

प्रीत्यनुष्ठान **Prītyanuṣṭhāna**

अन्य कार्य को छोड़कर (हितोत्पादक होने से) प्रीतिपूर्वक किये जाने वाला अनुष्ठान।

प्रेक्षा असंयम **Prekṣāasaṃyama**

देखने में होने वाला असंयम।

प्रेक्षा संयम **Prekṣāsaṃyama**

1. प्रेक्ष्य संयम का अपर नाम।
2. देखकर आवश्यक कार्य का करने वाला संयम।

प्रेत्यभाव **Pretyabhāva**

मरकर अगले भव में प्राणी का जन्म होना।

प्रेष्यप्रयोग **Preṣyaprayoga**

1. देशव्रत का एक अतिचार।
2. सेवक को आदेश देकर मर्यादित क्षेत्र के बाहर से अपना कार्य करना।

प्रोषध **Proṣadha**

एक बार भोजन करना।

प्रोषधोपवास **Proṣadhopavāsa**

चतुर्दशी और अष्टमी के दिन असन, पान, खाद्य और लेह्य इन चार प्रकार के भोज्य पदार्थों का सदा उत्सुकतापूर्वक प्रत्याख्यान करना।

प्रोषधोपवासप्रतिमा **Proṣadhopavāsapratimā**

1. श्रावक की तृतीय प्रतिमा।
2. प्रत्येक मास के चारों पर्वों में यथाशक्ति नियम पूर्वक उपवास में रत रहकर ध्यान में रत रहना।

प्रोषधोपवासव्रतातिचार **Proṣadhopavāsavratāticāra**

प्रोषधोपवास व्रत में लगने वाले पांच दोष।

1. अशोधित भूमि पर मल-मूत्र करना।
2. पूजोपकरण का ग्रहण
3. बिस्तर एवं आसन का बिछाना और उस पर सोना-बैठना।
4. बुभुक्षापीड़ित होकर प्रोषधोपवास के प्रति अनादर का भाव।
5. प्रोषधोपवास की विधि का विस्मरण।

फलचारण **Phalacāraṇa**

1. ऋद्धि विशेष।
2. ऋद्धि के प्रभाव से अनेक प्रकार के वन-फलों में स्थित जीवों की विराधना न कर - उन्हें पीड़ा न पहुंचाकर साधु की उनके ऊपर से दौड़ने की सामर्थ्य।

फलचारणऋद्धि **Phalacāraṇa ṛddhi**

अनेक प्रकार के वनफलों में स्थित जीवों की विराधना न करके उन्हें पीड़ा न पहुंचाकर साधु को उनके ऊपर से दौड़ कराने वाली ऋद्धि विशेष।

फिरिक्की **Phirikkī**

गोल चुंद से संबद्ध नेमि (पहिये का घेरा) और तुम्ब (गाड़ी का मध्य) के आधारभूत सीधी आठ लकड़ियों से युक्त गाड़ी। अपर नाम गिल्ली।

बंध **Bandha**

1. रागी जीव के शुभाशुभ भावों से होने वाले विविध प्रकार के कर्मपुद्गलों का बंधना।
2. कषाययुक्त जीव का योगादि से कर्मयोग्य पुद्गलद्रव्यों का ग्रहण करना।
3. आस्रवों से गृहीत कर्म का आत्मा से संयोग।
4. जीव और कर्मों का मिथ्यात्व, असंयम और कषाय के योग से एकत्व परिणाम।
5. मिथ्यात्वादि बंधहेतुओं से अंजन के चूर्ण के डिब्बे के समान निरन्तर पुद्गलों से व्याप्त लोक में कर्म के योग्य पुद्गलों से आत्मा का नीरक्षीरवत् अथवा अग्नि तथा लोहे के पिण्ड के समान अन्योन्यानुगमभेदात्मक संबंध।

बंधक **Bandhaka**

द्रव्य और भाव के भेद से दो भागों में विभक्त बंध का कर्ता।

बंधकाद्धा **Bandhakāddhā**

अपूर्वकरण के आदि में - प्रथम समय में प्रारम्भ किया गया बंध, जब तक अन्य बंध नहीं होता, प्रारंभ किया हुआ बंध समाप्त नहीं होता, उतने काल को बंधकाद्धा कहा जाता है। यह स्थिति काण्डक काल के समान है। स्थितिघात और स्थितिबंध एक साथ आरम्भ होते हैं तथा एक साथ निष्ठा का घात होता है।

बंधन **Bandhana**

1. रस्सी अथवा सांकल आदि के द्वारा परतंत्र करना।
2. ज्ञानावरण आदि रूप से निषेक रूपता को प्राप्त उसी कर्म का कषाय परिणाम की विशेषता से फिर से निबिड बंधन होना।
3. वीर्यविशेष से आठ प्रकार का कर्म बंधना।

बंधन करण **Bandhanakaraṇa**

पुद्गलों की प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश रूप से परिणामाने की क्रिया।

बंधनगुण **Bandhanaguṇa**

पुद्गलों का परस्पर बंध कराने वाला गुण।

बंधन नाम **Bandhana-nāma**

1. शरीर नाम कर्म के उदय से ग्रहण किए गए पुद्गलों का एक-दूसरे के प्रदेश में संश्लेषण।
2. शरीर नाम कर्म के उदय से ग्रहण किए गए ग्रह्यमाण तद्योग्य पुद्गलों के आत्म-प्रदेशों में स्थित होने पर तथा शरीराकार परिमित होने पर भी परस्पर वियोग न होना।

बंध विमोचन गति **Bandha vimocana gati**

आम, आँवला, बिजौरा, बेल, कैथ, कटहल, अनार, पारापत, अखरोट, चिरौंजी, बेर अथवा तेंदू आदि पर्यायगत पके हुए फलों का बंधन मुक्त होकर बिना किसी व्याघात के स्वभाव से नीचे की ओर गति होना।

बंधनीय **Bandhanīya**

महाकर्म प्रकृति प्राभृत के प्रतिवेदन आदि चौबीस अनुयोग द्वारों में छठा बंधन नाम का अनुयोग द्वार है, वह बंध, बंधक, बंधनीय और बंध विधान के भेद से चार प्रकार का है। बंधनीय अनुयोगद्वार में बंध की प्ररूपणा तेईस वर्गणाओं के द्वारा होती है। जीव से पृथग्भूत कर्म-नोकर्म बंधयोग्य पुद्गलस्कंधों का बंधन।

बंध विधान **Bandha vidhāna**

प्रकृति-स्थिति-अनुभाग और प्रदेश के भेद से भेद को प्राप्त बंध के विकल्पों का नाम।

बंधस्थान **Bandha sthāna**

एक जीव के एक समय में जो अनुभाग दिखता है उसका नाम स्थान है, बंध से

जो स्थान निर्मित होता है वह बंध स्थान है। पूर्वबद्ध अनुभाग का घात करते समय बंध अनुभाग के समान स्थान।

बंधोत्कृष्ट **Bandhotkṛṣta**

मूल प्रकृति की उत्कृष्ट स्थिति के अनुसार उत्तर प्रकृतियों की बंध निमित्तक उत्कृष्ट स्थिति का होना।

बकुश **Bakuśa**

1. जो निर्ग्रंथता पर आरूढ़ होकर अखंडित रूप में व्रतों का पालन करते हुए शरीर और उपकरणों की स्वच्छता का अनुसरण करते हैं तथा जिनका परिवार से मोह नहीं छूटा है, ऐसे साधु। बकुश शब्द का अर्थ अनेक वर्णवाला होता है। अनेक प्रकार के मोह से संयुक्त होते हुए संयम वाले साधु बकुश हैं।
2. जिन्होंने मुनिधर्म स्वीकार कर लिया है, साथ ही शरीर और उपकरणों की सुंदरता के अभिलाषी हैं, ऋद्धि एवं यश के इच्छुक हैं, सात गौरव-सुखशीलता के आश्रित हैं, ऐसे साधु। जाँघों के घिसने, तेल आदि से शरीर का मार्जन करने व बालों को कैंची से काटे गए के समान रखने आदि रूप जिनका परिवार संयम के प्रतिकूल है तथा जो प्रायश्चित्त के योग्य अतिचारजनित विचित्रता से युक्त साधु।

बद्धप्रलाप **Baddhapralāpa**

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-इन चार पुरुषार्थों के वर्णन से रहित भाषा।

बद्धरागवेदनीयपुद्गल **Baddharāgavedanīyapudgala**

बंध परिणाम को प्राप्त होकर सत्कर्मरूप से स्थित होते हुए जीव के द्वारा आत्मसात् कर लिए गए रागवेदनीय पुद्गल परमाणुओं का जीव के आत्मप्रदेशों से एक क्षेत्रावगाहरूप में संबद्ध होना।

बद्धश्रुत **Baddhaśruta**

गद्य-पद्य बंधक से युक्त आचारादि रूप द्वादशांग श्रुत।

बल **Bala**

1. धन-दान और प्रिय भाषण द्वारा शत्रु का निवारण करते हुए सभी अवस्थाओं में स्वामी को बल प्रदान करने वाला (सैन्य)।

2. जम्बूद्वीप के परावर्तन कर सकने के सामर्थ्य रूप बल
3. प्रतीन्द्र आदि रूप सैन्य बल अथवा अतिशय मनोहर रूप बल वाला इंद्र।

बलमान वशार्तमरण **Balamānavaśārtamaraṇa**

मैं वृक्ष और पर्वत आदि के उखाड़ने में समर्थ सुभट हूँ तथा मेरे पास मित्रों का भी बल है। इस प्रकार बल के अभिमान पूर्वक मरण।

बलवाहनकथा **Balavāhanakathā**

हाथी आदि बल तथा वेगसर आदि वाहन की चर्चा।

बलिशेष दोष **Baliśeṣadoṣa**

1. यक्ष व नाग आदि के निमित्त से दी गयी बलि (उपहार) से बचा हुआ भाग मुनि को देना।
2. साधुओं के आगमन के लिए की जाने वाली पूजा आदि।

बहि:पुद्गलक्षेप **Bahiḥpudgalakṣepa**

मर्यादित देश के बाहर प्रयोजन के उपस्थित होने पर दूसरों को संबोधित करने के लिए कंकण आदि फेंकना।

बहि:शंबूका **Bahiḥ śaṃbūkā**

गोचर भूमि में साधु भिक्षार्थ क्षेत्र के बाह्य भाग से गोल रूप में परिभ्रमण करते हुए मध्यभाग में आना।

बहिरंगच्छेद **Bahiraṅgaccheda**

दूसरे के प्राणों का विघात करना।

बहिरंगधर्मध्यान **Bahiraṅgadharmadhyāna**

पंचपरमेष्ठियों की भक्ति आदि के साथ उनके अनुकूल शुभ अनुष्ठान।

बहिरात्मा **Bahirātma**

1. अन्तरंग और बाह्य जल्प में वर्तन करने वाली आत्मा।
2. शरीर, स्त्री, पुत्र, मित्रादि एवं विभाव चेतना रूप-राग द्वेष रूप विभाव परिणति को आत्मस्वरूप मानना। इन्द्रिय जनित सुखादि में मूढ़ बुद्धि होकर रमना एवं वस्तु स्वरूप को नहीं प्राप्त करते हुए - यह सब अतिशय कष्टदायक है। ऐसा विचार नहीं करना तथा इन्द्रिय को दु:ख रूप नहीं मानना।

3. विषय - कषायों में संलग्न रहने वाला आत्मा।
4. जीवादि तत्त्वों का श्रद्धान न करने वाला, गुणों में द्वेष करने वाला और आत्मस्वरूप को न जानने वाला आत्मा।

मग्न **Magna**

मन को इन्द्रिय विषयों से हटाकर, आत्मस्वरूप में विश्रान्ति धारण करने वाला ध्याता।

बहिर्मल **Bahirmala**

एक स्थान में - आत्मा के विषय में - शरीर व इन्द्रियों आदि को बाह्यमल तथा आत्मभिन्न - सुवर्णादि में कीट आदि को बाह्यमल कहा जाता है।

बहिर्योग **Bahiryoga**

बाहरी क्रिया।

बहिर्व्याप्ति **Bahirvyāpti**

पक्ष को छोड़कर दृष्टांत में साध्य-साधन के अविनाभाव को दिखलाना।

बहु-अवग्रह **Bahu avagraha**

बहुत पदार्थों का एक बार में ग्रहण होना।

बहुजनदोष **Bahujanadoṣa**

1. गुरु के द्वारा दिया गया प्रायश्चित्त क्या आगम में युक्त है, अथवा नहीं? इस प्रकार शंका करने वाले का अन्य साधु से परिप्रश्न।
2. एक आचार्य से दोष निवेदन कर प्रायश्चित्त ग्रहण कर अश्रद्धान करते हुए अन्य आचार्य से निवेदन करना।
3. बहुजनों के मध्य में आलोचना।

बहुज्ञान **Bahujñāna**

1. संभिन्नश्रोतृत्व ऋद्धि अथवा अन्य भी कोई श्रोता श्रोत्रेन्द्रियावरण और वीर्यान्तराय के उत्कृष्ट क्षयोपशम के साथ अंगोपांग नामकर्म के उदय से तत, वितत, घन और सुषिर आदि शब्दों को एक साथ ग्रहण करना श्रोत्रेन्द्रियजन्य बहु अवग्रह कहलाता है।
2. बहुत संख्याविशेष का अथवा प्रमाण में बहुत पदार्थों का ग्रहण।

बहुबीजक **Bahubījaka**

1. बहुबीजों से युक्त अस्थिक, तिन्दुक, कपित्थ, मातुलिंग, बेल, आंवला,

कटहल, अनार, अश्वत्थ (पीपल), ऊमर, वट, न्यग्रोध, नन्दिवृक्ष, पिप्पली, शतरी, प्लास, कादुम्बरि, कुस्तुम्भरि, देवदालि, तिलक, लवक, छत्रोपण, शिरीष, सप्तपर्ण, दधिपर्ण, लोध्र, धव, चंदन, अर्जुन, नीप, कुटज और कदम्बक ये तथा इसी प्रकार के अन्य वृक्ष भी जो फलांतर्गत बहुत बीजों वाले हैं, वे बहुबीजक कहलाते हैं। आचार्य मलयगिरि के अनुसार इस देश में प्रसिद्ध आमलक (आँवला) आदि बहुबीजक नहीं हैं, अतः देशान्तर्गत आँवला आदि को बहुबीजक समझना चाहिए, एतद्देशीय वे एकस्थिक है, न कि बहुबीजक।

बहुमान **Bahumāna**

1. गुरु आदि के प्रति हृदय से अतिशय आदर का भाव रखना।
2. निर्जरा के कारणभूत सूत्रार्थ का उच्चारण व वाचन करते हुए गुरु आदि का आदर करना।
3. गुरुविनय, स्वाध्याय, ध्यानाभ्यास, परार्थकरण और इतिकर्तव्यता, इस प्रकार की साधुजन की प्रवृत्ति में गुरुविनय के अंतर्गत बहुमान है।
4. निर्मल अंतःकरण से गुरु के प्रति अनुराग का भाव रखना ।

बहुविधज्ञान **Bahuvidhajñāna**

1. श्रोत्रेन्द्रियावरण और वीर्यान्तराय के उत्कृष्ट क्षयोपशम के साथ आंगोपांग नामकर्म के उदय का सहकार होने पर तत-वितत आदि शब्दों का एक दो तीन आदि संख्यात, असंख्यात व अनन्तगुणे विकल्पों से संयुक्त ग्रहण करना।
2. बहुत प्रकार के घोड़ा, हाथी, गाय और भैंस आदि का ग्रहण।
3. मतिज्ञान में बहु जातियों का ग्रहण।

बहुश्रुतता **Bahuśrutatā**

1. युग श्रेष्ठ आगमों की जानकारी।
2. स्व-पर सिद्धांतों का ज्ञान।

बहुश्रुतभक्ति **Bahuśrutabhakti**

1. बारह अंगों से पारगामियों के द्वारा व्याख्यात (उपदिष्ट) आगम ग्रंथों का पारायण व तदनुसार आचरण।

2. स्वपर समयों (सिद्धांतों) के ज्ञाता बहुश्रुतों के विषय में निर्मल परिणाम के साथ अनुराग।

बादर **Bādara**

1. स्थूल।
2. छिन्न होकर स्वयं जुड़ने में समर्थ दूध, घी, तैल और पानी आदि।

बादर अद्धा पल्योपम **Bādara addhā palyopama**

1. एक योजन विस्तीर्ण और एक योजन गहरे गोल गड्ढे को एक दिन से लेकर अधिक से अधिक सात दिन के उत्पन्न शरीर गत रोमों से ठसाठस भरने पर उनसे परिपूर्ण वह गड्ढा पल्य कहलाता है। उसमें से सौ-सौ वर्षों में एक एक रोम के निकालने पर जितने समय में वह रिक्त होता है उतने समय का नाम बादर अद्धा पल्य है।
2. उत्सेधांगुल के प्रमाण से एक योजन लम्बे-चौड़े गहरे गड्ढे को बालाग्रों से भरकर उनमें से सौ वर्ष में एक एक बालाग्र के निकालने पर जितने समय में वह रिक्त होता है, उतना काल। यह संख्यात कोटिवर्ष प्रमाण होता है।
3. सौ-सौ वर्ष बीत जाने पर पूर्वोक्त पल्य से एक एक बालाग्र का अपहार करने से संख्येय वर्ष कोटि मान वाला निर्लेपना काल, दश कोड़ाकोड़ी बादर अद्धापल्योपम प्रमाण काल।

बादर आलोचना दोष **Bādara ālocanā doṣa**

अन्तःकरण में भय मद अथवा माया से युक्त होकर सूक्ष्म दोष की आलोचना और स्थूल दोष को छिपाना।

बादर उद्धार पल्योपम **Bādara uddhārapalyopama**

उत्सेधांगुल के प्रमाण से निष्पन्न एक योजन विस्तृत आयत और गहरे गड्ढे को शिखा पर्यन्त एक दिन से सात दिन तक के उत्पन्न रोमों से इस प्रकार सघन भरा जाये कि उन बालाग्रों को वायु उड़ा न सके, अग्नि जला न सके और जल उनमें प्रविष्ट होकर सड़ा-गला न सके। तत्पश्चात् उसमें से प्रत्येक समय में एक एक बालाग्र के निकालने पर जितने काल में वह रिक्त होता है, उतना काल बादर उद्धार पल्योपम कहलाता है।

बादर उद्धार सागरोपम **Bādara uddhāra sāgaropama**

दश कोड़ाकोड़ी बादर उद्धार पल्योपम प्रमाण काल।

बादर कालपुद्गलपरावर्त **Bādara kālapudgalaparāvarta**

उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालों के समय में एक जीव अनन्तर अथवा परम्परा प्रकारों से क्रम से अथवा अक्रम से भी जितने काल में मरण को प्राप्त होता है, उतने काल का परिमाण।

बादर क्षेत्रपरावर्त **Bādara kṣetraparāvarta**

जीव का अपने मरण के द्वारा क्रम या व्युत्क्रम से लोकाकाश के समस्त प्रदेशों को स्पृष्ट करता है, उतना काल।

बादर क्षेत्र पल्योपम **Bādara kṣetrapalyopama**

एक योजन लम्बे, चौड़े और गहरे गड्ढे को एक दिन से सात दिन तक के उत्पन्न बालाग्रों से ठसाठस भरने पर उन बालाग्रों से जितने आकाशप्रदेश स्पृष्ट हैं, उनमें एक एक आकाशप्रदेश के प्रत्येक समय में निकाले जाने पर जितने काल में वे समाप्त होते हैं, उतना काल विशेष।

बादर क्षेत्रपुद्गलपरावर्त **Bādara kṣetrapudgalaparāvarta**

चौदह राजु प्रमाण लोक के समस्त प्रदेशों पर एक जीव क्रम या अक्रम से मरकर जितने काल में उन सबका स्पर्श करता है, उतना काल विशेष।

बादरक्षेत्रसागरोपम **Bādara kṣetrasāgaropama**

दश कोडाकोडी बादर क्षेत्र पल्योपम प्रमाण काल।

बादरजीव **Bādara jīva**

1. बादर नाम कर्म के उदय से उत्पन्न जीव।
2. बादरत्व परिणामविशेष है, जिसके कारण पृथिव्यादि एक एक जन्तुशरीर का चक्षु के द्वारा ग्राह्यत्व का अभाव होने पर भी समुदाय में बहुतों का चक्षु से ग्रहण होना।

बादरद्रव्यपुद्गलपरावर्त **Bādara dravyapudgalaparāvarta**

संसार में आत्मभाव से परिणमन करते हुए जितने काल में समस्त अणु परमाणुओं को एक जीव छोड़ता है।

बादरनाम **Bādaranāma**

1. दूसरों को बाधा पहुँचाने वाला शरीर नाम कर्म।
2. स्थूलता को प्राप्त करने वाला कर्ता।
3. चक्षु से ग्रहण योग्य शरीर प्राप्त कराने वाला कर्ता।

बादरनिगोदद्रव्यवर्गणा **Bādaranigodadravyavargaṇā**

बादरनिगोदिया जीवों के औदारिक, तैजस और कार्मण-इन तीनों शरीरों में जो पुद्गल स्वाभाविक परिणाम से उपचय को प्राप्त होते हैं, वे एक जीव के एक एक शरीर कर्म प्रदेशों में सर्व जीवों से अनन्तगुणी उपचय प्राप्त पुद्गल वर्गणाएं।

बादरनिगोदप्रतिष्ठित **Bādaranigodapratiṣṭhita**

बादर निगोद जीवों के योनिभूत प्रत्येक शरीर वाले जीव।

बादर प्राभृतक दोष **Bādara prābhṛtaka doṣa**

दिन, पक्ष, मास अथवा वर्ष को परिवर्तित कर साधु को दिया जाने वाला दूषित दान।

बादर बादर **Bādara bādara**

1. पुद्गलस्कंध का टूटने या खंडित होने पर स्वयं जुड़ने में असमर्थ होना। जैसे-काष्ठ व पत्थर आदि। स्थूल-स्थूल, बादर-बादर स्कंधों का समानार्थक है।
2. छेदन-भेदन योग्य पृथ्वी रूप पुद्गल द्रव्य, जिसे अन्यत्र ले जाया जासके।

बादरभावपुद्गलपरावर्त **Bādara bhāvapudgalaparāvarta**

एक जीव अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थानों में बंधकस्वरूप से रहते हुए क्रम से या व्युत्क्रम से जितने काल में सब अनुभागस्थानों में मरण को प्राप्त होता है, उतना काल।

बादरयुग्मराशि **Bādara yugmarāśi**

चार का भाग देने पर दो शेष रहने वाली राशि।

बादरसंपराय **Bādarasaṁparāya**

1. जिस जीव के बादर (स्थूल) सांपराय होता है, उसे बादर सांपराय(कषाय) कहा जाता है। तदनुसार उससे प्रमत्तादि अनिवृत्तिकरणान्त गुणस्थानवर्ती संयत जीव विवक्षित हैं।
2. संपराय और सांपराय ये दोनों समानार्थक शब्द हैं।

बादरसूक्ष्म **Bādarasūkṣma**

स्थूलता से उपलब्धि के होने पर भी जिनका छेदन, भेदन एवं ग्रहण न हो वे छाया, आतप, अन्धकार एवं चाँदनी आदि पुद्गल पर्याय।

बादरस्थिति **Bādarasthiti**

कर्मस्थिति को आवली के असंख्यातवें भाग से गुणित करने पर उत्पन्न होने वाली बादरस्थिति।

बाल **Bāla**

1. शक्ति और समय के अनुसार आचरण न करने वाला।
2. स्थूल संयम का भी पालन न करने वाला।

बालतप **Bālatapa**

मिथ्यात्व से युक्त तपश्चरण।

बालपण्डितमरण **Bālapaṇḍitamaraṇa**

1. असंयम के परित्याग में असमर्थ होता हुआ हिंसादि पापों से एकदेश विरत में भी जो देशतः विरत होता है, उसे एकदेशविरत कहा जाता है, उसका मरण।
2. संयतासंयत का मरण।

बालप्रयोगाभास **Bālaprayogābhāsa**

प्रतिज्ञा व हेतु आदि पाँच अवयवों में से कुछ की हीनता।

बालबाल **Bāla bāla**

चारित्र के साथ सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान से रहित होने वाला मिथ्यादृष्टि।

बालबालमरण **Bālabālamaraṇa**

व्यवहारपांडित्य, सम्यक्त्वपांडित्य, ज्ञानपांडित्य और चारित्रपांडित्य से रहित जीव का मरण

बालमरण **Bālamaraṇa**

असंयमी का मरण।

बाह्य अनात्मभूत **Bāhya anātmabhūta**

उपयोग के हेतुभूत अपने से असंबद्ध दीपक आदि।

बाह्य आत्मभूतहेतु **Bāhya ātmabhūtahetu**

विशिष्ट नामकर्म के उदय से नियतस्थान और प्रमाण से युक्त आत्मा से संबद्ध चक्षु आदि इंद्रियों का समुदाय रूप उपयोग।

बाह्य उपधि **Bāhya upadhi**

धन-धान्यादि बाह्य परिग्रह।

बाह्य उपधि व्युत्सर्ग **Bāhya upadhi vyutsarga**

1. अपने द्वारा ग्रहण न की गई, एकत्व को प्राप्त न हुई वस्तु का त्याग करना।
2. बाह्य एवं आभ्यंतर परिग्रह का त्याग।

बाह्य चारित्राचार **Bāhyacāritrācāra**

पाँच महाव्रतों, पाँच समितियों और तीन गुप्तियों रूप निर्ग्रंथ (मुनि) का स्वरूप।

बाह्य ज्ञानाचार **Bāhyajñānācāra**

काल व विनयादिरूप आठ प्रकार का ज्ञानविषयक आचार।

बाह्य तप **Bāhyatapa**

1. दुष्कृत का परिहार करने वाला, श्रद्धा को उत्पन्न करने वाला तथा भोगों को हीन न करने वाला तप।
2. जिससे मन में दुष्कृत न उठे, जिससे श्रद्धा उत्पन्न हो, जिससे योग हीन न हों वह तप।

बाह्यतपश्चरणाचार **Bāhyatapaścaraṇācāra**

बाह्य एवं अंतरंग तपों का आचरण।

बाह्य दर्शनाचार **Bāhyadarśanācāra**

निःशंकादि अष्ट गुणभेद रूप बाह्य आचार।

बाह्यद्रव्यमल **Bāhyadravyamala**

पसीना, मैल, धूलि और कीचड़ आदि ।

बाह्य निर्वृत्ति **Bāhyanirvṛtti**

1. इन्द्रिय के आकार व इंद्रिय नाम वाले आत्मप्रदेशों में नामकर्म के उदय से विशेष अवस्था को प्राप्त प्रतिनियत आकार वाला पुद्गलों का समूह।
2. आत्मप्रदेशों में पुद्गलविपाकी नामकर्म के द्वारा कर्ण विवरादि रूप विशेष रचना तथा अंगोपांग नामकर्म से निष्पन्न बाह्य रचना।

बाह्यपरमशुक्लध्यान **Bāhyaparamaśukladhyāna**

शरीर व नेत्रों के हलन-चलन से रहित एवं श्वासोच्छ्वास क्रिया से रहित अपराजित ध्यान।

बाह्ययोग **Bāhyayoga**

लेश्या, कषाय, औदयिक परिणामों का योग।

बाह्यवीर्याचार **Bāhyavīryācāra**

बाहरी शक्ति को न छिपाना।

बाह्यव्युत्सर्ग **Bāhyavyutsarga**

बारह आदि भेदरूप उपधि को छोड़कर अन्य जो संबद्ध अनेषणीय - साधु के लिए अग्राह्य है, उस अन्न-पानादि का त्याग।

बाह्यसल्लेखना **Bāhyasallekhanā**

शरीर विषयक सल्लेखना।

बिंबमुद्रा **Bimbamudrā**

पद्ममुद्रा के समान अंगुष्ठ को पसारकर उससे मध्यमा अंगुली के अग्रभाग को संलग्न करना।

बिडालीसमानशिष्य **Bidālīsamānaśiṣya**

पात्र में स्थित दूध को भूमि पर गिराकर पीने वाली बिडाली के समान, विनयादि करने के भय से गुरु के समीप जाकर साक्षात् श्रवण नहीं करने वाला, किन्तु व्याख्यान से उठकर आए हुए किन्हीं दूसरों से उसे जानने वाला शिष्य।

बिभ्यद्वंदन **Bibhyadvandana**

1. गुरु आदि से भय को प्राप्त होकर परमार्थ से बाह्यभूत बालस्वरूप की वंदना करने पर होने वाला दोष।
2. संघ, कुल, गच्छ अथवा क्षेत्र से मुझे निकाल देंगे, इस प्रकार के भय से वंदना करना।

बीजपाद **Bījapad**

बीज, मूल, अंकुर, पत्र, पोर, स्कंध, फूल, तुष, कुसुम, क्षीर और तंदुल आदि के आधार के समान द्वादशांग के अर्थ का आधारभूत पद।

बीजबुद्धि **Bījabuddhi**

1. नो इंद्रिय मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय-इन तीन कर्मोंकी प्रकृतियों के उत्कृष्ट क्षयोपशम से युक्त किसी महर्षि की बुद्धि।
2. संख्यात शब्दों में लिंग युक्त एक ही बीज पद को दूसरे के उपदेश से प्राप्त करके उसके आश्रय से समस्त श्रुत को विचारपूर्वक ग्रहण करने वाली बुद्धि।

3. दिखलाए गंये पद, प्रकरण, उद्देश्य और अध्याय आदि के आश्रय से समस्त अर्थ का अनुसरण करने वाली बुद्धि।
4. एक बीजाक्षर से शेष शास्त्र का ज्ञान।
5. सर्वश्रुत के मध्यं में एक प्रधान अक्षरादिक बीज को पाकर सबका ज्ञान होना।

बीज रुचि **Bījaruci**

1. बीज पद के ग्रहण पूर्वक सूक्ष्मार्थ तत्त्वार्थ की श्रद्धा कराने वाली रुचि।
2. बीज पद के आदानपूर्वक सूक्ष्म अर्थ से उत्पन्न होने वाली रुचि।
3. उपलब्धि के वश खोटे अभिप्राय के विध्वंस से अनुपम उपशम रूप आभ्यंतर कारण से विज्ञात दुर्व्याख्येय जीवादि पदार्थों के बीजभूत शास्त्र से उत्पन्न होने वाली रुचि।
4. एक पद से अनेक पद तथा उनके अर्थों की खोज से जल में तैल-बिन्दु के समान फैलने वाली रुचि।

बुद्ध **Buddha**

1. अज्ञान रूपी निद्रा में सोये हुए संसार में बिना दूसरे के उपदेश से जीवाजीवादि तत्त्वों को जानने वाला।
2. केवलज्ञानादि अनन्त गुणों सहित।
3. मति, श्रुत और अवधिज्ञान के बोध वाला मोक्ष मार्ग में स्वयं बुद्ध है। केवलज्ञान के बोध से जगत्त्रय को बोधित करने वाला अनन्तज्ञान से व्याप्त केवलज्ञानी।

बुद्धजागरिका **Buddhajāgarikā**

उत्पन्न हुए ज्ञान-दर्शन के धारक, स्कंधक अधिकार में कहे गए अनुसार सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी अरहंत भगवान् का जागरण।

बुद्धबोधित **Buddhabodhita**

सिद्धांत के ज्ञाता एवं संसार के स्वभाव के जानने वालों के द्वारा बोधित।

बुद्धबोधितकेवलज्ञान **Buddhabodhitakevalajñāna**

आचार्य आदि के द्वारा बोध को प्राप्त हुए जीवों का केवलज्ञान।

बुद्धबोधितसिद्ध **Buddhabodhitasiddha**

बुद्ध आचार्य से बोधित सिद्ध।

बुद्धि **Buddhi**

1. अर्थ की जानकारी कराने वाली मति।
2. इस लोक और परलोक का अन्वेषण करने में संलग्न मति।
3. अर्थग्रहण की शक्ति।

बुद्धि आकार **Buddhi ākāra**

स्व और पर पदार्थों को प्रकाशित करना।

बुद्धिपूर्वविपाक **Buddhipūrvavipāka**

बुद्धिपूर्वक होने वाला विपाक।

बुद्धिमान् **Buddhimān**

1. विद्या से विनीत।
2. औत्पत्तिकी एवं पारिणामिकी आदि चार प्रकार की बुद्धि से सम्पन्न।

बुद्धिवैशद्य **Buddhivaiśadya**

1. अनुमान आदि के अतिरेक (आधिक्य) से विशेष प्रतिभासन।
2. अनुमानादि की अपेक्षा नियत देश, काल एवं आकार आदि की विशेषता के साथ पदार्थों का प्रतिभासन।

बुद्धिसिद्ध **Buddhisiddha**

1. एक पद से अनेक पदों का अनुसरण करने वाली, संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय रूप मल से रहित तथा सूक्ष्म पदार्थों के जानने में समर्थ बुद्धि वाला।
2. औत्पत्तिकी, पारिणामिकी, वैनयिकी और कर्मजा रूप चार प्रकार की बुद्धि से संपन्न।

बुध **Budha**

प्रवचन की उन्नति के निमित्तभूत परमार्थ मार्ग में स्थित होता हुआ रत्नत्रय का अनुसरण करने वाला।

बोध **Bodha**

आत्म परिज्ञान।

भक्तकथा **Bhaktakathā**

1. विकथा का एक भेद।
2. चार प्रकार के भोजन संबंधी चर्चा।

18—416 Min of HRD/2014

भक्तपरिज्ञा **Bhaktaparijñā**

तीन अथवा चार प्रकार के आहार का परित्याग।

भक्तप्रत्याख्यान **Bhaktapratyākhyāna**

1. केवल भोजन का परित्याग करना, जिसमें न तो गमनादि क्रिया का त्याग किया जाता है और न पान का ही निरोध किया जाता है।
2. पंडितमरण का एक भेद।
3. अपने और अन्य के उपकार की अपेक्षा से किया जाने वाला मरण।
4. इसका अपर नाम भक्त प्रतिज्ञा भी है।

भक्ति **Bhakti**

अरिहंत, आचार्य, बहुश्रुत (उपाध्याय) और प्रवचन के विषय में विशुद्ध परिणाम युक्त अनुराग।

भक्तिचैत्य **Bhakticaitya**

भक्तिपूर्वक बनाया गया जिनायतन।

भक्त्यनुष्ठान **Bhaktyanuṣṭhāna**

पूज्यता के अधिक संबंध से बुद्धिमान पुरुष का अतिशय विशुद्ध व्यापार।

भगवान् **Bhagavān**

1. समस्त ऐश्वर्य (भग) से युक्त।
2. ज्ञानधर्मादि समस्त ऐश्वर्य से युक्त अरिहंत।

भट्टारक **Bhaṭṭāraka**

1. समस्त शास्त्रों एवं कलाओं का ज्ञाता तथा अनेक गच्छों को बढ़ाने वाला प्रभावक महामनस्वी।
2. पंडितों का प्रेरक।
3. साधु, मुनि, स्वामी का अपरनाम।

भद्रा प्रतिमा **Bhatdrāpratimā**

कार्योत्सर्ग की स्थिति विशेष, जिसमें पूर्वादि चार दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में दो दिन-रात प्रमाण चार प्रहर तक कायोत्सर्ग किया जाता है।

भय **Bhaya**

1. शत्रु के आक्रमण आदि का नाम।
2. नोकषाय का एक भेद।

3. भय नोकषाय, भय मोहनीय, भय वेदनीय और भय अकषाय ये सभी एकार्थक हैं। इसके उदय से प्राणी को उद्वेग होता है।

भयसंज्ञा **Bhayasaṅjñā**

1. संज्ञा का एक भेद।
2. भय मोहनीय के उदय से भय का अभिप्रायरूप जीव का परिणाम।
3. भय रूप जीव का यह परिणाम बल की हीनता, भयमोह का उदय, भयमोह की बुद्धि और भयमोह के उपयोग के कारण उत्पन्न होता है।

भव **Bhava**

1. आयु कर्म के उदय के निमित्त से जीव की अवस्था।
2. कर्म के वशीभूत जीव की अवस्था।
3. चारों गतियों में भ्रमण करने वाले जीवों को मरने के बाद प्राप्त होने वाली पर्याय।

भवनवासी **Bhavanavāsi**

भवनवासी नाम कर्म के उदय से भवनों में रहनेवाले देव।

भवपरिवर्तन **Bhavaparivartana**

नरक गति में सबसे जघन्य आयु दस हजार वर्ष है। इस आयु के साथ कोई जीव वहां उत्पन्न हुआ, पश्चात् परिभ्रमण करके फिर से भी उसी आयु के साथ वहीं पर उत्पन्न हुआ, इस प्रकार से दस हजार वर्षों के जितने समय हैं उतने बार वहीं उत्पन्न हुआ और मरा, फिर एक-एक समय अधिक के क्रम से 33 सागरोपमों को वहाँ समाप्त किया। तत्पश्चात् नरकगति से निकल कर अन्तर्मुहूर्त आयु के साथ तिर्यंच गति में उत्पन्न हुआ, वहाँ पूर्वोक्त क्रम से तीन पल्योपमों को उसने समाप्त किया। तिर्यंचगति के समान मनुष्यगति में भी उसने तीन पल्योपमों को समाप्त किया। देव गति में उत्पन्न होने या मरने का क्रम नरकगति के समान है। उसने 33 सागरोपमों के स्थान में 31सागरोपमों को समाप्त किया. इस परिभ्रमण में जितना समय व्यतीत हुआ उतने समय का नाम भवपरिवर्तन है।

भवप्रत्यय अवधिज्ञान **Bhavapartyaya avadhijñāna**

नारकादि अवस्थारूप भव के अवधिज्ञान का कारण।

भव मरण **Bhavamaraṇa**

नारकादि भव के आयु का बंधन क्षीण होना।

भवलोक **Bhavaloka**

नारक, देव, मनुष्य और तिर्यंच अवस्था को प्राप्त प्राणियों का अपने भव में विद्यमान रहना।

भव विचय धर्मध्यान **Bhava vicaya dharmadhyāna**

भव (जन्म) दुःखरूप है ऐसा चिंतन करना।

भवविपाक **Bhavavipāka**

अपने-अपने योग्य नारक आदि भव में कर्मगत फल देने की अभिमुखता।

भवसंसार **Bhavasaṃsāra**

मिथ्यात्व के आश्रित होकर जीव का जघन्य नारक आयु (दस हजार वर्ष) से लेकर समयाधिक के क्रम से उपरिम ग्रैवेयक तक बहुत प्रकार से समस्त भवों की स्थिति पर्यंत परिभ्रमण करना।

भवसिद्धिक **Bhavasiddhika**

भविष्य में मुक्ति प्राप्त करने वाले जीव।

भवस्थकेवलज्ञान **Bhavasthakevalajñāna**

घाति कर्मों के क्षीण होने पर प्रकट होने वाला ज्ञान।

भवस्थितिकाल **Bhavasthitikāla**

एक भव में अवस्थित काल।

भवानुगामी **Bhavanugāmī**

जीव के एक भव में उत्पन्न अवधि ज्ञान का अन्य भव में जाना।

भवाननुगामी अवधिज्ञान **Bhavānanugāmī avadhijñāna**

एक भव में उत्पन्न उसी भव में अथवा क्षेत्रांतर में रहने वाला, किन्तु अन्य भव में न जाने वाला अवधिज्ञान।

भवान्त **Bhavānta**

जीव के नारकादि भवों का क्षय करना।

भव्य **Bhavya**

1. भविष्य में सम्यग्दर्शनादि भाव से मुक्ति की योग्यता रखने वाला जीव।
2. अनादि पारिणामिक भाव से मुक्ति की योग्यता रखने वाला जीव।

भव्यनोआगमद्रव्यमंगल **Bhavyanoāgamadravyamaṅgala**

भविष्य में मंगल प्राभृत का ज्ञाता अथवा मंगलपर्याय से परिणत होने वाला जीव।

भव्यशरीरद्रव्यमंगल **Bhavyaśariradravyamaṅgala**

भविष्य में मंगल पदार्थ के ज्ञान को प्राप्त करने वाला, किन्तु वर्तमान में उसे नहीं जानने वाला है, वह भव्य और उसका शरीर।

भव्यशरीरनोआगमद्रव्यश्रुत **Bhavyaśariranoāgamadravyaśruta**

जन्मतः जिनोपदिष्ट भाव के अनुसार श्रुतपदार्थ को जानने वाला तथा भविष्य में जानने वाला जीव।

भव्यसिद्ध **Bhavyasiddha**

भविष्य में सिद्धि को प्राप्त होने वाले जीव।

भाजनसम्पात अन्तराय **Bhājanasampāta antarāya**

परोसने वाले के हाथ से भाजन/पात्र गिर जाने पर साधु के आहार में होने वाला अन्तराय।

भाव **Bhāva**

1. कर्म विशेष के उपशम आदि के आश्रय से होने वाली जीव की परिणति।
2. चारित्र आदि रूप परिणाम।
3. वर्तमान पर्याय से उपलक्षित द्रव्य।

भावकर्म **Bhāvakarma**

1. पुद्गलपिंड रूप द्रव्यकर्म की शक्ति।
2. जीव का तद्विषयक उपयोग से युक्त होना।

भावकायोत्सर्ग **Bhāvakayotasarga**

1. मिथ्यात्वादिविषयक अतिचारों की शुद्धि के लिये किया गया कायोत्सर्ग।
2. कायोत्सर्ग के प्ररूपक प्राभृत के ज्ञाता।

भावक्षपणा **Bhāvakṣapaṇā**

योगों के द्वारा पूर्वसंचित कर्मधूलि को नष्ट करने वाला।

भावचरण **Bhāvacaraṇa**

गुणों का आचरण करने वाला

भावजिन **Bhāvajina**

समवसरण में स्थित केवलीजिन।

भावजीव **Bhāvajiva**

1. पाँच प्रकार के भावों से युक्त उपयोग वाला जीव।

2. अनंतज्ञान अनंतदर्शन, चारित्र, देशचारित्र अचारित्र (ईषत्-चारित्र) और अगुरुलघु पर्याय से युक्त भावजीव।

भावतीर्थ **Bhāvatīrtha**

1. मिथ्यात्वरूप दाह की शान्ति, तृष्णा का छेदन और कर्मरूप कीचड़ का शोधन करने वाले दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र से युक्त तीर्थंकर (जिनेन्द्र)।
2. अनंत भवों के संचित कर्मरज को प्रक्षालित करने वाला तप संयम।

भावद्रव्य **Bhāvadravya**

द्रव्य के प्रयोजन में संलग्न जीव।

भावधर्म **Bhāvadharma**

प्रथम आदि चिह्न के द्वारा जाना गया जीव का स्वभावभूत धर्म।

भावनमस्कार **Bhāvanamaskāra**

आप्त के गुणों में अनुराग।

भावना **Bhāvanā**

1. ध्यानाभ्यास की क्रिया।
2. महाव्रतों का पूर्णतया पालन करने के लिये किया गया चिंतन।
3. जाने हुए अर्थ का बार-बार किया गया चिंतन।

भावनिक्षेप **Bhāvanikṣepa**

1. वर्तमान पर्याय की अपेक्षा से उपलक्षित द्रव्य।
2. वर्तमान पर्याय सहित भाव।

भावनिर्जरा **Bhāvanirjarā**

पुद्गलों की कर्मत्व पर्याय का विनाश होना।

भावपरिणाम **Bhāvapariṇāma**

जीव-अजीव आदि संबंधी भाव के परिणाम।

भावपरिवर्तन **Bhāvaparivartana**

ज्ञानावरण आदि मूल प्रकृतियों तथा उनकी उत्तर प्रकृतियों में होने वाला परिवर्तन क्रम।

भावपुण्य **Bhāvapuṇya**

जीव के दान पूजा आदि षडावश्यक रूप शुभ परिणाम।

भावपूजा **Bhāvapūjā**

कायक्रिया के साथ वचन से स्तुति एवं मन से अरहंतादि के गुणों का स्मरण करना।

भावप्रतिक्रमण **Bhāvapratikramaṇa**

1. राग-द्वेष के आश्रित अतिचार से रहित होना।
2. पाप पुण्य आदि आस्रव के कारणभूत परिणाम का परित्याग।

भावप्रत्याख्यान **Bhāvapartyakhyāna**

1. भाव सावद्ययोग का प्रत्याख्यान।
2. द्रव्य प्रत्याख्यान से विपरीत सम्यक्-चारित्र रूप परिणाम से किया जाने वाला प्रत्याख्यान।

भावप्रमाण **Bhāvapramāṇa**

1. द्रव्य, क्षेत्र और काल के आश्रय से होने वाला परिज्ञान।
2. साकार एवं अनाकार उपयोग, जघन्य सूक्ष्म निगोदिया, मध्यम अन्य जीवों एवं उत्कृष्ट केवली को होने वाला साकार एवं अनाकार उपयोग।

भावप्राण **Bhāvaprāṇa**

1. सामान्य चैतन्य के अविनाभावी प्राण।
2. पुद्गलसामान्य का अनुकरण करने वाला चैतन्य-परिणाम।

भावबंध **Bhāvabandha**

1. मोह, राग और द्वेष के साथ जीव का होने वाला संबंध।
2. चेतनाभाव से होने वाला कर्मबंध।

भावभाषा **Bhāvabhāṣā**

जीवों की उपयोगयुक्त भाषा।

भावमंगल **Bhāvamangala**

1. मंगलपर्याय से परिणत जीव।
2. मंगल का एक भेद।

भावमन **Bhāvamana**

वीर्यांतराय और नोइंद्रियावरण कर्म के क्षयोपशम की अपेक्षा से होने वाली आत्मा की विशुद्धि।

भावमोक्ष **Bhāvamokṣa**

1. समस्त कर्मों को क्षय करने वाला आत्मपरिणाम।
2. कर्म के निर्मूलन में समर्थ शुद्धात्मा की उपलब्धि रूप जीव का परिणाम।

भावमोह **Bhāvamoha**

दोनों प्रकार के पौद्गलिक मोह कर्म के उदय से होने वाला आत्मा का भाव।

भावयोग **Bhāvayoga**

शरीर, भाषा और मन पर्याप्ति से परिणत होकर मन वचन-काय वर्गणा का आश्रय लेने वाले संसारी जीव की अंगोपांग और शरीर नामकर्म के उदय से आये हुये पुद्गल स्कंधों को कर्म और नोकर्म परिणमन कराने की शक्ति।

भावलिंग **Bhāvaliṅga**

1. नोकषाय के उदय से स्त्री-पुरुषादि की अभिलाषारूप प्रवृत्ति।
2. मुनिजन का ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप भाव।

भावलिंगी **Bhāvaliṅgī**

शरीर आदि परिग्रह से रहित, मानादि कषायों का पूर्ण त्यागी तथा आत्मस्वरूप में स्थित साधु

भावलेश्या **Bhāvaleśyā**

1. कषाय के संबंध से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति।
2. कृष्णादि वर्णों वाले द्रव्यों के आश्रय से कर्मबंध की स्थिति के कारणभूत परिणाम।

भावलोक **Bhāvaloka**

तीव्र राग-द्वेष के उदय को प्राप्त जीव।

भाववाक् **Bhāvavāk**

1. वीर्यांतराय और मति-श्रुत ज्ञानावरण के क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामकर्म के उदय से होने वाला पौद्गलिक परिणमन।
2. जीव के द्वारा ग्रहण किये गये शब्द परिणाम के योग्य पुद्गलों का शब्दरूप परिणमन।

भावविचिकित्सा **Bhāvavicikitsā**

क्षुधा, पिपासा आदि क्लेशजनक परिषहों के प्रति उत्पन्न घृणा का भाव।

भावविपाकिप्रकृति **Bhāviapākiprakṛti**

जीव की अवस्थान्तर प्रकृतियों के विपाक का कारण।

भावविवेक **Bhāvaviveka**

ममत्व बुद्धि को न करना।

भावविशुद्धि **Bhāvaviśuddhi**

अन्तःकरण की निर्मलता।

भाववेद **Bhāvaveda**

मोहनीयकर्मरूप पुद्गलस्कंध (द्रव्यवेद) के आश्रय से होनेवाला जीव का परिणाम।

भावशस्त्र **Bhāvaśastra**

मन, वचन एवं काय की दूषित प्रवृत्ति रूप असंयम।

भावशुद्धि **Bhāvaśuddhi**

1. मद, मान, माया और लोभ से रहित भाव।
2. राग-द्वेष एवं अहंकार से रहित भाव।

भावश्रमण **Bhāvaśramaṇa**

ज्ञान सहित महाव्रतादि चारित्र से युक्त संयमी।

भावश्रुत **Bhāvaśruta**

1. क्षयोपशम लब्धि।
2. इंद्रिय और मन के निमित्त से उत्पन्न श्रुतानुसारी विशेष ज्ञान।
3. शुद्ध स्वात्मा का अनुभव।

भावसंक्रम **Bhāvasaṁkrama**

क्रोध आदि किसी एक भाव में स्थित द्रव्य का अन्य भाव को प्राप्त होना।

भावसंलेखना **Bhāvasaṃlekhanā**

राग-द्वेष एवं मोहरूप कषायों को नष्ट करना।

भावसंवर **Bhāvasaṃvara**

1. संसार की कारणभूत क्रियाओं से निर्वृत्ति।
2. मन-वचन-काय गुप्ति आदि परिणाम को प्राप्त जीव।

भावसंसार **Bhāvasaṃsāra**

मिथ्यात्व के वशीभूत बंध के चतुःस्थानों के आश्रय से दीर्घकाल तक जीव का संसार में परिभ्रमण करना।

भावसत्य **Bhāvasatya**

1. हिंसादि दोषों से रहित वचन
2. साभिप्राय वचन।

भावसमाधि **Bhāvasamādhi**

ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तपरूप समाधि।

भावसम्यक्चारित्र **Bhāvasamyakcāritra**

उपयोग युक्त जीव की आगमानुसारी क्रिया का अनुष्ठान।

भावसम्यग्ज्ञान **Bhāvasamyagjñāna**

उपयोग के परिणमन की विशेष अवस्था।

भावसम्यग्दर्शन **Bhāvasamyagdarśana**

जीव के मिथ्यादर्शनरूप पुद्गलों का आत्मपरिणाम को प्राप्त होकर विशुद्धि को प्राप्त होना।

भावसाधु **Bhāvasādhu**

1. आगमोक्त समस्त सावद्य व्यापार का त्याग करने वाला संयमी साधु।
2. योग की साधना तथा समत्व (राग-द्वेष का त्याग) की साधना करने वाला मुक्ति का साधक।

भावसामायिक **Bhāvasāmāyika**

1. ज्ञान, दर्शन और चारित्र (रत्नत्रय) रूप समीचीन भाव का आत्मा में प्रवेश कराना।
2. इष्टानिष्ट में राग-द्वेष बुद्धि का त्याग।

भावसिद्ध **Bhāvasiddha**

औदयिक आदि भावों को सर्वथा नष्ट करके केवल ज्ञान-दर्शनादिरूप क्षायिक भाव को सिद्ध करने वाला।

भावस्तव **Bhāvastava**

1. स्तवनिक्षेप का एक भेद।
2. विद्यमान गुणों का कीर्तन करना।
3. तीर्थंकरों के अनंतज्ञान, दर्शन, वीर्य, सुख, क्षायिक सम्यक्त्व, अव्याबाध और विरागता आदि गुणों का स्मरण व प्ररूपणा करना।

भावस्नान **Bhāvasnāna**

जीव का सदा शुद्धि के कारणभूत ध्यानरूप जल से स्नान करना।.

भावस्पर्श **Bhāvasparśa**

स्पर्शप्राभृत का ज्ञाता होकर उसके विषय में उपयुक्त जीव।

भावागम **Bhāvāgama**

पंचास्तिकायों का संशय, अनध्यवसाय और विपरीत ज्ञान से रहित यथार्थ बोध।

भावागार **Bhāvāgāra**

चारित्रमोह के उदय रहने पर घर के विषय में अनुराग परिणाम।

भावाचार्य **Bhāvācārya**

पंचाचार का स्वयं पालन करना तथा अन्य साधुओं को पालन करने के लिये व्याख्यान करने वाला।

भावाधःकर्म **Bhāvādhaḥkarma**

1. साधु के आहार विषयक सोलह उद्गम दोषों में प्रथम दोष।
2. संयम स्थानों के कांडकों, लेश्या व कर्म प्रकृतियों के स्थिति विशेषों संबंधी विशुद्ध स्थानों में विद्यमान भाव को हीन/हीनतर करने वाला आचरण।

भावानुयोग **Bhāvānuyoga**

औदयिक आदि भावों में से एक अथवा अनेक भावों का व्याख्यान।

भावास्त्रव **Bhāvāsrava**

1. आत्म समवाय को प्राप्त कर्म पुद्गलों का उदय।
2. भाव-परिणामों से कर्मों का आना।

भावाहार **Bhāvāhāra**

1. क्षुधा के उदय रूप भावों से वस्तु के ग्रहण करने का परिणाम।
2. क्षुधा के उदय से भक्ष्य अवस्था को प्राप्त वस्तु को ग्रहण करना।

भाविनैगमनय **Bhāvinaigamanaya**

अनिष्पन्न (अनुत्पन्न) भावी पदार्थ को निष्पन्न (उत्पन्न) के समान कहना। जैसे अरिहंत को सिद्ध कहना।

भाविसिद्ध **Bhāvisiddha**

भविष्य में सिद्ध पर्याय को प्राप्त होने वाला जीव।

भावेंद्रिय **Bhāvendriya**

अर्थ के ग्रहण करने की शक्ति (लब्धि) और अर्थग्रहण के प्रति किया जाने वाला व्यापार (उपयोग)। इन दोनों को भावेन्द्रिय कहते हैं।

भावैकान्त **Bhāvaikānta**

वस्तु को सत् रूप ही स्वीकार करना।

भावोद्योत **Bhāvodyota**

लोक और अलोक को ज्ञान से प्रकाशित करना।

भावोपयोगवर्गणा **Bhāvopayogavargaṇā**

तीव्र-मंद आदि भावों से परिणत कषायों के जघन्य विकल्प से लेकर उत्कृष्ट विकल्प तक षड्वृद्धि क्रम से अवस्थित उदयस्थान।

भाषापर्याप्ति **Bhāṣāparyāpti**

1. भाषा के योग्य द्रव्य के ग्रहण और छोड़ने की शक्ति के निर्वर्तनरूप क्रिया की समाप्ति।
2. जीव की षड्-पर्याप्तियों में से एक।

भाषासमिति **Bhāṣāsamiti**

हितकर, परिमित, संदेह से रहित और निष्पाप अर्थ के सूचक वचन बोलना।

भिक्षाशुद्धि **Bhikṣāśuddhi**

विधि पूर्वक विशुद्ध आहार प्राप्ति का प्रयत्न कर आगमोक्त निर्दोष आहार रत्नत्रय की साधना के लिये प्राप्त करना।

भिक्षु **Bhikṣu**

1. आरम्भ-त्यागी, धर्म और शरीर की रक्षा के लिये भिक्षाशील साधक।
2. श्रमणचर्या के पालन द्वारा आठ प्रकार के कर्म का भेदन करने वाला साधक।

भिन्नदशपूर्वी **Bhinnadaśapūrvī**

आगम-अध्ययन की अवधि में दशवें पूर्व के स्वाध्याय के बाद पाँच सौ महाविद्याओं और सात सौ लघु विद्याओं के लोभ को प्राप्त होने वाला।

भुजाकारबंध **Bhujākāra Bandha**

थोड़ी प्रकृतियों को बांधते हुए आगे बहुत प्रकृतियों को बांधना।

भूत **Bhūta**

1. व्यंतरदेव विशेष।
2. कर्म के उदय के वशीभूत होकर गतियों में परिभ्रमण करने वाले जीव।
3. तरु अर्थात् वनस्पति जीव।

भूतनैगमनय **Bhūtanaigamanaya**

संपन्न हुए कार्य का वर्तमानकाल में आरोप किया जाना। जैसे : आज वर्धमान तीर्थंकर मुक्ति को प्राप्त हुए।

भूतिकर्म **Bhūtikarma**

घर, शरीर तथा बर्तनों की रक्षा और वशीकरण के लिये विद्या से मंत्रित भस्म, गीली मिट्टी या धागे से उन्हें चारों ओर से वेष्टित करने की क्रिया।

भूमिसंस्तर **Bhūmisaṃstara**

1. क्षपक का भूमिगत (स्थित) बिछौना, जो मृदु, ऊँची-नीची, पीली भूमि पर न हो तथा सम एवं जीव-जंतुओं से रहित हो।
2. क्षपक के शरीर प्रमाण भूमि।

भेदकल्पनानिरपेक्ष शुद्धद्रव्यार्थिक **Bhedakalpanānirapekṣa Śuddhadravyārthika**

चतुष्टय रूप (गुण-गुणी, स्वभाव-स्वभाववान्, पर्याय-पर्यायी और धर्म-धर्मी) अर्थ में भेद के विकल्प से निरपेक्ष होना।

भेदकल्पनासापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिक **Bhedakalpanāsāpekṣa Aśuddhadravyārthika**

चतुष्टय रूप (गुण-गुणी आदि) अर्थ में नय भेद से विकल्प सापेक्ष संबंध होना।

भोक्ता **Bhoktā**

चतुर्गतिरूप संसार में कुशल-अकुशल कर्मों को भोगने वाला।

भोग **Bhoga**

1. एक बार भोगने योग्य।
2. अभीष्ट विषयजनित सुख का अनुभव।
3. भक्ष्य, पेय एवं लेह्य आदि एक बार भोग करने योग्य पदार्थ।

भोगकृतनिदान **Bhogakṛtanidāna**

1. देव तथा मनुष्यों संबंधी भोगों की इच्छा।

2. इहलोक एवं परलोक में भोगों की प्राप्ति का मानसिक विचार।

भोगांतराय **Bhogāntarāya**

कर्म के उदय से भोग के विषय में विघ्न होना।

भोगोपभोगपरिमाण **Bhogopabhogaparimāṇa**

1. श्रावक के द्वादशव्रतों में से एक व्रत।
2. भोगोपभोग विषयक वस्तु का सीमाकरण।

भ्रमराहार **Bhramarāhāra**

फूलों को बाधा न पहुँचाकर रस ग्रहण करने वाले भ्रमर की भांति मुनिजन द्वारा दाता को बाधा पहुँचाये बिना आहार ग्रहण करना।

भ्रूदोष **Bhrūdoṣa**

1. कायोत्सर्ग का एक दोष।
2. कायोत्सर्ग की स्थिति में भ्रकुटियों के द्वारा अन्य कार्य (प्रवृत्ति) का संकेत करना।

मंगल **Maṅgala**

1. एक ग्रह।
2. पापों को विनाश करने वाला तथा पुण्य प्रकाशक एक भाव।
3. ज्ञानावरणादि द्रव्यमल तथा अज्ञान अदर्शन आदि भाव मल का विध्वंसक।
4. सुख को लाने वाला।
5. आनंद को उत्पन्न करने वाला।

मंगलचैत्य **Maṅgalacaitya**

ग्रहों, चौराहों में मंगल निमित्तक अरहंत प्रतिमा का प्रतिष्ठापन।

मंगलाचरण **Maṅgalācaraṇa**

1. पापों के विनाशक एवं पुण्य के प्रकाशक भाव का आचरण।
2. ग्रंथ आदि के प्रारंभ में की जाने वाली इष्ट की आराधना।

मंगलावती **Mangalāvatī**

1. पूर्व विदेह का एक क्षेत्र।
2. पूर्व विदेहस्थ वक्षार कूट का रक्षक देव।

मंगलावर्त **Maṅgalāvarta**

सौमनस पर्वत का एक कूट व उसका रक्षक देव।

मंचयोग **Mañcayoga**

सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र का मचान के आकार में होना।

मंचातिमंचयोग **Mañcātimañcayoga**

मंच सामान्य की अपेक्षा दो-तीन खंडों के रूप में अतिशय युक्त होना।

मंडनधात्री दोष **Maṇḍanadhātrīdoṣa**

1. मुनिचर्या का एक दोष।
2. बालकों को सजाना या सजाने की विधि का उपदेश देना और उससे प्रेरित होकर दाता के दान को ग्रहण करना।

मंडप भूमि **Maṇḍapabhūmi**

समवसरण (तीर्थंकर की दिव्यध्वनि सभा) की आठवीं भूमि।

मंडलिक (मंडलीक) **Maṇḍalika (Maṇḍalīka)**

1. चार हजार राजाओं का अधिपति।
2. अल्प ऋद्धि-धारक साधारण राजा

मंत्र **Mantra**

1. जिसमें देवता पुरुष होता है तथा जो जप-हवन आदि रूप साधना से रहित होता है।
2. सभी कार्यों के करने का उपायभूत।

मंत्रपिंड **Mantrapiṇḍa**

मंत्र जाप का उपयोग करके भोजन प्राप्त करना मंत्रपिंड दोष है।

मंत्रानुयोग **Mantrānuyoga**

मंत्रसिद्धि के लिए उपायभूत शास्त्र।

मंत्री **Mantrī**

1. अकृत कार्य को प्रारंभ करने वाला, प्रारब्ध कार्य का निर्वहण करने वाला, अनुष्ठित कार्य को बढ़ाने वाला तथा संपत्ति का यथोचित विनियोग करने वाला।
2. पंच अंग से युक्त मंत्र में कुशल।

मंत्रोपजीवन **Maṅtropajīvana**

एक दोष। शरीर शृंगार में आसक्त पुरुष को पठन मात्र से सिद्ध होनेवाले मंत्र का उपदेश देना।

मंदभाव **Mandabhāva**

बाह्य और आभ्यंतर कारणों की अनुदीरणा से जीव के होने वाला मंद परिणाम।

मति अज्ञान **Mati ajñāna**

मिथ्यात्व के साथ इन्द्रिय एवं मन के निमित्त से होने वाला ज्ञान।

मतिज्ञान **Matijñāna**

1. इन्द्रिय व मन के निमित्त से होने वाला ज्ञान।
2. इंद्रियों व मन द्वारा पदार्थों को जानना,।
3. जिसके द्वारा पदार्थ जाने जाते हैं, अथवा जानना मात्र।

मतिज्ञानावरण **Matijñānāvaraṇa**

मतिज्ञान को आच्छादित करने वाला एक कर्म विशेष।

मत्सर **Matsara**

1. क्रोध भाव-दूसरे की उन्नति में खेद-खिन्न होना।
2. अतिथि संविभाग व्रत का एक अतिचार।

मत्स्योदवृत्तदोष **Matsyodvṛttadoṣa**

जल में स्थित मत्स्य सदृश उछलते हुए वंदना करना।

मद **Mada**

1. मद्य आदि पान के करने वाले के सदृश प्रलाप रूप विकृत भाव।
2. कुल, बल, ऐश्वर्य, रूप, विद्या आदि के संयोग पर अभिमान भाव।

मदनात्याग्रह **Madanātyāgraha**

1. समस्त व्यापार को छोड़कर काम (मैथुन) में अत्यधिक आसक्ति का भाव तथा संतुष्टि के लिए अंग-अनंग का विचार न करना, बलवद्धक औषधियों का प्रयोग करना।
2. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतिचार (दोष)।

मद्य **Madya**

जिसके पान करने से गम्य-अगम्य अथवा करणीय-अकरणीय का भेद ज्ञान नहीं रहता।

मद्यव्यसन **Madyavyasana**

जिसका सेवन करने से हमेशा बेसुध जैसी स्थिति बनी रहे।

मधु **Madhu**

मधुमक्खियों के छोटे-छोटे अंडो को निचोड़ने से उत्पन्न रस (शहद)।

मधुस्रवी **Madhusravī**

एक ऋद्धि विशेष, जिसके प्रभाव से हाथ पर रखा हुआ आहार मीठा रूप में परिणत हो जाता है।

मध्यगत अवधिज्ञान **Madhyagata avadhijñāna**

सभी दिशाओं के मध्य स्थित पदार्थों का ज्ञान कराने वाला अवधिज्ञान।

मध्यम आत्मा **Madhyama atmā**

1. श्रावकोचित गुणों युक्त-पंचमगुणस्थानवर्ती श्रावक।
2. प्रमत्त विरत साधु।

मध्यम उपवास **Madhyama upavāsa**

धारणा और पारणा के दिन एकासनपूर्वक जल के साथ किया जाने वाला उपवास।

मध्यमपद **Madhyama pada**

सोलह सौ करोड़, तेरासी लाख, सात हजार आठ सौ अठासी वर्णों का एक पद।

मध्यमपात्र **Madhyamapātra**

1. संयत-असंयत अथवा देशव्रती श्रावक।
2. शील और व्रत की भावनाओं से रहित सम्यग्दृष्टि।

मध्यमा प्रतिष्ठा **Madhyamā pratiṣṭhā**

ऋषभादि तीर्थंकरों के बिम्ब प्रतिष्ठा के भेदों में से एक क्षेत्राख्य प्रतिष्ठा का अपर नाम।

मध्यमलोक **Madhyama loka**

1. खड़े हुए मृदंग के बीच के भाग के समान आकार वाला मध्य लोक।
2. मेरु पर्वत प्रमाण स्वरूप मध्यलोक।

मध्यस्थ **Madhyastha**

1. साधु के समान राग द्वेष रहित सामायिक स्थित श्रावक।

19—416 Min. of HRD/2014

2. अनेक धर्मात्मक वस्तु के विवक्षा के अनुसार विवक्षित धर्म को ग्रहण करने वाला सम मनःस्वभावी महामुनि।

मध्वास्रावी **Madhwāśravi**

जिस ऋद्धि विशेष के प्रभाव से मुनि के हाथ में रखा रूक्ष मधुर रस युक्त हो जाये।

मनःपर्यय **Manaḥparyaya**

1. वीर्यांतराय और मनःपर्ययज्ञानावरण के क्षयोपशम तथा अंगोपांग नाम कर्म की शक्ति से दूसरों के मन के संबंध से आत्मा का उपयोग उत्पन्न होना।
2. जीवों के द्वारा मन में चिंतित अर्थ को प्रकट करने वाला ज्ञान।

मनःपर्ययज्ञानलब्धि **Manaḥparyaya jñānalabdhi**

मन का साक्षात्कार करने की शक्ति।

मनःपर्यय ज्ञानावरण **Manaḥparyaya jñānāvaraṇa**

मनःपर्यय ज्ञान का अवरोधक कर्म।

मनःपर्याप्ति **Manaḥparyāpti**

1. जिस क्रिया से मन रूप होने योग्य द्रव्य के ग्रहण और त्याग की शक्ति निर्मित होती है।
2. द्रव्यमन के आश्रय से अनुभूत पदार्थों की स्मरण शक्ति का उत्पन्न होना।
3. अनुभूत पदार्थों की स्मरण शक्ति उत्पन्न होने की निमित्तभूत मनोवर्गणा के स्कंधों से पुद्गल समूह का उत्पन्न होना।

मनःप्रणिधान **Manaḥpraṇidhāna**

क्रोध-मान-माया और लोभ तथा नोकषाय के विषय में मन की प्रवृत्ति।

मनःप्रदुष्टवंदन **Manah praduṣtavandana**

आत्मप्रत्यय एवं परप्रत्यय रूप कारण से शिष्य के मन में गुरु के प्रति द्वेष बुद्धि का संचार होना।

मन **Mana**

1. अनिंद्रिय रूप।
2. मनोवर्गणा की परिणति स्वरूप द्रव्येंद्रिय।
3. जिसकी सहायता से पदार्थ के सभी अर्थों का ग्रहण हो।

4. स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, ऊहापोह एवं शिक्षालाभ आदि क्रिया सम्पन्न कराने वाली ईषद् इंद्रिय।

मनविनय **Manavinaya**

1. आचार्य आदि के विषय में अपवित्र मन का निरोध करना।
2. पूज्य पुरुषों के प्रति घृणित विचार न करना।
3. मन को शुभ योग में स्थापित करना।

मन:संयम **Manaḥ saṃyama**

1. मन का निरोध करना।
2. धर्म ध्यान में प्रवृत्त होना।

मनुष्यगति नामकर्म **Manuṣyagati nāmakarma**

1. मनुष्यगतिकर्म के उदय से मनुष्य पर्याय के कार्यों में प्रवृत्ति होना।
2. मन से मनुष्य श्रेष्ठ है, उस पर्याय की गति प्राप्त होना।
3. मनुष्य की सभी अवस्थाओं का उत्पत्ति निमित्तिक कर्म।

मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्म **Manuṣyagatiprāyogyānupūrvī nāmakarma**

कर्म के उदय से मनुष्य गति को प्राप्त जीव का विग्रहगति में मनुष्य गति के योग्य आकाररूप में रहना।

मनुष्यभाविजीव **Manuṣyabhavijīva**

मनुष्य भव की ओर उन्मुख गत्यंतर स्थित जीव।

मनुष्यलोक **Manuṣyaloka**

त्रसनाड़ी के मध्य में स्थित चित्रा पृथिवी का उपरिम भाग, जो 45 लाख योजन विस्तार वाला गोल रूप है।

मनुष्यायु **Manuṣyayu**

जिस कर्म के उदय से मनुष्य पर्याय में जन्म हो।

मनोगुप्ति **Manogupti**

1. मन से राग-द्वेषादि का दूर हो जाना।
2. आर्त्त-रौद्र आदि रूप चिंतन को रोकना।
3. शुभ संकल्प का अनुष्ठान करना।

4. शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के संकल्पों को रोकना।

मनोगुप्ति अतिचार **Manogupti aticāra**

रागादि भाव से स्वाध्याय में प्रवृत्ति।

मनोज्ञ **Manojña**

1. विद्वत्ता, वक्तृत्व और प्रतिष्ठित कुल आदि के कारण जनप्रिय साधु।
2. असंयत सम्यग्दृष्टि।
3. अनुकूल वर्ण गंधादि निमित्तक प्रवृत्ति विशेष।
4. प्रसंगानुसार मणियों के वर्णादि का विशेषण।
5. मनोज्ञ पदार्थ के वियोग होने पर उसके संयोग के लिए अतिशय चिंतन रूप आर्त्तध्यान का एक भेद।

मनोज्ञ वैयावृत्य **Manojña vaiyavṛtya**

आचार्य सम्मत दीक्षाभिमुख गृहस्थ की सेवा शुश्रूषा।

मनोदुष्प्रणिधान **Manoduṣpraṇidhāna**

1. पाप से परिपूर्ण प्रवृत्ति।
2. सामायिक में मन को न लगाकर अन्य विषयों में लगाना।
3. सामायिक का एक अतिचार (दोष)।
4. क्रोध-लोभ-द्रोह अभिमान ईर्ष्या और कार्य की अधिकता से उत्पन्न हुई क्षोभ की प्रवृत्ति।

मनोद्रव्यवर्गणा **Manodravyavargaṇā**

सत्य, असत्य, सत्यासत्य और असत्यसत्य रूप चार प्रकार के मन की रचना कराने वाली कर्मवर्गणा।

मनोबलऋद्धि **Manobalaṛddhi**

1. ऋद्धि विशेष-जीव के श्रुत ज्ञानावरण और वीर्यांतराय कर्म के उत्कृष्ट क्षयोपशम से एक अंतर्मुहूर्त मात्र में समस्त श्रुत का चिंतन करने की सामर्थ्य प्रकट हो जाना।
2. बारह अंगों में त्रिकाल संबंधी अनन्त अर्थ व्यंजन पर्यायों से व्याप्त छह द्रव्यों का चिंतन करने पर भी खेद खिन्न न होने की विशेष सामर्थ्य वाली ऋद्धि विशेष।

मनोयोग **Manoyoga**

1. मन के योग्य पुद्गलों के आश्रय से आत्म प्रदेशों में होने वाला परिस्पंदन।
2. आभ्यंतर वीर्यांतराय और नो इंद्रियावरण कर्म के क्षयोपशम रूप मनोलब्धि की समीपता तथा बाह्य निमित्तभूत मनोवर्गणा के अवलंबन होने पर मन परिणाम के अभिमुख हुए जीव के आत्मप्रदेशों का परिस्पंदन।

मन्मनत्व **Manmanatva**

1. असत्य भाषण का फलरूप वचन।
2. पर के अप्रतिवादक वचन के योग से युक्त पुरुष के वचन।

ममकार **Mamakāra**

1. यह मेरा भोग्य है, इस प्रकार जीव का परिणाम।
2. आत्म भिन्न कर्मोदयजनित शरीर आदि में आत्मीय भाव का अभिप्राय।

ममत्वतःआत्तपुद्गल **Mamatvataḥ āttapudgala**

अनुरागपूर्वक ग्रहण किए जाने वाले पुद्गल।

मरण **Maraṇa**

1. आयु के क्षय से होने वाला प्राणों का वियोग।
2. प्राप्त आयु के विनाश के साथ इंद्रिय एवं बल का विनाश होना।
3. प्राणों का परित्याग।

मरणभय **Maraṇabhaya**

काय, वचन, मन, पंचेंद्रिय, उच्छ्वास-निःश्वास, और आयु इन दस प्राणों के छूटने का भय।

मरणाशंसा **Maraṇaśansa**

1. रोग ग्रस्त होने पर संक्लेशित होकर, मरण होने के भाव का उदय होना।
2. सल्लेखना का एक अतिचार (दोष)।
3. सल्लेखना में उपवास के समय आदर-सम्मान न मिलने पर शीघ्र मरण की आकांक्षा।

मर्कटतंतुचारण **Markaṭatantucāraṇa**

मुनि को मकड़ी के तंतुओं पर शीघ्रता से गमन करने की सामर्थ्य प्रकट कराने वाली एक ऋद्धि विशेष।

मल **Mala**

1. पसीना के कारण धूलि का कठिनता को प्राप्त होना।
2. शरीर के एक भाग को आच्छादित करने वाला मैल।

मल परीषहजय **Mala parīṣahajaya**

1. जलकायिक जीवों की पीड़ा को दूर करने के निमित्त आजीवन स्नानवृत्ति का त्याग करने वाले साधु द्वारा पसीने के आश्रय से जमी हुई धूलि के कारण शरीर में अनेक रोग उत्पन्न होने पर भी उनका प्रतीकार नहीं करना।
2. मलसंचय से किसी प्रकार की ग्लानि नहीं करना।
3. सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र से पाप रूप कीचड़ को दूर करने में उद्यमशील शारीरिक मल जन्य पीड़ा को सहन करना।

मलौषधि **Malauṣadhi**

जिह्वा, ओष्ठ नासिका श्रोत्र आदि के मल में भी रोग-अपहारक गुण प्रकट कराने वाली एक ऋद्धि विशेष।

मल्लि **Malli**

उन्नीसवें जैन तीर्थंकर।

मषिकर्म **Maṣikarma**

लेखन क्रिया।

मषिकर्मार्य **Maṣikarmārya**

आय-व्यय लेखन में निपुण।

महत्तर **Mahattara**

युवराज के साथ गंभीर, विनीत, कुशल, जाति एवं विनय से संपन्न होकर राज्य कार्यों का संपादन करने वाला।

महत्तरापदानर्हा **Mahattarāpadānarhā**

कुरूप, विकलांग, हीनकुलोत्पन्ना, मूर्ख, दुष्टा, कुशीला, रोगयुक्त, कटुभाषिणी, अज्ञानी, अशुभ मुहूर्त में उत्पन्न कुत्सित लक्षणों से युक्त महत्तरा पद के अयोग्य साध्वी।

महत्तरापदार्हा **Mahattarāpadārhā**

सिद्धांतपारंगता, शांत, अनुष्ठेय क्रिया कर्त्री, उत्तम कुलोत्पन्ना, चौंसठ कलाओं की ज्ञाता, मधुरभाषिणी, उदारहृदय, शील से पवित्र, जितेंद्रिय होने में उद्यत,

धर्मव्याख्यान में कुशल, अतिशय धीरवती, प्रसन्नवदना, बुद्धिमती, नीतिकुशल, पंचाचार में तत्पर साध्वी।

महत्त्व **Mahattva**

शरीर को अतिशय विशाल करने की सामर्थ्य प्राप्त कराने वाली एक ऋद्धि विशेष।

महर्द्धिक देव **Maharddhikadeva**

विमान और परिवार सहित ऋद्धि से संपन्न देव विशेष।

महाअड्ड **Mahā aḍḍa**

संख्यावाची शब्द। चौरासी लाख अड्ड का एक महाअड्ड होता है।

महा अड्डांग **Mahā aḍḍāṅga**

चौरासी लाख अड्ड प्रमाण संख्या।

महाकमल **Mahākamala**

चौरासी लाख महाकमलांग प्रमाण संख्या।

महाकमलांग **Mahākamalāṅga**

चौरासी लाख कमल प्रमाण एक संख्या।

महाकल्प **Mahākalpa**

गंगावालुका कणों को सौ-सौ वर्ष में एक-एक बालुका कण को निकालने पर, जितने समय में वह खाली होता है, वह महाकल्प है।

महाकल्प्य **Mahākalpya**

आगम काल और संहनन का आश्रय लेकर साधु के योग्य द्रव्य व क्षेत्र आदि का वर्णन करने वाला ग्रंथ।

महाकालनिधि **Mahākālanidhi**

1. धान्य को देने वाली
2. जिसमें लोहा, चांदी, सोना, मणि, मोती, मूंगा आदि खानों की उत्पत्ति विषयक कथन किया जाता है।

महाकाव्य **Mahākāvya**

अति प्राचीन महापुरुषों - तीर्थंकर आदि के चारित्र से अलंकृत, धर्म, अर्थ, काम रूप त्रिवर्ग का वर्णन जिसमें पाया जाये।

महाकुमुदांग **Mahākumudāṅga**

संख्या विशेष - चौरासी लाख कुमुद।

महागंगा **Mahāgaṅgā**

एक गंगा नदी का मार्ग पांच सौ योजन लंबा आधा योजन चौड़ा और पांच सौ धनुष प्रमाण गहरा है, ऐसी सात गंगाओं का समूह।

महातप **Mahātapa**

पक्ष, मास, षट्मास, वर्ष, अवधि पर्यंत महान उपवास करने की विशेष सामर्थ्य उत्पन्न कराने वाली ऋद्धि विशेष।

महात्मा **Mahātmā**

अनंत ज्ञान और अनंत वीर्य से युक्त महान आत्मा।

महात्रुटितक **Mahātruṭitaka**

संख्या विशेष। चौरासी लाख महात्रुटित।

महात्रुटितांग **Mahātruṭitāṅga**

महात्रुटितांग- चौरासी लाख त्रुटित।

महादेव **Mahādeva**

स्वेच्छया महामोह आदि दोषों को नष्ट कर संसार-सागर को पार करने वाला साधक।

महाद्युतिक **Mahādyutika**

शरीर और आभरण विषयक अधिक कान्ति वाला।

महानलिन **Mahānalina**

चौरासी लाख नलिनांग प्रमाण, संख्या विशेष।

महानलिनांग **Mahānalināṅga**

चौरासी लाख नलिन प्रमाण संख्या विशेष।

महापद्म **Mahāpadma**

चौरासी लाख महापद्मांग प्रमाण संख्या विशेष।

महापद्मनिधि **Mahāpadmanidhi**

वस्त्रों, वस्त्र रचनाओं, रंगों और धोने की विधियाँ उत्पन्न होने वाली निधि।

महापद्मांग **Mahāpadmāṅga**

चौरासी लाख पद्म प्रमाण संख्या विशेष।

महापुंडरीक **Mahāpuṇḍarīka**

1. काल के आश्रय से इंद्रों-प्रतींद्रों, चक्रवर्तियों आदि की उत्पत्ति रूप प्ररूपण करने वाला श्रुत।
2. भवनवासी आदि चतुर्निकाय के देव-देवियों में उत्पन्न होने के उपायभूत तप-उपवास आदि का वर्णन करने वाला श्रुत।

महाप्रज्ञापना **Mahāprajñāpanā**

जीवादिक का ज्ञापक अतिशय विस्तीर्ण शास्त्र विशेष।

महाप्रतिष्ठा **Mahāpratiṣṭhā**

एक सौ सत्तर तीर्थंकरों की जिन-प्रतिष्ठा।

महामंडलीक **Mahāmaṅḍalīka**

आठ हजार राजाओं का अधिपति।

महामंत्री **Mahāmantrī**

विशेषाधिकार सम्पन्न राज्य का अधिष्ठापक मंत्री।

महामानस **Mahāmānasa**

चौरासी लाख महाकल्प प्रमाण काल विशेष।

महामुद्रा **Mahāmudrā**

प्रसारित अधोमुख तथा हस्त के साथ पाद की अंगुलियों से मस्तक का स्पर्श करने वाली मुद्रा विशेष।

महायोजन **Mahāyojana**

1. पांच सौ मानव योजन प्रमाण योजन।
2. दिव्ययोजन प्रमाण संख्या।

महाराजा **Mahārājā**

एक सहस्र राजाओं का प्रतिपालक।

महार्थत्व **Mahārthatva**

1. परिपुष्ट कथन।
2. वचनातिशय का आठवां भेद।

महालता **Mahālatā**

चौरासी लाख लता प्रमाण काल संख्या।

महावीर **Mahāvīra**

1. चौबीसवें तीर्थंकर का नाम।
2. कर्मों का क्षय करने वाला।
3. मोक्ष को प्राप्त कराने वाला।
4. महान वीर।

महाव्रत **Mahāvrata**

1. हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह रूप पंच पापों का पूर्णतया त्यांग करना।
2. महापुरुषों द्वारा आचरणीय व्रत।
3. हिंसादि पंच पापों से सर्वथा विरति रूप।

महाश्रावक **Mahāśrāvaka**

1. पंच अणुव्रतों में स्थित होकर, भक्ति से जिनबिंब, जिनभवन, जिनागम, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन सात क्षेत्रों में तथा दयार्द्रचित्त होकर दीन-दुखी को दान देने वाला श्रावक।
2. पांच अणुव्रतों के पूर्ण पालन के निमित्त तीन गुणव्रतों तथा चार शिक्षाव्रतों को धारण करते हुए समितियों के पालन में उद्यत तथा गुणीजनों की वैय्यावृत्ति में तत्पर दैनिक अनुष्ठान का परिपालन करने वाला।

महाश्वाक्ष **Mahāśvākṣa**

पवित्र मन और इंद्रियों का धारक विशिष्ट पुरुष।

महासत्ता **Mahāsattā**

सम्पूर्ण पदार्थ समूह में व्याप्त सादृश्यमूलक अस्तित्व को सूचित करने वाली सत्ता।

महासुख **Mahāsukha**

बाह्य वस्तुओं की किंचित् भी इच्छा का न होना।

महास्कंधवर्गणा **Mahāskaṅdhavargṇā**

टाँकी, पर्वत और कूट के आश्रित पुद्गल स्कंध।

महिमा **Mahimā**

मेरु के समान विशाल शरीर बनाने की शक्ति प्रगट कराने वाली एक ऋद्धि विशेष।

महिषसमान शिष्य **Mahiṣasamāna śiṣya**

1. कुत्सित शिष्य
2. कलह, विकथा और असामयिक प्रश्नों द्वारा तात्त्विक चर्चा में बाधा उत्पन्न करने वाला शिष्य। जैसे भैंसा पानी को गंदा करके न तो स्वयं पीता है और न ही अन्य समूह को पीने देता है।

महीशय **Mahīśaya**

1. मुनियों का मूलगुण
2. स्वच्छ, प्रासुक एवं जीवरहित पृथिवी अथवा शिला पर एक करवट से धनुष या दंड के समान शयन करना।

महैषी (महेसी) **Mahaiṣi (Maheśī)**

1. एकांत उत्सव रूप मोक्ष।
2. मोक्ष की अभिलाषा रखने वाला ऋषि।
3. प्राकृत भाषा में महेसी शब्द का संस्कृत रूपान्तरण महर्षि है, जो ऋषियों में श्रेष्ठ अर्थ में प्रयुक्त होता है।

महोरग **Mahoraga**

1. व्यन्तरदेव की विशेष पर्याय।
2. कृष्णवर्णी, निर्मल, अतिशयवेगशाली, सुंदर, विशाल शरीरधारी, विस्तीर्ण कन्धों और ग्रीवा वाले, अनेक विलेपन सहित विचित्र अलंकरणों से सुसज्जित और नागचिह्नित ध्वजा से युक्त देव, जिन्हें सर्प सदृश विक्रिया करना रुचिकर होता है।

मागधप्रस्थ **Māgadhaprastha**

मगध देश का चार कुडवे प्रमाण एक मापविशेष।

माडंबिक **Māḍambika**

छिन्न-भिन्न रूप में जन समुदाय का निवास स्थान (जिसके आस-पास नगर-ग्राम आदि न हो) की मडम्ब संज्ञा है। ऐसे मडम्ब का अधिपति।

माणवकनिधि **Māṇavakanidhi**

योद्धाओं और उनके द्वारा प्रयुक्त ढाल-कवच आदि अस्त्र-शस्त्र तथा युद्धनीति और दंडनीति का प्रावधान करने वाली निधि।

मांडूकप्लुत योग **Māṇḍūkapluta yoga**

मेढक के उछलने से जो योग उत्पन्न हो। यह ग्रह के साथ होता है।

मातृकापदास्तिक **Mātṛkāpadāstika**

व्यवहार नय का अनुगामी द्रव्यास्तिक संग्रह नय का अनुसरण करने वाला (सत् मात्र या शुद्ध द्रव्य उपस्थित रहते हुए भी व्यवहार गम्य नहीं होता। अतः व्यवहार योग्य विशेषों की प्रधानता के साथ मातृकापदास्तिक व्यवहार होता है)

मात्सर्य **Mātsarya**

1. अतिचार विशेष (दोष)।
2. आहारादि देते हुए भी आदर भाव का न होना तथा अन्य दाता के गुणों में अनुराग का न होना।
3. याचना करने पर क्रोध करना, देय द्रव्य होते हुए भी न देना, दूसरे की उन्नति में खेद-खिन्न होना।
4. कषाययुक्त होकर देना।
5. अतिथि संविभाग व्रत का एक अतिचार (दोष)।
6. ज्ञान प्रतिबंधक कारण- प्रदेय ज्ञान को होते हुए भी न देना।
7. ज्ञानावरण कर्म का बंधक कारण।

माध्यस्थ भावना **Mādhyasthabhāvanā**

1. माध्यस्थ- उदासीनता- उपेक्षा।
2. रागद्वेष के कारण पक्षपात न करना।

मान **Māna**

1. कषाय विशेष।
2. जाति आदि के आधार पर दूसरों के प्रति नम्रतापूर्वक प्रवृत्ति का अभाव।
3. अपने गुणों की कल्पना के आश्रय से दूसरों का सम्मान न करना।
4. दूषित अभिप्राय को न छोड़ते हुए शिष्ट वचनों का उल्लंघन करना।

मान क्रिया **Mānakriyā**

अहंकार (गर्व) रूप क्रिया।

मान-दोष **Mānadoṣa**

अभिमानपूर्वक साधु द्वारा अपने लिए आहारादि को उत्पन्न करना।

माननिःसृता असत्यभाषा **Mānaniḥsṛtā asatyabhāṣa**

मान से अभिभूत होकर वचन बोलना।

मानपिंड **Mānapiṇḍa**

1. साधुचर्या दोष।
2. उत्साहित होकर अथवा गर्वपूर्वक या अपमानित करके आहार को खोजना।

मानव **Mānava**

मन और नेत्रों से हेय और उपादेय पदार्थों को जानना एवं मानना।

मानव योजन **Mānavayojana**

चार गव्यूति प्रमाण माप।

मानस **Mānasa**

मनोवर्गणा से निर्मित नोइन्द्रिय रूप मन।

मानस अविनय **Mānasa avinaya**

यत्किंचित् प्राप्त कर गुरु संतुष्ट होंगे और थोड़ा प्रायश्चित्त देंगे इस प्रकार का असद् दोष का आरोपण।

मानस अशुभयोग **Mānasa aśubhayoga**

ईर्ष्या और असूया आदि से युक्त मन।

मानसजप **Mānasajapa**

1. केवल मन के व्यापार से किया जाने वाला जप।
2. तीन प्रकार के जपों में प्रथम।

मानसतप **Mānasatapa**

मन की प्रसन्नता, स्वाभाविक शान्त परिणति, मौन, आत्मदमन और परिणामों की निर्मलता।

मानसध्यान **Mānasadhyāna**

एक वस्तु विषयक मन की एकाग्रता।

मानस-असमीक्ष्याधिकरण **Manasa asamīkṣhyādhikaraṇa**

मन में दूसरे के निष्प्रयोजन काव्य आदि का चिंतन करना।

मानसाहार **Mānasāhāra**

1. छह प्रकार के आहारों में से एक।

2. देखें, आहार।

मानसिक अर्थ **Mānasika artha**

मनोवर्गणा से निर्मित हृदयकमल-रूप मन से किया जाने वाला पदार्थों का चिन्तन।

मानसिक विनय **Mānasika vinaya**

पाप रूप विरुद्धाचरण की परिणति को रोककर प्रिय एवं हितकर मार्ग में सन्नद्ध होना।

मानस्तंभ **Mānastambha**

1. जिनमंदिर में निर्मित धातु या पत्थर का लंबा खंभा, जिस पर तीर्थंकर की चतुर्मुखी मूर्ति स्थापित होती है। इस स्तम्भ को देखने से अभिमान गलित होता है।
2. मानस्तंभ की ऊँचाई अपने-अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारह गुणी होती है।

मानान्यत्व **Mānānyatva**

1. कुडव, पल और हस्त आदि माप से कम देना और अधिक लेना।
2. अचौर्यव्रत को दूषित करने वाला एक अतिचार।

मानुषोत्तर **Mānuṣottara**

पुष्कर द्वीप के ठीक मध्य में चूड़ी के समान गोल आकार वाला पर्वत। मानुषोत्तर पर्वत के पहले-पहले ही मनुष्यों का निवास है।

मानुषोत्तर शैल **Mānuṣottara śaila**

पुष्करद्वीप का मध्यवर्ती स्वर्ण सदृश पर्वत, जो हानि-वृद्धि रहित आभ्यंतर भाग में टंकोत्कीर्ण भित्ति के समान तथा बाह्य भाग में क्रम से हीन होता जाता है और अनादि अनिधन है।

माया **Māyā**

1. चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से आत्मा में उत्पन्न होने वाला कुटिल भाव।
2. चार कषायों में से एक कषाय।

मायाक्रिया **Māyākriyā**

ज्ञान और दर्शन आदि के विषय में कुटिल भाव रखना।

मायागताचूलिका **Māyāgatācūlikā**

1. जिसमें माया के हेतुभूत विद्या, मंत्र, तंत्र और तप का उल्लेख किया गया हो।
2. दृष्टिवाद अंग का पाँचवाँ भेद चूलिका, उसके अंतर्गत चूलिका का पाँचवां भेद।

मायाचार **Māyācāra**

1. दूसरों के द्वारा अदृष्ट दोषों को प्रकट न करके मात्र प्रकाशित दोषों को गुरु के समक्ष प्रकट करना।
2. आलोचना का एक दोष।

मायानामोत्पादनदोष **Māyānāmotpādanadoṣa**

कुटिलभाव करके अपने लिए भिक्षा आदि उत्पन्न करना।

मायानिःसृता-असत्यभाषा **Māyāniḥsṛtā asatyabhāṣā**

मायाचार से युक्त होकर किसी व्यक्ति को यह कहना कि - यह इन्द्र है, उसका इस प्रकार का वचन अथवा उसका सभी प्रकार का कथन।

मायापिंड **Māyāpiṇḍ**

विविध वेषों एवं भाषाओं का परिवर्तन कर एक ही घर से एकाधिक बार मायापूर्वक भिक्षा ग्रहण करना।

मायाप्रत्यया-क्रिया **Māyāpratyayā kriyā**

ऋजुता (सरलता) के अभाव रूप माया कषाय आदि के आश्रय से की जाने वाली प्रवृत्ति।

मायामृषावाद **Māyāmṛṣāvāda**

विविध वेष और भाषा को आधार बनाकर दूसरों को धोखा देना।

मायाशल्य **Māyāśalya**

1. शल्य के तीन भेदों में से एक भेद।
2. दूसरे को ठगना।
3. राग के वशीभूत होकर परस्त्री आदि की कामनारूप अथवा द्वेष के वशीभूत होकर परवध आदि रूप मेरे खोटे ध्यान को कोई नहीं जानता, ऐसा सोचकर अपनी आत्मा की शुद्धि न करके बाह्य वेष के द्वारा लोकानुरंजन करना।

मायाशल्यमरण **Māyāśalyamaraṇa**

पार्श्वस्थ (शिथिलाचारी) साधु आदि के रूप में बहुत समय तक विहार करके आलोचना किए बिना ही होने वाला मरण।

मारणान्तिकसमुद्घात **Māraṇāntikasamudghāta**

मरण के समय जीव द्वारा वर्तमान शरीर को न छोड़ते हुए ऋजुगति अथवा विग्रह (वक्र) गति से उत्पन्न होने वाले स्थल (क्षेत्र) तक जाकर शरीर से तिगुने अथवा अन्य प्रकार से अंतर्मुहूर्तकाल तक वहाँ स्थित रहना। इसे मारणसमुद्घात भी कहते हैं।

मारणान्तिकातिसहनता **Māraṇāntikātisahanatā**

मरणकाल में होने वाले उपसर्गों को कल्याणकारक जानकर मित्रबुद्धि से सहन करना।

मारणान्तिकी सल्लेखना (संलेखना) **Māraṇāntikī sallekhanā (Saṁlekhanā)**

मरण के समय तपस्या के द्वारा शरीर को कृश करना।

मारुतचारण **Mārutacāraṇa**

1. ऋद्धि विशेष का नाम।
2. ऋद्धि विशेष के प्रभाव से मुनिजनों द्वारा वायु-प्रदेशों पर निर्बाधरूप से गमन करना।

मार्गणा **Mārgaṇā**

1. अवग्रह के द्वारा गृहीत पदार्थ को खोजना।
2. सम्पूर्ण जीवों के सुख-प्राप्ति के हेतुओं की खोज करना।
3. आत्मा के रत्नत्रय की शुद्धि एवं समाधिमरण कराने में समर्थ आचार्य की खोज करना।

मार्गदूषणा **Mārgadūṣaṇā**

1. तत्त्वज्ञान रहित अज्ञानी जीव का वह आचरण जो स्वयं को पंडित मानते हुए ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप मोक्षमार्ग और उसका अनुसरण करने वाले संयमी जीवों के आचरण का घात करता हो।
2. सम्मोही भावना का एक लक्षण।

मार्ग प्रभावना **Mārgaprabhāvanā**

1. ज्ञान, तप और जिनेंद्र-पूजा आदि के द्वारा धर्म का प्रकाशन करना।
2. मान को दूर करके अपने आचरण और उपदेश के द्वारा मोक्षमार्ग के कारणभूत सम्यग्दर्शनादि को प्रकाशित करना।

मार्गवर्णजनन **Mārgavarṇajanana**

रत्नत्रय के अभाव में अनादि-अनन्त भी भव्य जीवराशि निर्वाण को प्राप्त नहीं करती है और उस रत्नत्रय का लाभ हो जाने पर संपूर्ण संपदाएँ सुलभ हो जाती है - इस प्रकार मोक्ष-मार्ग का संकीर्तन करना।

मार्गविप्रतिपत्ति **Mārgavipratipatti**

अज्ञानी पुरुष के द्वारा अपने कुतर्कों से मोक्षमार्ग को दूषित करके उन्मार्ग में प्रवृत्ति करना।

मार्गशुद्धि **Mārgaśuddhi**

देखें - प्रासुकमार्ग

मार्गसंश्रय **Mārg ṣaṃśraya**

1. विहार करके आये हुए मुनि से मार्गजन्य सुख-दुःख के संबंध में पूछ-ताछ करना।
2. दस प्रकार के समाचार में से अंतिम।

मार्गोपसम्पत् **Mārgopasampat**

1. संयम, तप, ज्ञान और योग सम्पन्न समागत साधुजनों के द्वारा परस्पर में गमनागमन के सुख-दुख को पूछना।
2. देखें - मार्गसंश्रय।

मार्दव **Mārdava**

1. कुल, रूप, जाति, बुद्धि, तप, श्रुत और शील इन सभी में थोड़ा भी अभिमान न करना।
2. मृदु एवं विनम्रता का भाव।
3. दस धर्मों में दूसरा धर्म।

मालदोष **Māladoṣa**

1. मालापीठ आदि के ऊपर कायोत्सर्ग से स्थित होना।

20—416 Min. of HRD/2014

2. शिर से भाल (उपरिम भाग) का आलम्बन लेकर कायोत्सर्ग में स्थित होना।
3. कायोत्सर्ग का एक दोष।

मालापहृत **Mālāpahṛta**

ऊपर रखी हुई वस्तु को सीढ़ी आदि से उतार कर साधु को देने से होने वाला दोष। इसे मालारोहण दोष भी कहते हैं।

मालारोहणदोष **Mālārohaṇadoṣa**

देखें - मालापहृत।

मित **Mita**

1. वर्ण पदादि से प्रमाण का निश्चित होना।
2. सर्वज्ञभाषित सूत्रवचन के आठ गुणों में से सातवाँ गुण।

मित्रानुराग **Mitrānurāga**

1. बाल्यावस्था में मित्रों के साथ की गई क्रीड़ाओं का सल्लेखना ग्रहण करने के पश्चात् स्मरण करना।
2. सल्लेखना का एक अतिचार (दोष)।

मिथ्याकार **Mithyākāra**

1. व्रतादि के विषय में होने वाले दोष (अतिचार) का काय और मन से परिहार करना।
2. दोष के विषय में यह प्रवृत्ति मिथ्या हो - (मिच्छामि मे दुक्कडं) संयमी के द्वारा ऐसा भाव प्रकट करना।

मिथ्याचार **Mithyācāra**

बाह्य इन्द्रियों का दमन करके किसी अज्ञानी व्यक्ति के द्वारा अंतरंग में इन्द्रिय-विषयों की अभिलाषा;

मिथ्याचारित्र **Mithyācāritra**

1. चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से कषायों के वशीभूत होकर जीवों के द्वारा की गई योग की अशुभ प्रवृत्ति।
2. मिथ्याज्ञानियों का आचरण।

मिथ्याचारित्र सेवा **Mithyācāritra sevā**

द्रव्यलाभ आदि की अपेक्षा से मिथ्या चारित्र वाले पुरुषों की संगति करना।

मिथ्याज्ञान **Mithyājñāna**

परमत (जैनेतर मत) का रुचिपूर्वक ज्ञान प्राप्त करना।

मिथ्याज्ञान सेवा **Mithyajñāna sevā**

निरपेक्ष नय की अपेक्षा से ऐसा उपदेश देना कि यह ही तत्त्व है - इस प्रकार से श्रोताओं में श्रद्धा उत्पन्न करते हुए मिथ्याज्ञानियों के साथ रहना, उनमें अनुराग करना, उनका अनुकरण करना अथवा उनकी सेवा करना।

मिथ्यात्व **Mithyātva**

1. दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से सर्वज्ञप्रणीत मोक्षमार्ग के प्रति पराङ्मुख एवं तत्त्वों में अश्रद्धान तथा विवेकरहित विपरीत दृष्टि का होना।
2. तत्त्वार्थों पर श्रद्धान न करना।
3. संशय, विपर्यय और अनध्यवसाययुक्त ज्ञान।

मिथ्यात्व क्रिया **Mithyātva kriyā**

लौकिक देवी-देवताओं की स्तुतिरूप मिथ्यात्व की हेतुभूत प्रवृत्ति का होना।

मिथ्यात्वदर्शनक्रिया **Mithyātvadarśana kriyā**

1. मिथ्यादर्शन रूप आचरण करने एवं कराने में उद्यत व्यक्ति को - तुम ठीक कर रहे हो - इस प्रकार उसकी प्रशंसा करके उसे और दृढ़ करना।
2. मिथ्यामार्ग में रत व्यक्ति की अनुमोदना करना।

मिथ्यात्ववेदनीय **Mithdātyvavedanīya**

जिन प्रणीत तत्त्वों का अश्रद्धान स्वरूप में अनुभव करना।

मिथ्यात्वसेवा **Mithyātvasevā**

मिथ्यात्व परिणाम के योग्य द्रव्य आदि का उपयोग करना।

मिथ्यात्वोदय **Mithyātvodaya**

जीवों के अन्तरंग में अयथार्थ तत्त्वों के प्रति श्रद्धान का भाव उत्पन्न होना।

मिथ्यादर्शन **Mithyādarśana**

तत्त्वों का विपरीत श्रद्धान।

मिथ्यादर्शनवाक् **Mithyādarśanavāk**

मिथ्यामार्ग का उपदेश देने वाला वचन।

मिथ्यादर्शनशल्य **Mithyādarśanaśalya**

1. अयथार्थ तत्त्वों के प्रति किए गए श्रद्धान से आत्मा में होने वाली चुभन।
2. शल्य के तीन भेदों में से एक।

मिथ्यादृष्टि **Mithyādṛṣṭi**

1. मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के उदय से जिनप्रणीत तत्त्वों के श्रद्धान से रहित दृष्टि एवं जिनवाणी में अरुचि वाला जीव।
2. जीवों के चौदह गुणस्थानों में पहला गुणस्थान।
3. जिनोपदिष्ट तत्त्व के अनैकान्तिकस्वरूप से पराङ्मुख दृष्टि वाला।

मिथ्यादृष्टिगुणस्थान **Mithyādṛṣṭi guṇasthāna**

मिथ्यात्व के उदय से जीव के होने वाला औदयिक भाव।

मिथ्यादृष्टिप्रशंसा **Mithyādṛṣṭipraśaṃsā**

1. मिथ्यादृष्टि जीव के ज्ञान और चारित्र रूप गुणों की मन से प्रशंसा करना।
2. सम्यग्दर्शन का एक अतिचार।

मिथ्यादृष्टिश्रुत **Mithyādṛṣṭiśruta**

जिनोपदिष्ट तत्त्वों के यथार्थस्वरूप से भिन्न पदार्थों का ज्ञान कराने वाला शास्त्र।

मिथ्यादृष्टिसंस्तव **Mithyādṛṣṭisaṁstava**

1. मिथ्यादृष्टि के विद्यमान और अविद्यमान गुणों की वचनों द्वारा स्तुति करना।
2. सम्यग्दर्शन का एक अतिचार।

मिथ्यादृष्टिसेवा **Mithyādṛṣṭisevā**

एकांत ग्रहरूपी पिशाच से ग्रसित जीव का बहुमान करना।

मिथ्यानेकांत **Mithyānekanta**

प्रत्यक्षादि प्रमाण के विरुद्ध वस्तु में विपरीत गुणों की परिकल्पना करना।

मिथ्यार्थ **Mithyārtha**

तत्त्वार्थ से भिन्न, सर्वथा एकांतवादियों के द्वारा स्वीकार किया गया वस्तु का स्वरूप।

मिथ्याशल्य **Mithyāśalya**

अपना निर्मल और निर्दोष आत्मा रूप परमात्मा ही उपादेय है - इस प्रकार की रुचिरूप सम्यक्त्व से विपरीत प्रवृत्ति का चुभन।

मिथ्याश्रुत **Mithyāśruta**

1. मिथ्यादृष्टि के द्वारा स्वतंत्र अवग्रह और ईहारूप बुद्धि तथा अवाय और धारणा रूप मति से कल्पित श्रुत (ज्ञान)।
2. जिनोपदिष्ट तत्त्वों के यथार्थ स्वरूप से भिन्न वस्तुस्वरूप का ज्ञान।

मिथ्यास्तिक्य **Mithyāstikya**

सम्यक्त्व के अभाव में स्व-परपदार्थों की विपरीत अनुभूति।

मिथ्यैकांत **Mithyaikānta**

अनेकांतस्वरूप वस्तु के किसी एक धर्म को स्वीकार करके अन्य धर्मों का निराकरण करना।

मिथ्योपदेश **Mithyopadeśa**

1. स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति में कल्याणकारी क्रियाओं से विपरीत क्रियाओं में दूसरों को लगाना अथवा शिक्षा देना।
2. सत्याणुव्रत का एक अतिचार।

मिथ्योह **Mithyoha**

अन्यत्र साधन के अभाव से सर्वत्र उसके अभाव में व्यतिरेक का विचार करना। इसका अपर नाम मिथ्यातर्क या तर्काभास भी है।

मिश्रगुणस्थान **Miśraguṇasthāna**

1. मिले हुए दही और गुड़ के समान जीव में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व भावों का एक साथ होना।
2. जीव के सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय में आना।
3. जीव के चौदह गुणस्थानों में से तीसरा गुणस्थान।

मिश्रग्रहाणाद्धा **Miśragrahaṇāddhā**

विवक्षित पुद्गल परिवर्तन के अंदर गृहीत और अगृहीत पुद्गलों के एक साथ ग्रहण करने का काल।

मिश्रचारित्र **Miśracāritra**

अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यान रूप बारह कषायों का क्षय होने पर, उन्हीं का सदवस्था रूप उपशम तथा देशघाति चार संज्वलनरूप कषायों में से किसी एक का उदय और हास्यादि नौ नोकषायों का यथासंभव उदय होने पर होने वाला चारित्र।

मिश्रजात **Miśrajāta**

1. प्रारम्भ से ही गृहस्थ और साधु दोनों के लिए मिश्रित रूप में पकाया गया भोजन।
2. उद्गम के सोलह भेदों में से चौथा भेद।

मिश्रदर्शन **Miśradarśana**

1. सम्यग्मिथ्यात्व के योग से एक मुहूर्त पर्यंत होने वाला मिश्र श्रद्धान।
2. इसका अपर नाम सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान अथवा मिश्रगुणस्थान है।

मिश्रदर्शनमोहनीय **Miśradarśanamohanīya**

सम्यग्मिथ्यात्व रूप कर्म प्रकृति के उदय से जिनोपदिष्ट धर्म पर जीव द्वारा राग-द्वेष न करना।

मिश्रदृष्टि **Miśradṛṣṭi**

जिनोक्त तत्त्वों में राग-द्वेष का न होना।

मिश्रदोष **Miśradoṣa**

1. पाखंडियों और गृहस्थों के साथ संयमी जीवों को देने के लिए तैयार करना।
2. उद्गम दोष का एक भेद।

मिश्रद्रव्यसंयोग **Miśradravyasaṃyoga**

जीव और पुद्गल रूप कर्मों का संयोग।

मिश्रपूजा **Miśrapūjā**

अर्हंत आदि जिनेंद्र देव एवं उनके शरीर-इन दोनों की पूजा।

मिश्रप्रायश्चित्त **Miśraprāyascitta**

पहले आलोचना करके बाद में गुरु के निर्देशानुसार प्रतिक्रमण करना।

मिश्रभाव **Miśrabhāva**

1. जीव का उपशम और क्षयस्वरूप भाव।
2. कर्म के कुछ उपशम और क्षय के साथ देशघाती स्पर्धकों का उदय बना रहने पर उत्पन्न होने वाला भाव।
3. इसका अपरनाम क्षायोपशमिकभाव भी है।

मिश्रयोग **Miśrayoga**

1. जीवों में सान्निपातिक भाव के उदय से होने वाला संयोग।
2. मिश्रयोग (संयोग) पंद्रह प्रकार का होता है।

मिश्रयोनि **Miśrayoni**

जीव प्रदेशों से रहित और जीवप्रदेशों से सहित योनि।

मिश्रवचन **Miśravacana**

वस्तु के साधक अथवा बाधक रूप से प्रमाणांतरों से बाधित और अबाधित भी बोला जाने वाला वचन।

मिश्रवेदनीय **Miśravedanīya**

वस्तु-स्वरूप का सम्यक्त्व और मिथ्यात्वरूप से अनुभव होना।

मिश्रसंयुक्तकद्रव्यसंयोग **Miśrasaṃyuktakadravya Saṃyoga**

कर्म की अनन्त परमाणुवर्गणाओं से आवेष्टित-प्रवेष्टित (अच्छी तरह से संयुक्त होते हुए) जीव द्वारा अपने चैतन्यस्वरूप को न छोड़ते हुए और अचेतनरूप पुद्गलकर्म द्वारा अचेतनपने को न छोड़ते हुए, कर्म परमाणुओं से युक्त जीव का विवक्षा पूर्वक कर्म प्रदेशांतरों से संयोग।

मिश्रसम्यक्त्व **Miśrasamyaktva**

क्रोधादिरूप चार अनंतानुबंधी कषायों तथा मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व - इन छह प्रकृतियों के उदयक्षय तथा सदवस्था रूप उपशम से और सम्यक्त्व नामक दर्शनमोहनीय कर्म के देशघाति स्पर्धकों के उदय से उत्पन्न होने वाला सम्यक्त्व।

मिश्रानुकंपा **Miśrānukaṁpā**

पंचमगुणस्थानवर्ती देशविरति (संयतासंयत) जीवों के विषय में की जाने वाली दया।

मिश्रिकागति **Miśrikāgati**

जीव के प्रयोग से किए गए अचेतन द्रव्य के परिणाम से कुंभ और स्तंभ आदि पुद्गल द्रव्य की प्रयोग और स्वभाव - इन दोनों के आश्रय से होने वाली गति।

मीमांसा **Mīmāṃsā**

1. प्रमाण के लिए की जाने वाली इच्छा।
2. अवग्रह से गृहीत पदार्थ का विशेष रूप से किया जाने वाला विचार।
3. ईहाज्ञान का अपर नाम।

मुकुटधरराजा **Mukuṭadhararājā**

अट्ठारह सेनाओं या श्रेणियों का स्वामी, प्रजाजनों को आजीविका और अर्थ देने वाला तथा शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला मुकुटधारी राजा।

मुक्त **Mukta**

1. जीव का द्रव्य बंध एवं भावबंध से रहित होना।
2. सकलकर्मों (अष्टकर्मों) से रहित, कृतकृत्यपने को प्राप्त।
3. लोकाग्र पर वास करने वाला शुद्धभावों में स्थित जीव।

मुक्ताशुक्तिमुद्रा **Muktāśuktimudrā**

मध्यभाग में कुछ उठे हुए मोती की सीप के समान दोनों हाथों को सम करके मस्तक पर जोड़ने वाली मुद्रा।

मुक्ति **Mukti**

1. बाह्य एवं आंतरिक वस्तुओं में तृष्णा का अभाव।
2. शुद्धभावों में स्थित जीव की कर्ममुक्त अवस्था।

मुखसंस्कार **Mukhasaṃskāra**

लेप अथवा मंत्र के द्वारा मुख पर तेज उत्पन्न करना।

मुख्य **Mukhya**

प्रकृत में जिसकी विवक्षा की जाये।

मुख्यकाल **Mukhyakāla**

जीवों और पुद्गलों में होने वाले अनेक प्रकार के परिवर्तनों का आधारभूत काल।

मुख्यप्रत्यक्ष **Mukhyapratyakṣa**

1. अतींद्रिय ज्ञान
2. कर्मों का आवरण सर्वथा नष्ट हो जाने पर चेतन का आत्मस्वरूप में स्थित होना।

मुदिता **Muditā**

देखें - प्रमोद भावना।

मुनि **Muni**

1. वस्तु की त्रैकालिक अवस्था को जानने वाला।
2. आत्मविद्या को स्वीकार करने वाला।
3. अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी और केवलज्ञानी भी मुनि कहलाते हैं।
4. श्रमण परंपरा का महाव्रती तपस्वी साधक।

मुनिसुव्रत **Munisuvrata**

1. उत्तमव्रतों का परिपालक।
2. चौबीस तीर्थंकरों में बीसवें तीर्थंकर।

मुमुक्षु **Mumukṣu**

1. पुण्य और पापरूप कर्मों से रहित होने के लिए मोक्षाभिलाषी साधक।
2. मोक्ष का इच्छुक।

मुर्मुर **Murmura**

1. क्षार (भस्म) से युक्त अग्नि।
2. यहां-वहां बिखरे हुए अग्निकणों से युक्त भस्म/राख।

मुसली **Musalī**

1. प्रतिलेखन के समय तिर्यग्, ऊर्ध्व अथवा अधोभूमि का स्पर्श करने पर होने वाला दोष।
2. प्रतिलेखन के छह दोषों में दूसरा दोष।

मुहूर्त्त **Muhūrtta**

1. सतहत्तर लव प्रमाण काल विशेष।
2. दो घड़ी काल।
3. बीस कला प्रमाण काल।
4. दो नालिका प्रमाण काल।

मूकदोष **Mūkadoṣa**

1. वंदना के समय मूक के समान उच्चारण न करते हुए मात्र हुंकारादि के द्वारा संकेत करना।
2. वंदना का एक दोष।

मूकितदोष **Mūkitadoṣa**

1. कायोत्सर्ग में स्थित होकर गूंगे के समान मुख और नासिका की विरूपता को प्रकट करना।
2. कायोत्सर्ग का एक दोष।

मूढ़ **Mūḍha**

1. आत्मस्वरूप को न जानने वाला अज्ञानी जीव।

2. बहिरात्मा।

मूढ़दृष्टि **Mūḍhadṛṣṭi**

1. आत्मस्वरूप से रहित और इंद्रिय विषयों में लिप्त होते हुए शरीर को ही आत्मा मानने वाला।
2. सम्यग्दर्शन का एक दोष।
3. मिथ्यादृष्टियों के बहुमान को देख-सुनकर व्यामोह बुद्धि वाला।

मूत्रान्तराय **Mūtrāntarāya**

आहार के समय मूत्र अथवा वीर्य आदि के निकल जाने पर होने वाला दोष।

मूर्च्छा **Mūrcchā**

1. चेतन-अचेतन आदि बाह्य एवं आभ्यंतर पदार्थों में रागादिरूप परिणामों का होना।
2. इंद्रियविषयों में आसक्ति।

मूर्त **Mūrta**

इंद्रियों के द्वारा ग्राह्य पदार्थ।

मूर्ति **Mūrti**

द्रव्य का विविध आकृतिरूप परिमाण।

मूलकरण **Mūlakaraṇa**

अवयवों के विभाग से रहित औदारिक शरीरों की प्रथम रचना।

मूलकरणकृति **Mūlakaraṇakṛiti**

मूलकरणरूप औदारिक आदि शरीरों के संघातन (परिशाटन) आदिरूप कार्य।

मूलकर्मपिंड **Mūlakarmapiṇḍa**

1. अनुष्ठान विशेष के फलस्वरूप प्राप्त होने वाला आहार।
2. उत्पादन दोष का एक भेद।

मूलगुण **Mūlaguṇa**

श्रावक एवं साधु के द्वारा पालने योग्य आवश्यक गुण।

मूलगुणनिर्वर्तना **Mūlaguṇanirvartanā**

पांच शरीर, वचन, मन और प्राणापान के समूह का नाम।

मूलगुणनिष्पन्नमंगल **Mūlaguṇaniṣpannamaṅgala**

पृथ्वीकाय आदि जीव के प्रयोग से मिट्टी आदि द्रव्य का निष्पादन होना।

मूलप्रकृति **Mūlaprakṛti**

द्रव्यार्थिक नय के आश्रय से समस्त भेदों का संग्रह करने वाली प्रकृति।

मूलप्रथमानुयोग **Mūlaprathamānuyoga**

एक वक्तव्यता के प्रणेता मूल तीर्थंकर का सम्यक्त्व की प्राप्ति रूप पूर्व भवादि को विषय करने वाला प्रथम अनुयोग।

मूलप्रयोगकरण **Mūlaprayogakaraṇa**

देखें- मूलकरण। औदारिक आदि पांच शरीरों का प्रथम संघात करना।

मूलप्रायश्चित्त **Mūlaprayaścitta**

अपराध को जानकर समस्त पूर्व संयम पर्याय को नष्टकर फिर से दीक्षा देना।

मृगचारित्र **Mṛgācaritra**

1. गुरुकुल को छोड़कर जिनागम को दूषित करते हुये स्वच्छंद विचरण करना।
2. पार्श्वस्थ आदि पांच कुत्सित साधुओं में से एक।

मृगयाव्यसन **Mṛgayāvyasana**

1. अनेक मृग आदि प्राणियों का आखेट रूप में घात करना।
2. शिकार का व्यसन।

मृतकशायी **Mṛtakaśāyī**

1. मृतक के समान हलन-चलन से रहित होकर सोने वाला।
2. क्षपक के शयन करने के प्रकारों में से एक।

मृत्यु **Mṛtyu**

1. प्राणों का विनाश।
2. पूर्व-प्राप्त जीवन की अवधि के पहले ही भुज्यमान निषेकों का अनुभव करते हुए उनका पूर्णतः विनाश हो जाना।
3. सादि-शांत और मूर्त इंद्रियों से विजातीय नर-नारकादि विभाव पर्यायों का विनाश।
4. देखें-मरण।

मृदुस्पर्शनाम **Mṛdusparsanāma**

नामकर्म के उदय से शरीरगत पुद्गलों में मृदुता आना।

मृषानंदरौद्रध्यान **Mṛṣānandaraudradhyāna**

श्रद्धा के योग्य तत्त्व के विषय में अपनी कल्पित युक्तियों के द्वारा दूसरों को ठगने के विचारों में आनंदित होना।

मृषानुबंधी **Mṛṣaanubandhī**

देखें-मृषानंदरौद्रध्यान

मृषाभाषा **Mṛṣābhāṣā**

वस्तु के यथार्थ स्वरूप के प्ररूपक सत्य की विराधना करने वाली भाषा।

मृषामनोयोग **Mṛṣāmanoyoga**

झूठे वचन का कारणभूत मनोव्यापार।

मृषारौद्रध्यान **Mṛṣāraudradhyāna**

देखो- मृषानंदरौद्रध्यान

मृषावचन **Mṛṣāvacana**

सद्भूत के अपलापक, असद्भूत के प्रकाशक, विपरीत, कटुक और पापयुक्त वचन।

मृषावाद **Mṛṣāvāda**

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और प्रमाद के आश्रय से उत्पन्न होने वाला अप्रशस्त वचन।

मृषावादविरमण **Mṛṣāvādaviramaṇa**

अप्रशस्त वचनों से विरक्ति।

मेघ चारण **Meghacāraṇa**

विविध प्रकार के जलकायिक जीवों की विराधना न करते हुए गमन करने की सामर्थ्य विशेष का प्रगट होना।

मेधा **Medhā**

1. जिसके द्वारा पदार्थ जाना जाता है।
2. ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से धर्म ग्रहण करने में चित्त की दक्षता।

मैत्री भावना **Maitrībhāvanā**

1. प्राणि-मात्र के प्रति मित्रता का विचार।
2. दूसरों की हित की चिंता।

3. मन वचन कार्य और कृत कारित अनुमोदना से सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्राणियों को दु:ख न हो, ऐसा चिंतन करना।

मैथुन **Maithuna**

चारित्र मोहनीय कर्म के उदय होने पर राग-प्रेरित स्त्री पुरुष के परस्पर स्पर्श करने की इच्छा मिथुन और मिथुन की क्रिया में प्रवृत्त होना।

मैथुन संज्ञा **Maithuna samjñā**

1. वेद मोहनीय कर्म के उदय से मैथुन की अभिलाषा रूप जीव का परिणाम।
2. वेद कार्य की उदीरणा से निरंतर भोजन के प्रति उपयोग रहते हुये रस युक्त गरिष्ठ भोजन करके कुशील सेवन करना।

मोक्ष **Mokṣa**

1. बंध के हेतुभूत समस्त कर्मों का क्षय होना।
2. कर्म का नि:शेष क्षय होना।
3. नि:शेष कर्म के क्षय होने से आत्मा की अचिन्त्य स्वाभाविक ज्ञानादि गुण, अव्याबाध सुख युक्त आत्यन्तिक अवस्था का प्रकट होना।
4. जीव पुद्गल के संश्लिष्ट कर्म बंध के कारणों को नष्ट करने में समर्थ शुद्ध आत्मोपलब्धि परिणाम को प्राप्त होना।

मोक्षतरुबीज **Mokṣatarubīja**

1. सम्यक्चारित्र सहित सम्यग्ज्ञान।
2. मोक्षरूपी वृक्ष का बीजरूप यथार्थज्ञान।

मोक्षमार्ग **Mokṣamārga**

1. सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान पूर्वक राग-द्वेष रहित सम्यक् आचरण।
2. स्वानुभूतिपूर्वक निर्ग्रंथ साधुचर्या।

मोक्ष विनय **Mokṣavinaya**

इहलौकिक सुखों से निरपेक्ष होकर सम्यक् श्रद्धान-ज्ञान और शिक्षा आदि में प्रवृत्ति करना।

मोक्षसाधन **Mokṣasādhana**

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र की निर्दोष आराधना।

मोक्षसुख **Mokṣasukha**

चार घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न पर-पदार्थ निरपेक्ष अतींद्रिय, अविनश्वर अबाधित सुख।

मोक्षोपाय **Mokṣopāya**

बाह्य पदार्थ निरपेक्ष, उत्कृष्ट आत्मतत्त्व विषयक समीचीन श्रद्धान, ज्ञान और अनुष्ठान रूप रत्नत्रय स्वरूप मार्ग।

मोषमनोयोग **Moṣamanoyoga**

असत्य वचन के निमित्तभूत मन से होने वाला योग।

मोषवाक् **Moṣavak**

ऐसे वचन, जिनको सुनकर चौर्यकर्म में प्रवृत्ति हो।

मोह **Moha**

1. मोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न होने वाला जीव का अज्ञान परिणाम।
2. पदार्थों में अयथार्थ ज्ञान।
3. क्रोध-मान-माया-लोभ हास्य-रति-अरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुंवेद-नपुंसकवेद मिथ्यात्व का समूह।

मोहनीय **Mohanīya**

1. मिथ्यात्व आदि से प्राणियों को मोहित करने वाला कर्म।
2. जो कर्म प्राणियों को सद्-असद् विवेक से रहित करता हो।

मौखर्य **Maukharya**

1. धृष्टता के अभिप्राय से निष्प्रयोजन प्रलाप करना।
2. असभ्य, असत्य एवं असंबद्ध बकवाद करना।
3. पापोपदेश-अनर्थदंडव्रत का एक अतिचार।

म्रक्षित **Mrakṣita**

1. सस्नेह (चिकने) हस्त तथा पात्र आदि के द्वारा भोज्य पदार्थ को देना।
2. ऐसी वसति, जो तत्काल सिंचित की गई है अथवा लीपी गई है वह साधु के लिये म्रक्षित दोष से युक्त होती है।
3. सचित्त तथा अचित्त पदार्थ मधु आदि निंद्य पदार्थ से संबद्ध अन्न।
4. एषणा के दस दोषों में द्वितीय दोष।

म्लेच्छ **Mleccha**

1. अस्पष्ट एवं निर्लज्ज भाषा का व्यवहार करने वाले जीव। जैसे शक, यवन, चिलात, सिंहल, पारसी, गोध, क्रौंच, द्रविण, चिल्लल, पुलिंद, हर्ष आदि।

2. पांच म्लेच्छ खंडस्थ जीव जो अनेक प्रकार के भाव से संकलित तथा दूषित है- जैसे नाहल, पुलिंद, बर्बर, किरात एवं सिंहल आदि।
3. लवणोदधि के भीतरी पार्श्वभाग में आठ दिशाओं में आठ, मध्यवर्ती आठ और हिमवान् आदि पर्वतों के पार्श्वभाग में स्थित अन्तरद्वीपज म्लेच्छ।
4. शक, यवन, शबर पुलिंद आदि कर्मभूमिज म्लेच्छ।

यंत्र **Yantra**

विशिष्ट प्रकार के अक्षर, शब्द एवं मंत्र रचना को कोष्ठक आदि में चित्रित करना।

यक्ष **Yakṣha**

1. व्यंतर देवों का एक प्रकार
2. भांडागार (खजाना) में नियुक्त प्रचुर लोभ-युक्त देव विशेष।

यति **Yati**

1. जयवान्।
2. उपशम तथा क्षपक श्रेणी में आरूढ़ साधक।
3. पाप नाश के लिए प्रयत्नशील साधक।
4. देहमात्र को घर माननेवाला, सम्यक् विद्या रूपी जहाज के लाभ से तृष्णा रूपी सरिता को पार करने में यत्नशील।
5. चिर-प्रव्रजित साधु।

यति-दोष **Yati doṣa**

यति के बत्तीस सूत्र दोषों में बाईसवाँ दोष। अस्थान में यति (विश्रान्ति) का विच्छेद करना अथवा विश्राम ही नहीं करना।

यतिधर्म **Yatidharma**

1. सावद्य योग से विरत।
2. जिन आगमोक्त मुनि का आचरण।

यति प्रायश्चित्त **Yatī prāyaścitta**

स्वधर्म के व्यतिक्रम से यतियों द्वारा किया गया आगमोक्त प्रायश्चित्त।

यत्रकामावसायिता **Yatrakāmāvasāyitā**

1. अणिमा, लघिमा आदि रूप आठ ऐश्वर्यों में अंतिम ऐश्वर्य।

2. ब्राह्म, प्राजापत्य, देव, गांधर्व, यक्ष, राक्षस, पित्र्य एवं पैशाच-इन आठ प्रकार के दैव सर्ग में, मानुष्य सर्ग में, पशु-पक्षी मृग, सरीसृप और स्थावर इन-पांच में और अन्य विभिन्न स्थानों में इच्छानुसार निवास करना।

यत्स्थिति बंध **Yatsthitibaṅdha**

आबाधा सहित जघन्य स्थिति बंध।

यत्स्थिति संक्रम **Yatsthitisaṅkrama**

कर्म की संक्रमण के समय होने वाली स्थिति का संक्रमण।

यत्याचार **Yatayācāra**

यतियों का आचार-विचार अथवा उनके आचरण का वर्णन करने वाला ग्रंथ।

यथाख्यातचारित्र **Yathākhyātacāritra**

1. मोहनीय कर्म के उपशम अथवा क्षय हो जाने से आत्म-स्वभाव में अवस्थान।
2. कषायरहित संयम।
3. अपर नाम अथाख्यात तथा तथाख्यात।

यथाख्यातचारित्रमुनि **Yathākhyātachāritramuni**

यथाख्यात चारित्र को धारण करने वाला छद्मस्थ जीव।

यथाच्छंद मुनि **Yathācchaṅda Muni**

आगम में अनुपदिष्ट सूत्र विरुद्ध मनगढ़ंत निरूपण करने वाला मुनि।

यथाजात **Yathājāata**

बाह्य तथा अभयंतर चिंता से रहित साधु।

यथातथानुपूर्वी **Yathātathānupūrvī**

अनुरूप एवं प्रतिरूप क्रम के बिना जाने वाली प्ररूपणा।

यथानुपूर्व **Yathānupūrva**

1. यथानुपूर्वी में होने वाला श्रुतज्ञान या द्रव्यश्रुत।
2. यथानुपूर्वी का अपरनाम यथानुपरिपाटी है।

यथानुमार्ग **Yathānumārga**

1. यथास्थिति जीवादि पदार्थों का अन्वेषण।
2. श्रुतज्ञान का नामांतर।

यथानुमार्ग **Yathānumārga**

1. श्रुतज्ञान का नामांतर।

2. यथावस्थित जीवादि पदार्थ जिस ज्ञान के द्वारा खोजे जाते हैं।

यथाप्रवृत्तकरण **Yathāpravrttakarana**

1. अनादिकाल से कर्मक्षपण के लिए अध्यवसाय में प्रवृत्त जीव।
2. अपूर्वकरण गुणस्थान का एक भेद/श्रेणी
3. अनादिकाल से कर्मक्षपण के लिए अध्यवसाय में प्रवृत्ति।
4. गिरिनदीपाषाणघर्षणन्याय से कर्मविनाश का निश्चित कारण।

यम **Yama**

भोगोपभोग के परिमाण करने के लिए यावत् जीवन हेतु लिया गया नियम।

यश **Yaśa**

1. नाम कर्म का एक भेद।
2. पराक्रम के द्वारा प्राप्त होने वाली कीर्ति।

यश:कीर्तिनामकर्म **Yaśaḥkīrtināmakarma**

1. पवित्र गुणों की ख्याति का कारण।
2. नामकर्म की प्रकृतियों का एक भेद।
3. पराक्रम के आश्रय से सर्व जन के द्वारा कीर्तनीय गुणों का समस्त दिशाओं में फैलना यश है तथा पुण्य के प्रभाव से एक ही दिशा में उन गुणों का फैलना कीर्ति है। अर्थात् जिस नामकर्म के उदय से यश और कीर्ति दोनों प्राप्त हो।

युग **Yuga**

1. काल विशेष (पांच वर्षों का काल)।
2. शकट विशेष (भारी एवं अतिशय-महान् होने से घोड़े अथवा खच्चर द्वारा खींचे जाने वाली गाड़ी-शकट)।

युगसंवत्सर **Yugasaṃvatsara**

पांच वर्षस्वरूप युग के पूरक वर्ष।

युति **Yuti**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से जीवादि द्रव्यों की समीपता अथवा संयोग।

योग **Yoga**

1. जिनेंद्र भगवान् द्वारा-प्ररूपित तत्त्वों में आत्मा को योजित करना।
2. मन, वचन और काय के आश्रय से आत्म-प्रदेशों में परिस्पंदन।

21—416 Min. of HRD/2014

3. वीर्यांतराय के क्षयोपशम से उत्पन्न हुई पर्याय से आत्मा का संबंध होना।
4. पंचाग्नि आदि की अनुष्ठान रूप प्रवृत्ति।
5. एकाग्रचिंता निरोधरूप समाधि।

योगनिरोध **Yoganirodha**

योगों को रोकना।

योगभक्ति **Yogabhakti**

राग-द्वेष आदि के परित्याग में तथा निर्विकल्प समाधि में साधु का अपने को योजित करना।

योगमुद्रा **Yogamudrā**

दोनों हाथों की अंगुलियों को जोड़कर कमलकोश के आकार युक्त दोनों हाथों की कुहनियों को पेट के मध्य में स्थित करने वाली मुद्रा विशेष।

योगवक्रता **Yogavakratā**

मन, वचन और काय की कुटिलतापूर्ण प्रवृत्ति।

योगवर्गणा **Yogavargaṇā**

असंख्यात लोकमात्र योगविभाग प्रतिच्छेद रूप वर्गणा।

योगविभागप्रतिच्छेद **Yogavibhāgāpraticcheda**

एक जीव-प्रदेशों में योग की जघन्य वृद्धि का होना।

योगसंक्रांति **Yogasaṅkrānti**

1. काय योग को छोड़कर अन्य योग को तथा अन्य योग को छोड़कर पुनः काय योग को ग्रहण करना।
2. काययोग में उपयुक्त ध्यान का वचन योग में संचार होना अथवा वचनयोग का मनोयोग में वचन का संचार होना।

योगसत्य **Yogasatya**

मन, वचन और काय योग की यथार्थता।

योगस्पर्द्धक **Yogaspardhaka**

योगस्थान प्रकरण में असंख्यातवें भाग मात्र असंख्यातवर्गणायें।

योनि **Yoni**

जीवों का उत्पत्ति स्थान।

योगी **Yogī**

1. कन्दर्प एवं दर्प का दलन करने वाला, दंभ एवं काय के व्यापार से रहित और उग्रताप से दीप्त शरीर वाला।
2. जिसकी आत्मा तत्त्व में, मन आत्मा में और इंद्रिय समूह मन में संलग्न हो।

योगोद्वहन **Yogodvahana**

पारणाकाल और स्वाध्याय आदि के निरोध पूर्वक योगों का धारण या निर्वाह करना।

योग्यता **Yogyatā**

1. नियत अर्थ-ग्रहण करने का सामर्थ्य।
2. ज्ञानावरण और वीर्यांतराय के क्षयोपशम विशेषरूप आत्मा की शुद्धि।

योजन **Yojana**

1. क्षेत्र का प्रमाण विशेष।
2. चार कोस परिमाण दूरी।
3. चार गव्यूति का परिमाण क्षेत्र।
4. आठ हजार दंड प्रमाण क्षेत्र।

योजनपृथक्त्व **Yojanapṛthaktva**

योजन को आठ से गुणित की गई दूरी। (4 कोस × 8 = 32 कोस)

रज्जू **Rajjū**

1. जगश्रेणि का सातवाँ भाग।
2. तिर्यग्लोक के विस्तार प्रमाण वाला क्षेत्र मापक शब्द।

रति **Rati**

1. नोकषाय का एक प्रकार।
2. देश आदिकों के विषय में उत्सुकता उत्पन्न करने वाला कर्म।
3. मनोज्ञ वस्तुओं में परम प्रीति होना।
4. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में राग उत्पन्न करने वाले कर्म स्कंध।

रतिवाक् **Rativāk**

शब्द आदि विषयों और देश आदिकों में राग उत्पन्न करने वाला वचन।

रथरेणु **Rathareṇu**

1. क्षेत्र का प्रमाण विशेष।
2. आठ त्रसरेणुओं का एक रथरेणु होता है।

रसकषाय **Rasakaṣāya**

रस के आश्रय से होने वाली कषाय।

रसगौरव **Rasagaurava**

अभीष्ट रस का त्याग न करना तथा अनिष्ट रस के विषय में अनादर का भाव रखना।

रसत्याग **Rasatyāga**

1. विशिष्ट रस-युक्त तथा विकार के कारणभूत गरिष्ठ पदार्थों का त्याग करना।
2. बाह्य तप का एक भेद।

रसननिर्वृत्ति **Rasananirvṛtti**

रसनेंद्रिय नामवाले आत्मप्रदेशों में अर्द्धचंद्राकार या खुरपे के आकार अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण पुद्गलपिंड।

रसनाजय **Rasanājaya**

1. इष्ट या अनिष्ट प्रासुक पांच रसों एवं शुद्ध चतुर्विध आहार (अशन, पान, खाद्य व स्वाद्य) में राग-द्वेष न होना।
2. साधु के अट्ठाईस मूलगुणों में से एक गुण।

रसनामकर्म **Rasanāmakarma**

रस का विकल्प उत्पन्न करने वाला कर्म।

रसपरित्याग **Rasaparityāga**

1. रस के विकारभूत पदार्थों का परित्याग तथा नीरस व रूखे भोज्य पदार्थों का नियम करना।
2. दूध, दही, घी, तेल, गुड़ एवं नमक तथा पंचरसों का परित्याग।

रसायिक **Rasāyika**

घी आदि रस का चमड़े आदि से संबंध होने पर सम्मूर्च्छन पंचेंद्रिय जीवों का उत्पन्न होना।

रहोऽभ्याख्यान **Rahoabhyākhyāna**

1. सत्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. रहस् अर्थात् एकांत। एकांत में जो होता है, वह रहस्य है। स्त्री-पुरुष अथवा राजा के विरुद्ध एकांत में किए गए कार्यविशेष को प्रकाशित करना।

राक्षसविवाह **Rākṣasavivāha**

1. विवाह का एक भेद।
2. कन्या का बलपूर्वक ग्रहण करके किया गया विवाह।

राग **Rāga**

1. आसक्ति, प्रीति, अनुराग।
2. अनंतानुबंधी आदि चार माया और चार लोभ कषायें, तीन वेद (स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद) हास्य और रति ये तेरह रागकषायें हैं।
3. निर्विकार स्वसंवेदनस्वरूप वीतरागचारित्र का रोधक चारित्र मोह।

राजकथा **Rājakathā**

1. विकथाओं का एक भेद।
2. राजाओं से संबंधित वचनालाप।

राजधर्म **Rājadharma**

दुष्टों का निग्रह एवं सज्जनों का संरक्षण करने रूप राजा का धर्म।

राजपिंडाग्रहणस्थितिकल्प **Rājapiṇḍāgrahaṇasthitikalpa**

1. स्थितिकल्प का चतुर्थ भेद।
2. प्रजा का अनुरंजन करने वाले इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए तथा महा ऋद्धि के धारक राजा के यहां भोजन आदि को ग्रहण न करना।

राजर्षि **Rājarṣi**

1. विक्रिया और अक्षीण ऋद्धि के धारक साधु।
2. ऋषि का एक भेद।
3. ऋषि जैसा संयमपूर्ण आचरण करने वाला कोई राजा या प्रशासक।

राजा **Rājā**

1. मुकुट को धारण किए हुए विनम्र अठारह श्रेणियों का स्वामी।
2. इक्ष्वाकु आदि कुलों में उत्पन्न, प्रजा का अनुरंजन करने वाला।
3. प्रजा के लिए कल्पवृक्ष की भांति आवश्यक सुख-साधन प्रदान करने वाला।

रात्रिभक्तव्रत **Rātribhaktavrata**

1. रात्रि में चतुर्विध आहार का ग्रहण न करना।
2. प्रथम पांच श्रावक प्रतिमाओं का पालन करते हुए दिन में मन, वचन और काय से स्त्री-सेवन का त्याग।
3. रात्रिभक्तव्रत का अपरनाम रात्रिभुक्तिविरत भी है।

राष्ट्र **Rāṣṭra**

पशु, धान्य और स्वर्ण संपदा से सुशोभित देश।

रिक्कू **Rikku**

1. दो हाथ प्रमाण माप विशेष।
2. इसका अपरनाम किष्कु (किक्खू) भी है।

रुद्र **Rudra**

1. शुक्लध्यानरूप अग्नि के द्वारा रौद्र अर्थात् भयानक कर्मसमूह को जलानेवाले।
2. जिनदेव का नामांतर।

रुधिर-अंतराय **Rudhira-antarāya**

अपने अथवा अन्य के शरीर से चार अंगुल प्रमाण रुधिर, पीव आदि के बहने पर भोजन में आने वाला अंतराय।

रुधिर-नामकर्म **Rudhiranāmakarma**

शरीरगत पुद्गलों का रुधिर वर्ण करने वाला कर्मोदय।

रुष्टवंदन **Ruṣṭavandana**

क्रोध से युक्त गुरु की वंदना करने अथवा स्वयं क्रोध को प्राप्त होते हुए गुरु की वंदना करने पर होने वाला दोष।

रूक्ष **Rūkṣa**

वाह्य और आभ्यंतर कारण के वश स्निग्धता के विपरीत अवस्था या गुण।

रूक्षनामकर्म **Rūkṣanāmakarma**

शरीरगत पुद्गलों में रूखापन करने वाला कर्मोदय।

रूपवशार्त्तमरण **Rūpavaśārttamaraṇa**

शरीर को अविनष्ट इन्द्रियों से युक्त मानता हुआ रूप सौंदर्य का चिंतन करने वाले का मरण।

रूपसत्य **Rūpasatya**

1. सत्य वचन के दस भेदों में से एक।
2. विविध वर्णों में किसी एक वर्ण की प्रधानता से बोला जाने वाला वचन।

रूपस्थध्यान **Rūpasthadhyāna**

1. बाह्य रूपी पदार्थों पर चित्त की स्थिरता।
2. परमेष्ठी के स्वरूप को प्रतिमा में आरोपित कर ध्यान करना।
3. रूपस्थ ध्यान परगत और स्वगत के भेद से दो प्रकार का है। पंच परमेष्ठियों के ध्यान का नाम परगत और शरीर से बाह्य अपनी आत्मा के ध्यान का नाम स्वगत है।

रूपातीतध्यान **Rūpātītadhyāna**

1. रूपस्थध्यान में स्थिर चित्त वाले के द्वारा कर्म-मल से रहित शुद्ध अविनश्वर आत्मा के द्वारा आत्मा का ध्यान करना।
2. अरूपध्यान और गतरूपध्यान इसके नामांतर हैं।

रूपानुपात **Rūpānupāta**

1. देशावकाशिक व्रत का एक अतिचार।
2. देशावकाशिक व्रत को स्वीकार करने वाले श्रावक के द्वारा मर्यादित क्षेत्र के बाहर प्रयोजनवश शब्दादि का उच्चारण न करते हुए आकृति विशेष से कार्यसिद्ध करना।
3. इसका अपरनाम रूपाभिव्यक्ति भी है।

रूपी **Rūpī**

1. रूप, रस आदि की आकृति के परिणामस्वरूप विद्यमान मूर्तिक पदार्थ।
2. स्निग्ध और रूक्ष गुण युक्त पुद्गल गुणों के अविभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा समानता।

रेचक **Recaka**

अत्यधिक प्रयत्नपूर्वक उदर से शनैः-शनैः वायु को निकालना।

रोगपरीषहजय **Rogaparīṣahajaya**

रोगादि विकार उत्पन्न हो जाने पर औषधि, ऋद्धि आदि के होते हुए भी उनसे प्रतिकार की अपेक्षा न कर रोगों को निराकुलतापूर्वक सहन करना।

रोचकसम्यक्त्व **Rocakasamyaktva**

जिन प्ररूपित तत्त्वों पर रुचिपूर्वक दृढ़ विश्वास उत्पन्न करने वाला सम्यक्त्व।

रौद्रध्यान **Raudradhyāna**

चोरी, प्राणिहिंसा, असत्य और पंचेंद्रिय विषयों का संरक्षण तथा षडारंभ के संबंध में कषाय सहित ध्यान करना।

लक्षण **Lakṣaṇa**

1. विवक्षित वस्तु का बोध कराने वाला चिह्न।
2. जिसके अभाव में द्रव्यपना संभव न हो।
3. द्रव्य का असाधारण धर्म वचन।

लक्षणनिमित्त **Lakṣaṇanimitta**

एक विशेष प्रकार की ऋद्धि, जिसमें हाथ एवं पैर के तल भाग में कमल एवं वज्रादि के चिह्न देखकर त्रिकाल विषयक सुखादि को जान लिया जाता है।

लक्षणमहानिमित्त **Lakṣaṇamahānimitta**

स्वस्तिक, नंद्यावर्त, श्रीवृक्ष, शंख, चक्र, अंकुश, चन्द्र, सूर्य और रत्नाकर आदि चिह्नों को वक्षस्थल, ललाट, हस्ततल, पादतल आदि में क्रमशः 108, 64 तथा 32 संख्या में देखकर क्रमशः तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव तथा वासुदेव पद को जान लेना।

लगंडशायी **Lagaṅḍaśāyī**

वक्र लकड़ी (लगंड) के समान शरीर को संकुचित करके सोने वाला।

लघिमा **Laghimā**

1. एक विशेष प्रकार की ऋद्धि, जिसके प्रभाव से वायु की अपेक्षा भी अतिशय लघु शरीर किया जा सकता है।
2. जिस शक्ति के निमित्त से मेरु के बराबर शरीर से मकड़ी के तंतुओं पर से जाया जा सकता है।

लघुकर्मा **Laghukarmā**

समीचीन धर्म से द्वेष का निमित्तभूत मिथ्यात्वादि तीव्र कर्म के उदय वाला जीव।

लघुगति **Laghugati**

तंबूड़ी एवं वेगयुक्त आक की रुई आदि की गति को लघुगति-शीघ्रतायुक्त-गति कहा जाता है।

लघुत्व **Laghutva**

शरीर का वायु से भी हल्का होना।

लघुनामकर्म **Laghunāmakarma**

जिस कर्म के उदय से शरीरगत पुद्गलों में लघुता होती है।

लतादोष **Latadoṣa**

तीक्ष्ण वायु से प्रकम्पित लता के समान कंपन वाला कायोत्सर्ग का दोष।

लब्धि **Labdhi**

1. ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम विशेष।
2. तपोविशेष से ऋद्धि की प्राप्ति।
3. इंद्रिय की रचना का हेतु क्षयोपशमविशेष।
4. जिसके सन्निधान से आत्मा द्रव्येंद्रिय की रचना में लगा रहता है, ऐसा ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशमविशेष।
5. अर्थग्रहण की शक्ति।
6. सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चरण में जीव का समागम।
7. मत्यावरण कर्म के क्षयोपशम के कारण विशुद्धि।

लब्धि (काल) **Labdhi (Kāla)**

1. प्रथम सम्यक्त्व की प्राप्ति के योग्य काल
2. अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल शेष रहने पर भव्य जीव का प्रथम सम्यक्त्व ग्रहण करने योग्य होना।
3. विशुद्ध परिणामों के कारण अन्त:कोटाकोटी प्रमाण स्थिति में प्रथम सम्यक्त्व की प्राप्ति होना।
4. भव की अपेक्षा से भव्य, पंचेंद्रिय, संज्ञी और पर्याप्तक सर्व विशुद्ध जीव के द्वारा ही प्रथम सम्यक्त्व की प्राप्ति होना।

लब्धिसंवेगसंपन्नता **Labdhisaṃvegasampannatā**

1. सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र की प्राप्ति रूप लब्धि के विषय में हर्षित होना।

2. तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली सोलह कारण भावनाओं में छठी भावना।

लब्धिस्थान **Labdhisthāna**

समस्त चारित्रस्थान।

लब्ध्यपर्याप्तक **Labdhyaparyāptaka**

उच्छ्वास के अठारहवें भाग में मर जाने वाला जीव, जो एक भी पर्याप्ति को पूर्ण नहीं कर पाया।

लंबित दोष **Lambita Doṣa**

1. कायोत्सर्ग का आठवां दोष।
2. कायोत्सर्ग के समय सिर को नमाना।

लंबोत्तर दोष **Lambottara Doṣa**

1. कायोत्सर्ग का एक दोष।
2. कायोत्सर्ग में स्थित साधु का नाभि का ऊर्ध्व भाग लंबायमान रहना या अधोनमित होना।
3. नाभि के ऊपर से घुटने तक चोलपट्ट को बाँधकर स्थित होना।

लवणोद **Lavaṇoda**

1. लवण के समान रस वाले जल का समुद्र।
2. जम्बूद्वीप को घेरकर स्थित समुद्र।

लांगलिकागति **Lāṅgalikāgati**

हल (लांगल) के समान दो मोड़ वाली भवांतर को प्राप्त करानेवाली गति।

लाक्षावाणिज्य **Lakṣāvāṇijya**

लाख, मन:शिल (कुनटी), नीली (गुलिमा), धातकी (एक वृक्ष की छाल) और टंकण (क्षारविशेष) इन पाप की कारणभूत वस्तुओं का व्यापार।

लाघव **Lāghava**

1. कार्य में कुशलता।
2. ममत्व भाव का परित्याग।
3. शौच धर्म का अपर नाम।

लाभ **Lābha**

1. लाभांतराय कर्म के क्षय से भोग-उपभोग की वस्तुओं की प्राप्ति।
2. इच्छित पदार्थ की प्राप्ति।

लाभमानवशार्तमरण **Lābhamānavaśārtamaraṇa**

व्यापार के करने पर मुझे सर्वत्र लाभ हुआ करता है, इस प्रकार अभिमानपूर्ण लाभ का विचार करते हुए मरण होना।

लाभांतराय **Lābhāṅtarāya**

जिसके उदय से लाभ में बाधा पहुँचे।

लिंग **Liṅga**

1. वेदोदयापादित अभिलाषविशेष।
2. गर्भधारण, प्रसव (संतानोत्पादन) और उन दोनों से रहित जीव की अवस्था।
3. साधु का चिह्न।
4. साध्य के साथ साधन का अविनाभाव संबंध। यह लीन (परोक्ष) अर्थ का ज्ञापक होता है।
5. भक्तप्रत्याख्यान मरण के योग्य चिह्नों में एक।

लीनता **Līnatā**

1. विविक्त शय्यासनता।
2. एकांत स्थान में बाधा से रहित, स्त्री, पशु आदि से असंसक्त शून्यागार, देवकुल, गुफा आदि में मन, वचन, काय, कषाय और इंद्रियों को वश में रखना।

लेणकर्म **Leṇakarma**

लेण = पर्वत। पर्वत में अभेदाकार प्रतिमाओं की रचना।

लेप कर्म **Lepa karma**

कट, शर्करा और मिट्टी आदि के लेप से प्रतिमाओं की रचना करना।

लेपकृत आहार **Lepakṛta āhāra**

जिस आहार से हाथ लिप्त होता है।

लेश्या **Leṣyā**

1. कषाय के उदय से अनुरंजित योगप्रवृत्ति।

2. जिसके द्वारा जीव कर्म से श्लिष्ट होता है, ऐसा परिणाम विशेष।

लोक **Loka**

जो अनंतानंत आकाश के मध्य भाग में स्थित है, अनादि-अनंत है तथा जीवादि षड् द्रव्यों से युक्त है।

लोकनाली **Lokanālī**

लोक के मध्य में चौदह राजू लंबी तथा एक वर्गराजू मुंह वाली लोकनाली।

लोकपाल **Lokapāla**

लोक का पालन करने वाले देवविशेष।

लोकपूरणसमुद्घात **Lokapūraṇasamudghāta**

वेदनीय कर्म की बहुलता एवं आयु कर्म की अल्पता से अनाभोगपूर्वक आयुकर्म को समान करने के लिए देह में स्थित आत्मप्रदेशों का बाहर समुद्घातन।

लोकबिंदुसार **Lokabindusāra**

साढ़े बारह करोड़ पदों वाला श्रुतज्ञान का एक भेद, जिसमें आठ व्यवहार, चार बीज, परिकर्म और राशि क्रिया का उपदेश दिया जाता है।

लोकमूढता **Lokamūdhatā**

नदी या सागर में स्नान को धर्म मानना, बालू या पत्थरों का ढेर लगाना, पर्वत से गिरना तथा अग्नि में गिरना आदि अज्ञानतापूर्ण लोकप्रचलित धार्मिक मान्यताएं।

लोकविचय **Lokavicaya**

वह धर्म्यध्यान जिसमें लोक के विषय में चिंतन किया जाता है।

लोकाकाश **Lokākāśa**

1. जिस आकाश में धर्मादि द्रव्य देखे जाते हैं।
2. जहाँ पुण्य और पाप का फल देखा जाता है। इस निरुक्ति के अनुसार लोक शब्द से आत्मा का ही ग्रहण होता है।
3. सर्वज्ञ केवलदर्शन के द्वारा जिसको लोकते हैं-देखते हैं, उसे लोक कहते हैं।

लोकाख्यान **Lokākhyāna**

पुराणों में किया गया लोक के उद्देश और निरुक्ति आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन।

लोकानुप्रेक्षा **Lokānuprekṣā**

तीन लोक के जीवों, आयु, सुख-दुःख आदि तथा निवासों का चिंतन करना।

लोकानुवृत्ति विनय **Lokānuvṛtti vinaya**

गुरुजनों के आने पर यथायोग्य की जाने वाली विनय।

लोकांतिक **Lokāṅtika**

1. ब्रह्मलोक नामक पंचम स्वर्ग के समीपवर्ती कृष्णराजि क्षेत्र में रहने वाले देव विशेष।
2. जिनका लोक का अंत समीप है, जो दूसरे भव में नियम से मोक्ष प्राप्त करते हैं ऐसे ब्रह्मलोक के देव विशेष।
3. लोकांतिक देवों का अपरनाम देवर्षि है।

लोकोत्तरवाद **Lokottaravāda**

अलोक का कथन करने वाला श्रुतज्ञान।

लोकोत्तरशब्दलिंगज श्रुतज्ञान **Lokottaraśabdaliṅgaja śrutajñāna**

असत्यभाषण के कारणों से रहित पुरुष के मुख से निःसृत शब्द समूह के द्वारा उत्पन्न श्रुतज्ञान।

लोकोत्तर शुचित्व **Lokottara śucitva**

आत्मा का कर्ममल को प्रक्षालित करके अपने में अवस्थान।

लोकोत्तर समाचार काल **Lokottara samācāra kāla**

वंदना का काल, नियत अनुष्ठान का काल, स्वाध्याय का काल और ध्यान का काल आदि सदनुष्ठान से संबंद्ध काल।

लोभ **Lobha**

1. बाह्य पदार्थों में ममत्व।
2. एक प्रकार की कषाय।

लोभपिंड **Lobhapiṇḍa**

1. उत्पादन दोष का भेद एक है।
2. साधु लोभ से अपने लिए भिक्षा को उत्पन्न करता है, उसे लोभपिंड नामक उत्पादन दोष होता है।

लोभवशार्तमरण **Lobhavaśārtamaraṇa**

उपकरणों, अन्न-पान के स्थानों, शरीर तथा निवास के प्रति इच्छापूर्वक मरण।

लोभविजयी राजा **Lobhavijayī rājā**

धन में प्रीति रखते हुए भी प्रजा की भलाई का सदा ध्यान रखने वाला राजा।

लोभाहार **Lobhahāra**

शरीर पर्याप्ति के पश्चात् बाहरी त्वचा के द्वारा रोमों के आश्रय से ग्रहण किया जाने वाला आहार।

लौकांतिक **Laukāṅtika**

देखें- लोकांतिक।

लौकिक भावश्रुत **Loukikabhāvśruta**

हस्तिशास्त्र अश्वशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, तंत्र।

लौकिक मुनि **Laukika muni**

परम निर्ग्रंथ स्वरूप से दीक्षित होकर ऐहलौकिक क्रियाओं के आश्रय से प्रवृत्ति करने वाला मुनि।

लौकिक मूढ **Laukika mūḍha**

लोकवंचना आदि रूप धर्म।

लौकिकवाद **Laukika vāda**

लोक का कथन करने वाला श्रुत।

लौकिकशब्दलिंगजश्रुत **Laukika śabdaliṅgajaśruta**

सामान्य पुरुष के मुख से निःसृत वचन समूह।

लौकिकसमाचारकाल **Laukikasamācārakāla**

भूमि जोतने, लुनने और बोने आदि का काल।

वक्ता **Vaktā**

बुद्धिमान, समस्त शास्त्रों के रहस्य का वेत्ता, लोक व्यवहार में दक्ष, प्रतिभाशाली, आकर्षक, निंदा रहित, स्पष्ट एवं मधुर भाषण करने वाला।

वंदना **Vaṅdanā**

1. त्रियोग की शुद्धि पूर्वक खड्गासन या पद्मासन से चार शिरोनति व बारह आवर्त पूर्वक की गयी साधु की आवश्यक क्रिया।
2. मुनि की षडावश्यक क्रियाओं का एक भेद।

वचनगुप्ति **Vacanagupti**

गुप्ति का एक भेद, जिसमें आत्मा अशुभ वचन से परावृत होती है।

वचननिर्विषा ऋद्धि **Vacananirviṣā ṛddhi**

1. जिस ऋद्धि के प्रभाव से बोलने मात्र से विष मिश्रित, तीखा एवं कड़ुवा अन्न निर्विषता को प्राप्त हो जाए।
2. जिस ऋद्धि के प्रभाव से वचनों को सुनने मात्र से अनेक रोगों का शमन हो जाए।

वचन बल प्राण **Vacanabalaprāṇa**

स्वरनाम कर्मोदय के साथ शरीर नाम कर्म होने पर वचन विषयक व्यापार की विशेष शक्ति।

वचनबला ऋद्धि **Vacanabalā ṛddhi**

जिहवेंद्रियावरण, नोइंद्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण तथा वीर्यांतराय कर्म के उत्कृष्ट क्षयोपशम से एक मुहूर्त के अंदर समस्त श्रुत को जानने और उत्तम स्वर के साथ उच्चारण करने की सामर्थ्य का प्रकट होना।

वचन भिन्न **Vacana bhinna**

1. जहाँ वचन की विपरीतता हो। जैसे 'एतौ वृक्षौ पुष्पिताः'– द्विवचनांत वृक्षौ के साथ पुष्पिताः बहुवचनान्त का प्रयोग।
2. बत्तीस सूत्र दोषों में चौदहवां दोष।

वचनमात्र हेतुक **Vacanamātra hetuka**

- सूत्र का पैंतीसवां दोष।
- जहां वचन की विपरीतता पायी जाये।

वचनयोग **Vacanayoga**

भाषा वर्गणा संबंधी पुद्गल स्कंधों के अवलंबन से जीव प्रदेशों का होने वाला संकोच-विकोच।

वचनोपगत **Vacanopagata**

नंदा एवं भद्रा वाचनाओं को प्राप्त उपयोग।

वज्रनाराचसंहनन **Vajranārāca saṃhanana**

जिस नाम कर्म के उदय से वज्रमय वेष्टन के बंधन से रहित वज्रमय हड्डियाँ दोनों ओर वज्रमय कीलों से कीलित हों।

वज्र-ऋषभनाराचसंहनन **Vajraṛṣabhanārāca saṃhanana**

संहनन - हड्डियों का संचय, ऋषभ - वेष्टन।

जिस नाम कर्म के उदय से वज्र के समान अभेद्य हड्डियाँ वज्रमय वेष्टन से वेष्टित और वज्रमय नाराचों से कीलित हो।

वणिक्कर्मार्य **Vaṇikkarmārya**

चंदन आदि सुगंधित द्रव्यों, घी, आदि रसों, धान्य, कपास आदि शरीर आच्छादक द्रव्यों का संग्रह करने वाला।

वणिगवावसति **Vaṇigavāvasati**

1. आहार एवं वसति दान से महान् पुण्य होता है। ऐसा कथन कर आहार एवं वसति प्राप्त करना।
2. वणिगवा नामक उत्पादन दोष।

वत्सलत्व **Vatsalatva**

1. सम्यग्दृष्टि एवं सम्यग्ज्ञानी जीवों के प्रति गोवत्स समान अनुराग।
2. सोलहकारण भावना का एक भेद।

वध **Vadha**

1. आयु, इंद्रिय और बल प्राणों का वियोग करना।
2. प्राणि-पीड़ा का हेतु।
3. लकड़ी, चाबुक, बेंत आदि से पीड़ित करना।
4. अहिंसाणुव्रत का अतिचार।

वधकोपदेश **Vadhakopadeśa**

वागुरिक (जाल में हिरण आदि के फंसानेवाले), शिकारी आदि मनुष्यों को अमुक क्षेत्र में मृग, शूकर पक्षी आदि हैं-ऐसा उपदेश देना।

वधपरीषहजय **Vadha parīṣaha jaya**

तीक्ष्ण अस्त्र शस्त्रादि द्वारा घात होने पर भी घातक के प्रति द्वेष बुद्धि से क्रोध न करके पूर्वजन्म कृत फल मानते हुए शांत चित्त से सहन करना।

वधूदोष **Vadhūdoṣa**

1. कायोत्सर्ग का सातवां दोष।
2. कुलवधू के समान सिर नीचा करके कायोत्सर्ग करना।

वनस्पतिकायिक **Vanaspatikāyika**

1. जिनका शरीर वनस्पति हो।
2. स्थावर नाम कर्म की उत्तर प्रकृति वनस्पति नाम कर्म के उदय होने पर प्राप्त शरीर।
3. सजीव वृक्ष आदि।

वनस्पति जीव **Vanaspati jīva**

वनस्पतिनाम कर्म के उदय से युक्त कार्मण योग में स्थित जीव वनस्पति रूप शरीर को जब तक ग्रहण नहीं करता, तब तक वनस्पति जीव कहलाता है।

वनिता कथा **Vanitā kathā**

सुंदर, सौभाग्यशालिनी, चित्ताकर्षक स्त्रियों के विषय में चर्चा करना।

वनीपकवचन **Vanīpakavacana**

पूछे जाने पर कुत्ता, कंजूस, अतिथि, पाषण्डी ब्राह्मण श्रमण, कौआ आदि को दान देने में पुण्य होता है ऐसा वचन।

वंदना **Vandanā**

मुनि के छह आवश्यकों में से एक

1. मन वचन काय की शक्तिपूर्वक पद्मासन या खड्गासन से बारह आवर्तनपूर्वक सिर को झुकाना।
2. अरहंत प्रतिमा, सिद्ध प्रतिमा, तप में अधिक, श्रुत में अधिक, गुणोंमें अधिक व्यक्ति और गुरु को मन वचन काय की शुद्धि पूर्वक प्रणाम करना।
3. अंगबाह्य श्रुत का एक अर्थाधिकार, जिसमें जिनेंद्र भगवान् एवं जिन-मंदिर विषयक वंदना की निर्दोषता का विवेचन होता है।

वयःस्थविर **Vayaḥsthavira**

सत्तर वर्ष आदि तक जीवित रहने वाला।

वसतिका **Vasatikā**

साधु के ठहरने योग्य स्थान, जो मनुष्यों, तिर्यंचों व शीत-उष्ण आदि की बाधाओं से रहित हो।

वर्ग **Varga**

1. अविभाग प्रतिच्छेद राशि।

22—416 Min. of HRD/2014

2. सबसे जघन्य गुण वाले कर्मप्रदेश के अनुभाग का बुद्धि रूप छेदक के द्वारा किया गया सबसे छोटा टुकड़ा, जिसका कोई दूसरा टुकड़ा न हो सके।

वर्गणा **Vargaṇā**

1. सब जीवों के अनंतवें भाग प्रमाण वर्गों का समूह।
2. असंख्यात लोक प्रमाण योगाविभाग प्रतिच्छेदक।

वर्णजनन **Varṇa janana**

गुणों का संकीर्तन करना।

वर्णनाम कर्म **Varṇanāmakarma**

जिसके उदय से शरीर वर्ण से युक्त होता है।

वर्णपरिणाम **Varṇa pariṇāma**

कृष्ण आदि का अन्यथा परिणमन।

वर्तना **Vartanā**

1. समस्त पदार्थों की कालाश्रित वृत्ति।
2. एक समय में धर्मादि छह द्रव्य उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य रूप में सादि अनादि पर्यायों से अपनी सत्ता का अनुभव करना।
3. पूर्व में ग्रहण किए गए सूत्र, अर्थ अथवा दोनों का अभ्यास करना।

वर्तमान नैगम **Vartamāna naigama**

प्रारंभ की गई पाक क्रिया को पूछने पर निष्पन्न कहना।

वर्धमान **Vardhamāna**

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् महावीर का एक नाम। जन्म से लेकर उत्तरोत्तर ज्ञानादि गुणों में वृद्धिंगत होने के कारण और गर्भकाल में कुल धन-धान्यादि की वृद्धि होने से प्रसिद्ध नाम।

वर्धमान-अवधि **Vardhamāna avadhi**

सम्यग्दर्शन आदि गुणों के विशुद्धि रूप परिणाम से उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ अवधिज्ञान।

वलायमरण **Valāyamaraṇa**

अपरनाम वलाकामरण।

संयम के अनुष्ठान से खिन्न होकर होने वाला मरण।

वशार्तमरण **Vaśārtamaraṇa**

इन्द्रियों के वश में होकर पीड़ित होते हुए होने वाला मरण।

वशित्व **Vaśitva**

ऋद्धि विशेष तपबल से उत्पन्न जिस ऋद्धि के प्रभाव से जीव समूह वश में हो जाए।

वश्य कर्म **Vaśyakarma**

1. मंत्र-तंत्रादि के उपदेश द्वारा दाता को अपने अधीन करना।
2. वसतिका का एक दोष।

वसतिसंस्तर विवेक **Vasatisaṃstaraviveka**

पूर्व में प्रयुक्त वसति एवं विस्तर का प्रयोग न करना तथा इनके त्याग का वचन कहना वसतिसंस्तर विवेक है।

वसतिसंस्तरशुद्धि **Vasatisaṃstaraśuddhi**

उद्गम, उत्पादन और एषणा दोषों से रहितता तथा ममकार भाव से ग्राह्य न मानना।

वसार्द्र **Vasārdra**

वसा से उपलिप्त।

वस्तु **Vastu**

जो मुख्य एवं गौण की अपेक्षा न रखकर अनेकांतात्मक स्वरूप को न छोड़ते हुए एक है तथा एक रूपता को न छोड़ते हुए अनेक भी है, उसे वस्तु कहते हैं।

वस्तुत्व **Vastutva**

वस्तु में रहने वाला सामान्य विशेषात्मक स्वरूप।

वस्तुश्रुतज्ञानावरणीय **Vastuśrutajñānāvaraṇiya**

श्रुतज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

वस्तुसमासश्रुतज्ञान **Vastusamāsaśrutajñāna**

वस्तु श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि के होने पर होने वाला श्रुतज्ञान।

वस्तुसमासश्रुतज्ञानावरणीय **Vastusamāsaśrutajñanāvaraṇīya**

वस्तुसमास श्रुतज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

वह्नि **Vahni**

अग्नि के समान देदीप्यमान लौकांतिक देव विशेष।

वह्निमंडल **Vahnimaṅdala**

अग्निकणों से पीत वर्ण वाला, भयानक, ऊपर उठने वाली सैकड़ों ज्वालाओं से संयुक्त, तीन कोनों के आकार वाला, स्वस्तिक चिह्न से चिह्नित और अग्नि बीजाक्षर से युक्त नासिका के छिद्र में मौजूद मंडल।

वाक्छल **Vākchala**

सामान्य रूप से विवक्षित पदार्थ का कथन करने पर वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अन्य पदार्थ की कल्पना।

वाक्पारुष्य **Vākpāruṣya**

वचन, जाति, आयु, चारित्र, विद्या और वैभव के अयोग्य।

वाक्यप्रयोग **Vākyaprayoga**

शुभ और अशुभ वचन का प्रयोग।

वाक्यशुद्धि **Vākyaśuddhi**

परपीड़ाजनक कठोर वचनों के प्रयोग से विहीन हितकारक एवं परिमित वचन।

वाक्य स्फोट **Vākya sphoṭa**

1. जहाँ अर्थ प्रकट होता है।
2. आत्मा।

वाक्शुद्धि **Vākśuddhi**

देखें - वाक्यशुद्धि।

वाक् संयम **Vāk saṃyama**

हिंसाजनक परुष वचनों से दूर रहकर शुभ भाषा में प्रवृत्ति।

वागाधिकरण **Vāgādhikaraṇa**

अनर्थक कथा-वार्ता एवं परपीड़ाजनक संभाषण।

वाग्गुप्ति **Vāggupti**

1. असत्य की निवृत्ति अथवा वाणी का संयम।
2. मिथ्या, कठोर अथवा असंयम के निमित्त वचनों का न बोलना।

वाग्जीवी **Vāgjīvī**

स्तुतिपाठक अथवा सूत।

वाचना **Vācanā**

1. भव्य जीवों के लिये शक्ति के अनुसार ग्रंथ के अर्थ की प्ररूपणा।

2. निर्दोष ग्रंथ के अर्थ का उपदेश अथवा दोनों ही पात्र को प्रदान करना।

वाचाविवेक **Vācāviveka**

शरीर को पीड़ा नहीं करो अथवा मेरी रक्षा करो, इत्यादि वचन का न बोलना तथा यह शरीर जड़ है एवं सुख-दुःख के संवेदन से रहित है, इत्यादि वचन बोलना।

वाचिकविनय **Vācika vinaya**

प्रतिष्ठा के अनुरूप वचन, हितकर भाषण, परिमित भाषण, मधुर भाषण, आगमानुकूल वचन; निष्ठुरता, कठोरता एवं क्रोधादि कषाय से रहित वचन, गाली-गलौज से रहित वचन और अवहेलना का असूचक वचन बोलना।

वाणिज्य **Vāṇijya**

वणिक् कर्म।

वातकुमार **Vāta kumāra**

तीर्थंकर के विहार मार्ग को शुद्ध करने वाले देव।

वात्सल्य **Vātsalya**

1. सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र और इनके धारकों के प्रति अनुराग। स्वधर्मी जन तथा विशेषकर अतिथि, गुरु, ग्लान और तपस्वी आदि के विषय में अनुराग रखना, आहारादि के द्वारा प्रत्युपकार करना।
2. सम्यक्त्व का एक गुण।

वाद **Vāda**

1. विजय की इच्छा रखने वाले वादी व प्रतिवादी के मध्य में अभीष्ट साध्य की सिद्धि के लिए उससे विपरीत का निराकरण करते हुए साधन व दृष्टांत आदि का कथन करना।
2. तत्त्व के निर्णयपूर्वक उसके संरक्षण के प्रयोजन से लाभ, प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि की कारणभूत चर्चा करना।

वादक **Vādaka**

तत, आनद्ध, शुषिर और घन-इन चार वादित्रों के प्रचार में दक्ष।

वादित्व ऋद्धि **Vāditva ṛddhi**

1. एक विशेष प्रकार की ऋद्धि।
2. वादी के पक्ष को युक्ति-प्रत्युक्तियों द्वारा निरुत्तर कराने वाली ऋद्धि।

वानप्रस्थ **Vānaprastha**

1. जिनलिंग को धारण न कर वस्त्रखंड धारण कर तपश्चरण में उद्यत व्यक्ति।
2. ग्राम्य एवं निंद्य व्यवहार को छोड़कर संयम का पालन करने वाला।
3. विधिपूर्वक जनपद के भोजन एवं लौकिक व्यवहार को छोड़कर पत्नी सहित अथवा पत्नी रहित वन में रहने वाला व्यक्ति।

वामन संस्थान **Vāmana saṃsthāna**

अंगोपागों की हीन रचना का कारणभूत नामकर्म।

वायस दोष **Vāyasa Doṣa**

1. कायोत्सर्ग के समय कौए के समान पार्श्व भाग को देखना।
2. कौए के समान आँखों को इधर-उधर चलाना।

वायुचारण **Vāyucāraṇa**

1. एक प्रकार की ऋद्धि।
2. अनेक दिशाओं की ओर उन्मुख होकर विपरीत एवं अनुकूल चलने वाली वायु की प्रदेश पंक्ति का आश्रय लेकर अस्खलित रूप से पैरों को धरने-उठाने वाले साधुओं की ऋद्धि।

वायुजीव **Vāyujīva**

वायु को काय के रूप में ग्रहण करने के लिए प्रस्थित जीव।

वायुमंडल **Vāyumaṇḍala**

आकार में गोल, बिंदुओं से व्याप्त, काले अंजन (काजल) और मेघ के समान (अथवा काजल जैसी घनी प्रभा वाला) एवं देखने में न आने वाला वायुसमूह।

वारुणी दोष **Vāruṇī doṣa**

1. कायोत्सर्ग का बीसवाँ दोष।
2. उत्पन्न होने वाले मद्य के समान बुड-बुड शब्द के साथ कायोत्सर्ग में स्थित होने अथवा मद्य से उन्मत्त मनुष्य के समान शरीर को चलायमान करते हुए स्थित होना।

वारुणीपायीदोष **Vāruṇīpāyīdoṣa**

सुरापायी के समान घूमते हुए कायोत्सर्ग करना।

वार्ता **Vārtā**

असि, मषि, कृषि, वाणिज्यादि शिल्प कर्म के द्वारा विशुद्ध वृत्ति से अर्थोपार्जन।

वासना **Vāsanā**

अविच्युति से स्थापित होने वाला संस्कार।

वासुपूज्य **Vāsupūjya**

देव विशेषों का नाम वसु है, उनका जो पूज्य हुआ है तथा जिसके गर्भ में स्थित होने पर वासव (इन्द्र) ने वसु (सुवर्ण) के द्वारा राजकुल की पूजा की थी अथवा जो वसुपूज्य राजा के पुत्र थे।

वास्तु **Vāstu**

1. अगार/गृह
2. वस्त्र आदि सामान्य वास्तु है।
3. गृह आदि के शुभाशुभ पर विचार अथवा निर्माण का चिंतन।

विकथा **Vikathā**

1. विरुद्ध अथवा घातक स्त्री कथा व भोजन कथा जैसी चर्चा।
2. संयम की विघातक चर्चा।

विकथानुयोग **Vikathānuyoga**

धन और काम के उपायों की प्ररूपणा करने वाले शास्त्र।

विकलचरण **Vikalacaraṇa**

अणुव्रतादि रूप आचरण।

विकलप्रत्यक्ष **Vikalapratyakṣa**

1. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा होने वाला परिमितज्ञान।
2. निरंश भी वस्तु के गुणभेद की अपेक्षा से की जाने वाली अंशों की कल्पना।

विकलादेश **Vikalādeśa**

निरंश वस्तु में गुण भेद से अंश-कल्पना करना।

विकल्प **Vikalpa**

अंतरंग में मैं सुखी हूँ, मैं दुःखी हूँ, इत्यादि हर्ष-विषाद रूप परिणाम।

विकल्पधी **Vikalpadhī**

प्रसंगानुरूप निर्णय की बुद्धि।

विकृतिगोपुच्छा **Vikṛtigopucchā**

समान स्थिति वाली गोपुच्छाओं का समूह।

विक्रिया **Vikriyā**

अणिमा-महिमाआदि आठ गुणों के सामर्थ्य से एक एवं अनेक तथा छोटा एवं बड़ा इत्यादि अनेक प्रकार के रूप ग्रहण करना।

विक्षेपिणी कथा **Vikṣepiṇī kathā**

1. कथा का एक भेद।
2. स्वमत एवं परमत के आश्रय से की जाने वाली चर्चा।
3. कुमार्ग से सन्मार्ग पर अथवा सन्मार्ग से कुमार्ग पर ले जाने वाली कथा।

विग्रह **Vigraha**

1. विजय की इच्छा रखने वाले व्यक्ति का अपराध।
2. राजा के छह गुणों में से एक।
3. शरीर का अपर नाम।

विग्रहजाति **Vigrahajāti**

नवीन विग्रह (शरीर) के निमित्त जीव की गति।

विचय **Vicaya**

विवेक या विचारणा का पर्यायवाची।

विचार **Vicāra**

1. अर्थ, व्यंजन और योग का संक्रमण।
2. प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम प्रमाण के आश्रय से यथावस्थित वस्तु की व्यवस्था का कारण।
3. वीचार का अपर नाम।

विचारयज्ञ **Vicārayajña**

प्रत्यक्ष से उपलब्ध भी वस्तु की भली-भांति परीक्षा करके कार्य करने वाला व्यक्ति।

विचिकित्सा **Vicikitsā**

1. युक्ति और आगम से संगत पदार्थ के विषय में विभ्रम।
2. शरीर की मलिनता आदि को देखकर घृणा का भाव।
3. सम्यग्दर्शन का एक अतिचार।

विचित्र ध्यान **Vicitra dhyāna**

1. नष्ट हो चुके शुभाशुभ विकल्पयुक्त ध्यान।
2. नाना प्रकार का ध्यान।

विजातिगुण असद्भूत व्यवहारनय **Vijātiguṇa asadbhūta vyavahāranaya**

विजातीय गुण में विजातीय गुण का आरोप करके कथन करने वाला नय। उदाहरणार्थ- आत्मस्थ अमूर्तिक मतिज्ञान से कर्मपुद्गल से आबद्ध होने के कारण आत्मा के मतिज्ञान को मूर्तिक कहना।

विजातिद्रव्य असद्भूत व्यवहारनय **Vijātidravya asadbhūta vyavahāranaya**

विजातीय द्रव्य में विजातीय द्रव्य का आरोप करके कथन करने वाला नय। उदाहरणार्थ - पुद्गल द्रव्य से निर्मित एकेंद्रिय आदि के शरीर को जीव कहना।

विजातिद्रव्य उपचरित असद्भूत व्यवहारनय **Vijātidravya upacaritā asadbhūta vyavahāranaya**

विजातीय द्रव्य में विजातीय द्रव्य का आरोप करके व्यवहार में प्रवृत्त हुआ नय। उदाहरणार्थ- आभरण-वस्त्र आदि मेरे हैं - ऐसा कथन करना।

विजात्यसद्भूतव्यवहारनय **Vijātyasadbhūtavyavaharanaya**

मूर्त द्रव्य से उत्पन्न मतिज्ञान को मूर्त कहने वाला नय।

विजात्युपचरित असद्भूत व्यवहारनय **Vijātyupacarita asadbhūta vyavahāranaya**

विजातीय (अचेतन) वस्त्र, आभरण, सुवर्ण आदि द्रव्य को अपना मानने वाला नय।

विजिगीषु **Vijigīṣu**

राज्याभिषेक, पूर्वोपार्जित पुण्य, कोश और प्रकृति से युक्त नीतिवान् एवं पराक्रमशील राजा।

विजिगीषुकथा **Vijigīṣukathā**

वादी और प्रतिवादी के बीच अपने-अपने मत को स्थापित करने के लिए हार या जीत पर्यंत किया गया वाद-विवाद।

विज्ञप्ति **Vijñapti**

विचारित पदार्थ का विशेष रूप से ज्ञान करानेवाला अवाय मतिज्ञान।

विटत्व **Viṭatva**

1. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. अश्लील संभाषण एवं देह की कुचेष्टा।

विडौषधि ऋद्धि **Viḍauṣadhi ṛddhi**

महामुनियों के मल-मूत्र में प्राणियों की रोगनाशकता को उत्पन्न कराने वाली ऋद्धि विशेष।

वितत **Vitata**

वीणा, पटह आदि से उत्पन्न शब्द।

वितथ **Vitatha**

असत्य का पर्यायवाची शब्द।

वितर्क **Vitarka**

विशेष तर्कणा रूप श्रुतज्ञान।

वितस्ति **Vitasti**

बारह अंगुल प्रमाण माप।

विदारण क्रिया **Vidāraṇa kriyā**

दूसरों के द्वारा किए गए पापादि को प्रकाशित करना।

विदिशा **Vidiśā**

अपने स्थान से कर्णाकार स्थित क्षेत्र।

विदेह **Videha**

1. कर्मबंध की परंपरा से रहित होने के कारण देहरहित अवस्था।
2. शरीर होते हुए भी शरीर संस्कार से रहित अवस्था।
3. एक जनपद विशेष।

विद्या **Vidyā**

अधिष्ठात्री स्त्री देवता वाले मंत्र की आराधना या सिद्धि के लिए प्रयुक्त होने वाल मंत्र की अराधना।

विद्याकर्मार्य **Vidyā karmārya**

लेखन आदि बहत्तर कलाओं एवं चौंसठ गुणों से सम्पन्न।

विद्याचारण **Vidyācāraṇa**

गमनागमन की शक्ति उत्पन्न कराने वाली ऋद्धि विशेष।

विद्या दोष **Vidyādoṣa**

उत्पादन दोष का एक भेद।

विद्या की महत्ता को प्रकट करने तथा उसके देने की लालसा से आहार या वसति प्राप्त करना।

विद्याधर **Vidyādhara**

1. जाति विद्या, कुल विद्या और तप विद्या से संपन्न।
2. विजयार्द्ध पर्वत पर रहने वाले मनुष्य।
3. विद्यानुवाद पूर्व के अध्येता।
4. देवों की एक जाति विशेष।

विद्याधर जिन **Vidyādhara jina**

सिद्ध की गयी विद्याओं को अन्यत्र अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए न भेजनेवाला, किसी प्रकार का आदेश न देने वाले केवल अज्ञान को दूर करने के लिए धारण करने वाले।

विद्याधर श्रमण **Vidyādhara śramaṇa**

महाविद्याओं और ऋद्धियों के वशीभूत न होने वाले श्रमण।

विद्यानुप्रवाद **Vidyānupravāda**

विद्यानुवाद और विद्यानुयोग का नामांतर। समस्त विद्याओं, आठ महानिमित्तों, उनके विषय, राजूराशि के विधान, क्षेत्र, श्रेणी, लोकस्थिति, संस्थान और समुद्घात विषयक पूर्व।

विद्यानुयोग **Vidyānuyoga**

देखें - विद्यानुप्रवाद।

विद्यानुवाद **Vidyānuvāda**

देखें - विद्यानुप्रवाद।

विद्यापिंड **Vidyā piṇḍa**

आहार विषयक उत्पादन दोष विद्या का प्रयोग करके भोजन प्राप्त करना।

विद्यावान् **Vidyāvan**

शासन देवता स्वरूप प्रज्ञप्ति आदि विद्याएं जिसकी सहायक होती हैं।

विद्यासिद्ध **Vidyāsiddha**

विद्याओं का चक्रवर्ती/अधिपति।

विद्रावण **Vidrāvaṇa**

प्राणियों के नासिका आदि अंगों के छेदन की प्रवृत्ति।

विधाता **Vidhātā**

विविध व्यवस्थाओं को करने वाला।

विधि **Vidhi**

नवधा भक्ति।

विध्यात्मसंक्रम **Vidhyātmasaṅkram**

नियम से बंध संभव न होने वाली प्रकृतियाँ।

विनय **Vinaya**

1. पूज्य पुरुष, गुणाधिक और रत्नत्रयधारियों के प्रति नम्रता।
2. गुरु-शुश्रूषा।
3. मर्यादा।

विनयशुद्धि **Vinayaśuddhi**

अरहंत आदि परम गुरुओं की यथायोग्य पूजा में तत्पर रहना, ज्ञानादि की विनय में विधिपूर्वक संलग्नता, गुरु के अनुकूल प्रवृत्ति, प्रश्न-स्वाध्याय-वाचना-कथा एवं विज्ञप्ति आदि विषयक प्रशंसा में कुशलता, देश-काल आदि की ज्ञान प्राप्ति तथा आचार्य से अनुमत आचरण।

विनयसंपन्नता **Vinayasampannatā**

1. रत्नत्रय एवं उसके धारकों के प्रति आदर तथा कषायों से निवृत्ति।
2. तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली सोलह कारण भावनाओं में से द्वितीय भावना।

विनयसंश्रय **Vinayasaṃśraya**

आते हुए यति को देखकर सात कदम जाकर उनके अनुरूप वंदना करना, आसनादि देना तथा रत्नत्रय आदि के संबंध में प्रश्न करना।

विनयाचार **Vinayācāra**

शुद्ध परिणामों में स्थित मन, वचन, काय के द्वारा शास्त्र का पाठ, व्याख्यान और पुनः पुनः अनुचिंतन।

विनायक **Vināyaka**

1. राक्षस जाति के व्यन्तर देवों का एक भेद।
2. यंत्र विशेष का एक नाम।

विनयोपसम्पत् **Vinayopasampat**

अतिथि साधुजन का यथायोग्य आदर।

विपरिणाम **Vipariṇāma**

सत् वस्तु का अवस्थान्तर रूप होना।

विपरीत मिथ्यात्व **Viparīta mithyātva**

दिगम्बर परंपरा के अनुसार परिग्रही को निर्ग्रंथ, केवली को कवलाहारी तथा स्त्री को मुक्ति प्राप्त करने वाली मानने रूप विपरीत श्रद्धा।

विपरीत मिथ्यादर्शन **Viparīta mithyādarśana**

देखें - विपरीत मिथ्यात्व।

विपरीत रुचि **Viparīta ruci**

देखें - विपरीत मिथ्यात्व।

विपर्यय **Viparyaya**

शुक्ति में रजत के ज्ञान के समान विरुद्ध कोटि का ज्ञान।

विपर्यस्त **Viparyasta**

देखें - विपर्यय।

विपल **Vipala**

काल का एक प्रमाण।

विपश्चित् **Vipaścit**

हेयोपादेय रूप ज्ञान का फल निश्चित करने वाला।

विपाक **Vipāka**

1. कषाय की तीव्रता और मंदता आदि भावों की विशेषता के अनुसार कार्य की अनुभाग शक्ति में विशेषता होना।
2. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव रूप निमित्तों के भेद से कर्मों की अनुभाग शक्ति में विविधता।

विपाकजा निर्जरा **Vipākajā nirjarā**

संसार में घूमने वाले जंतु के प्रारब्ध कर्मों के फल की निवृत्ति।

विपाकप्रत्ययिक अजीवभावबंध **Vipākapratyayika ajīvabhāva baṅdha**

प्रयोग से परिणत वर्ण, शब्द, गंध, रस, स्पर्श, गति, अवगाहना, संस्थान, स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश तथा इसी प्रकार के प्रयोग का नाम।

विपाकप्रत्ययिक जीवभावबंध **Vipākapratyaymikajīvabhāvabandha**

देव, मनुष्य, तिर्यंच, नारक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसक वेद, क्रोधवेद, मानवेद, मायावेद, लोभवेद, रागवेद, द्वेषवेद, मोहवेद, कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, पीतलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या, असंयत, अविरति, अज्ञान, मिथ्यादृष्टि तथा और भी इसी प्रकार के उदयविपाक से उत्पन्न कर्मोदय प्रत्ययिक भाव।

विपाकविचय **Vipāka vicaya**

1. एक और अनेक भवों में उपार्जित जीवों के पुण्य व पाप कर्मों के फल, उदय, उदीरणा, संक्रम, बंध और मोक्ष का जिस ध्यान में विचार किया जाए।
2. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव के निमित्त से ज्ञानावरणादि कर्मों के फल के अनुभवन का विचार किया जाना।
3. कर्म के विपाक का निर्णय जिसमें किया जाय, ऐसा धर्मध्यान।
4. अष्ट कर्मों के चतुर्विध बंध के विपाक-फल का चिंतन करना।

विपाकश्रुत **Vipākaśruta**

शुभ-अशुभ कर्मों के परिणाम का निरूपण करने वाला श्रुत।

विपाकसूत्र **Vipākasūtra**

1. पुण्य और पाप के विपाक का विचार करने वाला अंग ग्रंथ।
2. एक करोड़ चौरासी लाख पद प्रमाण पुण्य-पाप के विपाक का विचार करने वाला सूत्र।
3. कर्मों का उदय, उदीरणा और सत्ता का कथन करने वाला सूत्र।

विपुलतृष **Vipulatṛṣa**

1. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतीचार। इसका अपरनाम कामतीव्राभिनिवेश भी है।
2. कामसेवन की तीव्राभिलाषा।

विपुलमति **Vipulamati**

1. मनःपर्यय ज्ञान का एक भेद।

2. मन, वचन, काय से किए गए अनिष्पन्न एवं कुटिल भावों को जानने वाला।
3. पदार्थ की विविध विशेषताओं के निर्णय का कारणभूत मन को जानने वाला।

विप्पणासमरण **Vippanāsamaraṇa**

अकेले सहन न करने योग्य दुस्तर पूर्व शत्रु का भय, दुष्ट राजा का भय, चोर का भय एवं तिर्यंचों का उपद्रव उपस्थित हो जाने पर अथवा ब्रह्मचर्य•आदि व्रत के नाश रूप चारित्रिक दोष उत्पन्न होने पर पाप भीरु साधु को चारित्र की विराधना न करके निर्मल परिणामों से अन्न-पान का त्याग कर प्राप्त होने वाला मरण।

विप्रौषधि **Viprauṣadhi**

देखें - विडौषधिऋद्धि।

विभक्तिभिन्न **Vibhaktibhinna**

1. सूत्र-दोषों का एक भेद।
2. विशेषण और विशेष्य में भिन्न-भिन्न विभक्ति का होना।

विभाव **Vibhāva**

1. कर्मों के उदय से होने वाले जीव का विकारी भाव।
2. स्वभाव से अन्यथा परिणमन करना।

विभावद्रव्यव्यंजनपर्याय **Vibhāvadravyavyañjanaparyāya**

जीव की नर-नारक आदि अवस्थाएं।

विभावपर्याय **Vibhāvaparyāya**

1. मनुष्य, नारक, तिर्यंच और देव पर्याय।
2. नर, नारक आदि की चौरासी लाख पर्यायें।

विभाषा **Vibhāṣa**

सूत्र के द्वारा सूचित अर्थ का विशेष रूप से व्याख्यान।

विभ्रम **Vibhrama**

अनेकांतात्मक वस्तु को सर्वथा नित्य या क्षणिक रूप से ग्रहण करना।

विमल **Vimala**

1. द्रव्य कर्म की मूल एवं उत्तर प्रकृतियों को नष्ट कर चुकने वाला।
2. आप्त का अपर नाम।
3. तेरहवें तीर्थंकर का नाम।

विमान **Vimāna**

1. सौधर्मादि कल्प।
2. छज्जों एवं शिखरों से युक्त प्रासाद।

विमानप्रस्तार **Vimānaprastāra**

स्वर्ग लोक में श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमान।

विमोचितावास **Vimochitāvāsa**

दूसरों के द्वारा त्यागे गए आवास में निवास करना।

विमोह **Vimoha**

परस्पर सापेक्ष दोनों नयों के आश्रय से द्रव्य, गुण और पर्याय आदि का ज्ञान न होना।

विरताविरत **Viratāvirata**

1. पंचम गुणस्थान देशविरत का नामान्तर।
2. एक ही समय में त्रसहिंसा से विरत और स्थावर हिंसा से अविरत श्रावक।
3. प्रत्याख्यान कषाय का उदय होने पर जीव की विरताविरत अवस्था।

विरति **Virati**

चारित्र मोह के उपशम, क्षय और क्षयोपशम के निमित्त से होने वाला औपशमिक, क्षायिक एवं क्षायोपशमिक चारित्र का आविर्भाव।

विरह **Viraha**

अंतर, उच्छेद, परिणामांतर गमन, नास्तित्वगमन और अन्य भावव्यवधान का नामांतर।

विराग **Virāga**

राग के कारणों के अभाव में पुरुषों की स्त्रियों से और स्त्रियों की पुरुषों से विरक्ति।

विरागविचय **Virāgavicaya**

1. धर्मध्यान के दस भेदों में से छठा भेद।
2. शरीर को अपवित्र और भोगों को विष मानकर विषयों की विरक्ति का अनुचिंतन।

विराधक **Virādhaka**

रत्नत्रयस्वरूप अपनी विशुद्ध आत्मा को छोड़कर परद्रव्य का विचार करना।

विरुद्धराज्यातिक्रम **Viruddharājyātikrama**

1. अचौर्य व्रत का एक अतीचार।
2. राज्य द्वारा निर्धारित कर आदि के नियमों का अतिक्रमण।

विरुद्धहेत्वाभास **Viruddhahetvābhāsa**

जिस हेतु का अविनाभाव साध्य से विपरीत के साथ निश्चित है।

विवक्षा **Vivakṣā**

वक्ता की इच्छा।

विवाह **Vivāha**

सातावेदनीय और चारित्रमोह के उदय से वर द्वारा कन्या का वरण करना।

विविक्त **Vivikta**

ध्यान में बाधक स्त्री, पशु, नपुंसक आदि कारणों से रहित पर्वत की गुफा, कंदरा, प्राग्भार, श्मशान, जनशून्य गृह तथा उद्यानादि एकांत स्थान।

विविक्तशय्यासन **Viviktaśayyāsana**

1. बाह्य तप का एक भेद।
2. ब्रह्मचर्य के पालन और स्वाध्याय एवं ध्यानादि की सिद्धि के लिए तिर्यंचिनी, मनुष्यनी, विकारयुक्त देवी और गृहस्थ आदि के संसर्ग से हित स्थान, जंतु पीड़ा से रहित निर्जन स्थान में शयन करना एवं बैठना।

विवेक **Viveka**

1. अयोग्य भोजन का परित्याग।
2. अन्न, पान, उपकरण आदि का विभाग।
3. गण, गच्छ, द्रव्य और क्षेत्र आदि से पृथक्करणरूप प्रायश्चित्त।
4. शरीर से आत्मा का अथवा आत्मा से सब संयोगों को भिन्न मानना।

विवेकप्रतिमा **Vivekapratimā**

विवेक के प्रति आस्था।

विशदप्रतिभासत्व **Viśadapratibhāsatva**

ज्ञानावरण के क्षय अथवा विशिष्ट क्षयोपशम से आगम और अनुमान आदि में असंभव अनुभवसिद्ध निर्मलता का प्रकट होना।

विशुद्धता **Viśuddhatā**

अतिशय तीव्र कषाय का अभाव या मन्द कषाय।

23—416 Min. of HRD/2014

विशुद्धि **Visuddhi**

1. ज्ञानावरण आदि कर्मों के क्षयोपशम से होने वाली आत्मा की निर्मलता।
2. सातावेदनीय के बंध योग्य परिणाम।
3. अपराध से मलिन आत्मा का विशुद्धीकरण।

विशुद्धिलब्धि **Viśuddhilabdhi**

मिथ्यादृष्टि जीव के क्षयोपशमलब्धि हो जाने पर साता आदि प्रशस्त प्रकृतियों के बंधन का कारणभूत शुभ परिणाम।

विशुद्धिस्थान **Viśuddhisthāna**

पुण्य प्रकृतियों के बंध के कारणभूत कषाय स्थान।

विशेष **Viśeṣa**

1. एक पदार्थ से अन्य पदार्थ को भिन्न करने वाला धर्म।
2. विसदृश परिणाम।

विशेषण **Viśeṣaṇa**

1. वस्तु-अवस्तु, कृत्य-अकृत्य और आत्म-पर के अंतर को जानने वाला।
2. अपने ही गुण-दोषों के अधिरोहण को जानने वाला।

विशोधि **Viśodhi**

शिष्य के द्वारा अपराध की आलोचना कर लेने पर गुरु के द्वारा दिया गया प्रायश्चित्त।

विश्वस्तमंत्रभेद **Viśwastamantrabheda**

1. सत्याणुव्रत का एक अतीचार।
2. विश्वस्त मित्र, स्त्री आदि के गोपनीय अभिप्राय को प्रकट करना।

विषय **Viṣaya**

1. द्रव्यपर्यायात्मक पदार्थ।
2. इंद्रियों द्वारा ग्राह्य रसादि पदार्थ।
3. इंद्रिय और मन को संतुष्ट करने वाले पदार्थ।

विषयानंद रौद्रध्यान **Viṣayānanda raudradhyāna**

इंद्रिय-विषयों के संरक्षण का निरंतर चिंतन।

विषयी **Viṣayī**

रूप-रस आदि विषयों की ग्राहक द्रव्य एवं भाव इंद्रियाँ।

विषवाणिज्य **Viṣavāṇijya**

प्राणिघातक, अस्त्र, यंत्र, लौहकुदाली, तथा हरिताल (विष) आदि का व्यापार।

विष्णु **Viṣṇu**

1. शरीर को व्याप्त करने वाला या शरीर के अवयवों को बार-बार वेष्टित करने वाला जीव।
2. ज्ञान रूप प्रकाश के द्वारा त्रिलोक के समस्त द्रव्यों एवं पर्यायों को व्याप्त करने वाला जीव।

विसंभोग **Visaṃbhoga**

दानादि के द्वारा संव्यवहार का अभाव।

विसंयोजना **Visaṃyojanā**

उपशम व क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्ति की विधि में अनन्तानुबन्धी चतुष्क के स्कंधों का पर प्रकृति रूप परिणमन।

विसंवाद **Visaṃvāda**

विपरीत प्रतीति।

विसंवादन **Visaṃvādana**

स्वर्ग-मोक्ष आदि में प्रवृत्त श्रावक की समीचीन क्रियाओं का मन-वचन-काय की कुटिलता से निषेध करके प्रवंचना।

विसर्प **Visarpa**

जीव के आत्म-प्रदेशों का विस्तार।

विस्ताररुचि **Vistāraruci**

प्रमाण, नय और निक्षेप आदि उपायों द्वारा अंगपूर्व श्रुत में प्ररूपित तत्त्वों को जानकर उनमें होने वाला श्रद्धान।

विहायोगति **Vihāyogati**

आकाश मार्ग से गमन।

विहायोगतिनामकर्म **Vihāyogatināmakarma**

1. गति नामकर्म का प्रकार।
2. लब्धि और शिक्षाजनित ऋद्धि-निमित्तक आकाश में गमन।

वीचार **Vīcāra**

अर्थ, व्यंजन और योग का संक्रमण। अर्थ - ध्येय-द्रव्य अथवा पर्याय। व्यंजन - वचन। योग - मन, वचन और शरीर का परिस्पंदन।

वीतराग **Vītarāga**

मोहनीय - राग, द्वेष के क्षय से उत्पन्न भाव।

वीतरागकथा **Vītarāgakathā**

वस्तु स्वरूप के संदर्भ में गुरु-शिष्य अथवा विद्वानों के मध्य निर्णय होने तक होने वाला वचन व्यापार।

वीतरागचारित्र **Vītarāgacāritra**

अपध्यान आदि विकल्प से रहित एवं स्वसंवेदन से उत्पन्न नैसर्गिक सुख सहित चारित्र।

वीतरागछद्मस्थ **Vitarāgachadmastha**

1. सम्यग्दृष्टिछद्मस्थ का एक भेद, जिसके अंतर्गत 11-12 गुणस्थान वाले जीव आते हैं।
2. उपशान्तकषाय एवं क्षीणमोह गुणस्थान वाले जीव।

वीतराग सम्यक्त्व **Vītarāga samyaktva**

1. राग-द्वेष रहित सम्यक्त्व।
2. दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय से उत्पन्न होने वाला दर्शन।
3. आत्मविशुद्धि रूप सम्यक्त्व।

वीतहेतु **Vītahetu**

सांख्य मतानुसार साध्य को विधिमुख से सिद्ध करने वाला हेतु।

वीतावीत **Vītāvīta**

सांख्य अभिमत एक हेतु जो विधि-प्रतिषेध को सिद्ध करे।

वीर **Vīra**

1. मुक्ति एवं स्वर्गादि अभ्युदय को देने वाला।
2. तप-शक्ति से कर्मों को विदीर्ण करने वाला।
3. कर्म-रूपी शत्रुओं को जीतने वाला।
4. चौबीसवें तीर्थंकर वर्द्धमान का एक सार्थक नाम।

वीर्य **Vīrya**

1. द्रव्य की शक्ति विशेष।
2. वीर्यांतराय कर्म के उपशम, क्षय या क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाला आत्म-परिणाम।

वीर्यप्रवाद **Vīryapravāda**

1. पूर्वश्रुत, जिसमें अजीव; संसारी एवं मुक्त जीवों के वीर्य का वर्णन हो।
2. छद्मस्थ, केवलि, इन्द्र, दैत्येन्द्र, राजा, चक्रवर्ती, बलदेव आदि के बललाभ तथा सम्यक्त्व का लक्षण निरूपण करने वाला पूर्व।

वीर्याचार **Vīryācāra**

1. सम्यक् दर्शन एवं ज्ञान पूर्वक शक्तितः तप में प्रवृत्ति।
2. ज्ञानादि प्रयोजन में शक्ति को न छिपाना।

वीर्यानुप्रवाद **Vīryānupravāda**

देखें - वीर्यप्रवाद।

वीर्यानुवाद **Vīryanuvāda**

देखें - वीर्यप्रवाद।

वीर्यांतराय **Vīryāntarāya**

वीर्य - बल और शुक्र - जिस कर्म के उदय से नीरोग और युवावस्था होने पर भी अल्प बल वाला होकर प्रयोजनीय साध्य में प्रवृत्ति का अभाव हो।

वृक्षमूल-उपगत अतिचार **Vṛkṣamūl upagata aticāra**

1. हाथ-पैर और शरीर के द्वारा जलकायिक को पीड़ित करना।
2. कायक्लेश के अंतर्गत वर्षायोग का अतिचार।

वृत्त **Vṛtta**

1. संपूर्ण पापों का परित्याग करना।
2. अनाचार को छोड़ते हुए सम्यक् आचरण करना।

वृत्ति **Vṛtti**

वर्तन या समवाय (गुण-गुणी की अभिन्नता)।

वृत्ति परिसंख्यान **Vṛttiparisaṃkhyāna**

1. घरों के प्रमाण, दाता और पात्र के विषय में अनेक प्रकार के नियम लेना।

2. वृत्ति का प्रमाण करना।
3. तप का एक भेद।

वृत्तिपरिसंख्यानातिचार **Vṛttiparisaṁkhyanāticāra**

वृत्तिपरिसंख्यान तप में लिए गए नियमों का अतिक्रमण करना।

वृत्तिसंक्षेप **Vṛttisaṅkṣepa**

देखें - वृत्तिपरिसंख्यान।

वृद्ध **Vṛddha**

चतुर्थ (वृद्ध) अवस्थागत इन्द्रियों की शिथिलता के कारण मुनि दीक्षा (प्रव्रज्या) के लिए अपात्र व्यक्ति।

वृद्धि **Vṛddhi**

पूर्व स्वभाव को स्थिर रखते हुये भवान्तर रूप से अधिक होना।

वृषभ **Vṛṣabha**

1. वृष - धर्म। धर्म से शोभित तीर्थंकर का लांछन।
2. जैन परंपरा के प्रथम तीर्थंकर का नाम।

वृष्य **Vṛṣya**

इंद्रिय बल को बैल के समान पुष्ट करने वाला खाद्यान्न।

वृष्येष्टरस **Vṛṣyeṣṭarasa**

1. बैल के समान उन्मत्त करने वाले रस का उपभोग।
2. वीर्य आदि को परिपुष्ट करने वाले उड़द आदि।

वेद (जीव) **Veda (jīva)**

सुख-दुःख का वेदन करने वाला।

वेद (मार्गणा) **Veda (Margaṇā)**

1. अनुभव करना।
2. आत्मप्रवृत्ति से मैथुन क्रिया के प्रति मुग्ध होने का भाव।

वेद (श्रुत) **Veda (Śruta)**

1. समस्त पदार्थों को वर्तमान में जानता है एवं भूत में जो जानता था और भविष्य में भी जानेगा।
2. श्रुत वाचक नाम।

वेदक सम्यक्त्व **Vedaka samyaktva**

1. दर्शन वेदनीय कर्म के क्षय व उपशम से होने वाला भाव।
2. दर्शन मोहनीय की सम्यक्त्व प्रकृति के सर्वघाति स्पद्धर्कों का क्षय होने पर, उन्हीं का सदवस्था रूप से उपशम होने पर तथा देशघाति स्पद्धर्कों का उदय होने पर होनेवाला क्षायोपशमिक तत्त्वार्थश्रद्धान।

वेदना **Vedanā**

1. कर्म का उदय होना।
2. सुख-दुःख होना।
3. ऋजुसूत्र नय की अपेक्षा से वेदनीय कर्म ।
4. अष्ट प्रकार के कर्म।
5. कर्मोदय का अनुभवन।

वेदना आर्तध्यान **Vedana ārtadhyāna**

1. वात-पित्त आदि के विकार से उत्पन्न शारीरिक पीड़ा को दूर करने का चिंतन।
2. शूल आदि व्याधि की वेदना को दूर करने एवं भविष्य में न हो, ऐसा चिंतन करना।

वेदना भय **Vedanā bhaya**

संयोग अवस्था से उत्पन्न व्याधिजनित वेदना के प्रति चिंतातुर होना।

वेदना समुद्घात **Vedanā samudghāta**

वायुजनित रोग अथवा विष आदि द्रव्य के संयोग होने पर संताप जन्य शरीराश्रित आत्म प्रदेशों का बहिर्गमन।

वेदनीय **Vedanīya**

1. जीव के सुख-दुःख का कारणभूत कर्म पर्याय रूप से परिणत पुद्गल स्कन्ध।
2. सुख-दुःखादि का अनुभव कराने वाला कर्म।

वेद मूढ़ता **Veda muḍhatā**

पाप के उत्पादक वेद एवं अन्य पुराण आदि के विषय में सम्यक्पने की बुद्धि करना।

वेदिकाबद्ध दोष **Vedikābaddha doṣa**

1. पांच वेदिका से युक्त वंदना करना।
2. वंदना का एक दोष।

वेदिम **Vedima**

1. वेदन क्रिया से सिद्ध शुक्ति, कोश, पल्य आदि द्रव्य।
2. द्रव्य निक्षेप का एक भेद।

वेद्यकर्म **Vedyakarma**

सुख-दुःख का अनुभवन कराने वाला कर्म।

वेध **Vedha**

कील आदि के द्वारा नाक, कान आदि वेधन।

वेहाणस मरण **Vehāṇasamaraṇa**

वृक्ष आदि पर बांधकर होने वाला मरण (फांसी)।

वैक्रिय **Vaikriya**

1. अणिमा-महिमा आदि ऐश्वर्य के संबंध से विविध रूपों में क्रियाओं को निर्मित करना।
2. समर्थ पुद्गल से निर्मित शरीर के माध्यम से प्रयोजनवशात् विविध क्रियाओं को करना।

वैक्रियक **Vaikriyaka**

देखें - वैक्रिय

वैक्रियिक काययोग **Vaikriyika kāyayoga**

अणिमा-महिमा आदि के संबंध से निर्मित पुद्गलों द्वारा उत्पन्न शरीर के आश्रय से आत्म प्रदेशों में होने वाला परिस्पंदन।

वैक्रियिक शरीर **Vaikriyika śarīra**

देखें - वैक्रिय।

वैक्रियिक शरीरबंधन **Vaikriyika śarīrabandhana**

1. वैक्रियिक शरीर के परस्पर बंधन को प्राप्त कराने वाला कर्मोदय।
2. तैजसकार्मण पुद्गलों के साथ गृहीत और ग्रहण करने योग्य पुद्गलों का भी संबंध होता है, ऐसा कर्मोदय।

वैक्रियिक शरीर संघात **Vaikriyika śarīrasaṅghāta**

वैक्रियिक शरीर संघात नाम कर्म के उदय से वैक्रियिक शरीर स्वरूप को प्राप्त शरीर तथा बंधन नाम कर्म के उदय से बंधन प्राप्त बद्ध वैक्रियिक शरीर रूप स्कंधों में एकरूपता।

वैक्रियिक शरीरांगोपांग **Vaikriyika śarīrāṅgopāṅga**

वैक्रियिक शरीर के अंग-उपांग और प्रत्यंग की रचना कराने में निमित्त नाम कर्म।

वैक्रियिक समुद्घात **Vaikriyika samudghāta**

1. एकत्व-पृथक्त्व नाना प्रकार के वैक्रियिक शरीर, वचन प्रकार तथा प्रहरण आदि प्रयोजन की सिद्धि के लिए आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकालना।
2. वैक्रियिक शरीर प्राप्त देव-नारकियों द्वारा स्वाभाविक आकार को छोड़कर भिन्न आकार में अवस्थित होना।

वैदिक भावश्रुतग्रंथ **Vaidika bhāvaśrutagrantha**

बारह अंग आदि का बोध करानेवाली कृति।

वैदिकमूढ़ **Vaidika mūḍha**

ऋग्वेदादि ग्रंथों के विषय में प्रगाढ़ श्रद्धालु।

वैधर्म्य **Vaidharmya**

साध्याभाव के अधिकरण में रहने वाला निश्चित धर्म।

वैनयिक मिथ्यात्व **Vainayika mithyātva**

1. यथार्थ/अयथार्थ के बोध के अभाव में सभी देवों और शास्त्रों पर समान दृष्टि से श्रद्धान रखना।
2. लिंग और आचार के भेद-भाव के बिना मात्र विनय के प्रयोजन में आचरण करना।
3. विनय से इहलोक-परलोक के सुख प्राप्त होते हैं। इस श्रद्धान से ज्ञान, दर्शन, तप, उपवासादि के प्रति उपेक्षा करना।
4. विनय से ही मोक्ष होता है - ऐसा अभिमत।

वैनयिकवादी **Vainayikavādī**

विनय को ही स्वर्ग मोक्ष का कारण मानने वाला।

वैनयिक श्रुत **Vainayika śruta**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से भरत, ऐरावत और विदेह क्षेत्रगत साधुओं के ज्ञान, दर्शन, चारित्र तप एवं औपचारिक विनय का वर्णन करने वाला अंग बाह्य श्रुत।

वैनयिकी प्रज्ञा **Vainayikī prajñā**

1. बारह अंग स्वरूप श्रुत के योग्य विनय से उत्पन्न बुद्धि।
2. गुरु की विनय (शुश्रूषा) से उत्पन्न बुद्धि।
3. पर के उपदेश से उत्पन्न बुद्धि।

वैनयिकी बुद्धि **Vainayikī buddhi**

देखें - वैनयिकी प्रज्ञा।

वैभाविक भाव **Vaibhāvika bhāva**

जीव के अनुजीवी गुणों का संक्रमण (परिवर्तन या विकार) होना।

वैमानिकी **Vaimānikī**

1. देव विशेष।
2. ऐसे विमान जिनमें रहते हुए जीव स्वयं को पुण्यशाली माने।

वैयावृत्यकरविवेक **Vaiyāvṛtyakaraviveka**

वैयावृत्य करने वाले शिष्य परिकर का त्याग कर वचन और काम से भी साथ न रहने का निश्चय करना।

वैयावृत्यकरशुद्धि **Vaiyāvṛtyakaraśuddhi**

संयतों की वैयावृत्ति के क्रम का ज्ञान होना।

वैयावृत्य तप **Vaiyāvṛtya tapa**

1. चतुर्विध संघ में ग्लान, गुरु, बाल, वृद्ध और शैक्ष साधु की शक्त्यनुसारसेवा-सुश्रूषा करना।
2. गुण श्रेष्ठ, उपाध्याय, दुष्कर तपस्वी, शिष्य, दुर्बल, साधुगण - ऋषि, यति, मुनि व अनगार, कुल, संघ, मनोज्ञ, साधुओं को आपत्ति के समय शय्या, अवकाश, आसन, कमंडलु और प्रतिलेखन द्वारा अनुगृहीत करके आहार, औषध, मल आदि को दूर करने अथवा वंदना आदि के द्वारा सुश्रूषा करना।

3. व्याधि, परीषह और मिथ्यात्व आदि से ग्रसित होने पर यथायोग्य प्रतिकार करना।
4. व्यावृत्त (आगमोक्त सोलह क्रियाओं में तत्पर) का कर्म (भाव)।
5. श्रावक के शिक्षाव्रत का अंतिम व्रत।

वैयावृत्य भावना **Vaiyāvṛtya bhāvanā**

गुण श्रेष्ठ मुनि के ऊपर दुःख आदि के समय निर्दोष उपाय करना एवं कैसे दुःख दूर हो, ऐसा चिंतन करना।

वैयावृत्य योग **Vaiyāvṛtya yoga**

1. तीर्थंकर प्रकृति का बंधक कारण।
2. अरहन्त भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन वात्सल्य आदि के माध्यम से सम्यक्त्वपूर्वक वैयावृत्य में स्वयं को लगाना।

वैराग्य **Vairāgya**

संसार-शरीर आदि में राग-द्वेष रहित अवस्था।

वैशद्य **Vaiśadya**

1. अनुमान आदि ज्ञान की अपेक्षा अधिक प्रतिभासित ज्ञान।
2. ज्ञान का विशेष प्रतिभासन।

वैश्य **Vaiśya**

1. वाणिज्य, कृषिकर्म एवं गोरक्षण में उद्यमी।
2. कृषि, व्यापार और पशुपालन अनुजीवी।

वैश्वानर **Vaiśvānara**

ध्यानाग्नि से जन्म, जरा और मृत्यु को भस्म करने वाले अरिहन्त।

वैस्रसिकबंध **Vaisrasika bandha**

पुरुष प्रयत्न की अपेक्षा रहित पुद्गल स्कंधों का परस्पर बंध। उदाहरणार्थ- इंद्रधनुष।

वैस्रसिक शब्द **Vaisrasikaśabda**

पुरुष प्रयोग की अपेक्षा न रखते हुए मेघ आदि जनित शब्द।

व्यंजन **Vyañjana**

1. शब्द का प्रकाशन।
2. इंद्रियों द्वारा पदार्थ का प्रकाशन।

व्यंजन नय **Vyañjana naya**

शब्द भेद से वस्तु भेद को ग्रहण करने वाला नय।

व्यंजन निमित्त **Vyañjana nimitta**

शिर, मुख, कंधा आदि में व्यक्त तिल आदि देखकर सुखादि को जानना।

व्यंजन पर्याय **Vyañjana paryāya**

1. अरिहंत अवस्था में परम आहारक शरीर के आकार से आत्म प्रदेशों का अवस्थान।
2. चक्षु से ग्रहण करने योग्य, स्थूल एवं कालांतर में रहने वाली सामान्य ज्ञान की विषयभूत पर्याय।

व्यंजनशुद्धि **Vyañjana śuddhi**

गणधरों द्वारा गुंफित निर्दोष सूत्रों का पाठ करना।

व्यंजन संक्रांति **Vyañjana Saṃkrānti**

एक श्रुत वचन को ग्रहण करके, दूसरे का अवलंबन लेना पुनः अन्य श्रुतवचन का आश्रय लेना।

व्यंजनाचार **Vyañjanācāra**

व्याकरण निर्दिष्ट वर्ण, पद एवं वाक्य का शुद्धिपूर्वक उच्चारण करते हुए पाठ करना।

व्यंजनावग्रह **Vyañjanāvagraha**

1. इंद्रिय और पदार्थ के संबंध को प्राप्त होने वाले - शब्दादि का ज्ञान।
2. शब्दादि रूप परिणत द्रव्य का अव्यक्त ग्रहण।

व्यंजनावग्रहावरणीय **Vyañjanāvagrahāvaraṇiya**

व्यंजनावग्रह को आच्छादित करने वाला कर्म।

व्यंतर **Vyantara**

1. विविध प्रकार के देशस्थ निवासी देव।
2. जिनका मनुष्यों और देवों में अंतर न हो।

व्यक्ताव्यक्तेश्वरनिषिद्ध **Vyaktāvyakteśvaraniṣiddha**

1. दाता और अन्य व्यक्ति के द्वारा अवरुद्ध किए गए आहार को ग्रहण करना।
2. उत्पादन दोष का एक भेद।

व्यक्तेश्वरनिषिद्ध **Vyakteśvaraniṣiddha**

1. दाता के द्वारा अवरुद्ध किए गए आहार को ग्रहण करना।
2. उत्पादन दोष का एक भेद।

व्यतिक्रम **Vyatikrama**

1. गृहस्थ विशेष से अनुराग होने के कारण तदनुसार आहारादि के लिए उपक्रम करना अर्थात् पैरों को उठाना, चलना, गृहप्रवेश करना एवं पात्र को निकालना आदि व्यापार।
2. शीलव्रतों के अतिचारों में एक।

व्यतिक्रमण **Vyatikramaṇa**

1. विषयों की अभिलाषा करना।
2. संयत समूह को छोड़कर विषयों के उपकरण जुटाना।

व्यतिरेक **Vyatireka**

भिन्न-भिन्न पदार्थों में रहने वाले विलक्षण परिणाम।

व्यतिरेक दृष्टांत **Vyatireka dṛṣṭānta**

साध्य के अभाव में साधन का अभाव।

व्यपहार **Vyapahāra**

1. शीघ्रता के कारण मुनि के लिए वस्त्र-पात्र आदि को खींचना।
2. भोजन संबंधी एक दोष।

व्यय **Vyaya**

द्रव्य की पूर्व पर्याय का विनाश।

व्यवच्छिन्नक्रिया प्रतिपाति **Vyavacchinnakriyā pratipāti**

1. शुक्ल ध्यान का चतुर्थ भेद।
2. जिस ध्यान में श्वासोच्छ्वास सहित शरीर वचन और मन रूप योगों के आश्रित आत्म-प्रदेश परिस्पंदन रूप क्रिया-व्यापार नष्ट हो जाए, ऐसी अवस्था विशेष।

व्यवसाय **Vyavasāya**

1. अन्वेषित पदार्थ का निश्चय।
2. अनुष्ठेय के अनुष्ठान में उत्साह-वृद्धि।

व्यवस्थापद **Vyavasthāpada**

यथास्थान अवस्थित होना।

व्यवहार **Vyavahāra**

1. संग्रहनय से गृहीत अर्थ का विधिपूर्वक भेद करना।
2. प्रायश्चित्त के विधान का उपक्रम करना।

व्यवहार काल **Vyavahāra kāla**

1. पर के आश्रित काल। यथा-समय, निमेष, काष्ठा, कला, नाली, दिन-रात, मास, ऋतु, अयन और वर्ष आदि।
2. वर्तना रूप मुख्य काल की समय आदि रूप पर्याय।
3. प्रतिक्षण नष्ट होने वाला काल।

व्यवहार चारित्र **Vyavahāra cāritra**

1. आचार आदि सूत्र ग्रंथों में उल्लिखित श्रमण विषयक आचार तप में प्रवृत्ति।
2. कदाचार से निवृत्ति और सदाचार में प्रवृत्ति।

व्यवहार जीव **Vyavahāra jīva**

तीनों कालों में इंद्रिय बल, आयु और श्वासोच्छ्वास सहित जीव।

व्यवहार ध्यान **Vyavahāra dhyāna**

आत्मा से भिन्न वस्तु का ध्यान।

व्यवहार नय **Vyavahāra naya**

1. संग्रहनय से ग्रहण किये गये पदार्थ का भेद रूप से कथन करना।
2. वस्तुनिष्ठ धर्मों का भेदोपचार पूर्वक निरूपण करना।
3. सामान्य विशेषात्मक पदार्थ में सामान्य को गौण करके विशेष का कथन करना।

व्यवहार नयाभास **Vyavahāra nayābhāsa**

काल्पनिक भेद का निरूपण करना।

व्यवहारपंडित **Vyavahārapaṇḍita**

1. लोक, वेद और समयानुसार व्यवहार में निपुण।
2. शुश्रूषा, ग्रहण, धारण, ऊहापोह, अर्थविज्ञान और तत्त्वज्ञान से युक्त अनेक शास्त्रों का ज्ञाता।

व्यवहार परमाणु **Vyavahāra parmāṇu**

आठ सन्नासन्न द्रव्य प्रमाण।

व्यवहार पल्य **Vyavahāra palya**

प्रमाणांगुल से निष्पन्न योजन प्रमाण लम्बे चौड़े एवं गहरे गड्ढे में एक से सात दिन के अंदर उत्पन्न भेड़ के बालों को (जिस बाल के दो खंड न हो सकें) गड्ढे में सघन भरने पर पल्य (गर्त) होता है।

व्यवहारपल्योपम **Vyavahārapalyopama**

व्यवहार पल्य में से सौ सौ वर्ष के अंतराल में एक रोम खंड के निकालने पर जितने समय में वह पल्य खाली होता है। देखें - व्यवहारपल्य।

व्यवहारबाल **Vyavahārabāla**

लोक, वेद और समयानुसार व्यवहार से अनभिज्ञ।

व्यवहारमनोगुप्ति **Vyavahāra manogupti**

अशुभ भावों - कालुष्य, मोह, संज्ञा, राग और द्वेष आदि का परित्याग।

व्यवहार मोक्षमार्ग **Vyavahāra mokṣamārga**

वीतराग सर्वज्ञ द्वारा प्रणीत षड्-द्रव्य, पंचास्तिकाय, सात तत्त्व तथा नव पदार्थों का सम्यक् श्रद्धान एवं ज्ञानपूर्वक व्रतादिक का अनुष्ठान करना।

व्यवहार वात्सल्य **Vyavahāra vātsalya**

चतुर्विध - (मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका) संघ के प्रति गाय और बछड़े के समान प्रीति रखना।

व्यवहार सत्य **Vyavahāra satya**

1. नैगम आदि नय की प्रधानता से वचन की प्रवृत्ति।
2. लोक व्यवहार के अनुसार वचन की प्रवृत्ति।

व्यवहार सम्यक्त्व **Vyavahāra samyaktva**

1. धर्मादि द्रव्य, पदार्थ भेद तथा तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना।
2. तीन मूढ़ता, आठ मद, छह अनायतन तथा शंकादि आठ दोषों से रहित शुद्ध जीवादि तत्त्वों का श्रद्धान तथा राग सहित प्रवृत्ति।

व्यवहार सम्यक्ज्ञान **Vyavahāra samyakjñāna**

अंग और श्रुत विषयक ज्ञान।

व्यवहारसम्यग्दर्शनाराधना **Vyavahārasamyagdarśanārādhanā**

तीन-मूढ़ता एवं पच्चीस दोषों को दूर करते हुए हेय तथा उपादेय बुद्धि से जीवादि तत्त्वों का श्रद्धान।

व्यवहार हिंसा **Vyavahāra hiṃsā**

रागादि की उत्पत्ति से बाह्य निमित्त भूत प्राणियों का घात।

व्यवहारामूढदृष्टि **Vyavahārāmūḍhadṛṣṭi**

वीतराग सर्वज्ञ प्रणीत आगम से बहिर्भूत उपदिष्ट मार्ग का श्रद्धान न करने वाला।

व्यवहारी **Vyavahārī**

व्यवहार अनुष्ठान में प्रवृत्ति कराने वाला प्रायश्चित्त देने वाला।

व्यवहित **Vyavahita**

1. प्रकृत को छोड़कर अप्रकृत का विस्तार से कथन करते हुए प्रकृत का आश्रय लेना।
2. वचन दोष का एक भेद।

व्यसन **Vyasana**

कल्याण मार्ग से भ्रष्ट करने वाली प्रवृत्ति।

व्याकरण **Vyakaraṇa**

असीमित अर्थ को प्रगट करनेवाले शब्दों के व्याख्यान का कारण।

व्याकरण सूत्र **Vyākaraṇa sūtra**

व्याकरणगत वस्तु का सूत्र रूप में व्याख्यान करना।

व्याख्या प्रज्ञप्ति **Vyākhyā prajñapti**

क्या जीव है, क्या जीव नहीं है, जीव कहाँ उत्पन्न होता है, आदि साठ हजार प्रश्नों का निरूपण करने वाला अंग।

व्याख्या प्रज्ञप्तिपरिकर्म **Vyākhyā prajñaptiparikarma**

1. चौरासी लाख छत्तीस हजार पदों के माध्यम से रूपी-अरूपी, भव्य-अभव्य, जीव-अजीव आदि का निरूपण करने वाला।
2. दृष्टिवाद का एक भेद।

व्याधित **Vyādhita**

स्वाध्याय, आवश्यक एवं भिक्षाटन आदि में असमर्थ हमेशा रुग्णावस्था को प्राप्त साधक।

व्याप्ति **Vyāpti**

साध्य और साधन के अविनाभाव संबंध का निश्चय कराने वाला ज्ञान।

व्यावहारिक काल **Vyāvaharika kāla**

ज्योतिष शास्त्र द्वारा निर्दिष्ट मान, समय आदि।

व्याहत **Vyāhata**

1. पूर्व कथन को बाधित करने वाला कथन करना।
2. वचन दोषों में एक।

व्युच्छित्ति **Vyucchitti**

गुणस्थान में बंध की प्रकृतियों का पृथक् होना।

व्युत्सर्ग आवश्यक **Vyutsarga āvaśyaka**

1. आहार और शरीर के विषय से मन-वचन की प्रवृत्ति को हटाव र ध्येय में चित्त को एकाग्र करना।
2. षड् आवश्यकों में अंतिम।

व्युत्सर्ग तप **Vyutsarga tapa**

1. अहंकार और ममकार का त्याग करना।
2. बंध के निमित्तभूत बाह्य एवं आभ्यंतर दोषों का उत्कृष्ट त्याग।

व्युत्सर्ग प्रतिमा **Vyutsarga pratimā**

कायोत्सर्ग करने का व्रत विशेष।

व्युत्सर्गप्रायश्चित्त **Vyutsargaprāyaścitta**

1. काल के नियम पूर्वक कायोत्सर्ग करना।
2. दुःस्वप्न आदि में किया गया कायोत्सर्ग।
3. दुःस्वप्न, दुर्विचार, मलत्याग आगम विषयक अतिचार, नदी, महावन एवं युद्ध तथा इसी प्रकार अन्य अतिचार होने पर ध्यान का आश्रय लेकर अंतर्मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास काल तक स्थित रहना।

24—416 Min. of HRD/2014

व्युत्सर्ग शुद्धि **Vyutsarga śuddhi**

1. मल-मूत्र आदि का निर्जंतु स्थान में क्षेपण करते हुए शुद्धिपूर्वक समाधिमरण की प्रवृत्ति के साथ शरीर का त्याग करना।
2. मुनियों द्वारा करणीय क्रिया।

व्युत्सर्ग समिति **Vyutsarga samiti**

निर्जंतु स्थान पर मल-मूत्र आदि को सावधानी पूर्वक विसर्जित करना।

व्युत्सृष्ट मरण **Vyutsṛṣṭa maraṇa**

दर्शन-ज्ञान-चारित्र से रहित मरण।

व्युपरतक्रियानिवृत्ति **Vyuparatakriyānivṛtti**

1. वितर्क और विचार से रहित, क्रियाविहीन योगों के निरोधपूर्वक मेरु पर्वत के समान निश्चल ध्यान की अवस्था विशेष।
2. अयोगी जिन के द्वारा अघातिया कर्मों के विनाश के लिए किया जाने वाला ध्यान।
3. शुक्ल ध्यान का चतुर्थ भेद।

व्रत **Vrata**

1. हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह पांच पापों से विरत होना।
2. संकल्प पूर्वक नियमों का पालन करना।
3. अशुभ कार्यों से निवृत्तिपूर्वक शुभ कर्मों में प्रवृत्ति करना।
4. सभी पापों से निवृत्ति।

व्रतरोपणार्ह **Vrataropaṇārha**

अचेलक अवस्था में स्थित उद्देशिक और राजपिण्ड के परित्याग में उद्यत, गुरुभक्त और विनम्र।

व्रतिक **Vratika**

माया, मिथ्या और निदान शल्यों से रहित निरतिचार पांच अणुव्रतों और सात शीलों (तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत) को धारण करने वाला।

व्रती **Vratī**

माया, मिथ्या, निदान शल्य रहित अहिंसा आदि व्रतों का पालन कर्ता।

शंकर **Śaṅkara**

जो अपने कर्मरूप वन को भस्म करके तथा धर्मतीर्थ का प्रवर्तन करके समस्त प्राणियों के लिए सुख को करता है।

शंका **Śaṅkā**

(1) जीवाजीवादि तत्त्वों के ज्ञान में भगवान् के मत को भाव से स्वीकार न कर उस पर श्रद्धा रखते हुए सम्यगदृष्टि के जिनोपदिष्ट अतिशय सूक्ष्म केवलज्ञानगम्य व आगमगम्य अतीन्द्रिय पदार्थों के विषय में संदेह होना कि ऐसा होगा या नही? इस प्रकार का सम्यग्दर्शन को मलिन करने वाला शंका नाम का अतिचार।

(2) सर्वज्ञ और उनके द्वारा उपदिष्ट पदार्थ है अथवा नहीं है, इस प्रकार का संदेह होना।

शंकित **Śaṅkita**

(1) अमुक अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य पदार्थ आगमानुसार ग्रहण करने योग्य हैं या नहीं, इस प्रकार संदेह के रहते हुए उसे ग्रहण करना।

(2) यह वसति योग्य है या नही? इस प्रकार की शंका।

शंखनिधि **Śaṅkhanidhi**

(1) सब प्रकार के वाद्यों को देने वाली निधि।

(2) नृत्य की विधि, नाटक की विधि, धर्मादि चार प्रकार के पुरुषार्थ से संबद्ध अथवा संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और संकीर्ण– इन चार प्रकार की भाषाओं में निबद्ध चार प्रकार के काव्यों (गद्य, पद्य, गेय व चौर्ण) की उत्पत्ति तथा सब वाद्यों की उत्पत्ति संबंधी विधि का वर्णन करने वाली विधि।

शंखावर्तयोनि **Śaṅkhāvarta yoni**

शंख के समान घुमाव वाली वह योनि जिस में गर्भ नहीं ठहरता है।

शकटोद्धिका-दोष **Śakṭorddhikā doṣa**

दोनों एड़ियों को मिलाकर व आगे के पांवों को फैलाकर स्थित होना अथवा दोनों अंगूठों को मिलाकर व एड़ियों को फैलाकर स्थित होना।

शकुनि **Śakuni**

तीन वेद के उदयवश काम का आविर्भाव सत् धातुओं के क्षय में भी क्षीण नहीं होना।

शक्ति **Śakti**

(1) वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम से वीर्य की प्राप्ति होना।

(2) परमागम से युक्त युक्तिरूप सामर्थ्य।

शक्तितस्तप **Saktitastapa**

(1) अपनी शक्ति को न छिपाते हुए सम्यक् मार्ग का अविरोधी कायक्लेश।

(2) यह शरीर दुःख का कारण, अनित्य और अपवित्र है; अभीष्ट भोगों के द्वारा इसको पुष्ट करना योग्य नहीं है, अपवित्र होकर भी यह गुणरूप रत्नों के संचित करने में उपकारी है, यह विचार कर विषय- सुख में आसक्त न होकर उसका उपयोग दास के समान करना। जिस प्रकार केवल कार्य के संपादनार्थ सेवक को भोजन अथवा वेतन आदि दिया जाता है उसी प्रकार रत्नत्रयादि गुणों के प्राप्त करने के लिए यथा-योग्य उस शरीर का पोषण करना।

शक्तितस्त्याग **Śaktitastyāga**

पात्र के लिए दिया गया आहार उसी दिन में उसकी प्रीति का कारण होता है, अभयदान एक भव की आपत्तियों को दूर करने वाला है। सम्यग्ज्ञान का दान हजारों भवों के दुःखों से मुक्त कराने वाला है, इस कारण विधिपूर्वक यथाशक्ति तीन प्रकार का दान देना।

शक्तुक्षेत्र **Śaktukṣetra**

जिस स्थान में जो बहुतायत से होते हैं तथा वे उपयोग में ही आते हैं।

शठवंदन **Śaṭhavandana**

मेरे यथाविधि करने पर श्रावक आदि मेरे ऊपर विश्वास करेंगे, इस अभिप्राय से वंदना को विश्वास का स्थान मानकर छल से वंदना करना।

शतपृथक्त्व **Śatapṛthaktva**

तीन सौ से लेकर नौ सौ तक के सब विकल्प

शनैश्चर संवत्सर **Śanaiścara saṃvatsara**

शनैश्चर ग्रह से संभव वर्ष का नाम।

शबरबधूदोष **Śabarabadhū-doṣa**

(1)एक दोष–शबर बधू के समान जंघाओं से जघनों को पीड़ित कर कायोत्सर्ग में स्थित होना।

(2) दोनों हाथों को गुह्य प्रदेशों पर रखकर कायोत्सर्ग में स्थित होना।

शबल **Śabala**

जिन क्रियाओं से चारित्र चित्र-विचित्र होता है।

शब्द **Śabda**

(1) जो अर्थ का कथन करता है, जिसके द्वारा पदार्थ का ज्ञान कराया जाता है अथवा उच्चारण मात्र।

(2) जो बाह्य श्रोत्रेन्द्रिय के आश्रित है तथा भाव श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा जाना जाता है।

(3) श्रोत्रेन्द्रिय की विषयभूत ध्वनि।

शब्ददोष **Śabda doṣa**

(1) वंदना का एक दोष।

(2) शब्द बोलते हुए वंदना करना।

शब्दनय **Śabda naya**

(1) लिंग, संख्या, साधनादि व्यभिचार की निवृत्ति करने वाला नय।

(2) नाम, स्थापना और द्रव्य निक्षेप की अपेक्षा न कर समान लिंग व समान वचन रूप पर्याय शब्द के वाच्यभूत वर्तमान अर्थ को ग्रहण करने वाला नय।

शब्दसमय **Śabda samaya**

पाँच अस्तिकायों के विषय में समभाव से रहित होकर वर्ण, पद व वाक्य की रचना से विशिष्ट पाठ।

शब्दाकुलितदोष **Śabdākulita doṣa**

एक प्रकार का दोष।

(1) आलोचना करने वाले साधु के द्वारा गुरुजन के समक्ष अव्यक्त रूप से दोषों को सुनाते हुए कहना।

(2) पाक्षिक, चातुर्मासिक अथवा वार्षिक प्रतिक्रमण के समय में जब बहुत से साधुजन एकत्रित होते हैं व स्थान आलोचना के शब्द से व्याप्त होता है तब ऐसे समय में पूर्व दोषों के कहने पर वह आलोचना सातवें शब्दाकुलित नाम के दोष से दूषित होती है।

(3) महान् शब्द के साथ इस प्रकार की आलोचना करना कि जिससे अन्य अगीतार्थ (विशेष आगम ज्ञान से रहित) जन सुन सकें, यह आलोचना का शब्दाकुल या शब्दाकुलित नामक सातवां दोष है।

शब्दानुपात **Śabdānupāta**

व्यापार करने वाले पुरुषों को लक्ष्यकर खांसने आदि का शब्द करने पर देशावकाशिकव्रत को मलिन करने वाला अतिचार।

शम **Śama**

(1) क्रोधादि की शान्ति।

(2) अनन्तानुबन्धी कषाय वाले क्रूर परिणामों का उदय न होना।

(3) कषाय तथा इन्द्रियों पर जय।

(4) निर्विकार मनस्तत्त्व।

शंभव **Śambava**

(1) जिसके आश्रय से भव्य जीवों को सुख हो।

(2) तीसरे तीर्थंकर का एक सार्थक नाम।

शयनक्रिया **Śayanakriyā**

दंडायत (दंड़ के समान स्थिरता से सोने व करवट आदि के न बदलने रूप) क्रिया।

शयनाशनशुद्धि **Śayanāśana śuddhi**

स्त्री, क्षुद्रजन, चोर, मद्यपायी, जुआरी और व्याध आदि पापीजन जहाँ रहते हों ऐसे स्थानों को छोड़कर जो शाला आदि, शृंगार, विकार, भूषण व उज्ज्वल वेष वाली वेश्याओं की क्रीडा तथा मनोहर गीत व वादित्रों से व्याप्त हों उनका भी परित्याग करते हुए अकृत्रिम गुफा व वृक्ष के

कोटर अथवा कृत्रिम सूने घर आदि या छोड़े गये ऐसे स्थानों में रहना जो अपने निमित्त से न बनाये गये हों।

शय्या **Śayyā**

मनोज्ञ य अमनोज्ञ वसति अथवा बिछौना।

शय्यापरीषहक्षमा **Śayyāpariṣaha kṣamā**

स्वाध्याय, ध्यान अथवा मार्ग के श्रम से खेद को प्राप्त हुआ साधु तीक्ष्ण, विषम, अधिक रेतीले, कंकरीले, शीत अथवा उष्ण भूमिप्रदेशों में निद्रा का अनुभव करता है, तब वह एक करवट से दंड के समान लेटता है, प्राणिबाधा का परिहार करता है। गिरे हुए काष्ठ अथवा शव के समान निश्चल रहता है। ज्ञान के चिंतन में चित्त को लगाता है, व्यन्तरादि के द्वारा किए गये भयानक उपद्रव से विचलित नहीं होता, इस प्रकार से जो वह अनियत समय तक उस बाधा को सहता है। यह उसका शय्या परीषह पर विजय प्राप्त करना है।

शय्यापरीषहजय **Śayyā parīśahajaya**

देखें, शय्यापरीषहक्षमा

शय्यापरीषह सहन **Śayyā parīṣaha sahana**

देखें, शय्यापरीषहक्षमा

शय्यासंस्तर विवेक **Śayyā saṃstara viveka**

जिस वसति में पहले निवास किया है उसमें न रहना, अथवा जिस बिछौने पर पहले सोया है, उस पर न सोना; यह कायिक शय्यासंस्तर विवेक कहलाता है तथा संस्तर को मैं छोड़ता हूँ, इस प्रकार वचन से कहना।

शय्यासहन **Śayyā sahana**

देखें, शय्यापरीषहक्षमा

शरीर **Śarīra**

(1) विशिष्ट नामकर्म से जो अस्तित्व में आकर शीर्ण होता है—गलता है—उसका नाम शरीर है।

(2) अनन्तानन्त पुद्गल परमाणुओं का समूह।

(3) भोगों का स्थान या आधार

शरीरनाम कर्म **Śarīra nāma karma**

(1) जिसके उदय से आत्मा के शरीर की रचना होती है।

(2) जिसके उदय से आहारवर्गणा के पुद्गलस्कंध तथा तैजस और कार्मण वर्गणा के पुद्गलस्कंध शरीरयोग्य परिणामों से परिणत होकर जीव के साथ संबंध को प्राप्त होते हैं, वह पुद्गलस्कंध।

शरीरनिवृतिस्थान **Śarīra nivṛttisthāna**

शरीर पर्याप्ति से पर्याय निर्वृत्ति।

शरीरपर्याप्ति **Śarīra paryāpti**

(1) तिलों के खलभाग के समान खलभागरूप से परिणत पुद्गलस्कंधों को अस्थि (हड्डी) आदि स्थिर अवयवों स्वरूप से तथा तैल समान रसभाग को रस, रुधिर और वीर्य आदि द्रवरूप अवयवों के द्वारा औदारिक आदि तीन शरीर रूप परिणमन की शक्ति से युक्त स्कंधों की जो प्राप्ति होती है उसे शरीरपर्याप्ति कहते हैं।

(2) रस की जो सात धातुओं स्वरूप परिणत होने की शक्ति है उसका नाम शरीर पर्याप्ति है।

शरीरबंध **Śarīrabaṅdha**

पाँच शरीरों का परस्पर बंध

शरीरबंधन नामकर्म **Śarīra-baṅdhana-nāmakarma**

पूर्वबद्ध और वर्तमान में बाँधें जाने वाले औदारिक आदि शरीरगत पुद्गलों के संबंध का कारणरूप नामकर्म।

शरीरवकुश **Śarīravakuśa**

(1) शरीर संस्कार सेवी मुनि।

(2) शरीर में तेल लगाना, मर्दन करना, प्रक्षालन करना तथा विलेपनादि संस्कार भागी।

शरीरविवेक **Śarīraviveka**

शरीर यदि किसी प्रकार के उपद्रव से ग्रसित है तो अपने शरीर के द्वारा उसका प्रतीकार न करना, उपद्रव करने वाला जो कोई मनुष्य, तिर्यंच अथवा देव हो उसे मेरे ऊपर उपद्रव न करो, इस अभिप्राय के

वश हाथ से न रोकना, डाँस, मच्छर, सर्प व कुत्ता आदि को हाथ से व पीछी आदि उपकरण से अथवा लकड़ी आदि के द्वारा नहीं हटाना, छत्र, पीछी अथवा चटाई आदि ओढ़नी के द्वारा शरीर की रक्षा न करना रूप कायिक विवेक है।

मेरे शरीर को पीड़ित न करो, इस प्रकार का अथवा मेरी रक्षा करो, इस प्रकार का वचन न बोलना तथा यह शरीर भिन्न, अचेतन एवं सुख दु:ख के संवेदन की विशेषता से रहित है, इस प्रकार कहने रूप वाचनिक शरीरविवेक है।

शरीरसंघातनामकर्म **Śarīrasaṅghātanāmakarma**

उदय को प्राप्त जिन पुद्गलस्कंधों के द्वारा बंधन नामकर्म के उदय से बंध को प्राप्त हुए शरीरगत पुद्गलस्कंधों की मृष्टता (शुद्धि या चिक्कणता) की जाती है उसका नाम।

शरीरसंलेखना **Śarīrasaṃlekhanā**

क्रम से भोजन का त्याग करना।

अपरनाम सल्लेखना।

शरीरांगोपांगनाम **Śarīrāṅgopāṅganāma**

(1) जिस कर्म स्कंध के उदय से शरीर के अंग और उपांगों की उत्पत्ति होती है, उसका नाम।

(2) जिसके उदय से शरीर आदि अंगों और अंगुलि आदि उपांगों का विभाग होता है।

शरीरिबंध **Śarīribandha**

जीव के प्रदेशों का जीव के प्रदेशों के साथ तथा पाँच शरीरों के साथ बंध होना।

शरीरी **Śarīrī**

शरीर जिसके होता है।

शल्य **Śalya**

शरीर में प्रवेश करने वाले बाण आदि जिस प्रकार प्राणी को पीड़ित करते हैं, इसीलिए उन्हें शल्य कहा जाता है उसी प्रकार शारीरिक व मानसिक बाधा के कारण होने से कर्मोदय के माया व मिथ्यात्वादि

रूप विकार को भी शल्य के समान होने से उपचारत: शल्य कहा जाता है।

शाकुनिक **Śākunika**

शकुनवक्ता।

शाटिका **Śaṭikā**

पारियात्र देश में वधूटियों– अल्पवयस्क बहुओं के द्वारा जो पहिनी जाती है।

शांति **Śānti**

(1) कर्मदाहोपशम।

(2) सोलहवें तीर्थंकर का नाम।

शालाकिक **Śālākika**

सलाई के द्वारा आंख की फली आदि को निकाला जाना।

शाश्वतानन्त **Śāśvatānanta**

धर्मादि द्रव्यगत अनन्तता–अविनश्वरता।

शाश्वतासंख्यात **Śāśvatāsaṅkhyāta**

धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय–इन दोनों द्रव्य प्रदेशों का गणना की अपेक्षा एक रूप से अवस्थित होना।

शाश्वतीजिनप्रतिमा **Śāśvatījina pratimā**

किसी के द्वारा निर्मित न होकर अधोलोक, तिर्यग्लोक और ऊर्ध्वलोक में अवस्थित जिनभवनों में विराजमान जिनप्रतिमायें।

शासनदेवता **Śāsanadevatā**

जैनशासन की रक्षा करने वाली देवी।

शास्त्र **Śāstra**

आप्त के द्वारा कहा गया, कुवादियों के द्वारा अखंडनीय, प्रत्यक्ष अनुमान का अविरोधी, वस्तुस्वरूप का यथार्थ उपदेष्टा व समस्त प्राणियों के लिए हितकर कथन करने वाला।

शास्त्रदान **Śāstradāna**

स्वयं लिखकर अथवा अन्य से लिखाकर साधुओं के लिए शास्त्र देना।

शास्य Śāsya

शिष्य।

शिक्ष Śikṣa

शैक्ष्य।

शिक्षा Śikṣā

श्रुताध्ययन।

शिक्षाव्रत Śikṣāvrata

शिक्षा का अर्थ अभ्यास अथवा विद्या का ग्रहण है, शिक्षा के लिए अथवा शिक्षा की प्रधानता से युक्त व्रत का ग्रहण।

शिक्षित Śikṣita

आचार्यादि के समीप शिक्षा ग्रहण किया हुआ।

शिखाच्छेदी Śikhācchedi

ज्ञान रूप तलवार के द्वारा संसार रूपी शिखा को नष्ट करने वाला। इस परिभाषा के अनुसार शिर की शिखा को मुंडाकर मुण्डितमस्तक हुए व्यक्ति को यथार्थत: शिखाच्छेदी नहीं कहा जा सकता।

शिर:प्रकंपित दोष Śiraḥprakampita-doṣa

कायोत्सर्ग में स्थित होकर शिर कंपन करना।

शिलासंस्तर Śilāsaṃstara

प्रकाश में अवस्थित क्षपक के योग्य शिलामय संस्तर।

शिल्पकर्मार्य Śilpakarmārya

धोबी, नाई, लुहार और सुनार आदि।

शिव Śiva

अतिशय कल्याणकारक, शान्त, अविनश्वर मुक्ति पद को प्राप्त करने वाला।

शिष्टत्व Śiṣṭatva

(1) अभीष्ट सिद्धांत के अर्थ का प्रतिपादक।

(2) वक्ता की शिष्टता का सूचक।

शिष्टि Śiṣṭi

आगम के अनुसार गण को शिक्षा देना।

शिष्य Śiṣya

मेरे लिए हितकर क्या है, इसका विचार करने वाला, दु:ख से अतिशय भयभीत, सुख का अभिलाषी, श्रवण आदि बुद्धि के वैभव– सुश्रूषा, ग्रहण, धारण, ऊह, अपोह, अर्थविज्ञान और तत्त्वविज्ञान से संयुक्त, सुनकर व विचारकर युक्ति व आगम से सिद्ध सुखकर दयामयधर्म को ग्रहण करने वाला, आग्रह रहित गुरुभक्त, संसार से भयभीत, विनीत, धर्मात्मा, बुद्धिमान, शान्तचित्त, आलसरहित, शिष्टाचार परिपालक भव्य।

शीतनामकर्म Śītanāmakarma

जिस नामकर्म के उदय से शरीरगत पुद्गलों में शीतलता हो।

शीतपरीषहजय Śītaparīṣahajaya

वस्त्रादिरूप आवरण का परित्याग कर पक्षी के समान अनिश्चित स्थान रखना, वृक्ष के मूल में, मार्ग में या शिलातल पर बर्फ के गिरने व शीत हवा के चलने पर उसके प्रतीकार की कारणभूत अग्नि आदि वस्तुओं का स्मरण नहीं करना तथा ज्ञान भावना रूप गर्भगृह में रहना।

शीतयोनि Śītayoni

शीत स्पर्श से युक्त योनिप्रदेश।

शीतल Śītala

दसवें तीर्थंकर का नाम।

शीतवेदना Śītavedanā

ठंड से उत्पन्न होने वाला दु:ख।

शीर्षप्रकंपित Śīrṣaprakampita

देखें, शिर:प्रकंपित।

शीर्षोत्कंपितदोष Śīrṣotkampita-doṣa

भूताविष्ट के समान कायोत्सर्ग में शिर को कँपाते हुए स्थित होना।

शील Śīla

(1) अहिंसा आदि व्रतों के परिपालन के निमित्तभूत क्रोध आदि का परित्याग।

(2) व्रतों की रक्षा।

(3) ब्रह्मचर्य अथवा समाधि।

शीलव्रतेष्वनतिचार **Śīlavrateṣvanaticāra**

1. अहिंसा आदि व्रतों और उनके संरक्षण के कारणभूत क्रोधकषाय आदि के परित्याग आदि रूप शीलों के विषय में निर्दोष प्रवृत्ति।
2. तीर्थंकर प्रकृति के बंध का एक प्रकार।

शुक्र **Śukra**

मज्जा से उत्पन्न धातु।

शुक्ल ध्यान **Śukla dhyāna**

(1) पवित्रता रूप गुण के संयोग से युक्त ध्यान।

(2) संक्लेश रहित परिणाम।

(3) आठ प्रकार के कर्मरूप रज को शुद्ध करने वाला ध्यान।

शुक्ललेश्या **Śukla-leśyā**

इसके लक्षण ये हैं– पक्षपात न करना, निदान न करना, समस्त प्राणियों में समताभाव रखना, रागद्वेष तथा मोह से रहित होना, समस्त सावद्य कार्यों व आरंभादि से उदासीनता, श्रेयोमार्गानुष्ठान शमभाव से युक्त होना इत्यादि।

शुक्लवर्ण-नामकर्म **Śukla varṇa nāmakarma**

एक प्रकार का नाम कर्म। जिस के उदय से शरीरगत पुद्गलों में शुक्लवर्ण उत्पन्न हो।

शुचि **Śuci**

जिस का मन शुद्ध हो।

शुद्ध **Śuddha**

(1) मिथ्यात्व, रागादि समस्त विभाव से रहितता।

(2) द्रव्य तथा भाव कर्मों के अभाव से परमविशुद्धि समन्वितता।

(3) मनःशुद्धि से युक्त।

शुद्धकोपहित **Śuddhakopahita**

(1) शुद्ध तथा निष्पाप अन्न से उपहित शाक व्यंजनादि।

(2) शुद्ध जल से उपहित भात आदि।

शुद्धगोवहित **Śuddhagovahita**

देखें, शुद्धकोपहित।

शुद्धचेतना **Śuddhacetanā**

(1) जीव की ज्ञानानुभूतिलक्षणा शुद्धचेतना।

(2) आत्मतत्त्व।

शुद्धद्रव्यार्थपर्यायनैगम **Śuddha dravyārtha paryāya naigama**

संसार में सुख, सत्क्षणिक व शुद्ध हैं, इस प्रकार का कथन नय विशेष के अनुसार करना।

शुद्धद्रव्यार्थिकनय **Śuddha dravyārthika naya**

(1) कर्मोपधि निरपेक्ष नय, जैसे संसारी जीव सिद्ध के समान शुद्धात्मा है।

(2) पर्याय रूप मलकलंक से रहित होकर द्रव्य को ही प्रमुखता से विषय करने वाला नय।

शुद्धद्रव्यार्थिक संग्रह **Śuddha dravyārthika saṅgraha**

पर्याय को विषय न करके सत्ता आदि के द्वारा सब के द्वैत के अभाव स्वरूप एकत्व को विषय करने वाला नय।

शुद्धध्यान **Śuddhadhyāna**

रागादि संतान के नष्ट हो जाने पर एवं अन्तरात्मा के प्रसन्न होने पर आत्मस्वरूप की प्राप्ति होना।

शुद्धनय **Śuddhanaya**

सत्ताग्राहक नय।

शुद्धपरिहार **Śuddhaparihāra**

विशुद्धि को प्राप्त होकर पंचयामधर्म को करना।

शुद्धपर्यायार्थिक नय **Śuddha paryāyārthika naya**

सत्ता को गौण करके उत्पादव्ययस्वरूप अनित्य शुद्धद्रव्य को विषय करने वाला नय। जैसे पर्याय प्रत्येक समय नष्ट होने वाली है।

शुद्धसंग्रह **Śuddha-Saṅgraha**

सत्ता सामान्य को विषय करनेवाला नय।

शुद्धसंप्रयोग **Śuddha-Saṅprayoga**

सिद्धि के कारणभूत अरहन्त आदि परमेष्ठियों के विषय में गुणानुरागरूप भक्ति से अनुरंजित मन का व्यापार।

शुद्धात्मा **Śuddhātmā**

मानदंड आदि तीन प्रकार के दंड, आकुलता, ममता, शरीर, परावलंबन, राग–द्वेष, मूढ़ता, भय, परिग्रह, राग, शल्य, काम, क्रोध, मान और मद– इन सभी दोषों से रहित आत्मा।

शुद्धि **Śuddhi**

(1) चित्त–प्रसाद–लक्षणा मनोभूमि।

(2) ज्ञानावरण, दर्शनावरण से रहित अमल ज्ञान और दर्शन की आविर्भूति।

(3) समस्त कर्मों का अपाय।

शुद्धोपयोग श्रमण **Śuddhopayogaśramaṇa**

पदार्थों के प्ररूपक (परमागम) सूत्र को भलीभाँति जानने वाला, तप व संयम से संयुक्त तथा सुख–दुःख में समान रहने वाला श्रमण।

शुभकाययोग **Śubhakāyayoga**

अहिंसा, अस्तेय व ब्रह्मचर्यादि का परिपालन।

शुभचर्या **Śubhacaryā**

श्रमणावस्था में अरहंत आदि में गुणानुरागरूप भक्ति से आचार्य, उपाध्याय व साधु के विषय में वात्सल्यभाव।

शुभतैजससमुद्घात **Śubha taijasa samudghāta**

लोक को व्याधि व दुर्भिक्ष से पीड़ित देखकर जिस महर्षि के दयाभाव उत्पन्न हुआ है तथा जो उत्कृष्ट संयम का परिपालन करने वाला है उसके मूल शरीर को न छोड़कर दाहिने कंधे से जो बारह योजन लंबा और सूच्यंगुल के संख्यातवें भाग प्रमाण मूल विस्तार वाला व नौ योजन प्रमाण अग्र विस्तार वाला पुरुष निकल करके दक्षिण–प्रदक्षिण क्रम से युक्त व्याधि व दुर्भिक्ष आदि को दूर करता हुआ फिर अपने स्थान में प्रविष्ट हो जाता है उसे शुभ तैजससमुद्घात कहा जाता है।

शुभध्यान **Śubhadhyāna**

(1) रागद्वेष से सर्वथा रहित होकर अतिशय विशुद्धि को प्राप्त बाहरी संकल्प से रहित, धीर एवं एकाग्र मन वाले के द्वारा किया गया चिंतन।

(2) समत्व भाव से रहित अपने स्वरूप का आभास करने वाले एवं इंद्रियजयी साधु का एकाग्र चिंतन रूप विचार।

शुभनाम **Śubhanāma**

रमणीय शरीर का उत्पादक नामकर्म

शुभमनोयोग **Śubhamanoyoga**

अर्हदादि भक्ति, तपोरुचि, श्रुतविनयादि।

शुभयोग **Śubhayoga**

शुभ परिणामों से निष्पन्न योग।

शुभवाग्योग **Śubhavāgyoga**

सत्य–हित–मित भाषणादि।

शुभास्रव **Śubhāsrava**

मन, वचन और काय की शुभ क्रिया।

शुभोपयोग **Śubhopayoga**

जो जीव जिनेंद्रों को जानता है, सिद्धों व गृह–त्यागी मुनियों को देखता है– उन पर श्रद्धा रखता है तथा समस्त जीवों के विषय में दयालुता का व्यवहार करता है, उसका इस प्रकार का उपयोग।

शुषिर **Śuṣirā**

बाँस, काहल व शंख आदि से उत्पन्न शब्द।

शुश्रूषा **Śuśūṣa**

गुरु के आदेश को सुनने की इच्छा अर्थात् गुरु आदि की वैयावृत्ति।

शूद्र **Śūdra**

शिल्प आदि कार्यों को करने वाला।

शून्यध्यान **Śūnyadhyāna**

जिस ध्यान में ध्यान, ध्येय और ध्याता का कुछ भेद नही रहता, चिंतन भी कुछ नहीं रहता है तथा धारणा का विकल्प भी नहीं रहता है।

शून्यवर्गणा **Śūnyavargaṇā**

परमाणु से रहित वर्गणायें

शूर **Śūra**

(1) ललनाओं के नेत्र रूप बाणों से पीड़ित नहीं होने वाला।

(2) इंद्रियजयी।

शृंखलित दोष **Śṛṅkhalita doṣa**

सांकल से बँधे हुए के समान पाँवों को करके कायोत्सर्ग में स्थित होना।

शृंग **Śṛṅga**

वंदना का चौबीसवाँ दोष।

'अहो कायं काय:' इस प्रकार आवर्तों का उच्चारण करते हुए मस्तक के मध्य भाग को न छूकर शिर के बायें और दक्षिण सींगों का स्पर्श करते हुए वंदना करना।

शेष निस्फोटित **Śeṣanisphotita**

पिता, माता, गुरु और महत्तर आदि की अनुज्ञा के बिना ही दीक्षा के ग्रहण का इच्छुक।

शैक्ष **Śaikṣa**

(1) शिक्षा ग्रहण करने के स्वभाव से युक्त।

(2) जिसे दीक्षा ग्रहण किए हुए अभी थोड़ा ही समय बीता है तथा जो शिक्षा के योग्य है।

शैल कर्म **Śailakarma**

पृथग्भूत शिलाओं में अथवा उखाड़ी गई शिलाओं में अरहन्त आदि पाँच लोकपालों की प्रतिमायें उत्कीर्ण किया जाना।

शैलेशी **Śaileśī**

(1) शैलेश अर्थात् मेरु के समान निश्चलता को प्राप्त होना।

(2) शैल के समान स्थिर ऋषि।

(3) समस्त गुण-शीलों का एकाधिपत्य।

शैलेश्य **Śaileśya**

देखें, शैलेशी।

25—416 Min. of HRD/2014

शैव **Śaiva**

कर्म की उपाधि से रहित रूप।

शोक **Śoka**

(1) अनुग्राहक संबंध का विच्छेद होने पर होने वाली विकलता।

(2) अपने इष्टजनों का वियोग होने पर होनेवाला दु:खोत्कर्ष।

(3) चेतनाचेतनोपकारक वस्तु का संबंध विनष्ट होने पर होनेवाली विकलता।

शोक मोहनीय **Śoka mohānīya**

प्रियवियोगादि होने पर वक्षस्थल पीटना, आक्रन्दन करना, रोना, भूमि पर लोटना, दीर्घ नि:श्वास लेना आदि जिस कर्म के उदय से हों।

शौच **Śauca**

(1) कांक्षाभाव को छोड़कर वैराग्य भाव से युक्त होना।

(2) लोभ के हट जाने पर होनेवाली निर्मलता।

(3) द्रव्य से निर्लेपता तथा भाव से निर्दोष आचरण।

(4) आचार शुद्धि।

(5) संयम के प्रति निरुपलेपता।

(6) परवस्तुओं के प्रति अनिष्टप्रणिधान से उपराम।

शौंडिक **Śauṇḍika**

मद्य व्यवसायी।

शौभिक **Śaubhika**

रात्रि में कांडपट के आवरण से अनेक रूपों को देखने वाला।

शौषिर **Śauṣira**

देखें, सुषिर।

श्रद्धा **Śraddhā**

(1) मिथ्यात्वमोहनीय कर्म के क्षयोपशमादि से जन्य चित्त की प्रसादजननी।

(2) सद्गुरु के उपदेश से विज्ञात पदार्थ में रुचि।

(3) संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय से रहित प्रतीति।

(4) तत्त्वार्थाभिमुखी बुद्धि।

श्रद्धानप्रायश्चित्त **Śraddhāna prāyaścitta**

(1) मिथ्यात्व को प्राप्त हुए जीव का महाव्रतों को ग्रहण कर आप्त, आगम और पदार्थों का श्रद्धानन करना।

(2) परिणाम के निमित्त से सम्यक्त्व को छोड़कर मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ जीव परिणाम के वश फिर से निंदा व गर्हा से युक्त होकर उस मिथ्यात्व से हटता है और सम्यक्त्व को स्वीकार करता है उसका यह श्रद्धान नामक प्रायश्चित्त है।

श्रमण **Śramaṇa**

(1) पंच समिति से संपन्न, तीन गुप्तियों से संरक्षित, पांच इन्द्रियों से संवृत, कषायों का विजेता, दर्शन-ज्ञान से परिपूर्ण, शत्रु व मित्र में समानता का व्यवहार करने वाला, सुख-दुःख में हर्ष-विषाद से रहित, प्रशंसा व निंदा में समान, ढेले व कांच को समान समझने वाला तथा जीवन व मरण में समान रहनेवाला संयत।

(2) शरीरादि के विषय में प्रतिबंध से रहित और निदान से भी रहित होकर आदान सावद्य अनुष्ठान, प्राणातिपात, असत्य वचन, मैथुन,परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेम और द्वेष इत्यादि जो स्व व पर के लिए अनर्थकारी हैं उन सबका ज्ञ-परिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग करता है, इसके अतिरिक्त अनर्थ के हेतुभूत जिस सावद्य अनुष्ठान से अपने अपाय व प्रद्वेष के कारणों को भी देखता है, उससे विरत हो: इस प्रकार जो दांत (शुद्ध) द्रव्यस्वरूप व शरीर से निस्पृह हो चुका है, उसे श्रमण कहते हैं।

(3) जो श्रम करते हैं, बाह्य और आभ्यन्तर तप तपते हैं, ऐसे ध्यानपरायण ऋषि।

(4) जो भ्रमण से थकते नहीं हैं।

श्रमणाभास **Śramaṇābbāsa**

जो आगम का ज्ञाता भी है, संयत भी है तथा जिनोपदिष्ट अनन्त पदार्थों

से व्याप्त लोक को ज्ञेय स्वरूप से जानता भी है, परन्तु जो आत्मा की प्रधानता से लोक का श्रद्धान नहीं करता।

श्रस्तदर्शन **Śrastadarśana**

ऐसा अन्तरालवर्ती जीव जो अनंतानुबंधी कषाय के उदय में आ जाने पर प्रथम सम्यक्त्व से भ्रष्ट हो चुका है तथा मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं हुआ है।

श्राद्ध **Śrāddha**

साधु के लिए दान देने वाला इच्छित फल को प्राप्त करता है, ऐसी जिस दाता के श्रद्धा है।

श्रावक **Śrāvaka**

(1) अणुव्रतादि बारह प्रकार के व्रतों का पालन करता है, वह चाहे ब्राह्मण, शूद्र कोई भी हो, श्रावक कहलाता है।

(2) मूल तथा उत्तर गुणों के प्रति निष्ठावान, पाँच गुरुओं की शरण लेने वाला, दान तथा यजन प्रधान एवं ज्ञानामृत का पिपासु।

(3) जो मद्य, मांस एवं मधु का परित्यागी है तथा पाँच उदुम्बर फलों का परित्यागी है, वह नाम से श्रावक है, अन्यथा नाम से भी श्रावक नहीं है।

(4) जो गुरु आदि से धर्म सुने।

श्रावकधर्म **Śrāvaka dharma**

अणुव्रतादि स्वरूप धर्म।

श्राविका **Śrāvikā**

अपनी शक्ति के अनुसार मूल और उत्तर गुणों को धारण करनेवाली उपासिका।

श्रीमान् **Śrīmān**

अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी जिसके हो, वे जिन भगवान्।

श्रुतकेवली **Śrutakevalī**

(1) श्रुत के द्वारा केवल (असहायक) शुद्ध आत्मा को जानने वाला।

(2) समस्त श्रुतज्ञान को जानने वाला।

श्रुतज्ञान **Śrutajñāna**

देखें, श्रुत।

श्रुतधर्म **Śrutadharma**

श्रुत का धर्म–स्वभाव

श्रुतमानवशार्त्तमरण **Śrutmānavasārtta maraṇa**

लोक, वेद और स्व–समय एवं परसमय संबंधी आगम ग्रंथों से उन्मत्त हुए पुरुष का मरण।

श्रुतवर्णजनन **Śrutavarṇa janana**

श्रुतज्ञान केवलज्ञान के समान समस्त जीवादि द्रव्यों के यथार्थ स्वरूप को प्रकाशित करने में समर्थ, कर्म के निर्मूलन में उद्यत उत्तम ध्यान रूप चंदन के लिए मलय पर्वत के समान, अपने व दूसरों के उद्धार में निरत, शिष्य जन को अभीष्ट, अशुभ आस्रव का निरोधक, प्रमाद को नष्ट करने वाला, सकल और विकल प्रत्यक्षज्ञान का उत्पादक तथा समीचीन दर्शन एवं चारित्र का प्रवर्तक है; इत्यादि प्रकार से श्रुत की महिमा को प्रकट करना।

श्रुतविनय **Śrutavinaya**

सूत्रग्रहण, अर्थश्रावण, हितप्रदान और नि:शेषवाचन के भेद से श्रुतविनय चार प्रकार का है। उन्मुक्त होकर शिष्य को सूत्र का ग्रहण कराना, यह सूत्रग्रहण विनय है। प्रयत्नपूर्वक जो अर्थ को सुनाया जाता है, उसे अर्थश्रवण विनय कहते हैं। जिसके लिए जो योग्य है उसके लिए सूत्र व अर्थ से उसी को जो दिया जाता है, इसका नाम हितप्रदान विनय है। समाप्ति पर्यंत जो वाचन किया जाता है, उसे नि:शेषवाचन विनय कहते है।

श्रुतस्थविर **Śruta-sthavira**

(1) समवायांग के धारक साधु।

(2) स्थानांग व समवायांग अंगों का धारक साधु।

श्रुताज्ञान **Śrutājñāna**

चौरशास्त्र, हिंसाशास्त्र आदि के निरर्थक उपदेश।

श्रुतातिचार **Śrutāticāra**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शुद्धि के बिना श्रुत पढ़ने से उसका अतिचार होना।

श्रुतावर्णवाद **Śrutāvarṇavāda**

(1) मांस का खाना, शहद (मधु) का उपयोग करना, मद्य का पीना, वेदना से पीड़ित होकर मैथुन का सेवन करना और रात्रिभोजन को शास्त्रसम्मत बतलाना श्रुत का अवर्णवाद है।

(2) श्रुत की निंदा करना।

श्रुति **Śruti**

धर्म का सुनना अथवा जो कुछ सुना जाता है वह सब श्रुति है।

श्रेणी **Śreṇī**

(1) लोक के मध्य से आरम्भ करके ऊपर, नीचे और तिरछे रूप में क्रम से अवस्थित आकाशप्रदेशों की पंक्ति। यह सात राजु प्रमाण है।

(2) पल्य के अर्धच्छेदों के असंख्यातवें भाग प्रमाण घनांगुलों को परस्पर गुणित करने पर जो प्राप्त हो, उतना प्रमाण श्रेणी (जनश्रेणी) का है।

श्रेणीचारण **Śreṇīcāraṇa**

(1) धुआँ, अग्नि, पर्वत, वृक्ष और तन्तु के समूहों पर ऊपर चढ़ने की शक्ति से संयुक्त महर्षि।

(2) चार सौ योजन ऊँचे निषध पर्वत की टांकी से छेदी गई श्रेणी को लेकर जो साधु उसके ऊपर और नीचे पादक्षेपपूर्वक चढ़-उतर सकते हैं, वे श्रेणिचारण ऋद्धि के धारक होते हैं।

श्रेय **Śreya**

समस्त दु:खों से निवृत्ति।

श्रेयांस **Śreyānsa**

समस्त लोक में श्रेष्ठ, दोनों कंधे जिनके श्रेयस्कर थे अथवा गर्भ में स्थित होने पर देवता द्वारा अधिष्ठित जो शय्या पूर्व में किसी के

द्वारा नहीं लांघी गई थी, उसे माता ने आक्रान्त किया व उससे कल्याण हुआ, इससे जो श्रेयांस कहलाए, वे ग्यारहवें तीर्थंकर।

श्रेयोमार्गनेता **Śreyomārganetā**

समस्त तत्त्वार्थ के ज्ञाता व कलुषता से रहित वीतरागी।

श्रेष्ठी **Śreṣṭhī**

संतुष्ट राजा द्वारा दिए गए और श्री देवता से अधिष्ठित सुवर्णमय पट्ट से विभूषित एवं नगर की चिंता करने वाला नागरिक जनों में श्रेष्ठ व्यक्ति।

श्रोता **Śrotā**

धर्मकथा के सुनने में नियुक्त।

श्रोत्र **Śrotra**

वीर्यान्तराय और श्रोत्रेन्द्रियावरण के क्षयोपशम तथा अंगोपांग नामकर्म के आश्रय से जिसके द्वारा प्राणी सुनता है।

श्रोत्ररोध **Śrotrarodha**

(1) षड्ज व ऋषभ आदि स्वर स्वरूप जीव के शब्द और वीणा आदि अजीव स्वरूप वादित्र आदि के निमित्त से उत्पन्न होने वाले शब्द के आश्रय से जो उसके विषय में राग–द्वेष उत्पन्न हो सकते हैं उनको उत्पन्न न होने देना।

(2) जीव, अजीव, अथवा दोनों के निमित्त से उत्पन्न हुए मनोहर अथवा अमनोहर (श्रवणकटु) स्वर के विषय में राग–द्वेष से मलिन मन को दंडित करना–उसके सुनने पर राग–द्वेष को उत्पन्न न होने देना।

श्रोत्रिय **Śrotriya**

(1) दुराचरण से दूर रहने वाला, सब जीवों का हितैषी।

(2) स्त्री के कटिस्रोत से दूर रहनेवाला।

श्रोत्रेंद्रियार्थावग्रह **Śrotrendriyārthāvagraha**

यवनाली के आकार में स्थित श्रोत्र इन्द्रिय के आश्रय से होने वाला अर्थावग्रह संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों में उत्कृष्ट बारह योजन प्रमाण

तथा असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों में आठ हजार धनुष प्रमाण क्षेत्र को विषय करता है। इतने क्षेत्र के मध्य में स्थित शब्दों का ग्रहण।

श्रोत्रेंद्रियार्थावग्रहावरणीय **Śrotrendriyārthāvagrahāvaranīya**

श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह को आच्छादित करने वाला कर्म।

श्रोत्रेंद्रियेहाज्ञान **Śrotrendriyehājñāna**

श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा ग्रहण किया गया शब्द क्या नित्य है, क्या अनित्य है, क्या द्विस्वभाव है, अथवा अद्विस्वभाव है– इन चार विकल्पों में से किसी एक विकल्प के हेतु का अन्वेषण करने वाला ज्ञान।

श्रोत्रेंद्रियेहाज्ञानावरणीय **Śrotrendriyehājñānāvaraṇīya**

श्रोत्र इन्द्रियजन्य ईहाज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

श्लक्ष्ण श्लक्ष्णिका **Ślakṣṇa ślakṣṇikā**

आठ उच्छ्लक्ष्ण श्लक्ष्णिकाओं की एक श्लक्ष्ण–श्लक्ष्णिका होती है।

श्लेषार्द्र **Śleṣārdra**

स्तम्भ व भित्ति आदि जो द्रव्य वज्रलेप आदि से लिप्त होते हैं।

श्वभ्रपूरण **Śvabhrapūraṇa**

जिस प्रकार जिस किसी भी प्रकार से गड्ढे को भरा जाता है, उसी प्रकार से साधु अपने पेट रूप गड्ढे को कचरे के समान स्वादिष्ट अथवा स्वादहीन भोजन से भरा करता है, इसीलिए उसे श्वभ्रपूरण नाम से कहा जाता है।

श्वास **Śvāsa**

बाह्य वायु का आचमन

श्वेतवर्णनामकर्म **Śvetāvarṇanāmakarma**

जिसके उदय से प्राणियों के शरीर में श्वेतवर्ण उत्पन्न होता है, जैसे–विशकण्ठिकों के।

श्वेतसिद्धार्थ **Śvetasiddhārtha**

(1) आठ चिकुराग्रों (बालाग्रों) का एक श्वेतसिद्धार्थ होता है।

(2) समुदित आठ लीखों का एक श्वेतसिद्धार्थ होता है।

षट्खंडागम **Ṣaṭkhaṅdāgama**

जीवट्ठाण, खुद्दाबंध, बंधस्वामित्वविचय, वेदना, वर्गणा और महाबंध इन छह खंडों में विभक्त कर्मसिद्धांत विषयक प्राकृत ग्रंथ।

षट्खंडाधिपति **Ṣaṭakhaṅdādhipati**

छह खंडों वाले भरतक्षेत्र का स्वामी, जिसके आश्रय में 32000 मुकुटबद्ध राजा होते हैं।

षट्स्थानहानि **Ṣaṭsthānahāni**

अनंतभागहानि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि, अनंतगुणहानि, ये छह स्थानपतित हानि के रूप हैं।

षट्स्थानवृद्धि **Ṣaṭsthanavṛddhi**

अनंतभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनंतगुणवृद्धि ये छह स्थानपतित वृद्धि के रूप हैं।

षड्क **Ṣadka**

संख्यातगुणवृद्धि।

षड्जीवकायसंयम **Ṣaḍjīvakāya saṃyama**

पंच स्थावर एवं त्रस जीवों की विराधना का त्याग।

षंढ **Ṣaṅdha**

नारीस्वभाव के समान स्वर एवं वर्णभेद, गुरुतर जननेंद्रिय, मृदुभाषण, शब्द एवं फेन के साथ मूत्र लक्षणों वाला नपुंसक।

षष्ठभक्त **Ṣaṣṭhabhakta**

छठी भोजन बेला में पारणा करना।

षष्ठी प्रतिमा **Ṣaṣṭhī pratimā**

पूर्व पाँच प्रतिमाओं का पालन करने वाला छह माह का ब्रह्मचारी।

सहानवस्थालक्षण विरोध **Sahānavasthālakṣaṇa virodha**

1. पदार्थ का पूर्व में उपलम्भ होने पर पश्चात् अन्य पदार्थ के सद्भाव से उसके अभाव का ज्ञान होने पर क्षेत्रों में देखा गया विरोध।
2. विरोध का एक भेद।

संकट **Saṅkata**

1. अतिशय सूक्ष्म शरीर के प्रमाण में आत्म-प्रदेशों के संकुचित हो जाने के कारण जीव का नाम।
2. इसका नामांतर संकुट भी है।

संक्रम **Saṅkrama**

संक्लेश अथवा विशुद्धिकरण प्रयोग के वश बध्यमान प्रकृति को छोड़कर दूसरी प्रकृति के परमाणुओं को बध्यमान प्रकृति के स्वरूप से परिणमन कराने वाली जीव की प्रकृति।

संक्रमण **Saṅkramaṇa**

1. प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों का अन्यथा स्वरूप से परिणमन कराना।
2. विवक्षित प्रकृति का अन्य प्रकृति में गमन या परिवर्तन होना।

संकर **Saṅkara**

अयोग्य और असंयमी जनों से मिश्रण होना।

संकल्प **Saṅkalpa**

1. हिंसा-अहिंसा के प्रसंग में प्राणियों के घात आदि का विचार करना।
2. चेतन, अचेतन और मिश्र द्रव्यों में यह मेरा है और मैं इसका स्वामी हूँ, इस प्रकार जीव का अभिप्राय विशेष।
3. अभीष्ट स्त्री के प्रति उत्कण्ठा से प्रेरित होने वाला मन का व्यापार।

संकुचित दोष **Saṅkucitadoṣa**

1. वंदना का दोष विशेष।
2. संकुचित हाथों से शिर का स्पर्श करते हुए वंदना करना अथवा घुटनों के बीच में शिर को करके अथवा संकुचित होकर वंदना करना।

संकुट Saṅkuta

देखें, संकट।

संक्लिश्यमरण **Saṅklisaśyamaraṇa**

सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र के विषय में संक्लेश को प्राप्त होते हुए जीव का मरण होना।

संक्लिष्ट **Saṅkliṣṭa**

पूर्व जन्म में संभावित अत्यन्त तीव्र संक्लेश परिणाम से उपार्जित पापकर्म के उदय से निरन्तर संक्लेश को प्राप्त देव (असुरकुमार विशेष)।

संक्लेश **Saṅkleśa**

1. आर्त और रौद्र ध्यान रूप परिणाम।
2. असाता वेदनीय के बंध योग्य परिणाम।

संक्लेशस्थान **Saṅkleśasthan**

असाता, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय आदि परिवर्तमान अशुभ प्रकृतियों के बंध के कारणभूत कषायोदयस्थान।

संक्षेपरुचि **Saṅkṣeparuci**

मिथ्याभाव को ग्रहण नहीं करने वाला तथा जिनप्रणीत आगम में निपुण नहीं होने पर भी कपिलादिरचित आगमों को उपादेय रूप से नहीं मानने वाला जीव।

संख्यात **Saṅkhyāta**

1. पाँच इन्द्रियों को विषय करने वाली संख्या।
2. दो, तीन आदि संख्या।

संख्याप्रमाण **Saṅkhyāpramāṇa**

सौ, हजार इत्यादि द्रव्यों, गुणों का संख्या रूप धर्म।

संख्याभास **Saṅkhyābhāsa**

प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रमाणों से भिन्न प्रत्यक्ष मात्र अथवा प्रत्यक्ष और अनुमान आदि प्रमाणों की संख्या को मानना।

संख्येय **Saṅkhyeya**

देखें, संख्यात।

संगविमुक्ति **Saṅgavimukti**

1. मुनिधर्म के विपरीत वस्तुओं के परित्याग के साथ उनमें आसक्ति नहीं रखना।
2. परिग्रह त्याग महाव्रत का नामांतर।

संग्रह **Saṅgraha**

1. अपनी जाति के विरोध से रहित एकरूपता को प्राप्त करके अनेक भेदों से युक्त पर्यायों को सामान्य रूप से ग्रहण करने वाला नय।

2. घट-पटादि पदार्थों के सामान्यविशेषात्मक होने पर उन्हें एकरूपता में ग्रहण करना।

संग्रहनयाभास **Saṅgrahanayābhāsa**

सत्ता भेदों के निराकरण के कारण एक ब्रह्म ही है, अन्य कुछ नहीं है, इस प्रकार का अभिमत।

संघ **Saṅgha**

1. गुणसमूह।
2. कर्मों का विमोचक।
3. रत्नत्रय से संयुक्त मुनिसमूह।
4. ऋषि, मुनि, यति और अनगार, इन चार वर्णों से युक्त साधु समूह।

संघकरमोचनदोष **Saṅghakaramocanadoṣa**

1. संघ को बलात् वंदना कराने की बुद्धि।
2. वंदना का एक दोष।

संघवैयावृत्य **Saṅghavaiyāvṛtya**

महती आपत्ति में पड़े हुए आचार्य, उपाध्याय एवं साधुओं के समूह की बाधा को दूर करना।

संघात **Saṅghāta**

अलग-अलग परमाणुओं एवं स्कंधों का एकीभाव।

संघात नामकर्म **Saṅghātanāmakarma**

1. नामकर्म का एक भेद।
2. जिसके उदय से औदारिक आदि शरीरों के प्रदेशों में छिद्र रहित एकरूपता होती है।

संघातश्रुत **Saṅghātaśruta**

एक-एक पद के ऊपर एक-एक अक्षर की वृद्धि से क्रमशः संख्यात हजार पद के बढ़ जाने पर होने वाला श्रुतज्ञान।

संघातश्रुतावरणीय **Saṅghātaśrutāvaraṇīya**

संघात श्रुतज्ञान का आवरण करने वाला कर्म।

संज्ञा **Sañjñā**

1. हित-अहित एवं गुण-दोष का विचार।

2. व्यंजनावग्रह के पश्चात् होने वाला विशिष्ट मतिज्ञान।
3. अर्थ का प्रतिपादन करने वाला शब्द-समूह।
4. प्रत्यभिज्ञान।
5. ईहा, अपोह और विमर्श रूप ज्ञान।
6. नोइन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से होने वाला ज्ञान।
7. जीव की आहार ग्रहण आदि रूप परिणति।

संज्ञाक्षर **Sañjñākṣara**

अक्षर की आकृति विशेष।

संज्ञा ज्ञान **Sañjñājñāna**

देखें, संज्ञा।

संज्ञा-संज्ञा **Sañjñā-saṅjñā**

समुदित आठ उत्संज्ञा संज्ञाएं।

संज्ञानी **Sañjñānī**

जीव-अजीव के विभाग को जानने वाला।

संज्ञी **Sañjñī**

1. समनस्क जीव।
2. ईहा, अपोह और विमर्श की क्षमता वाले जीव।

संज्वलन **Saṅjvalana**

1. कषायों का एक भेद।
2. परीषह आदि के उपस्थित होने पर भी जो कषाय चारित्र को प्रकाशित रखती है।

संतान **Santāna**

पूर्वोत्तर काल में रहते हुए भी अतिशय स्वरूप कारण एवं कार्य का संबंध।

संतोषव्रत **Santoṣavrata**

क्षेत्र-वास्तु आदि बाह्य परिग्रह का परिमाण।

संदंश **Sandaṃśa**

कुत्ते आदि के काट लेने पर होने वाला भोजनान्तराय दोष।

संदिग्ध अर्थ **Sandigdha artha**

चलायमान ज्ञान का विषयभूत पदार्थ।

संदिग्धासिद्धहेत्वाभास **Sandigdhāsiddhahetvābhāsa**

स्वरूप में संदेहयुक्त हेतु।

संनिवेश **Sanniveśa**

देश के अधिपति का अवस्थान।

संन्यास **Saṃnyāsa**

अयोग्य को छोड़ना और योग्य को ग्रहण करना।

संपुटमल्लक **Saṃputamallaka**

मध्य में कुंआ और कुंआ के ऊपर वृक्षवाला गाँव।

संप्रत्यय **Saṃprtyaya**

अतद्गुण वस्तु में तद्गुण के रूप में अभिनिवेश।

संप्रच्छनीभाषा **Saṃpracchanībhāṣā**

कारागार में होने वाली वेदना विषयक प्रश्न।

संबंध **Saṃbandha**

पदार्थों में द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से स्वभावतः एकत्व परिणति।

संभव **Saṃbhava**

जैन धर्म के तीसरे तीर्थंकर का नाम।

संभवयोग **Saṃbhavayoga**

इंद्र में मेरु पर्वत को चलायमान करने योग्य सामर्थ्य का होना।

संभावनासत्य **Saṃbhāvanāsatya**

यदि इच्छा करे तो वैसा कर सकता है, इस प्रकार का सत्य।

संभिन्नबुद्धि **Saṃbhinnabuddhi**

श्रोत्रेन्द्रियावरण के क्षयोपशम से एक साथ उच्चारित अक्षर-अनक्षर स्वरूप अनेक शब्दों को सुनने में समर्थ सम्भिन्न श्रोता द्वारा चार अक्षौहिणी भाषाओं के एक साथ बोले गए शब्दों को ग्रहण करने में समर्थ बुद्धि।

संभूतार्थप्रतिषेधवचन **Saṃbhutārthapratiṣedhvacana**

विद्यमान पदार्थ का निषेध करने वाला वचन।

सम्मतिसत्य **Sammatisatya**

इंद्रत्व, नरेंद्रत्व न रहने पर भी साधारण व्यक्ति को इंद्र, नरेंद्र आदि कहना।

सम्मूर्च्छन **Sammūrcchana**

तीनों लोकों के ऊपर, नीचे और तिरछे में जो सब ओर से शरीर की रचना होती है उसे सम्मूर्च्छन जन्म कहते हैं।

सम्मूर्च्छनाकुशील **Sammurchānakuśīla**

1. गर्भ आदि स्थापन करना।
2. वृक्ष के गुच्छों, पुष्पों और फलों की उत्पत्ति को दिखाना।

सम्मूर्च्छिम **Sammūrcchima**

देखें- सम्मूर्च्छन।

सम्मोह **Sammoha**

अत्यंत मूढ़ता।

सम्मोह भावना **Sammohabhāvanā**

कुमार्गस्वरूप मिथ्यादर्शन का उपदेष्टा, सम्यग्दर्शन को दूषित करने वाला तथा रत्नत्रय को मोक्षमार्ग न मानने वाला तथा रत्नत्रय के विरुद्ध आचरण करने वाले की भावना।

संयत **Saṃyata**

पाँच समितियों से संपन्न, त्रिगुप्ति धारक, पंचेन्द्रियविजयी तथा कषायविजयी, दर्शन, ज्ञान चारित्र से पूर्ण।

संयतकायपरावर्तन **Saṃyatakāyaparāvartana**

भूमि के स्पर्श स्वरूप नमस्कारक क्रिया रूप वंदना-मुद्रा को छोड़कर उठते हुए मुक्ता शुक्ति-मुद्रा में तीन बार दोनों हाथों को घुमाना।

संयतमनःपरावर्तन **Saṃyatamanaḥparāvartana**

सामायिक दंड के प्रारंभ में क्रिया विज्ञापन के विकल्प को छोड़कर उसके उच्चारण के प्रति मन को स्थिर करना।

संयतवाक्परावर्तन **Saṃyatavakparāvartana**

"चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि" इत्यादि उच्चारण को छोड़कर 'णमो अरहंताणं' इत्यादि उच्चारण करना।

संयतासंयत **Saṃyatāsaṃyata**

हिंसादिक पाँच पापों से एकदेश विरत होना।

संयतीदोष **Saṃyatīdoṣa**

1. एक प्रकार का दोष।
2. व्रतिनी के समान वस्त्र से शरीर को आच्छादित करके स्थित होना।

संयम **Saṃyama**

1. योगों का निग्रह।
2. विषय कषायों का विश्राम।
3. अशुभ प्रवृत्ति को छोड़ना।
4. व्रतों का धारण, समितियों का पालन, कषायों का निग्रह, अनर्थदंड का त्याग और पंचेन्द्रिय विजय।

संयमधर्म **Saṃyamadharma**

1. दस धर्मों में से एक।
2. देखें, संयम।

संयमविराधना **Saṃyamavirādhanā**

हिंसक प्राणियों के विषय में विकल्प का होना।

संयमस्थान **Saṃyamasthāna**

संयम के लिए किया जाने वाला प्रयास।

संयमासंयम **Saṃyamāsaṃyama**

1. स्थूल हिंसादि से निवृत्ति रूप परिणति।
2. चार प्रकार के स्थावरों के विधान का और दस प्रकार के त्रस जीवों के रक्षण का परिणाम।

संयुक्तद्रव्यसंयोग **Saṃyuktadravyasaṃyoga**

पूर्वसंयुक्त द्रव्य का अन्य द्रव्य के साथ संयोग को प्राप्त होना।

संयुक्ताधिकरण **Saṃyuktādhikaraṇa**

1. अनर्थदंडव्रत का एक अतिचार।
2. जिसके द्वारा जीव दुर्गति में अधिकृत किया जाता है। जैसे-उलूखल से संयुक्त मूसल।

संयोग **Saṃyoga**

पृथग्भूत पदार्थों का मेल

संयोगगति **Saṃyogagati**

बादल, रथ, मूसल आदि की क्रम से वायु, घोड़ा और हाथ आदि के संयोग के निमित्त से होने वाली गति।

संयोजना **Saṃyojanā**

कर्म अथवा उसके फलभूत संसार से संयुक्त कराने वाली कथा।

संलेखना **Saṃlekhanā**

देखें, सल्लेखना।

संवत्सर **Saṃvatsara**

1. दो अयन प्रमाण काल।
2. द्वादश मास प्रमाण काल।

संवर **Saṃvara**

मिथ्यात्व आदि आस्रवों का निरोध।

संवरानुप्रेक्षा **Saṃvarānupreksā**

कर्मों के आने के द्वार को रोकने का बार-बार विचार करना।

संवासानुमति **Saṃvāsānumati**

पापयुक्त आरंभ कार्य में पुत्रादिकों के प्रवृत्त होने पर जो केवल ममत्वभाव से युक्त होता है, पर न तो उसे स्वीकार करता है, न प्रतीकार करता है और न प्रशंसा भी करता है, ऐसी स्थिति।

संविग्न **Saṃvigna**

संसार से भयभीत एवं मोक्ष सुख की अभिलाषा वाला।

संवित्ति **Saṃvitti**

लक्षण के आश्रय से लक्ष्य का अनुभव करते हुए होने वाला सुख।

संवृत **Saṁvṛta**

1. योनि का एक भेद।
2. जन्मस्थान रूप प्रदेश का अच्छी तरह ढका होना।

संवृतबकुश **Saṃvṛtabakuśa**

गुप्त रूप से कार्य करने वाला साधु।

संवृतिसत्य **Saṃvṛtisatya**

लोक में कल्पना से किया जाने वाला वचन व्यवहार।

26—416 Min. of HRD/2014

संवेग **Saṃvega**

1. मोक्ष की अभिलाषा।
2. संसार के दुःखों से भय।
3. धर्म के फल में अत्यंत प्रीति।

संवेजनी कथा **Saṃvejanīkathā**

1. ज्ञान, चारित्र और तप की भावना से प्रकट होने वाली शक्ति का निरूपण करने वाली कथा।
2. पुण्यफल की चर्चा करने वाली कथा।

संव्यवहरण दोष **Saṃvyavaharaṇa Doṣa**

साधु को आहार देने के लिए वस्त्र, वर्तन आदि का बिना देखे शीघ्रता से व्यवहार करने से होने वाला भोजन दोष।

संव्यवहार **Saṃvyavahāra**

प्रवृत्ति-निवृत्ति रूप समीचीन व्यवहार।

संव्यवहारप्रत्यक्ष **Saṃvyavahārapratyakṣa**

इन्द्रिय और मन के आश्रय से होने वाला ज्ञान।

संशय **Saṃśaya**

1. चलात्मक ज्ञान।
2. दो या अधिक पदार्थों में विशेष का निश्चय न होना।

संशयमिथ्यात्व **Saṃśayamithyātva**

1. वस्तुस्वरूप का निश्चय न होना।
2. रत्नत्रय की मोक्षमार्गता में संदेह का होना।

संशयमिथ्यादृष्टि **Saṃśayamithyādṛṣṭi**

देखें, संशय मिथ्यात्व।

संशयवचनीभाषा **Saṃśayavacanībhāṣā**

अस्पष्ट कथन करने वाली भाषा।

संशयित मिथ्यात्व **Saṃśayita mithyātva**

देखें, संशयमिथ्यात्व।

संश्लेषबंध **Saṃśleṣabandha**

1. लाख, काष्ठ आदि का परस्पर संश्लेष।

2. चिक्कण-अचिक्कण और चिक्कण पदार्थों का परस्पर में बंध।

संसक्ततपस्वी **Saṃsaktatapasvī**

आहार, पूजा आदि के लिए रस की आसक्ति के भाव से अनशन आदि तपों को करने वाला।

संसक्तश्रमण **Saṃsaktaśramaṇa**

1. मंत्र, वैद्यक और ज्योतिष आदि से आजीविका चलाने वाला।
2. राजा आदि की सेवा करने वाला।

संसार **Saṃsāra**

कर्म के उदय से अन्य भव की प्राप्ति।

संसारपरीत **Saṃsāraparīta**

सम्यक्त्व आदि के आश्रय से संसार को परिमित कर देने वाला।

संसारापरीत **Saṃsārāparīta**

सम्यक्त्व आदि का आश्रय न लेकर संसार को परिमित नहीं करने वाला।

संसारानुप्रेक्षा **Saṃsārānuprekṣā**

संसार के स्वरूप का विचार करने वाली भावना।

संसारी जीव **Saṃsarī jīva**

चार गतिरूप पर्याय से परिणत होकर सदा उपार्जित कर्म के अनुसार शुभ-अशुभ परिणामों को ग्रहण करने वाला जीव।

संसृति **Saṃsṛti**

पुनः पुनः शरीर के ग्रहण करने से चलने वाली परंपरा।

संस्कार **Saṃskāra**

1. सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष के एक भेद धारणा का पर्यायवाची।
2. कालांतर में विस्मरण न होने देने का कारण।

संस्तार (संस्तारक) **Saṃstāra (Saṃstāraka)**

प्रोषधोपवास को स्वीकार करने वाले गृहस्थ के द्वारा प्रयोग की जाने वाली चटाई अथवा कंबल आदि।

संस्थान **Saṃsthāna**

1. जिसके उदय से औदारिकादि शरीरों का निर्माण हो।
2. आकार विशेष।

संस्थान नामकर्म **Saṃsthānanāmakarma**

देखें, संस्थान।

संस्थान विचय **Saṃsthānavicaya**

1. जिस धर्मध्यान में लोकों का ध्यान किया जाता है।
2. द्रव्य, क्षेत्र और आकार का चिंतन।

संहनन **Saṃhanana**

हड्डियों के बंधन विशेष की रचना करने वाला कर्म।

संहार्यमति **Saṃhāryamati**

असमीचीन आगम प्रक्रिया से विचलित होने वाली बुद्धि।

संहिता **Saṃhitā**

स्खलन के बिना पदों का उच्चारण।

सकल **Sakala**

अखंड होने के कारण केवलज्ञान का अभिधान।

सकलचारित्र **Sakalacāritra**

अपरिग्रही मुनियों का चारित्र।

सकलजिन **Sakalajina**

चार घाति कर्मों का क्षय कर देने वाले सयोगकेवली।

सकलदत्ति **Sakaladatti**

वंश की प्रतिष्ठा के लिए पुत्र को धर्म एवं धन के साथ समस्त परिवार को समर्पित करना।

सकलदेशच्छेद **Sakaladeśaccheda**

निर्विकल्प समाधि रूप सामायिक से पूर्ण रूप से च्युत होना।

सकल परमात्मा **Sakalaparamātmā**

चार घातिया कर्मों से रहित अरहंत परमात्मा।

सकलप्रत्यक्ष **Sakalapratyakṣa**

इंद्रिय एवं प्रकाश की अपेक्षा के बिना युगवद्वृत्ति और व्यवधान से रहित तीन काल के समस्त पदार्थों को विषय बनाने वाला केवलज्ञान।

सकलसंयम **Sakalasaṃyama**

संज्वलन एवं नोकषायों के सर्वघाति स्पर्धकों के उदयाभावी क्षय तथा उन्हीं के सदवस्थारूप उपशम होने पर होने वाला पूर्ण संयम।

सकलादेश **Sakalādeśa**

1. एक गुण की प्रमुखता से समस्त वस्तु को ग्रहण करना।
2. केवल धर्मी का कथन करने वाला वाक्य।
3. सप्तभंगी वाक्य

सकाम निर्जरा **Sakāma nirjarā**

उदय में अप्राप्त कर्मों को प्रयासपूर्वक उदयावली में प्राप्त कराके निर्जीर्ण करना।

सक्त **Sakta**

1. अपने कुटुंबी जन, संबंधी और मित्रों में आसक्त रहने वाला।
2. जीव का पर्यायवाची नाम।

संक्रम **Saṅkrama**

कर्मप्रकृति को बाँधने में परिणत जीव का आत्मपरिणाम (संक्लेश या विशुद्ध) के द्वारा अबध्यमान प्रकृति के द्रव्य को बध्यमान प्रकृति के रूप में परिणमाना अथवा बध्यमान प्रकृतियों का परस्पर परिणमन

संघ **Saṅgha**

1. साधु, साध्वी, श्रावक एवं श्राविकाओं का चतुर्विध संघ।
2. सम्यक्त्व आदि गुणों का समुदाय।
3. गणों का समूह।

सचित्त **Sacitta**

1. जीवसहित पदार्थ।
2. आत्मा के चैतन्य विशेष रूप परिणाम से युक्त।
3. चित्तसहित।

सचित्तक्षेपण **Sacittakṣepaṇa**

1. अतिथिसंविभाग व्रत का एक अतिचार।
2. न देने की इच्छा से भोज्य पदार्थ को सचित्त पृथिवी आदि पर रख देना।

सचित्तगुणयोग **Sacittaguṇayoga**

औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों से जीव का संबंध।

सचित्तचतुष्पदद्रव्योपक्रम **Sacittacatuṣpadadravyopakrama**

सजीव चौपायों के लिए शिक्षा आदि देना।

सचित्तद्रव्यपूजा **Sacittadravyapūja**

जलादि द्रव्यों के द्वारा अरहंत आदि परमेष्ठियों की पूजा।

सचित्तद्रव्यभाव **Sacittadravyabhāva**

केवलज्ञान, दर्शन आदि।

सचित्तद्रव्यवेदना **Sacittadravyavedanā**

सिद्ध जीव द्रव्य।

सचित्तद्रव्य स्पर्शन **Sacittadravyasparśana**

सचित्त द्रव्यों का संयोग।

सचित्त निक्षेपण **Sacitta nikṣepaṇa**

देखें, सचित्तक्षेपण

सचित्त नोकर्मद्रव्यबंधक **Sacitta nokarmadrarva bandhaka**

हाथी, घोड़े आदि पशुओं को बाँधने वाला।

सचित्तपरिग्रह **Sacittaparigraha**

मनुष्य, पशु आदि का संग्रह।

सचित्तपिधान **Sacittapidhāna**

1. अतिथिसंविभाग व्रत का एक अतिचार।
2. देय वस्तु को न देने की इच्छा से सचित्त फल आदि से ढक देना।

सचित्त मंगल **Sacittamaṅgala**

अरहंत आदि का अनादि अनंतजीव द्रव्य।

सचित्तयोनि **Sacittayoni**

जीवों का सचित्त उत्पत्ति स्थान।

सचित्तविरत **Sacittavirata**

कच्चे मूल-फल-शाक-शाखा, करींद-कंद, फूल, बीज को नहीं खाने वाला छठी प्रतिमा धारक श्रावक।

सचित्तसंबंधाहारकत्व **Sacittasambandhāhārakatva**

1. उपभोग परिभोग परिमाण व्रत का एक अतिचार।
2. सचित्त से संबद्ध ककड़ी के बीज, कच्चे बेर, ऊमर और आम्र फल आदि के खाने से होने वाला दोष।

सचित्तसम्मिश्राहार **Sacittasammiśrāhāra**

द्रव्य से मिश्रित आहार।

सचित्तादत्ताधान **Sacittādattādhāna**

1. अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. स्वामी की आज्ञा के बिना खेत आदि से वस्तु का चोरी के विचार से ग्रहण करना।

सचित्तापिधान **Sacittāpidhāna**

देखें- सचित्तपिधान।

सचित्ताहार **Sacittāhāra**

साधारण या प्रत्येक वनस्पति का उपयोग अथवा सचित्त पृथ्वीकायिक आदि का उपयोग।

सच्चारित्र **Saccāritra**

मन-वचन-काय तथा कृत-कारित-अनुमोदना से पापाचरण का त्याग।

सच्छूद्र **Sacchūdra**

जिन शूद्रों में एक ही बार विवाह-प्रथा का प्रचलन है।

सज्जाति **Sajjāti**

1. मनुष्य पर्याय में दीक्षा योग्य कुल में जन्म लेना।
2. विशुद्ध कुल और जाति रूप संपत्ति।

सत् **Sat**

1. उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक द्रव्य।
2. गुण और पर्यायों वाला द्रव्य।

सत्कर्म **Satkarma**

बंध समय से जब तक क्षय को प्राप्त न होने वाला या अन्यथा रूप को प्राप्त न होने वाला अवस्थित कर्म।

सत्कार **Satkāra**

पूजा, प्रतिष्ठा-प्रशंसा रूप आदर-भाव।

सत्कार पुरस्कार **Satkārpuraskāra**

सत्कार के माध्यम से सत्कार प्रदान करना।

सत्कारपुरस्कारपरीषहजय **Satkārapuraskāraparīṣahaja**

सत्कार-पुरस्कार प्राप्त न होने पर दुर्विचारों को स्थान न देना।

सत्ता **Sattā**

सत् का स्वरूप।

सत्ताग्राहकशुद्ध द्रव्यार्थिक **Sattagrāhakaśuddha dravyārthika**

उत्पाद-व्यय को गौण करके मात्र सत्ता ग्राहक शुद्ध नय।

सत्तालोक **Sattāloka**

समस्त हेय-उपादेय भूत पदार्थों में सत्ता सामान्य का निर्विकल्पक ज्ञान।

सत्य **Satya**

1. परसंतापकारी वचन को छोड़कर स्वपरहितकारी वचन।
2. प्रशस्त जनों में व्यवहृत होने वाला वचन।
3. समीचीन अर्थ को विषय बनाने वाला वचन।
4. भ्रांति एवं संदेह से मुक्त वचन।

सत्त्व (जीव) **Sattva (Jiva)**

पापकर्म के उदय से अनेक योनियों में खेद को प्राप्त होने वाले जीवों का सार्थक नाम।

सत्त्व (सत्कर्म) **Sattva (Satkarma)**

1. कर्मों का कर्मस्वरूप से आत्मा के साथ अस्तित्त्व में रहना।
2. वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम आदि से होने वाला आत्मा का परिणाम।
3. तीर्थंकरों के कर्मोदय से होने वाला संहनन आदि में से एक।

सत्त्वपरिगृहीत्व **Sattvaparigrhitatva**

1. वचन का ओज गुण से युक्त होना।
2. वचन के 35 अतिशयों में से 33वां अतिशय।

सत्त्वप्रकृति **Sattvaprkriti**

जिन प्रकृतियों का बंध ही नहीं है, अथवा बंध के होने पर भी, जिन प्रकृतियों का स्थिति सत्त्व के ऊपर बंध संभव नहीं है।

सदृशकृष्टि **Sadṛsakṛsṭi**

उदय में आने वाली अनेक कृष्टियों के एक वर्गणा रूप से परिणत होकर उदय में आना।

सत्यधर्म **Satyadharma**

1. दस धर्मों में एक।
2. देखें- सत्य।

सत्यप्रवाद पूर्व **Satya pravāda pūrva**

1. सत्य के भेद-प्रभेदों का प्रतिपक्ष सहित वर्णन करने वाला एक करोड़ छह पदप्रमाण पूर्व ग्रंथ।
2. सांगोपांग सत्यवचन की प्ररूपणा करने वाला पूर्व।

सत्यमनोयोग **Satyamanoyoga**

समीचीन पदार्थ को विषय करने वाला मन।

सत्यवचनयोग **Satyavacanayoga**

सत्यवचन के आश्रय से होने वाला आत्मप्रदेशों का परिस्पंदन।

सत्यसत्य **Satyasatya**

देश, काल, प्रमाण और आकार में नियत वस्तु के विषय को उसी रूप में यथार्थ वचन द्वारा व्यक्त करना।

सत्याणुव्रत **Satyāṇuvrata**

1. पांच अणुव्रतों में एक।
2. स्थूल असत्य वचन का कृत-कारित-अनुमोदना से त्याग।

सत्यासत्य **Satyāsatya**

सत्य का अपलाप करना। जैसे-उधार ग्रहण किए गए धन को नियत समय पर न देकर कुछ समय पश्चात् देना।

सद्गुरु **Sadguru**

सम्यक्त्व एवं व्रत सहित साधु अथवा उत्कृष्ट श्रावक।

सद्दृष्टि **Saddṛsti**

छह द्रव्य, नौ पदार्थ, पाँच अस्तिकाय और सात तत्त्वों के स्वरूप का श्रद्धान करने वाला।

सद्धर्मकथा **Saddharmakathā**

स्वर्गादि अभ्युदय और मुक्ति के साधनभूत धर्म से संबद्ध कथा।

सद्भावपर्याय **Sadbhāvaparyāya**

सद्भावपर्यायनिमित्तक आदेश से विवक्षित आत्मरूप द्रव्य का द्रव्यत्व।

सद्भावमार्गणा **Sadbavamārgaṇā**

जिस कल्प में परिहारविशुद्धि संयत स्थित है, उसमें किया जाने वाला अन्वेषण।

सद्भावस्थापना **Sadbhāvasthāpanā**

1. प्रतिमा की तदाकार स्थापना।
2. आगमोक्त तदाकारसदृश स्थापना।

सद्भावस्थापनाजिन **Sadbhāvasthāpanājina**

जिनेंद्र देव के आकार में स्थित पाषाण आदि।

सद्भावस्थापना पूजा **Sadbhāvasthāpanāpūjā**

मूर्ति आदि तदाकार वस्तु में गुणों का आरोप।

सद्भावस्थापनाबंध **Sadbhāvasthapanābandha**

काष्ठकर्म आदि में स्वरूप के अनुसार बंध की स्थापना।

सद्भावस्थापनाभाव **Sadbhāvasthapanābhāva**

रागरहित और रागसहित भावों का अनुसरण करने वाली स्थापना।

सद्भावस्थापनावेदना **Sadbhāvasthāpanāvedanā**

प्रायः अनुसरण करने वाले द्रव्य के भेद से इच्छित द्रव्य में की जाने वाली वेदना।

सद्भावस्थापनाव्रत **Sadbhavāsthāpanāvrata**

हिंसाआदि से निवृत्तिपूर्वक सामायिक में परिणति।

सद्भूतनिषेधवचन **Sadbhūtaniṣedhavacana**

विद्यमान पदार्थ का निषेध करने वाला वचन।

सद्वेदनीय **Sadvedanīya**

1. जिस के उदय में देवादि गतियों में शारीरिक और मानसिक सुख की प्राप्ति हो, ऐसा वेदनीय कर्म।
2. जिसका वेदन आह्लाद स्वरूप होता है।

सद्वेद्य **Sadvedya**

देखें- सद्वेदनीय।

सधर्मा **Sadharmā**

क्रिया, मंत्र और व्रत की समानता वाला व्यक्ति।

सधूमभोजन **Sadhūmabhojana**

1. निंदा किये जाते हुए भोजन का साधु के द्वारा ग्रहण किया जाना।

2. एषणा समिति का एक दोष।

सनिरुद्ध कायक्लेश **Saniruddha kāyakleśa**

कायोत्सर्ग में निश्चल रूप से स्थित रहना।

सन्निकर्ष **Sannikarṣa**

1. एक वस्तु में किसी एक धर्म के विवक्षित होने पर शेष धर्मों के उसमें सत्त्व-असत्त्व का विचार करना।
2. एक धर्म के उत्कर्ष को प्राप्त होने पर शेष धर्मों के उत्कर्ष-अनुत्कर्ष का भी विचार करना।

सन्निपात **Sannipāta**

औदयिक एवं औपशमिक आदि दो-तीन आदि भावों का संयोग।

सन्मिश्राहार **Sanmiśrāhāra**

1. भोग-उपभोग परिमाण व्रत का एक अतिचार।
2. सचित्त से मिश्रित आहार।

सपक्ष **Sapakṣa**

साध्य का सजातीय धर्म।

सपृथक्त्व **Sapṛthaktva**

प्रथम शुक्ल ध्यान का द्रव्य से द्रव्यांतर अथवा गुण से गुणांतर या पर्याय से पर्यायांतर प्राप्त होना।

सप्तभंगी **Saptabhangī**

प्रश्नवश एक ही वस्तु में प्रत्यक्ष एवं अनुमान प्रमाण से अविरुद्ध विधि-प्रतिषेध की कल्पना।

सप्तमी प्रतिमा **Saptamī pratimā**

पूर्व की छह प्रतिमाओं का पालन करते हुए सात माह तक सचित्त भोजन का त्याग करना।

सम **Sama**

अपने गुण विभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा रूक्ष पुद्गल के समान स्निग्ध पुद्गल।

समंतानुपातन क्रिया **Samantānupātana kriyā**

स्त्री-पुरुषों आदि के आवागमन के स्थान पर मल आदि का त्याग करना।

समचतुरस्रसंस्थान नामकर्म **Samacaturaśrasaṃsthāna nāmakarma**

1. शरीरगत अवयवों की समान स्थिति वाले चक्र के सदृश विभागों वाली संरचना कराने वाला नाम कर्म।
2. शरीर में सर्वत्र मान, उन्मान एवं प्रमाण को हीनाधिक रहित आकार प्रदान कराने वाला नाम कर्म।

समता **Samatā**

राग-द्वेष के कारणों के उपस्थित रहने पर मध्यस्थ रहना।

समदत्ति **Samadatti**

मध्यम पात्र के लिए आदर-भाव से सुवर्ण आदि प्रदान करना।

समधी **Samadhī**

ममकार और अहंकार से रहित निंदा और स्तुति में समभाव से रहने वाला प्रशस्त व्रतों से युक्त महापुरुष।

समनस्क **Samanaska**

कार्य में करणीय-अकरणीय का विचार करने वाला संज्ञी जीव ।

समपाद **Samapāda**

दोनों पैरों के अंतर के बिना समरूप में स्थापित कर घुटनों और जांघों को सीधा करना।

समभिरूढनय **Samahirūḍhanaya**

अनेक अर्थों को छोड़कर शब्द का प्रमुखता से एक ही अर्थ में रूढ़ होना।

समभिरूढनयाभास **Samahirūḍhanayābhāsa**

पर्याय की भिन्नता के बिना भेद करना।

समय **Samaya**

1. आकाश में स्थित परमाणु को लांघने में लगने वाला काल।
2. टंकोत्कीर्ण चैतन्यस्वभाव वाला जीव।

समयक्षेत्र **Samayakṣetra**

अढ़ाई द्वीप और दो समुद्र पर्यंत क्षेत्र।

समयद्योतक **Samayadyotaka**

वादित्व आदि विशेषताओं से युक्त मोक्ष-मार्ग की प्रभावना करने वाला।

समयप्रबद्ध **Samayaprabaddha**

सिद्धों के अनंतवें भाग प्रमाण और अभव्यों से अनंतगुणी वर्गणाओं के समूह वाला पुद्गल स्कंध।

समयप्रबद्धशेषक **Samayaprabaddhaśeṣaka**

एक समय में बँधे हुए कर्मप्रदेशों का वेदन करने से शेष रहित प्रदेशाग्र और एक समय में उदय आने पर कोई शेष न बचने वाला कर्मप्रदेश।

समयमूढ **Samayamūḍha**

पाषंडी साधुओं को संसार-तारक मानकर उनका सम्मान करने वाला व्यक्ति।

समयविरुद्ध **Samayaviruddha**

अपने मत के विरुद्ध कथन।

समयसत्य **Samayasatya**

आगम द्वारा गम्य छह द्रव्यों और उनकी पर्यायों की यथार्थता को प्रकट करने वाले वचन।

समयिक **Samayika**

1. समीचीन दयापूर्वक जीवों के प्रवर्तन से युक्त साधक।
2. जिनागम के आश्रित रहने वाला गृहस्थ या मुनि।

समयोग **Samayoga**

लोकपूरण समुद्घात में लोक के पूर्ण होने पर लोकप्रमाण जीव प्रदेश।

समवदानकर्म **Samavadānakarma**

1. आगम के अविरोधपूर्वक खंडित या विभाजित किया जाना।
2. मिथ्यात्व, असंयम, योग और कषायों के द्वारा आठ, सात, अथवा छह कर्मों के स्वरूप से होने वाला कर्मों का भेद।

समवर्तित्व **Samavartitva**

1. अनादि-अनंत सहवृत्ति (साथ-साथ रहना)।
2. जैनदर्शन का समवाय संबंध।

समवाय **Samavāya**

1. सभी पदार्थों के समवाय का विचार करने वाला चौथा अंग श्रुत। इसमें जीव, अजीव आदि पदार्थों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है, अतः इसे समवाय कहा

जाता है। सम् का अर्थ सम्यक्, अव का अर्थ अधिकता और अय का अर्थ जानना है।

2. समवृत्ति, अपृथग्भूत और अयुतसिद्ध का पर्यायवाची।

समवायांग **Samavāyāṅga**

देखें- समवाय।

समाचार **Samācāra**

1. शिष्ट जनों द्वारा आचरित क्रिया-कलाप।
2. समता, सम्यक् आचरण, अहिंसा पालन आदि रूप आचरण।

समादान क्रिया **Samādānakriyā**

संयमी तपस्वी की विभूति के प्रति अपूर्व-अपूर्व अभिमुखता।

समादेश **Samādeśa**

निर्ग्रंथ साधुओं के उद्देश्य से तैयार किये गये भोजन से होने वाला एक प्रकार का औद्देशिक दोष।

समाधि **Samādhi**

1. मुनि के व्रत एवं शीलों में और तपश्चरण में आगत विघ्नों को सहन कर उनमें स्थिर रहना।
2. मुनि द्वारा राग-द्वेष के विकल्पों से रहित आत्मस्वरूप में स्थित होना।

समाधिमरण **Samādhimaraṇa**

रत्नत्रय में एकाग्रचित्त होकर प्राणों का परित्याग करना।

समानजातीय द्रव्यपर्याय **Samānajātīyadravyaparyāya**

एक अचेतन से दूसरे अचेतन से संबंध होने पर दो, तीन आदि परमाणु-पुद्गल स्कंध की अवस्था।

समानदत्ति **Samānadatti**

देखें- समदत्ति

समारंभ **Samārambha**

1. हिंसादि क्रिया के साधनों को जुटाना।
2. दूसरों को संताप देने वाले व्यापार का प्रारंभ।

समिताचार **Samitācāra**

1. समीचीन रूप से व्यवस्थित आचार।

2. आगमोक्त विधिपूर्वक आचरण करना।

समिति **Samiti**

1. प्राणियों को पीड़ा से बचाने के लिए भली प्रकार की जाने वाली प्रवृत्ति।
2. जिनागम के अनुसार की जाने वाली चेष्टा।
3. साध्वाचार में पालन की जाने वाली पाँच समितियाँ हैं।

समीचीनदृष्टि वर्णजनन **Samīcīnadṛṣṭivarṇajanana**

मिथ्यात्व को नष्ट करने वाला वचन।

समुच्छिन्नक्रियानिवर्ती **Samucchinnakriyānivartī**

जिस शुक्ल ध्यान में मन-वचन-काय जनित योगों के आश्रय से होने वाला आत्मप्रदेश परिस्पंदन का क्रिया रूप व्यापार नष्ट हो जाता है।

समुच्छेद **Samuccheda**

एक जाति की अविरोधी क्रम से होने वाली अवस्थाओं के समुदाय में पूर्व अवस्था का होने वाला विनाश।

समुत्पत्तिकषाय **Samutpattikaṣāya**

एक जीव, एक नो जीव, बहुत जीव और बहुत नो जीव इत्यादि के आश्रय से उत्पन्न होने वाला क्रोध।

समुत्पाद **Samutpāda**

एक जाति की अविरोधी क्रम से होने वाली अवस्थाओं के समुदाय में अगली अवस्था का प्रादुर्भाव।

समुद्घात **Samudghāta**

1. शरीर से बाहर आत्मप्रदेशों का प्रक्षेप।
2. संभूत होकर आत्मप्रदेशों का शरीर से बाहर जाना।

समुद्देश **Samuddeśa**

1. एक प्रकार का औद्देशिक दोष।
2. पाखंडियों के उद्देश्य से तैयार कराये गये भोजन का दोष।
3. सूत्र की व्याख्या अथवा अर्थ करना।

समुद्देशानुज्ञाचार्य **Samuddeśanujñācārya**

उपदेष्टा गुरु के अभाव में श्रुत का उपदेश देने वाला।

सम्यक् **Samyak**

समस्त द्रव्य-भावों को व्याप्त करने वाला।

सम्यक्चारित्र **Samyakcāritra**

1. मोक्षमार्ग पर आरूढ़ महापुरुषों का राग-द्वेषरहित समभाव।
2. पाँच प्रकार के पापों से निवृत्ति।
3. चारित्रावरण कर्म के क्षय या क्षयोपशम से होने वाली समीचीन क्रियाओं में ज्ञानपूर्वक प्रवृत्ति।

सम्यक्त्व **Samyaktva**

1. पदार्थों का यथार्थ श्रद्धान।
2. देव, शास्त्र, गुरु का श्रद्धान।
3. निश्चय से आत्मा का श्रद्धान।

सम्यक्त्वक्रिया **Samyaktvakriyā**

सम्यक्त्व को बढ़ाने वाली चैत्य, गुरु एवं आगम की पूजा रूप क्रिया।

सम्यक्त्व मिथ्यात्व **Samyaktva-mithyātva**

कुछ अंश में रोक दी गई फलदान शक्ति वाली मिश्रित अवस्था में वर्तमान दर्शनमोहनीय कर्म की प्रकृति।

सम्यक्त्वविनय **Samyaktvavinaya**

निःशंकित आदि गुणों से युक्त सात तत्त्वों का श्रद्धान।

सम्यक्त्ववेदनीय **Samyaktvavedanīya**

जिनेंद्र भगवान द्वारा उपदिष्ट तत्त्वों के श्रद्धान रूप सम्यक्त्व के रूप में वेदन किया जाने वाला दर्शन मोहनीय कर्म।

सम्यक्त्वाराधक **Samyaktvārādhaka**

सर्वज्ञ की आज्ञा के अनुसार छह द्रव्यों का श्रद्धान करने वाला।

सम्यक् श्रद्धान **Samyak śradhāna**

जिनेंद्र भगवान द्वारा निर्दिष्ट तत्त्वों के विषय में उत्पन्न होने वाली रुचि।

सम्यक् श्रुत **Samyak śruta**

सर्वज्ञ द्वारा प्रणीत आचारांग आदि रूप द्वादशांग।

सम्यगनेकांत **Samyaganekānta**

युक्ति और आगम से अविरुद्ध एक वस्तु में अपने विरोधी अनेक धर्मों के साथ निरूपण।

सम्यगाचार **Samyagācāra**

देखें- समिताचार।

सम्यगेकांत **Samyagekaṅta**

युक्ति और प्रमाण के द्वारा प्ररूपित पदार्थ के एकदेशरूप को प्रमुखता से विषय करने वाला।

सम्यग्ज्ञान **Samyagjñāna**

1. संशय, अनध्यवसाय और भ्रांति से रहित ज्ञान।
2. जो पदार्थ जैसा अवस्थित है, उसका वैसा ही ज्ञान।
3. लक्ष्य लक्षण व्यवहार दोष रहित ज्ञानावरण कर्म के क्षय और क्षयोपशम से होने वाला मति श्रुत, आदि रूप ज्ञान।

सम्यग्दर्शन **Samyag ˈarśana**

1. तत्त्वार्थ का श्रद्धान।
2. आप्त, आगम और गुरु का तीन मूढ़ताओं से रहित एवं आठ अंगों सहित श्रद्धान।
3. दर्शनमोह के उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम से होने वाला जीवादि का श्रद्धान।

सम्यग्दर्शन वाक् **Samyagdarśanavāk**

समीचीन मार्ग का उपदेश देने वाला वचन।

सम्यग्दर्शनविनय **Samyagdarśana vinaya**

अर्हंत द्वारा उपदिष्ट धर्म, आचार्य, उपाध्याय एवं साधुओं की आसादना न करके प्रशम, संवेग निर्वेद, अनुकंपा और आस्तिक्य गुणों का आश्रय लेना।

सम्यग्दृष्टि **Samyagdṛṣṭi**

लौकिक श्रुतियों में मुग्ध न होकर जीवादि नव पदार्थों में श्रद्धान करने वाला।

सम्यग्मिथ्यात्व **Samyagmithyātva**

मिथ्यात्व स्वभाव से व्याप्त होकर विशुद्ध व अविशुद्ध श्रद्धान का कारण।

27—416 Min. of HRD/2014

सम्यग्मिथ्यादर्शन **Samyagmithyādarśana**

देखें- सम्यग्मिथ्यात्व।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि **Samyagmithyadṛṣṭi**

कोदों की मादक शक्ति-कुछ क्षीण और कुछ अक्षीण रहने पर जिस प्रकार उसके उपयोग से कुछ अंश में कलुषित परिणाम होता है, कुछ अंश में नहीं, उसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व के उदय से जिस जीव का तत्त्वार्थ के श्रद्धान एवं अश्रद्धान रूप मिश्रित परिणाम होता है, ऐसा जीव।

सयोगकेवली **Sayogakevalī**

1. घातिया कर्मों के क्षय से केवलज्ञान को प्राप्त जीव।
2. सयोगिकेवली का नामांतर।

सयोगिकेवलिकाल **Sayogikevalikāla**

आठ वर्ष और आठ अंतमुहूर्त से कम एक पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण सयोगिकेवली का उत्कृष्ट काल।

सयोगिजिनगुणस्थान **Sayogijinaguṇasthāna**

केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त त्रयोदश गुणस्थानवर्ती जीव।

सयोगिभावस्थ केवलज्ञान **Sayogibhāvasthakevalajñāna**

केवलज्ञान की उत्पत्ति से लेकर शैलेषी अवस्था को प्राप्त करने के बीच रहनेवाला केवलज्ञान।

सरप्रमाण **Sarapramāṇa**

बादर शरीर कलेवर रूप उद्धार से सौ-सौ वर्ष में एक-एक गंगाबालुका कण का अपहार करने पर जितने काल में वह खाली होकर नीरज, निर्लेप और निष्ठित हो जावे, उतने काल का नाम।

सरस्वती **Sarasvatī**

माता के समान हित की शिक्षा देने वाली, कर्ममल को दूर करने वाली और शास्त्र के अर्थ के विचार में कुशल जिनवाणी।

सरःशोष **Saraḥ śoṣa**

तालाब-नदी आदि से जल को निकालना।

सराग **Sarāga**

संसार के कारणों को छोड़ने में उद्यत होने पर भी जिसका रागादि रूप अभिप्राय नष्ट नहीं हुआ है, ऐसा श्रावक।

सरागचर्या **Sarāgacaryā**

1. मुनियों के मूलगुणों और उत्तरगुणों का धारण, व्याख्यान, पांच प्रकार के आचार का परिपालन, भावशुद्धि एवं कायशुद्धि आदि आठ शुद्धियों का निर्वाह और प्रगाढ़ निष्ठा।
2. प्रारंभ की बारह कषायों का क्षयोपशम और संज्वलन एवं नोकषाय के उदय से होने वाला चारित्र।
3. मध्य की आठ कषायों का उपशम और संज्वलन तथा नोकषायों के क्षयोपशम से होने वाला चारित्र।

सराग चारित्र **Sarāga cāritra**

देखें, सरागचर्या।

सराग सम्यक्त्व **Sarāgasamyaktva**

प्रशम, संवेग, अनुकंपा और आस्तिक्य गुणों से उत्पन्न होने वाला तत्त्वार्थ श्रद्धान।

सरागसंयम **Sarāgasaṃyama**

1. सराग का संयम।
2. मूलगुण और उत्तरगुण रूप संपत्ति के साथ लोभादि के उदय के साथ प्राणवध आदि से निवृत्ति।

सर्पमुद्रा **Sarpamudrā**

परस्पर मिली हुई अंगुलियों से युक्त दाहिने हाथ को ऊपर उठाकर साँप के फण के आकार से संकुचित करना।

सर्पिरास्रवी **Sarpirāsravī**

1. वह ऋद्धि जिस के प्रभाव से मुनि-वचन सुनने से जीवों के दुःख शांत हो जाते हैं।
2. वह ऋद्धि जिस के प्रभाव से साधु के हाथ में रखा आहार क्षण भर में घृत रूपता को प्राप्त हो जाता है।

सर्वकांक्षा **Sarvakāṅkṣā**

अन्य संप्रदायों को अधिक क्लेश का प्रतिपादक न मानकर उनकी आकांक्षा करना।

सर्वज्ञ **Sarvajña**

त्रिकालवर्ती गुण पर्यायों सहित समस्त लोकालोक को जानने वाला।

सर्वज्ञानावरण **Sarvajñānāvaraṇa**

केवलज्ञान स्वरूप समस्त ज्ञान को आच्छादित करने वाला कर्म।

सर्वरत्ननिधि **Sarvaratna nidhi**

चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का समूह।

सर्वविपरिणामना **Sarvaviparināmanā**

सर्व निर्जरा से निजीर्ण प्रकृति।

सर्वविरति **Sarvavirati**

स्थूल एवं सूक्ष्म-दोनों प्रकार के पापों का त्याग।

सर्वशंका **Sarvaśaṅkā**

समस्त अस्तिकायों के विषय में शंका रखना।

सर्वसंक्रमण **Sarvasaṅkramaṇa**

अंतिम कांडक की अंतिम फाली के समस्त पिंड प्रदेश का संक्रमण होना।

सर्वस्पर्श **Sarvasparśa**

परमाणु के समान सबको सर्वात्मक रूप से स्पर्श करने वाला द्रव्य।

सर्वानंत **Sarvānaṅta**

घनाकार से देखने पर जिसका अंत नहीं देखा जाता है और न जिसका अंत है, ऐसा आकाश।

सर्वानशनतप **Sarvānaśanatapa**

आहार परित्याग के बाद का जीवित व्यक्ति के काल का सम्पूर्ण तप।

सर्वानुकंपा **Sarvānukampā**

सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि द्वारा मार्दव गुण से प्रेरित होकर सभी प्राणियों के प्रति की जाने वाली दया।

सर्वार्थसिद्ध **Sarvārthasiddha**

1. सभी अभ्युदय संबंधी प्रयोजनों में सिद्ध।

2. सभी लौकिक प्रयोजनों में सिद्ध।

सर्वावधि **Sarvāvadhi**

समस्त विश्व के रूपी पदार्थों को विषय बनाने वाला अवधिज्ञान।

सर्वावधिमरण **Sarvāvadhimaraṇa**

वह आयु जो वर्तमान में प्रकृति, स्थिति, अनुभव और प्रदेश की अपेक्षा जिस रूप में उदय को प्राप्त है, उसी रूप में यदि वह आयु प्रकृति-स्थिति आदि से विशिष्ट बांधता हो तथा भविष्य में उदय को भी प्राप्त होती हो, ऐसा मरण।

सर्वासंख्यात **Savāsaṅkhyāta**

घनलोक प्रमाण।

सर्वौषध (सर्वौषधि) **Sarvauṣadha (Sarvauṣadhi)**

1. एक प्रकार की ऋद्धि, जिसके प्रभाव से मुनियों द्वारा स्पृष्ट जल से सब रोगों का विनाश हो जाता है।
2. एक विशेष प्रकार की ऋद्धि, जिसके प्रभाव से ऋद्धिधारक के अंगों का स्पर्श करने वाली वायु सब रोगों की विनाशक बन जाती है।

सल्लेखना **Sallekhanā**

1. दुष्प्रतीकार्य उपसर्ग, दुष्काल, जरा अथवा रोग के उपस्थित होने पर धर्म के लिए शरीर छोड़ना।
2. बाह्य में शरीर तथा अंतरंग में कषाय के कारणों को कम करते हुए उन्हें कृश करना।

सविकल्पचारित्र **Savikalpacāritra**

शुद्ध आत्मा में राग-द्वेषादि रूप विकल्पों की निवृत्ति।

सविकल्पज्ञान **Savikalpajñāna**

निर्मल अखंड एक ज्ञानमय शुद्ध आत्मा के विषय में विकल्प सहित ज्ञान।

सविचार **Savicāra**

अर्थ, व्यंजन और योग के संक्रमण-सहित शुक्लध्यान।

सविज्ञानदाता **Savijñānadātā**

1. दाता के श्रद्धादि गुणों में चौथा गुण।
2. साधुओं के लिए द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का विचार करके दान देने वाला बुद्धिमान दाता।

सवितर्कअवीचार-एकत्वध्यान **Savitarka avīcāra ekatvadhyāna**

वह शुक्ल ध्यान, जिसमें एकत्व के साथ वितर्क रहता है, परंतु वीचार नहीं रहता।

सवितर्कध्यान **Savitarkdhyāna**

श्रुतज्ञान और उसके विषयभूत अर्थ के ज्ञाता द्वारा ध्यान योग्य शुक्ल ध्यान।

सवितर्क सवीचार सपृथक्त्व ध्यान **Savitarka savīcāra sapṛthaktva dhyāna**

पृथक्त्व के साथ वितर्क और वीचार सहित प्रथम शुक्लध्यान।

सविपाकनिर्जरा **Savipākanirjarā**

1. समयानुसार होने वाली कर्मनिर्जरा।
2. कर्मों का फल देकर गल जाना।

सवीचार **Savīcāra**

देखें, सविचार।

सवीचार कायक्लेश **Savīcārakāyakleśa**

पूर्व स्थान से जाकर पहर अथवा दिन आदि की मर्यादा पूर्वक अन्य स्थान में रहना।

सव्याघातपादपोपगमन **Savyāghātapādapopagamana**

विद्यमान आयु के उपक्रमण के समय व्याधिपूर्वक मरण।

सशल्य मरण **Saśalyamaraṇa**

माया, निदान और मिथ्यात्व रूप शल्य के साथ मरण।

सहजमित्र **Sahajamitra**

कुल परंपरा से चला आया मित्र।

सहसादोष **Sahasādoṣa**

1. अवलोकन अथवा प्रमार्जन न करके पुस्तक आदि का ग्रहण करना या रखना।
2. आदान-निक्षेपण समिति का एक दोष।

सहसानिक्षेपाधिकरण **Sahasānikṣepādhikaraṇa**

पुस्तक आदि उपकरण, शरीर अथवा शरीरगत मल आदि का भूमि का शोधन किए बिना निक्षेपण करना।

सहसाऽभ्याख्यान **Sahasābhyākhyāna**

1. सत्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. समुचित विचार न करके कथन करना तथा अविद्यमान दोषों का आरोप करना।

सान **Sāna**

1. अनध्यवसाय को नष्ट करने वाला।
2. अवग्रह का दूसरा नाम।

सांतरनिरंतरद्रव्यवर्गणा **Sāntaranirantaradravyavargaṇā**

अंतर के साथ निरंतर जाने वाली वर्गणा।

सांतरबंधप्रकृति **Sāntarabandhaprakṛti**

एक समय बंध को प्राप्त होकर दूसरे समय में बंध का विश्राम होना।

साकल्य **Sākalya**

1. वस्तु की अनन्तधर्मात्मकता।
2. कारकों का धर्म विशेष, जिसे प्रसिद्ध दार्शनिक भट्ट जयंत प्रमाण मानते हैं।

साकल्यव्याप्ति **Sākalyavyāpti**

देश और काल से व्यवहित समस्त साध्य-साधन के स्वरूप से ग्रहण की गई व्याप्ति विशेष।

साकांक्षानशन **Sākāṅkṣānaśana**

1. कनकावली और एकावली आदि तपों के विधान स्वरूप षष्ठ, अष्टम दशम और बारहवीं भोजनवेलाओं अर्थात् दो, तीन, चार और पाँच उपवासों के साथ अर्धमास और मास पर्यंत भोजन का परित्याग।
2. षट्मास उत्कृष्ट काल तक किया जाने वाला अनशन।

साकार उपयोग **Sākāra upayoga**

1. कर्म-कर्तृत्व रूप आकार के साथ रहने वाला उपयोग।
2. सविकल्पक उपयोग।
3. सचेतन अथवा अचेतन पदार्थ (वस्तु) के साथ उपयुक्त आत्मा का पर्याय सहित ज्ञान होना।

साकारत्व **Sākāratva**

1. विच्छिन्न वर्ण, पद और वाक्यस्वरूप से आकार को प्राप्त होना।
2. सत्यवचनातिशयों के 35 भेदों में से 32वां भेद।

साकारमंत्रभेद **Sākāramantrabheda**

1. सत्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. प्रयोजन, प्रकरण, शरीर के विकार और भ्रुकुटियों के विक्षेप आदि से दूसरे के अभिप्राय को जानकर मत्सरता आदि के कारण उसे प्रकट करना।

सागर **Sāgara**

1. दस कोड़ाकोड़ी पल्यों के माप वाली समय की इकाई।
2. दस कोड़ाकोड़ी पल्यों का एक सागरोपम (सागर) होता है।

सागरोपम **Sāgaropama**

देखें, सागर।

सागार **Sāgāra**

1. अणुव्रतों का परिपालन करने वाला।
2. अनादिकाल से अज्ञानतावश आहारादि चार संज्ञाओं से पीड़ित, आत्मज्ञान से विमुख विषयों में आसक्त व परिग्रह को नहीं छोड़ने वाला श्रावक।

सागारिक **Sāgārika**

1. वसति का स्वामी।
2. गमनागमन न कर सकने वाले वृक्षों की तरह संबंध होना।

सात गौरव **Sāta gaurava**

भोजन अथवा शयन आदि में अतिशय आसक्ति।

सातवशार्तमरण **Satavaśārtamaraṇa**

शारीरिक अथवा मानसिक सुख में उपयोग लगाने वाले का मरण।

सातावेदनीय **Sātāvedanīya**

1. सुख का वेदन कराने वाला कर्म।
2. शारीरिक और मानसिक सुख का वेदन कराने वाला कर्म।
3. जीव को रति मोहनीय आदि के उदय से सुख के कारणभूत इंद्रिय-विषयों का अनुभव कराने वाला कर्म।

4. इसका अपरनाम सातवेदनी भी है।

सातिचार छेदोपस्थान **Sāticāra chedopasthāpana**

1. भग्न मूलगुण वाले के व्रतों का पुनः आरोपण किया जाना।
2. छेदोपस्थापन चारित्र के दो भेदों में प्रथम भेद।

सातिप्रयोग (मायाभेद) **Sātiprayoga (Māyābheda)**

1. अर्थों के विषय में विसंवाद, अपने हाथों में रखे गये द्रव्य का अपहरण, दोषारोपण तथा प्रशंसा करना, सातिप्रयोग है।
2. माया के पांच भेदों में तीसरा भेद।

सातिशय मिथ्यादृष्टि **Sātiśaya mithyādṛṣṭi**

सम्यक्त्व को उत्पन्न करते समय अनादि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीव का चार लब्धियों (क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना और प्रायोग्य) को प्राप्त करके प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि से बढ़ते हुए परिणामों से युक्त होता हुआ प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख होकर करणलब्धि को प्राप्त होने वाला जीव।

सादिनित्यपर्यायार्थिकनय **Sādinityaparyāyārthikanaya**

कर्मक्षय से उत्पन्न होने के कारण सादि होकर भी विनाश के कारणों के अभाव में अविनाशी सिद्ध पर्याय को विषय करने वाला नय।

सादिशरीरिबंध **Sādiśarīribandha**

जीवों (शरीरधारियों) का औदारिक आदि शरीरों के साथ होने वाला बंध।

सादिसंस्थान **Sādisaṃsthāna**

व्यक्ति के नाभि के नीचे का भाग योग्य प्रमाण में रहना और ऊपर का भाग हीन प्रमाण में रहना।

सादिसपर्यवसितश्रुतज्ञान **Sādisaparyavasita śrutajñāna**

पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा द्वादशांगस्वरूप आगम।

सांकल्पिकी हिंसा **Sāṅklpikī himsā**

संकल्पपूर्वक की जाने वाली हिंसा।

सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष **Saṃvyavahārika pratyakṣa**

इन्द्रिय और मन के आश्रय से होने वाला ज्ञान।

सांशयिक मिथ्यात्व **Saṃśayika mithyātva**

देखें, संशय मिथ्यात्व।

सांसारिक सौख्य **Sāṃsārika saukhya**

सातावेदनीय आदि पूर्व कर्म के अधीन रहने वाला दुःखों से व्यवहित पाप का कारणभूत सुख।

साधक **Sādhaka**

1. ज्योतिष एवं मंत्रादिरूप लोकोपकारक शास्त्रों का ज्ञाता।
2. आत्मध्यान में लगा हुआ समाधिमरण को सिद्ध करने वाला देशसंयमी श्रावक।

साधकतम **Sādhakatama**

1. असाधारण कारण। जैसे- गृह के भीतर स्थित पदार्थों के प्रकाशितकरने में दीपक।
2. सद्भाव में प्रमिति आदि का सद्भाव तथा अभाव में प्रमिति आदि का अभाव पाया जाने वाला असाधारण कारण।

साधन **Sādhana**

1. पदार्थ की उत्पत्ति का निमित्त। जीवादि तत्त्वों के जानने के उपायभूत निर्देशादि में से एक।
2. नियम से साध्य के साथ अविनाभाव संबंध वाला।
3. उपयोगांतर से व्यवहित दर्शनादि परिणामों का निष्पादक।
4. आराधना के लक्षणों में से एक लक्षण।

साधर्म्य **Sādharmya**

साध्य के आधार में निश्चित रूप से रहना।

साधर्म्य दृष्टांत **Sādharmya dṛṣṭānta**

संबंध के स्मरणपूर्वक साध्य और साधन की व्याप्ति का निश्चित होना। यथा- धूम के द्वारा अग्नि को सिद्ध करने में रसोईघर का दृष्टांत।

साधारण कायक्लेश **Sādharaṇa kāyakleśa**

प्रमार्जित स्तंभ आदि का आश्रय लेकर स्थित होना।

साधारणजीव **Sādhāraṇa jīva**

1. आहार और उच्छ्वास-निःश्वास की समानता वाले जीव।
2. वनस्पतिकायिक जीवों का सामान्य लक्षण।

साधारण भोजनदोष **Sādhāraṇa bhojana doṣa**

शीघ्रतावश वस्त्रादि को खींचते हुए दिए जाने वाले आहार को लेने पर साधु को लगने वाला दोष।

साधारण वसति दोष **Sādhāraṇa vasati doṣa**

लकड़ी, वस्त्र, कांटे और आच्छादक उपकरण आदि के संकेत से वसति (घर) बताये जाने पर साधु को लगने वाला दोष।

साधारणशरीर **Sādhāraṇa śarīra**

1. समान सिराओं, संधियों एवं अप्रकट पोर वाले तथा तोड़े जाने पर पुनः प्ररोहित हो जाने वाले वनस्पतिकायिक जीव।
2. बहुत जीवों का एक ही शरीर होना।

साधारणशरीर नामकर्म **Sādhāraṇaśrīra nāmakarama**

1. अनेक जीवों के लिए साधारण शरीर को निर्मित करने वाला कर्म विशेष।
2. अनन्त जीवों के लिए एक शरीर की संरचना करने वाला कर्म।

साधु **Sādhu**

1. बाह्य व्यापार से रहित, चतुर्विध आराधना का आराधक, परिग्रह और ममत्व रहित, मधुकरवत् अनुद्दिष्ट भिक्षावृत्ति वाला तत्त्वज्ञ महाव्रती।
2. अठारह हजार शील व चौरासी लाख गुणों से संपन्न, त्रिगुप्तियों से सुरक्षित एवं पांच महाव्रतों के पालक, पंचाचार के ज्ञाता और उत्तरोत्तर विशुद्धि को प्राप्त होने वाले भावों से युक्त महाव्रती।
3. बाह्य एवं आभ्यंतर ग्रंथि से रहित निःकषायी, जितेन्द्रिय, परीषहजयी, दीर्घकाल से प्रव्रज्या लेने वाला महाव्रती।

साधुवर्णजनन **Sādhuvarṇajanana**

साधु के माहात्म्य को प्रकट करना।

साधुसमाधि **Sādhusamādhi**

साधु का दर्शन, ज्ञान और चारित्र में भली-भाँति अवस्थित होना।

साध्ववर्णवाद **Sādhvavarṇavāda**

साधुओं के विषय में दोषारोपण करना।

सापराध **Sāparādha**

नियम से कर्मबंधरूप अशुद्ध आत्मा का आराधना करने वाला।

सापेक्षत्व **Sāpekṣatva**

अनेकांत शैली से वस्तु का कथन करना।

सामानिक **Sāmānika**

1. आज्ञा और ऐश्वर्य को छोड़कर आयु, वीर्य, परिवार और भोगोपभोग की अपेक्षा इन्द्र के समान वैभवशाली देव।
2. मंत्री, पिता, गुरु, उपाध्याय और वृद्ध पुरुष के समान तथा आज्ञा और ऐश्वर्य से रहित भोगोपभोग वाले इन्द्र के समान देव।

सामान्य **Sāmānya**

1. अभेदकारक तत्त्व।
2. भिन्न-भिन्न पदार्थों में अभिन्नता की कारणभूत सामग्री।

सामान्य शक्ति **Sāmānya śakti**

घट जैसी रचना वाले पदार्थों में जल आदि ग्रहण करने की शक्ति।

सामान्य स्थिति **Sāmānya sthiti**

एक स्थिति विशेष में समयप्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष-इन दोनों का पाया जाना।

सामान्यालोचना **Sāmānyālocanā**

घोर अपराध करने वाले साधु के द्वारा दूसरे को साक्षी बनाकर की गई सामान्य आलोचना पूर्वक श्रमणधर्म की इच्छा।

सामायिक **Sāmāyika**

1. समत्वभाव को धारण करना।
2. काल के नियमपूर्वक सर्वसावद्य योग का त्याग, तीन गुप्तियों से संरक्षित, इन्द्रियजयी, प्राणिमात्र के प्रति समभाव; संयम, तप और नियम में रत तथा राग-द्वेष एवं दुर्ध्यान से रहित जीव का समतारूप परिणाम।
3. जीवन और मरण, लाभ और अलाभ, संयोग और वियोग, शत्रु और मित्र तथा सुख और दुख में हर्ष-विषाद से रहित परिणाम।
4. राग-द्वेष से रहित होकर जीव का सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र के अभिमुख होना।
5. तीनों संध्याकालों में, पक्ष, मास व संधि के दिनों में अथवा अपनी इच्छानुसार

किसी भी समय में बाह्य एवं आभ्यंतर सभी पदार्थों के प्रति कषाय का निरोध।

सामायिककाल **Sāmāyikakāla**

पूर्वाह्ण, मध्याह्न और अपराह्ण - इन तीनों संध्याकालों में छह घड़ी परिमाण की गई सामायिक का काल।

सामायिकक्षेत्र **Sāmāyikakṣetra**

कोलाहल विहीन, लोगों के आवागमन की बहुलता और डांस-मच्छर आदि से रहित प्रशस्त प्रदेश।

सामायिकचारित्र **Sāmāyikacāritra**

1. देखें - सामायिक।
2. सब जीव केवल ज्ञान स्वरूप हैं - इस प्रकार का समताभाव।
3. शुभ-अशुभ संकल्प-विकल्पों के त्याग रूप समाधि।

सामायिक प्रतिमा **Sāmāyikapratimā**

1. श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं में से एक।
2. गृहस्थ के द्वारा यथाजात वेष में अथवा समस्त प्रकार के परिग्रह में निर्ममत्व होकर कायोत्सर्ग में स्थित गृहस्थ के द्वारा चार बार तीन तीन आवर्त और शिरोनति तथा आदि एवं अंत में प्रणाम रूप तीनों कालों में तीनों योगों की शुद्धि पूर्वक की गई क्रिया।

सामायिकभावश्रुतग्रन्थ **Sāmāyikabhāva śrutagrantha**

नैयायिक, वैशेषिक, लोकायत, सांख्य, मीमांसक और बौद्ध आदि दर्शनों के विषय का ज्ञान।

सामायिकशिक्षाव्रत **Sāmāyika śikṣāvrata**

1. देखें, सामायिक प्रतिमा।
2. श्रावक के बारह व्रतों में से एक।
3. आर्त्त और रौद्रध्यान को छोड़कर समस्त प्राणियों में समता का भाव रखना, संयम का पालन करना, उत्तम भावनाओं का चिंतन करना।

सामायिक शुद्धिसंयम **Sāmāyika śuddhisaṃyama**

मैं सर्वसावद्योग से विरत हूं — इस प्रकार से समस्त सावद्योग से विरत होना।

सामायिक श्रुत **Sāmāyika śruta**

1. सामायिक का प्रतिपादन करने वाला शास्त्र।
2. अंगबाह्य श्रुत में द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का आश्रय करके तथा पुरुष समूह को देखकर परिमित या अपरिमित काल पर्यंत संपन्न होने वाले सामायिक अनुष्ठान की प्ररूपणा करने वाला शास्त्र।

सामायिक संयत **Sāmāyika saṃyata**

सामायिक सहित मन, वचन और काय से चार महाव्रत स्वरूप चातुर्याम धर्म का पालन करने वाला संयमी।

सामायिक संयम **Sāmāyika saṃyama**

1. सामायिक में स्थित होकर सम्पूर्ण सावद्ययोग का त्याग करना।
2. देखें, सामायिक संयत।

सामायिकसमय **Sāmāyikasamaya**

1. देखें, सामायिककाल।
2. बालों, मुट्ठी, वस्त्र और पर्यंक आसन का बंधन करके कायोत्सर्ग अथवा उपवेशन में अवस्थित रहने का काल।

सांपरायिक **Sāṃparāyika**

1. आत्मा का पराभव करने वाला कर्म।
2. मिथ्यादृष्टि से लेकर सूक्ष्मसाम्परायिक संयत तक कषाय के उदयवश उत्पन्न परिणामों के अनुसार योग के द्वारा लगाया गया कर्म।

सांप्रत **Sāmprata**

नाम और स्थापना आदि में जिसका वाच्य-वाचक संबंध आदि पूर्व में प्रसिद्ध है, उस शब्द से घट आदि के विषय में ज्ञान होना।

सांभोगिक **Sāmbhogika**

समान समाचारी वाले साधुओं के परस्पर उपधि आदि के लेने देने रूप क्रिया।

साम्य **Sāmya**

दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के उदय से होने वाले मोह एवं क्षोभ के अभाव में जीव का राग-द्वेषादि विकार से रहित निर्मल परिणाम।

साम्राज्य क्रिया **Sāmrājya kriyā**

सर्वोत्कृष्ट राज्य में चक्र रत्न के साथ नव निधियों और चौदह रत्नों के आश्रय से भोग सामग्री का उपस्थित रहना।

सारणा **Sāraṇā**

1. दुःख से अभिभूत होकर मूर्च्छा को प्राप्त हुए जीव को सचेत करना।
2. भक्तप्रत्याख्यान मरण को स्वीकार करने वाले क्षपक के अर्हादि चालीस लिंगों में से एक।

सारस्वत **Sārasvata**

चौदहपूर्व रूप सरस्वती को जानने वाले लौकांतिक देव।

सार्व **Sārva**

इहलोक और परलोक में हितकारी मार्ग को दिखाने वाले वीतरागी सर्वज्ञ।

सालम्ब ध्यान **Sālamba dhyāna**

1. अरिहंत के रूप का चिंतन।
2. आज्ञा और अपायविचय आदि चार के आलंबन सहित होने वाला धर्मध्यान।
3. पंचपरमेष्ठियों का पृथक्-पृथक् चिंतन।

सावद्ययोग **Sāvadyayoga**

प्राणविघातरूप हिंसा आदि में बुद्धिपूर्वक उपयोग।

सावद्यवचन **Sāvadyavacana**

प्राणि-हिंसा आदि अनेक दोष उत्पन्न करने वाला वचन।

सावधिनित्यता **Sāvadhinityatā**

उत्पत्ति और विनाश से संयुक्त होने पर भी अवस्थान के बने रहने से होने वाली नित्यता।

सावनसंवत्सर **Sāvanasaṃvatsara**

1. प्रमुखता से कर्म करने की प्रेरणा देने वाला वर्ष।
2. अपरनाम कर्मसंवत्सर और ऋतुसंवत्सर।

सावित्रसंवत्सर **Sāvitrasaṃvatsara**

साढ़े तीस दिन वाले सूर्यमास के बारह मासों का समूह।

सासन **Sāsana**

सासादन गुणस्थान का पर्याय।

सासादन **Sāsādana**

सम्यक्त्व के नष्ट हो जाने पर जो जीव सम्यक्त्व रूप रत्नपर्वत से गिरकर मिथ्यात्व के सम्मुख होता है, ऐसा सम्यग्दृष्टि।

सास्वादन **Sāsvādana**

देखें, सासादन।

सिद्ध **Siddha**

अष्ट कर्म से रहित, आठ महागुणों से युक्त तथा लोक के अग्र भाग में निवास करने वाले जीव।

सिद्धत्व **Siddhatva**

समस्त कर्मों से रहित होने पर जीव की ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व और वीर्य आदि गुणस्वरूप पृथक् अवस्था ।

सिद्धवर्णजनन **Siddhavarṇajanana**

1. सिद्धों के माहात्म्य को प्रकट करना।
2. अन्य संप्रदाय में प्रसिद्ध सिद्धों का निराकरण कर जिनमत के अनुसार सिद्धों का स्वरूप निरूपण करना।

सिद्धावर्णवाद **Siddhāvarṇavāda**

स्त्री, वस्त्र, गंधमाल्य और अलंकार आदि से रहित सिद्धों के सुख न मानना तथा इंद्रियों से रहित होने से ज्ञान न मानना।

सिद्धि **Siddhi**

1. उत्तमोत्तम गुणों के नाशक दोषों के दूर होने से पाषाण की स्वर्णरूपता के समान आत्मस्वरूप की प्राप्ति।
2. संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय की निवृत्ति रूप प्रमिति।

सीमविस्मृति **Sīmavismṛti**

1. दिग्व्रत का एक अतिचार।
2. दिग्व्रत की मर्यादा को अज्ञानता, बुद्धि की अपटुता और संदेह आदि से, अथवा, अन्यमनस्क होने आदि से स्मरण न रहना।

सुख **Sukha**

1. इन्द्रियों द्वारा पदार्थों का साता रूप अनुभव।
2. सातावेदनीय कर्म के उदय रूप अन्तरंग हेतु के होने पर बाह्य द्रव्यादि परिपाकनिमित्त वश उत्पद्यमान प्रीतिरूप परिणाम।
3. बाह्य प्रत्ययवश सातावेदनीय के उदय से आत्मा की प्रसन्नता।
4. दुःख का उपशम।
5. इष्टसमागम और अनिष्ट वियोग।
6. प्रीति।
7. परम तृप्तिरूप अनाकुलता।

सुख-दुःखोपसंपत् **Sukha duḥkhopasampat**

सुख और दुःख के समय में वसति, आहार और औषधि आदि के द्वारा उपकार करना तथा सब प्रकार से सेवा करना।

सुखानुबन्ध **Sukhānubandha**

1. सल्लेखना का एक अतिचार।
2. पूर्व के अनुभव से आये हुए विषयों के अनुराग का बार-बार स्मरण करना।

सुखासुखसंश्रय **Sukhāsukhasaṁśraya**

चोर, दुष्ट, रोग और राजा आदि के द्वारा पीड़ित होकर दुःख का अनुभव करने वालों को आहार, औषध और स्थान आदि के द्वारा संतुष्ट करना।

सुगत **Sugata**

1. केवलज्ञानी।
2. सब प्रकार के द्वंद्वों से मुक्त, अविनश्वर मुक्ति पद को प्राप्त जीव।

सुपर्णकुमार **Suparṇakumāra**

सुंदर ग्रीवा एवं वक्षस्थल वाले, श्याम वर्ण वाले तथा गरुड़ चिह्न वाले भवनवासी देव विशेष।

सुपार्श्व **Supārśva**

पार्श्वभागों के सुंदर होने तथा भगवान के गर्भ में स्थित होने पर माता के भी सुन्दर पार्श्वभागों से संयुक्त होने के कारण सुपार्श्व नामकरण वाले सातवें तीर्थंकर।

28—416 Min. of HRD/2014

सुभगनाम **Subhaganāma**

1. दूसरों की प्रीति का कारण।
2. सौभाग्य को उत्पन्न करने वाला नाम कर्म।
3. अनुपकारी को भी मन को प्रिय बनाने वाला नाम कर्म।

सुभिक्ष **Subhikṣa**

शालि, व्रीहि, जौ और गेहूं आदि का सरलता से प्राप्त हो जाना।

सुमति **Sumati**

निर्मल बुद्धि के धारक तथा गर्भ में आने पर माता के अतिशय मति उत्पन्न होने से सुमति नामकरण वाले पांचवें तीर्थंकर।

सुर **Sura**

अहिंसादि अनुष्ठान में रत।

सुरभिगंधनाम **Surabhigandhanāma**

शरीर के पुद्गलों को उत्तम गंध से युक्त बनाने वाला नाम कर्म।

सुरेन्द्रताक्रिया **Surendratākriyā**

पारिव्राज्य के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले इन्द्र पद की क्रिया।

सुललित दोष **Sulalita doṣa**

1. वंदना का एक दोष।
2. गान के साथ पंचम स्वर से वंदना करने पर होने वाला दोष।

सुविधि **Suvidhi**

1. तीर्थंकर पुष्पदंत का अपर नाम।
2. गर्भ में स्थित रहने पर माता की भी कुशलता हो जाने से किया गया नामकरण।

सुषम-दुषमा **Suṣama duṣamā**

तृतीयकाल, जिसके प्रारम्भ में मनुष्यों के शरीर की ऊंचाई दो हजार धनुष, आयु एक पल्योपम प्रमाण तथा वर्ण प्रियंगु फल के समान होता है। उनकी पीठ की हड्डियां चौंसठ होती हैं। उस समय में स्त्री अप्सरा के समान और पुरुष देव के समान होता है। इस काल में वे मनुष्य आँवले के बराबर भोजन एक दिन के अंतर से करते हैं। आकार उनका समचतुरस्रसंस्थान जैसा होता है। इस काल का प्रमाण दो कोड़ाकाड़ी सागरोपम है।

सुषम-सुषमा **Suṣama suṣamā**

प्रथम काल, जिसमें पृथिवी धूलि, धुआँ, अग्नि, बर्फ, काँटे, ओले और विच्छू आदि जन्तुओं के उपद्रवरहित होती हुई दर्पण के समान निर्मल होती है। उस समय पृथिवी के ऊपर कोई भी निंदित द्रव्य नहीं पाए जाते हैं। वहां की दिव्य बालु शरीर मन और नेत्रों को सुखप्रद होती है। इस काल का प्रमाण चार कोड़ाकाड़ी सागरोपम है।

सुषमा **Suṣamā**

द्वितीय काल, जिसके प्रारंभ में मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई चार हजार धनुष, आयु दो पल्य प्रमाण तथा शरीर की कान्ति पूर्ण चन्द्र के समान होती हैं। उनकी पीठ की हड्डियां एक सौ अट्ठाईस होती हैं। स्त्रियां अप्सराओं जैसी सुंदर और पुरुष देवों के समान होते हैं। इस काल में मनुष्य षष्ठ भक्त मे - दो दिन के अंतर से अक्षफल (बहेड़ा) के बराबर आहार को ग्रहण करते हैं। शरीर का आकार उनका समचतुरस्रसंस्थान जैसा होता है। इस काल का प्रमाण तीन कोड़ाकाड़ी सागरोपम है।

सुषिर **Suṣira**

बाँसुरी, शंख, काहल आदि से उत्पन्न शब्द।

सुसाधु **Susādhu**

ज्ञान और दर्शन से संपन्न, संयम भावों में रत साधु।

सुस्थित **Susthita**

लिंगों में से एक भक्त प्रत्याख्यान को स्वीकार करने वाले क्षपक के अर्हादि चालीस प्रकार के परोपकार के करने में और अपने प्रयोजन में सुस्थित आचार्य।

सुस्वर नाम **Susvara nāma**

1. मनोहर स्वर की रचना में निमित्तभूत नामकर्म।
2. लोगों को प्रीति उत्पन्न करने वाला स्वर।

सुहृदनुराग **Suhṛdanurāga**

1. सल्लेखना व्रत का एक अतिचार।
2. मित्रों के द्वारा किए गए कार्यों का स्मरण।
3. बाल्यावस्था में साथ-साथ खेलने वाले मित्रों का स्मरण।

सूक्ष्म **Sūkṣma**

1. पुद्गल के छह भेदों में पांचवां।
2. वैक्रियिक आदि पांच शरीरों, मन और वचन की उत्तरोत्तर तथा मध्य अनंतानंत संहत वर्गणाएं ।

सूक्ष्म अद्धापल्योपम **Sūkṣma addhapalyopama**

एक योजन प्रमाण लम्बे-चौड़े पल्य के बालाग्रों में से प्रत्येक के असंख्यात खण्ड करें एवं उनसे उसे इस प्रकार से ठसाठस भरें कि जिससे अग्नि आदि भी प्रवेश न कर सके। पश्चात् सौ सौ वर्षों के बीतने पर एक एक बालाग्र को उसमें से निकालें, इस प्रकार जितने काल में वह पल्य रिक्त होता है उतना काल विशेष।

सूक्ष्मअद्धासागरोपम **Sūkṣma addhā sāgaropama**

दश कोडाकोडी सूक्ष्म अद्धापल्योपम।

सूक्ष्मउद्धारपल्योपम **Sūkṣama uddhārapalyopama**

उत्सेधांगुल प्रमित योजन प्रमाण लंबे, चौड़े एवं गहरे गड्ढे को शिर के मूड़ने पर एक दिन-रात में उगे हुए, दो दिन रातों में उगे हुए, इस प्रकार सात दिन रात तक के उगे हुए बालाग्रों में से प्रत्येक के असंख्यात खण्ड करे और उनसे इस प्रकार से ठसाठस भरे कि उसमें अग्नि आदि प्रविष्ट न हो सके। पश्चात् उनमें से एक एक समय में एक एक बालाग्र के निकालने पर जितने काल में वह पूर्णतया रिक्त होता है, उतना कालविशेष।

सूक्ष्मउद्धारसागरोपम **Sūkṣma uddhārasāgaropama**

दस कोड़ाकोड़ी सूक्ष्म उद्धारपल्योपम का काल।

सूक्ष्म ऋजुसूत्र **Sūkṣma ṛjusūtra**

द्रव्य में एक समयवर्ती अध्रुव पर्याय-अर्थपर्याय को ग्रहण करनेवाला नय। जैसे- समस्त सत् क्षणिक हैं।

सूक्ष्मकाय **Sūkṣmakāya**

पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु के द्वारा प्रतिस्खलन (प्रतिघात) नहीं होने वाले जीवों का शरीर।

सूक्ष्मक्रियानिवर्तक **Sūkṣmakriyānivartaka**

1. वितर्क और विचार से रहित होकर सूक्ष्म क्रिया से संबंध रखने वाला तीसरा शुक्लध्यान।

2. केवली की आयु जब अंतर्मुहूर्त मात्र शेष रह जाती है तब वेदनीय, नाम और गोत्र इन कर्मों की स्थिति यदि आयु के बराबर होती है तब वे समस्त वचनयोग और मनोयोग का पूर्णतया निरोध करके और बादर काययोग को कृश करते हुए जब सूक्ष्म काययोग का आलंबन लेते हैं, तब वे सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती नाम के तीसरे शुक्लध्यान पर आरूढ़ होने के योग्य होते हैं। किन्तु जब आयु की स्थिति अंतर्मुहूर्त मात्र शेष रहती है और वेदनीय आदि उक्त तीनों कर्मों की स्थिति आयु से अधिक शेष रहती है तो वे आत्मोपयोग के अतिशय से युक्त होकर विशिष्ट परिणाम के वश स्वभावतः शीघ्र ही कर्म के परिपालन में समर्थ होते हुए क्रम से चार समयों में दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूर्ण समुद्घातों को करके फिर उतने ही चार समयों में फैले हुए आत्मप्रदेशों को क्रम से संकुचित करते हैं। इस प्रकार से उक्त चारों अघातीय कर्मों की जब स्थिति समान हो जाती है तब पूर्व शरीर के प्रमाण होकर सूक्ष्म काययोग के द्वारा ध्याने योग्य ध्यान।

सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती **Sūkṣmakriyāpratipātī**

देखें, सूक्ष्मक्रियानिवर्तक।

सूक्ष्मक्रियाबंधन **Sūkṣmakriyābandhan**

देखें, सूक्ष्मक्रियानिवर्तक।

सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपम **Sūkṣmakṣetrapalyopama**

उत्सेधांगुल प्रमित एक योजन प्रमाण लम्बे, चौड़े उस व्यवहार पल्य के एक एक बालाग्र के असंख्यात खण्ड करके उनसे उसे ठसाठस इस प्रकार से भरें कि उसका अग्नि आदि अतिक्रमण न कर सकें। इस प्रकार से भरने पर उसमें से एक-एक समय में एक-एक बालाग्र के निकालने पर जितने समय में वह पल्य रिक्त होता है उतना काल विशेष।

सूक्ष्मक्षेत्रसागरोपम **Sūkṣma kṣetra sāgaropama**

दस कोडाकोडी क्षेत्र पल्योपम।

सूक्ष्मजीव **Sūkṣmajīva**

सूक्ष्मनामकर्म के उदय से युक्त जीव, जिनका शरीर दूसरे पुद्गलों के द्वारा रोका नहीं जा सकता है।

सूक्ष्मत्व **Sūkṣmatva**

सिद्धों के आठ गुणों में से एक। यह नामकर्म के क्षय से प्रादुर्भूत होता है तथा अतींद्रिय ज्ञान का विषय है।

सूक्ष्मदोष **Sūkṣmadoṣa**

कठोर प्रायश्चित्त के भय से भारी दोष को छिपाकर प्रमादाचरण के निवेदन करने पर होनेवाला आलोचना का पांचवां दोष।

सूक्ष्मनाम **Sūkṣmanāma**

1. सूक्ष्म शरीर की रचना करने वाला कर्म।
2. पृथ्वी आदि जीवों का श्लक्ष्ण अदृश्य एवं नियत शरीर का निर्माण करने वाला नामकर्म।
3. चक्षु इन्द्रिय के द्वारा ग्रहण न करने के योग्य शरीर की संरचना करने वाला नामकर्म।

सूक्ष्मपुलाक **Sūkṣmapulāka**

1. पुलाक के पाँच भेदों में अंतिम।
2. थोड़े से प्रमाद से युक्त मुनि।

सूक्ष्मप्राभृतदोष **Sūkṣmaprābhṛta doṣa**

पूर्वाह्ण, अपराह्ण और मध्यम बेला में परिवर्तन कर देने पर होने वाला दोष।

सूक्ष्मबकुश **Sūkṣma bakuśa**

किंचित् प्रमाद वाला मुनि।

सूक्ष्मबुद्धि **Sūkṣma buddhi**

अतिशय, दुरवबोध, सूक्ष्म और व्यवहित पदार्थों के जानने में समर्थ बुद्धि।

सूक्ष्मलोभ **Sūkṣma lobha**

संज्वलन संबंधी अनुभाग के पूर्व और अपूर्व स्पर्धकों से हट कर अनन्तगुण हीन अनुभाग वाला लोभ।

सूक्ष्मसांपराय **Sūkṣma sāṁparāya**

1. अतिशय सूक्ष्म कषाय के अस्तित्व वाला चतुर्थ चारित्र।
2. लोभ की सूक्ष्मता के वेदन करने वाले उपशमक अथवा क्षपक।
3. यथाख्यात संयम से कुछ हीन।

सूक्ष्म सांपरायकृष्टि **Sūkṣmasāṁparayakṛṣṭi**

संज्वलन लोभकषाय के अनुभाग को बादर सांपरायिक कृष्टियों से अनन्तगुणित हानि के रूप में परिणमित कर अत्यन्त सूक्ष्म या मंद अनुभाग के रूप से अवस्थित करना।

सूक्ष्मसांपराय संयत **Sūkṣmasamparāya saṃyata**

देखें, सूक्ष्मसाम्पराय।

सूक्ष्म-सूक्ष्म **Sūkṣma sūkṣma**

1. संयोग व संबंध से रहित परमाणु।
2. कर्मवर्गणा स्कंधों के नीचे द्व्यणुक पर्यंत अतिशय सूक्ष्म स्कंध।

सूक्ष्म-स्थूल **Sūkṣma sthūla**

चक्षु इन्द्रिय के बिना शेष चार इन्द्रियों से ग्रहण किया जाने वाला बाह्य पदार्थ। जैसे - शब्द, स्पर्श, रस, गंध, शीत, उष्ण और वायु।

सूक्ष्मार्थ **Sūkṣmārtha**

परमाणु आदि स्वभावतः दूरवर्ती (अदृश्य) पदार्थ।

सूच्यंगुल **Sūcyaṅgula**

अद्धापल्य के जितने अर्द्धच्छेद हों उतने स्थान में पल्य को रखकर परस्पर गुणित करने पर उत्पन्न राशि का प्रमाण।

सूत्र **Sūtra**

1. गणधर, प्रत्येकबुद्ध, श्रुतकेवली और अभिन्न दशपूर्वी के द्वारा कहा गया।
2. ग्रंथ प्रमाण से अल्प, अर्थ की अपेक्षा महान, निर्दोष, गुण सहित, सारवान संक्षिप्त कथन।
3. दृष्टिवाद अंग का एक भेद।

सूत्रकृतांग **Sūtrakṛatāṅga**

लोक, अलोक, लोकालोक, जीव, अजीव, जीवाजीव, स्वसमय, परसमय, स्वपरसमय की प्ररूपणा करने वाला अंग।

सूत्ररुचि **Sūtraruchi**

आचारांग में प्ररूपित तप के भेदों को सुनने से उत्पन्न रुचि (तत्त्वश्रद्धान)।

सूत्रसम **Sūtrasama**

तीर्थंकर के मुख से निःसृत बीजपद को धारण करने वाले गणधरदेव में स्थित श्रुतज्ञान।

सूत्रसंश्रय **Sūtrasaṃśraya**

1. सूत्र (आगम) के अनुसार विनयपूर्वक पठन।
2. अभ्यागत साधु के स्थान, तप, काल, गुरु, कुल, श्रुत, श्रुतनाम और प्रतिक्रमण आदि के विषय में पूछकर तीन दिन तक उसके शयन, आसन और गमनादि आचरण को देखकर उसकी चारित्रशुद्धि का निश्चय कर आचार्य की सम्मति से श्रुत का व्याख्यान तथा गुरु के द्वारा व्याख्यात श्रुत का विनयपूर्वक पठन।

सूनृत **Sūnṛta**

जिनवचन के अनुसार बोला गया प्रिय, परिमित एवं सत्य वचन।

सूरि **Sūri**

1. संयतों को दीक्षा देने वाला आचार्य।
2. छत्तीस गुणों का धारक पाँच आचारों का पालन करते हुए शिष्यों पर अनुग्रह करने में दक्ष।

सूर्यप्रज्ञप्ति **Sūryaprajñapti**

1. उपांग साहित्य का एक ग्रंथ।
2. सूर्य की आयु, भोगोपभोग, परिवार, ऋद्धि, गति, बिम्ब की ऊँचाई, दिन, किरण और उद्योत आदि के वृत्तांत का ज्ञापन करने वाला ग्रंथ।

सृपाटिकानाम **Sṛpātikānāma**

1. संहनन का दोनों ओर संगत एवं दोनों ओर की हड्डियों, चमड़ा, स्नायु और मांस से संबद्ध होना।
2. अपर नाम असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन। इस संहनन में हड्डियां भीतर परस्पर में संधि को प्राप्त नहीं होती और बाहर सिर, स्नायु और मांस से संघटित होती हैं।

सेवार्तसंहनन **Sevārtasaṃhanana**

हड्डियों की चिकनाहट एवं मर्दन-शक्ति की उत्पत्ति में कारणभूत नामकर्म।

सेव्यार्थाधिकता **Sevyārthādhikata**

भोगोपभोगनार्थक्य रूप अनर्थदण्डव्रत का एक अतिचार।

सोपक्रमायु **Sopakramāyu**

विष, वेदना, रक्तक्षय, भय, संक्लेश, शस्त्रघात और श्वासोच्छ्वास के निरोध से होने वाला आयु का घात।

सौक्ष्म्य **Saukṣmya**

1. सूक्ष्म का स्वभाव या कर्म।
2. पुद्गल की एक पर्याय।

सौख्य **Saukhya**

सर्व परिग्रह के त्याग से होने वाला सुख का भाव।

सौजन्य **Saujanya**

1. दूसरों को उद्वेग नहीं करने वाला कृत्य।
2. केवल गुण के आश्रय से वस्तु को ग्रहण करना और दोष के निमित्त से उसे छोड़ना।

सौध **Saudha**

साधुओं के पाद-प्रक्षालन के जल से सिंचित भवन।

सौभाग्यमुद्रा **Saubhāgyamudrā**

परस्पर अभिमुख ग्रथित अंगुलियों वाले दोनों हाथ करके दोनों तर्जनियों से दोनों अनामिकाओं को पकड़कर मध्य अंगुलियों को फैलाते हुए उनके मध्य में दोनों अंगूठों को रखे हुए आकृति।

सौम्या **Saumyā**

1. वाचना का अंतिम भेद।
2. कहीं-कहीं स्खलित होते हुए भी की जाने वाली व्याख्या।

सौषिर **Sauṣira**

बांसुरी, शंख आदि से उत्पन्न शब्द।

स्कंध **Skandha**

1. समस्त अंशों से परिपूर्ण।
2. स्थूलता के आश्रय से ग्रहण करने एवं रखने रूप व्यापार का साधन।

3. अनंतानंत परमाणुओं का बंध-विशेष।
4. स्निग्ध और रूक्ष परमाणुओं का मिला-जुला रूप।

स्कंधदेश **Skaṅdhadeśa**

स्कंध के आधे का आधा अंश।

स्तंभदोष **Stambhadoṣa**

1. खम्भे का आश्रय लेकर कायोत्सर्ग में स्थित होना।
2. स्तम्भ के समान शून्य हृदय होकर कायोत्सर्ग में स्थित होना।

स्तनदृष्टिदोष **Stanadṛṣṭidoṣa**

1. कायोत्सर्ग में स्थित रहकर अपने स्तनों को देखने रूप दोष।
2. डांस-मच्छरों आदि के निवारण के लिए अथवा अज्ञानता के कारण स्तनों को चोलपट्ट से बांधकर कायोत्सर्ग में स्थित रहना।
3. स्तनदृष्टि नामक कायोत्सर्ग का दोष।

स्तनदोष **Stanadoṣa**

देखें, स्तनदृष्टिदोष।

स्तनितकुमार **Stanitakumāra**

1. भवनवासी देवों का एक भेद।
2. स्निग्ध, गंभीर एवं अनुनाद (प्रतिध्वनि) रूप महान् शब्द से संयुक्त एवं स्वस्तिक चिह्न से युक्त श्यामवर्णी देव।

स्तनोन्नतिदोष **Stanonnatidoṣa**

1. देखें, स्तनदोष।
2. बालक को स्तनपान कराने वाली स्त्री के समान वक्षस्थल को ऊँचा उठाकर कायोत्सर्ग में स्थित होना।

स्तब्धदोष **Stabdhadoṣa**

1. ज्ञानादि के मद से उद्धत होकर कृतिकर्म में प्रमाद की स्थिति।
2. वंदनादि विषयक 32 दोषों में से एक।

स्तव **Stava**

1. वृषभादि तीर्थंकरों की नाम निरुक्ति और गुणानुवाद के साथ पूजाकरते हुए मन, वचन, काय की शुद्धि पूर्वक उन्हें प्रणाम करना।

2. संपूर्ण अंग का संक्षेप अथवा विस्तार में वर्णन करने वाला ग्रंथ।
3. कालभेद न करके अरहंत आदि को नमस्कार करना।

स्तिबुक संक्रम **Stibukasaṃkrama**

1. विवक्षित प्रकृति का समान स्थितिवाली अन्य प्रकृति में संक्रमण होना।

स्तुति **Stuti**

देखें, स्तव

1. अल्प गुणों को अधिक रूप में कथन करना।
2. बारह अंगों में एक अंग का उपसंहार।
3. एक द्वादशांग में से अंग विषयक अथवा एकादशपूर्व में से एक पूर्वविषयक उपयोग।

स्तेनप्रयोग **Stenprayoga**

देखें, चौर्यप्रयोग

1. चोरी करने वाले को चोरी करने में उद्यत करना, प्रेरणा कराना अथवा चोरी में प्रवृत्त हुए चोर की अनुमोदना करना।
2. अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार।

स्तेनानीतादान **Stenānītādāna**

1. देखें, तदानीतादान, तदाहृतादान।
2. चोरी करके लायी गई वस्तु को ग्रहण करना।

स्तेनानुज्ञा **Stenānujñā**

चोरी के उपकरण प्रदान करना या चोरी की आज्ञा/प्रेरणा देना।

स्तेनानुबंधी **Stenānubandhī**

हिंसा के कारणभूत दूसरे के धन को चुराने का बार-बार विचार करना।

स्तेनितदोष **Stenitadoṣa**

गुरु आदि की चोरी से वंदना करना।

स्तेय **Steya**

प्रमाद के योग से बिना दी हुई वस्तुओं को ग्रहण करना।

स्तेयत्यागाणुव्रत **Steyatyagāṇuvrata**

लोभ के वशीभूत होकर दूसरों की वस्तु को ग्रहण न करना।

स्तेयानंद **Steyānanda**

1. रौद्र ध्यान का एक भेद।
2. परधनहरण में आनंद मानना।
3. अपरनाय स्तेयानुबंधी एवं स्तेनानुबंधी।

स्तैनिक **Stainika**

अपनी लघुता को छिपाकर वंदना करना।

स्तोक **Stoka**

सात प्राण या सात उच्छ्वास रूप कालविशेष समूह।

स्त्यानगृद्धि **Styāngṛddhi**

सुप्तावस्था में भी विशेष सामर्थ्य प्रकट करने वाली दर्शनमोहनीय कर्म की प्रकृति।

स्त्यानर्द्धि **Styānarddhi**

देखें - स्त्यानगृद्धि।

स्त्री **Strī**

1. स्त्रीवेद कर्म के उदय से गर्भसंभात की सामर्थ्य का होना।
2. अपने को मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयम, क्रोध, मान, माया, लोभादि से आच्छादित करने वाली है तथा मृदुभाषण, स्निग्ध विलोकन और अनुकूल वर्तनादि कुशल व्यापारों से पुरुषों को भी हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील तथा परिग्रहादि पापों से आच्छादित करने वाली है।

स्त्रीकथा **Strīkathā**

स्त्रियों की वेषभूषा, नृत्य, हाव-भाव आदि का वर्णन करना यथा कर्णाटक देश की स्त्री सुरत व्यवहार में कुशल होती है, लाट देश की स्त्री चतुर एवं प्रिय होती है, इत्यादि प्रकार से चर्चा करना।

स्त्रीपरीषहसहन **Strī parīṣaha sahana**

उद्यान एवं भवन आदि एकांत स्थानों में यौवन-मद एवं मदिरापान आदि से उन्मत्त स्त्रियों के द्वारा वादा करने पर भी जो कछुए के समान अपनी इन्द्रियों एवं मनके विकारों को रोककर उनके मंद हास्य एवं हाव-भाव आदि रूप कामव्यापार को निरर्थक कर देना।

स्त्रीवेद **Strīveda**

1. नामकर्म का एक भेद।
2. नोकषाय का एक भेद।
3. स्त्रीसंबंधी भावों को प्राप्त करानेवाला कर्म।
4. पुरुषरमण की अभिलाषा उत्पन्न करने वाला कर्मोदय।

स्थलगता-चूलिका **Sthalagatā cūlikā**

1. अंगश्रुतज्ञान का एक भेद।
2. पृथ्वी पर गमन के कारणभूत मंत्र-तंत्र और तपश्चरण के साथ वास्तुविद्या एवं पृथ्वी से संबद्ध शुभ-अशुभ के कारण की प्ररूपणा करने वाली दो करोड़, नौ लाख, नवासी हजार दो सौ (20989200) पद प्रमाण चूलिका विशेष।

स्थविर **Sthavira**

1. वृद्ध।
2. धर्म से खेद-खिन्न होने वालों को प्रोत्साहित करने वाला।

स्थविरकल्प **Sthavirakalpa**

1. श्रमण का एक भेद।
2. चौदह प्रकार की उपधि धारक श्रमण।

स्थान **Sthāna**

1. उपत्ति का हेतु।
2. एक जीव में एक समय में दिखने वाला कर्म का अनुभाग।
3. अवगाहना।

स्थानक्रिया **Sthānakriyā**

एक पाद अथवा समपाद रूप से कायोत्सर्ग में स्थित होना।

स्थानसमुत्कीर्तन **Sthānasamutkīrtana**

1. षट्खंडागम के प्रथम खण्ड जीवस्थान की नौ चूलिकाओं में दूसरी चूलिका।
2. कर्म प्रकृतिरूप स्थान का वर्णन करने वाला अधिकार।

स्थानांग **Sthānāṅga**

1. द्वादशांगी का तीसरा अंग श्रुत।

2. एक से लेकर एक अधिक के क्रम से स्थानों की प्ररूपणा करने वाला आगम।
3. अनेक आश्रयस्वरूप पदार्थों का निर्णय करने वाला अंग ग्रंथ।

स्थानी **Sthānī**

स्थान रूप कायोत्सर्ग करने वाले जिनयोगी।

स्थापना **Sthāpanā**

1. वह यह है - इस प्रकार वस्तु में किया जाने वाला अध्यारोप।
2. द्रव्य के आकार विशेष का नाम।
3. निक्षेप का एक भेद। साकार या निराकार आदि में अभिधान करना।
4. द्रव्यार्थिक नय के अन्तर्गत नैगमनय का एक भेद।

स्थापना-उद्गमदोष **Sthāpanā udgamadoṣa**

1. श्रमण की आहारचर्या से संबंधित उद्गमदोषों का एक भेद।
2. पकाये गये भोजन वाले पात्र से भिन्न पात्र में पके भोजन को रखकर अपने घर से दूसरे के घर में जाकर उस अन्न को रखना।

स्थापनाकर्म **Sthāpanākarma**

सदृश अथवा विसदृश द्रव्य में बुद्धिपूर्वक प्रतिष्ठा या अध्यारोपण।

स्थापनाकायोत्सर्ग **Sthāpanākāyotsarga**

पाप की स्थापना से आये हुये अतिचार को दूर करने के लिए कायोत्सर्ग में परिणत होना।

स्थापनाजिन **Sthāpanājina**

जिनेंद्र देव की प्रतिमाओं का स्थापन।

स्थापनाजीव **Sthāpanājīva**

अक्ष, निक्षेप आदि में जीवादि का स्थापन या अध्यारोपण करना।

स्थापनाद्रव्य **Sthāpanādravya**

काष्ठकर्म, पुस्तककर्म, चित्रकर्म और अक्ष-निक्षेप आदि में इन्द्रादि देवताओं की मूर्ति के समान स्थापना करना।

स्थापनानमस्कार **Sthāpanānamaskāra**

दोनों हाथों को जोड़कर मस्तक पर रखे हुए नमस्कार में प्रवृत्त आकार से स्थित जीव की मूर्ति।

स्थापनानुयोग **Sthāpanānuyoga**

1. स्थापना के अनुकूल योग होना।
2. देश-काल आदि की अपेक्षा योग्य प्रतीत होने वाली स्थापना।

स्थापनाप्रतिक्रमण **Sthāpanāpratikramaṇa**

1. सराग स्थापनाओं से परिणामों को हटाना।
2. प्रतिक्रमण में परिणत जीव के प्रतिबिंब की स्थापना।

स्थापनाप्रत्याख्यान **Sthāpanāpratyākhyāna**

अर्हदादिकों की स्थापना को नष्ट न करने तथा अनादर न करने का विचार।

स्थापनाबंध **Sthāpanābandha**

वह यह है - इस प्रकार की बुद्धि से अन्य बंध में अन्य बंध की जाने वाली स्थापना।

स्थापनामंगल **Sthāpanāmaṅgala**

अकृत्रिम एवं कृत्रिम जिन भगवान् के प्रतिबिंब।

स्थापनालेश्या **Sthāpanāleśya**

लेश्या के रूप में सद्भाव या असद्भाव स्थापना द्वारा स्थापित द्रव्य।

स्थापनालोक **Sthāpanāloka**

लोक में स्थित और स्थापित समस्त द्रव्य।

स्थापनाल्पबहुत्व **Sthāpanālpabahutva**

अपेक्षाकृत यह अधिक है या अल्प है — इस प्रकार एकता का अध्यारोपण।

स्थापनावश्यक **Sthāpanāvaśyaka**

सद्भाव स्थापना अथवा असद्भाव स्थापना के द्वारा एक अथवा अनेक की स्थापना करना।

स्थापनावेदना **Sthāpanāvedanā**

यह वही वेदना है — इस प्रकार अभेद के साथ पदार्थ का निश्चय करना।

स्थापनाश्रुत **Sthāpanāśruta**

काष्ठ, चित्र, भित्ति आदि पर श्रुत के पठन-पाठन आदि में संलग्न साधुओं की श्रुत के रूप में स्थापना।

स्थापनासत्य **Sthāpanāsatya**

1. सत्य के दश भेदों में से एक।

2. पदार्थ के न रहते हुए भी कार्यवशात् कल्पित वचन रूप प्रवृत्ति। जैसे-पांसों आदि में हाथी आदि की कल्पना करना।
3. मूर्ति में ऋषभादिरूप वचनप्रवृत्ति।

स्थापनासंक्रम **Sthāpanāsaṁkrama**

वह यह है — इस प्रकार अन्य के स्वरूप को बुद्धि में स्थापित करना।

स्थापनासामायिक **Sthāpanāsāmāyika**

1. समस्त सावद्य की निवृत्तिरूप परिणाम से युक्त आत्मा के साथ एकत्व को प्राप्त शरीर के आकार की समानतारूप स्थापना।
2. सद्भाव-असद्भाव रूप विषयों में वीतरागता (राग-द्वेष नहीं करना) की स्थापना।

स्थापनासिद्ध **Sthāpanāsiddha**

पूर्वभावप्रज्ञापन नय की अपेक्षा से अंतिम शरीर से किंचित् न्यून आत्मप्रदेशों में अवस्थित उस आत्मा को बुद्धि में आरोपित करके वही यह है, इस प्रकार मूर्ति की स्थापना करना।

स्थापनास्तव **Sthāpanāstava**

1. कृत्रिम-अकृत्रिम अपरिमित चतुर्विंशति तीर्थंकर की प्रतिमाओं का स्तवन करना।
2. तदाकार अथवा अतदाकार वस्तु में चौबीस तीर्थंकरों के गुणों का आरोपण करके स्तुति करना।

स्थापनास्पर्श **Sthāpanāsparśa**

काष्ठकर्म या चित्रकर्म आदि में स्पर्श रूप स्थापना के द्वारा अध्यारोपण करना।

स्थापनीमुद्रा **Sthāpanīmudrā**

अधोमुख वाली आवाहनी मुद्रा। देखें -- आवाहनीमुद्रा।

स्थापना-उद्देश **Sthāpanā uddeśa**

सामान्यतया देवतारूप स्थापन का कथन करना।

स्थापितभोजी **Sthāpitabhojī**

स्थापित भोजन को ग्रहण करने वाला साधु।

स्थावर **Sthāvara**

1. संसारी जीव का एक भेद।

2. स्थावरनामकर्म-वशात् परिस्पंदन रहित एक स्थान में स्थिर रहने वाला जीव।
3. स्थिर रहने वाले जीव। यथा—पृथ्वी, जल, तेज (अग्नि), वायु और वनस्पति।

स्थावरनामकर्म **Sthāvaranāmkarma**

1. जीव की एकेंदिय में उत्पत्ति कराने वाला एक प्रकार का नामकर्म।
2. एक ही स्थान पर जीवों को स्थिरता प्रदान करने वाला कर्मोदय।

स्थावरप्रतिमा **Sthāvarapratimā**

1. जिनेंद्रदेव की विहारकाल तक की अवस्था।
2. व्यवहार में चंदन, स्फटिक, स्वर्ण और महामणि आदि से निर्मित प्रतिमा।

स्थितकल्प **Sthitakalpa**

साधु का आचेलक्य आदि दस स्थानों में स्थित होना।

स्थितश्रुतज्ञान **Sthitaśrutajñāna**

साधु द्वारा बारह अंगों के ज्ञान की अवधारणा।

स्थिति **Sthitī**

1. काल का प्रमाण।
2. अपने स्वरूप से च्युत न होना।
3. बंध का एक भेद।

स्थितिकरण **Sthitikaraṇa**

1. धर्म से चलायमान अन्य जीव को धर्म में स्थिर करना।
2. सम्यग्दर्शन एवं चारित्र से डिगते हुए पुरुष को पुनः उसी में स्थिर करना।
3. सम्यग्दर्शन के आठ अंगों में से एक।

स्थितिक्षय **Sthitikṣaya**

स्थिति के क्षय से कर्म का वेदन करना।

स्थितिबंध **Sthitibandha**

1. कर्म का अपने स्वभाव से च्युत न होना।
2. कर्ता द्वारा ग्रहण की गई कर्मराशि का स्वात्मप्रदेशों में स्थित रहना।

स्थितिबंधस्थान **Sthitibandhasthāna**

स्थितिबंध की अवस्था विशेष।

स्थितिभोजन **Sthitibhojana**

1. साधु के अट्ठाईस मूलगुणों में से एक।

29—416 Min. of HRD/2014

2. भित्ति आदि के आश्रय के बिना समपाद में स्थित (खड़े रहकर) त्रिविध शुद्धिपूर्वक पाणिपात्र में आहार ग्रहण करना।

स्थिरनामकर्म **Sthiranāmakarma**

1. स्थिरता का उत्पादक कर्म।
2. कठोर तप का आचरण करने पर भी अंग-उपांगों को स्थिर रखने वाला कर्म।

स्थिरीकरण **Sthirīkaraṇa**

देखें, स्थितिकरण।

धर्म से खेद-खिन्न जीवों को पुनः धर्म में स्थापित करना।

स्थूल ऋजुसूत्रनय **Sthūla ṛjusūtranaya**

अपनी स्थितियों में विद्यमान मनुष्य आदि पर्याय को यावत् काल तक मनुष्य रूप में कथन करने वाला नय।

स्थूलकाय **Sthūlakāya**

पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु के द्वारा रोके जा सकने वाले जीव।

स्थूलसूक्ष्म **Sthūlasūkṣma**

1. चक्षु इंद्रिय के द्वारा ग्राह्य होकर भी ग्रहण न कर पाने योग्य स्कंध।
2. स्कंध के छः भेदों में से एक।

स्थूलस्तेय **Sthūlasteya**

दूसरे की वस्तु का अपहरण करना।

स्थूल-स्थूल **Sthūla sthula**

1. स्कंध के छह भेदों में से एक।
2. कृत्रिम एवं अकृत्रिम विशाल पुद्गलस्कंध।

स्नातक **Snātaka**

1. घाति कर्मों का क्षय करने वाले सयोग तथा अयोग केवली।
2. चार घातिया कर्मों को नष्ट करने वाला त्रयोदश गुणस्थानवर्ती केवली।

स्निग्ध **Snigdha**

बाह्य और आभ्यंतर-इन दोनों कारणों के वश स्नेह पर्याय से उत्पन्न स्नेह दशा को प्राप्त करना।

स्निग्धनामकर्म **Snigdhanāmakarma**

वह शरीरगत पुद्गलों में स्निग्धता का कारण नामकर्म।

स्नेहप्रत्ययस्पर्धक **Snehapratyayaspardhaka**

चिक्कणता निमित्तक एक-एक स्नेह विभाग से वृद्धिगत पुद्गल वर्गणाओं का समूह।

स्नेहराग **Sneharāga**

1. अप्रशस्त नोआगम भावराग के तीन भेदों में से तृतीय भेद।
2. विषयादि के कारण व्याकुल होते हुये विनय रहित पुत्रादिकों में राग का होना।

स्पर्द्धक **Spardhaka**

जघन्य से लेकर उत्कृष्ट पर्यंत एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद के अंतर से प्राप्त वर्गणाओं का समूह।

स्पर्द्धक (अवधिज्ञानविशेष) **Spardhaka (Avadhijñānaviśeṣa)**

अवधिज्ञान की प्रभा के प्रतिनियत विच्छेद विशेष का समुदित रूप यथा-झरोखे आदि के द्वार में से निकलती हुई दीपक की प्रभा के अविभाग प्रतिच्छेद में समूह का प्राप्त होना।

स्पर्शन **Sparśana**

1. पांच इंद्रियों में से एक इन्द्रिय।
2. वीर्यांतराय और प्रतिनियत इन्द्रियावरण के क्षयोपशम तथा अंगोपांगनामकर्म के लाभ के आश्रय से द्वारा किया जाने वाला स्पर्श।
3. जीव का अवस्था-विशेष की विचित्रता से तीनों कालों में कहां तक आना-जाना संभव है, इसका विचार करने वाला अनुयोग द्वार।
4. अनुयोग के आठ द्वारों में से एक।

स्पर्शन क्रिया **Sparśanakriya**

प्रमाद के वश स्पर्श करने योग्य चेतन-अचेतन पदार्थ के चिंतन की निरंतरता का नाम।

स्पर्शनाम **Sparśanāma**

औदारिक आदि शरीर में स्पर्श उत्पन्न करने वाला कर्म।

स्पर्शनेन्द्रियनिरोध **Sparśanendriyanirodha**

जीव-अजीव में आठ प्रकार के स्पर्श की प्रीति अथवा अप्रीति की स्थिति में हर्ष या विषाद को प्राप्त न होना।

स्पर्शनेंद्रियव्यंजनावग्रह **Sparśanendriya vyañjanāvagraha**

आठ प्रकार के स्पर्शों का स्पर्शनेंद्रिय को प्राप्त होनेवाला अव्यक्त ज्ञान।

स्पर्शनेंद्रियार्थावग्रह **Sparśanendriyārthāvagraha**

आठ प्रकार के स्पर्शों का द्रव्य के विषय में होने वाला व्यक्त ज्ञान।

स्पर्शनेंद्रियेहाज्ञान **Sparśanendriyehājñana**

स्पर्शन इंद्रिय के द्वारा स्निग्ध आदि स्पर्श को ग्रहण करके उनमें किसी एक के हेतु का अन्वेषण करना।

स्फोट **Sphoṭa**

1. अर्थ के प्रकटीकरण का आधार चेतन आत्मा।
2. ध्वन्यात्मक शब्द में अर्थ प्रकाशन की सामर्थ्य की अभिव्यक्ति विशेष का सिद्धांत।

स्मरण **Smaraṇa**

1. पूर्व संस्कार का प्रकट होना
2. देखें, स्मृति।

स्मरणाभास **Smaraṇābhāsa**

देखे व सुने पदार्थ को कालांतर में विस्मृत हो जाने पर उसमें दूसरे का स्मरण होना। यथा- पूर्व अनुभूत जिनदत्त में देवदत्त का स्मरण होना।

स्मरतीव्राभिनिवेश **Smaratīvrābhiniveśa**

1. ब्रह्मचर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. समस्त व्यापार को छोड़कर काम-सेवन में ही प्रवृत्ति का होना।

स्मृति **Smṛti**

1. परोक्ष प्रमाण का एक भेद।
2. मतिज्ञान का पर्यायवाची।
3. दृष्ट, श्रुत एवं अनुभूत पदार्थ को विषय करने वाले ज्ञान से जीव में विशेषता प्राप्त कराने वाला।
4. जीवादि तत्त्वों के गुणों का स्मरण।

स्मृत्यनुपस्थान **Smṛtyanupasthāna**

1. सामायिक एवं प्रोषधोपवास व्रत का एक अतिचार।
2. सामायिक व्रतों में एकाग्रता का न होना अथवा स्मृति का उपस्थित न होना।
3. प्रोषधव्रत के विषय में प्रमाद के कारण स्मृति का न रहना।

स्मृत्यन्तराधान **Smṛtyantarādhana**

1. दिग्व्रत का एक अतिचार।
2. दिग्व्रत में ली गई सीमाओं का स्मरण न रहना।

स्यन्दन **Syandana**

जिनके पहिए धुरा के टूट जाने पर गमनागमन में बाधा से रहित चक्रवर्ती एवं बलदेवों के योग्य विशेष रथ।

स्यात् **Syāt**

1. नय विवक्षा के अनुसार मुख्य और गौण रूप से उभयधर्मों की व्यवस्था करने वाला जैन न्याय का विशिष्ट शब्द।
2. तिङन्त प्रतिरूपक निपात, जो अनेकान्त का द्योतन एवं कथन करे। यह सुनिश्चित अवधारणा का वाचक है।

स्याद्वाद **Syādvāda**

1. अनेकांतात्मक वस्तु का कथन।
2. कथंचित् आदि के आश्रय से वस्तुतत्त्व का विधान करना।

स्याद्वादश्रुत **Syādvādaśruta**

नयों की प्रवृत्ति से आगम मार्ग में संपूर्ण पदार्थ का निश्चय कराने वाला वचन।

स्वकृत संहरण **Svakṛta saṃharaṇa**

चारण ऋद्धिधारी एवं विद्याधरों द्वारा स्वेच्छा से विशिष्ट स्थान का आश्रय लिया जाना।

स्वक्षेत्रपरिवर्तन **Svakṣetraparivartana**

1. संसार के पंचपरिवर्तनों में से क्षेत्र परिवर्तन का एक भेद।
2. कोई जीव सूक्ष्म निगोद जीव की जघन्य अवगाहना से उत्पन्न हुआ और अपनी आयु प्रमाण जीवित रहकर मर गया। फिर वही जीव एक प्रदेश अधिक अवगाहना लेकर उत्पन्न हुआ। एक-एक प्रदेश अधिक की अवगाहनाओं को क्रम से धारण करते हुए महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत संख्यात

घनांगुल प्रमाण अवगाहना विकल्पों को वह जीव जितने समय में धारण करता है, उतने काल का समुदाय विशेष।

स्वक्षेत्रसंसार **Svakṣetrasaṃsāra**

असंख्यात प्रदेशों वाले जीव के कर्मोदय के अनुसार प्रदेशों में होने वाले स्वाभाविक संकोच एवं विस्तार (हीनाधिक) की अवगाहना से युक्त होना।

स्वगुणस्तव **Svaguṇastava**

1. साधु के उत्पादन दोष का एक भेद।
2. अपने तप, श्रुत और जाति आदि का वर्णन करना।

स्वचरितचर **Svacaritacara**

वीतराग परम सामायिक की आराधना करने वाला समस्त परिग्रह से रहित ज्ञाता द्रष्टा स्वभाव वाला जीव।

स्वजाति-उपचरित-असद्भूत-व्यवहार नय **Svajāti upacarita asadbhūta vyavahāra naya**

स्वजाति पर्याय में स्वजाति पर्याय का आरोपण करने वाला नय।

स्वदारमंत्रभेद **Svadāramantrabheda**

1. सत्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. अपनी पत्नी के विश्वासपूर्ण कथन को दूसरों से कहना।

स्वदारसंतोषव्रत **Svadārasantoṣavrata**

अपनी पत्नी से ही संतोष करना तथा परस्त्रियों को बहिन, माता और पुत्री के समान मानना।

स्वद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिकनय **Svadravyadigrāhakadravyārthikanaya**

1. द्रव्यार्थिकनय के प्रभेदों में से एक।
2. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से सत् द्रव्य को अपने द्रव्य-क्षेत्र, काल और भाव में ग्रहण करने वाला नय।

स्वप्ननिमित्त **Svapnanimitta**

तीनों कालों में संभव दुःख-सुख आदि की सूचना देने वाला निमित्त।

स्वप्रत्ययोत्पाद **Svapratyayotpāda**

षट्गुणी हानि और वृद्धि से प्रवर्तमान वस्तु के स्वभाव से धर्मादि द्रव्यों में उत्पाद होना।

स्वभाव **Svabhāva**

अपने असाधारण धर्म में होना।

स्वभाव-अनित्य-अशुद्ध द्रव्यार्थिक **Svabhāva anitya aśudha drayārthika**

एक समय में उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से संयुक्त पर्याय को ग्रहण करने वाला नय।

स्वभाव-अनित्य-शुद्धपर्यायार्थिक **Svabhāva anitya śuddha paryāyārthika**

सत्ता को मुख्य न करके उत्पाद और व्यय को ग्रहण करने वाला नय।

स्वभावज्ञान **Svabhāvajṇana**

आलोक आदि बाह्य निमित्त की अपेक्षा न करने वाला अतीन्द्रिय ज्ञान।

स्वभावदर्शन **Svabhāvadarśana**

इन्द्रियों आदि किसी बाह्य सहयोग के बिना केवलदर्शन।

स्वभावपर्याय **Svabhāvaparyāya**

1. कर्मोपाधि से रहित पर्यायें।
2. वृद्धिरूप अगुरु-लघु गुणों के छह प्रकार की हानि और छह प्रकार की वृद्धिरूप अवस्था।

स्वभावमार्दव **Svabhāvamārdava**

उपदेश के बिना ही स्वभावतः मृदुता (सरलता) का होना।

स्वभ्रपूरण **Svabhrapūraṇa**

स्वादिष्ट एवं नीरस का विचार किए बिना साधु की आहार ग्रहण की प्रवृत्ति।

स्वयंबुद्ध **Svayambuddha**

स्वयं के द्वारा समीचीन बोध को प्राप्त जीव।

स्वयंबुद्धसिद्ध **Svayambuddhasiddha**

स्वयं ही प्रबुद्ध होकर सिद्धि को प्राप्त करने वाला जीव।

स्वयंभू **Svayambhū**

1. दूसरे के उपदेश के बिना स्वयं ही तत्त्वों को जानने वाला।
2. तिरसठ शलाकापुरुषों में नौ नारायणों में से एक नारायण का नाम।

3. भावी उन्नीसवें तीर्थंकर का नाम।
4. अपभ्रंश भाषा के महाकवि।

स्वरूपासिद्धहेत्वाभास **Svarūpāsiddhahetvābhāsa**

हेतु के स्वरूप के अभाव का निश्चित होना। जैसे-शब्द परिणामी है, वह चक्षु इन्द्रिय का विषय है। यहाँ शब्द में चाक्षुषत्व का अभाव निश्चित है, क्योंकि वह चक्षु का विषय न होकर श्रोत्र का विषय होने से स्वरूपसिद्ध है।

स्वलक्षण **Svalakṣaṇa**

1. स्वस्वरूप लक्षण वाला।
2. समान, सहवर्ती एवं क्रमवर्ती अपने गुण-पर्यायों से एक होने वाला।

स्वशरीरसंस्कार त्याग **Svaśarīrasaṃskāra tyaga**

दाँत, नाखून, केश आदि के शृंगार के परित्याग रूप ब्रह्मचर्य व्रत की एक भावना विशेष, ।

स्वसमय **Svasamaya**

1. चारित्र, दर्शन और ज्ञान में स्थित जीव।
2. आत्मस्वभाव में लीन जीव।

स्वसमयवक्तव्य **Svasamayavakatavya**

स्वसमय की प्ररूपणा करने वाला शास्त्र।

स्वस्थानाप्रमत्त **Svasthānāpramatta**

अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीव की ध्यानस्थ अवस्था।

स्वस्थितिकरण **Svasthitikaraṇa**

तीव्र मोह के उदय से आत्मस्थ स्थिति से (मोक्षमार्ग से) भ्रष्ट जीव का पुनः आत्म-स्वरूप में प्रतिष्ठित होना।

स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया **Svahastaprāṇātipātakriyā**

निर्वेद के कारण अपने हाथों से अपने प्राणों को या क्रोध के कारण दूसरों के प्राणों को नष्ट करना।

स्वातिसंस्थाननाम **Svātisaṃsthānanāma**

न्यग्रोध परिमंडल संस्थान से विपरीत शरीर के अवयवों की बल्मीक के आकार जैसी रचना करने वाला कर्म।

स्वाधिगमहेतु **Svādhigamahetu**

अपने ज्ञान के हेतुभूत प्रमाण और नय के विकल्प।

स्वाध्याय **Svādhyāya**

1. आभ्यन्तरतप का एक भेद।
2. पूर्वापरविरोध से रहित निष्ठापूर्वक स्वयं अध्ययन-अध्यापन करना।

स्वानवकांक्षा **Svānavakāṅkṣā**

जिन प्ररूपित अनुष्ठानों के विषयों में प्रमाद के वश होकर अनादर करना।

स्वाप **Svāpa**

1. इंद्रिय, आत्मा, मन और मरुत् की सूक्ष्म अवस्था का नाम।
2. सुन्दर स्वप्न को दिखाने वाली अवस्था।

स्वामित्व **Svāmitva**

उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य-इन चार पदों के योग्य जीवों की प्ररूपणा करने वाला अनुयोगद्वार विशेष।

स्वार्थाधिगम **Svārthādhigama**

मति-श्रुतादिरूप ज्ञान।

स्वार्थानुमान **Svārthānumāna**

स्वयं ही निश्चित साधन से साध्य का ज्ञान होना।

स्वास्थ्य **Svāsthya**

कर्मों के विनष्ट होने पर निर्बाध स्वाभाविक सुख उत्पन्न होना।

स्वोपकार **Svopakāra**

दान के आश्रय से दाता के पुण्य का संचय होना।

हंससमानशिष्य **Haṁsasamāna śiṣya**

हंस के समान गुणों को ग्रहण करने वाला शिष्य।

हतसमुत्पत्तिक कर्म **Hatasamutpattika karma**

अनुभागसत्कर्म का घात कर देने पर उत्पन्न होने वाला कर्म।

हतसमुत्पत्तिक सत्कर्मस्थान **Hatasamutpattika satkarmasthāna**

घात से ही उत्पन्न होने, बंध से उत्पन्न न होने वाले बंधस्थान।

हतसतिसमुत्पत्तिक स्थान **Hatasatisamutpattika sthāna**

घातित अनुभाग के घात से उत्पन्न होने वाले अनुभागसत्कर्मस्थान।

हतहतोत्पत्तिकस्थान **Hatahatotpattikasthāna**

जो स्थिति के घात से और रस (अनुभाग) के घात से अन्य प्रकार से परिणत होते हैं वे अनुभव स्थान हैं।

हतोत्पत्तिकस्थान **Hatotpattika sthāna**

उद्वर्तना और अपवर्तना कारणों के वश होने वाली वृद्धि और हानि से अन्य प्रकार से परिणत होने वाले अनुभागस्थान।

हत्थिसुंडी **Hatthisuṇḍi**

कायक्लेश तप के अंतर्गत आसन का एक प्रकार, जिसमें हाथी की सूँड के समान एक पाँव को संकुचित करके व उसके ऊपर दूसरे पाँव को फैलाकर स्थित होना होता है।

हरि **Hari**

प्राणियों के दुःखों का अपहरण करने वाले (अरहंत)।

हर्ष **Harṣa**

अकारण ही दूसरे को दुःख उत्पन्न करके अथवा अपने अर्थसंचय के द्वारा मन को अनुरंजायमान करना।

हस्त **Hasta**

दो वितस्ति (चौबीस अंगुल)।

हस्तग्रहणान्तराय **Hastagrahaṇāntarāya**

1. बत्तीस भोजनान्तरायों में अंतिम।
2. मुनि का आहार के समय पृथ्वी पर हाथ के द्वारा कुछ ग्रहण करना।

हस्तपादादिसंस्कार **Hasta pādādi saṁskāra**

सुंदरता के लिये हाथ-पांवों आदि का धोना अथवा औषध का लेपन आदि करना।

हास्य **Hāsya**

1. वह कर्म जिसके उदय से हास्य का आविर्भाव हो।
2. जिसके उदय से जीव के हास्य के कारण राग उत्पन्न हो।

3. जिसके उदय से सकारण या अकारण भी प्राणी रंगभूमि में आए हुए नट के समान हँसता है।

हास्यमोहनीय **Hāsya mohanīya**

जिसके उदय से सनिमित्त या अनिमित्त हँसा जाता है।

हिंसक **Himsaka**

1. राग से युक्त, द्वेष से युक्त अथवा मोह से युक्त प्राणी के द्वारा जो प्रयोग होता है, उनमें हिंसा होती है, इसलिये रक्त (रागी), द्विष्ट (द्वेषी) और मूढ (मोही) जीव हिंसक होता है।
2. प्रमादयुक्त पुरुष के कायादि योग के आश्रय से चूँकि जीव नियम से मरण को प्राप्त होते है, इसलिये वह उनका हिंसक होता है। यदि जीव नहीं भी मरते हैं तो भी वह पापयुक्त उपयोग सहित होने के कारण नियम से हिंसक होता है।

हिंसा **Himsa**

1. सोने, बैठने, खड़े होने और गमन करने आदि में साधु की असावधानी पूर्वक प्रवृत्ति।
2. जीववध
3. हिंसा से विरत न होना तथा वध का अभिप्राय रखना।
4. प्रमाद वश प्राणी के इन्द्रियादि दस प्राणों का वियोग करना।
5. कषाय वश द्रव्य व भाव प्राणों का विनाश।

हिंसादान **Himsādāna**

फरसा, तलवार, गेंती, कुदाली आदि खोदने के उपकरण, आग, अस्त्र-शस्त्रादि, रस्सी, चाबुक और दंड (लाठी) इत्यादि जीवहिंसा के कारणभूत उपकरणों को दूसरों को देना।

हिंसानन्द रौद्रध्यान **Himsānanda raudradhyāna**

रौद्रध्यान का एक भेद। हिंसा में अनुराग रखना, वध-बंधन का अभिप्राय रखना, प्राणी के अंगों का छेदन करना, उन्हें संताप देना और कठोर दंड देना आदि।

हिंसानुबंधी **Himsānubandhī**

प्राणियों को पीड़ा पहुँचाने रूप हिंसा में स्वभावतः निरन्तर प्रवृत्त रहना।

हिंसाप्रदान **Himsāpradāna**

देखें–हिंसादान।

हिंसोपकारिदान **Himsopakāridāna**

देखिए, हिंसादान।

हिंस्रप्रदान **Himsrapradāna**

1. एक प्रकार का अनर्थदंड।
2. दूसरे के लिये हिंसाजनक खड्ग आदि का देना।

हित नोआगमद्रव्यपेज्ज **Hitanoāgama dravya pejja**

व्याधि की उपशान्ति के कारणभूत द्रव्य का नाम।

हितप्रदानविनय **Hitapradāna vinaya**

परिणाम आदिकों में जो जो जिसके योग्य है उसके लिये सूत्र व अर्थ से उसे देना।

हितभाषण **Hita bhāṣaṇa**

मोक्ष पद को पहुँचाने वाले प्रधान फल से युक्त भाषण।

हिरण्य **Hiraṇya**

रूप्यादि व्यवहार

हिरण्यगर्भ **Hiraṇya garbha**

1. प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का एक नाम।
2. गर्भ में आने के समय से ही सुवर्ण की वृष्टि होने के कारण देवकृत नाम।

हीनदोष **Hīnadoṣa**

1. वंदना के बत्तीस दोषों में एक दोष।
2. ग्रंथ, अर्थ और काल प्रमाण से रहित वंदना करना।

हीनाधिकमानोन्मान **Hinādhikamānonmāna**

1. अचौर्याणुव्रत का एक अतिचार।
2. प्रस्थ आदि मान और तराजू आदि उन्मान कहलाते हैं। हीन मान-उन्मान के आश्रय से दूसरे को देना तथा अधिक मान-उन्मान के आश्रय से दूसरे से लेना।

हीयमान अवधि **Hīyamāna avadhi**

उत्तरोत्तर हानि को प्राप्त होने वाली उपादान सन्तति – इंधन की परंपरा से – जिस प्रकार अग्नि उत्तरोत्तर हानि को प्राप्त होती है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शनादि

गुणों की हानि और संक्लेश परिणाम की वृद्धि के योग से जो अवधिज्ञान जिस प्रमाण में उत्पन्न हुआ था, उससे उत्तरोत्तर हानि को ही प्राप्त होना।

हीलितदोष **Hīlitadoṣa**

1. वंदना का एक दोष।
2. वचन द्वारा आचार्यादि का तिरस्कार कर वंदना करना।
3. हे गाणेन्! आपकी वंदना से क्या लाभ है? इस प्रकार अपमान करते हुये वंदना करना।

हुण्डकसंस्थान **Huṇḍakasaṃsthāna**

1. एक प्रकार का संस्थान।
2. जिसके उदय से शरीर के सब अंग–उपांग विरूप आकार में अवस्थित होते हैं।
3. जहाँ शरीर के सब ही अवयव प्रमाणलक्षण से रहित होते है।

हृदयग्राहित्व **Hṛdayagrāhitva**

1. वचनातिशय का एक भेद।
2. दुखबोध अर्थ का भी दूसरे के हृदय में प्रवेश करा देना।

हेतु **Hetu**

1. अन्यथानुपपत्ति से जो निर्णीत हो।
2. साध्य के होने पर जो हो, साध्य के अभाव में जो न हो, इस प्रकार साध्य धर्मान्वय-व्यतिरेक लक्षण हेतु होता है।
3. साध्याविनाभावी साधन वचन।

हेतुवाद **Hetuvāda**

1. अर्थ और आत्मा का ज्ञान कराने वाला हेतु होता है अथवा प्रत्यक्षादि पाँच प्रमाण हेतु है।
2. हेतु के द्वारा निरूपण हेतुवाद है।

हेतुविचय **Hetuvicaya**

तर्कानुसारी पुरुष का स्याद्वाद प्रक्रिया के आश्रय से सन्मार्ग का आश्रय करने रूप ध्यान। हेतुविचय आगम में विवाद होने पर नय विशेष के गौण और प्रधान भाव रूप उपनय से दुर्धर्ष, स्याद्वाद प्रक्रिया का अवलंबन करने वाले तर्कानुसारी पुरुष का स्वसमय गुण और परसमय दोष विशेष के परिज्ञान से जहाँ गुण का

प्रकर्ष हो वहां अभिनिवेश श्रेयस्कर है, इस प्रकार स्याद्वाद तीर्थ के कर्ता के प्रवचन में पूर्वापर विरोध से रहित हेतु के परिग्रहण की सामर्थ्य से समवस्थान गुणचिंतन।

हेत्वाभास **Hetvābhāsa**

1. जो अन्यथानुपपत्ति (अविनाभाव) से रहित होते हुये दूसरे एकांतवादियों के द्वारा हेतुरूप से कल्पित हैं।
2. हेतु लक्षण से रहित तथा हेतु के समान अवभासन।

हेलितदोष **Helitadoṣa**

देखिए, हीलितदोष।

होता **Hotā**

अध्यात्म रूप अग्नि में दयारूप मंत्रों द्वारा भलीभाँति कर्मरूप हव्य सामग्री का होम करने वाला। बाह्य अग्नि में समिधा का होम करने वाला यथार्थ में होता नहीं है।

ह्रस्व **Hrasva**

एक मात्रा वाला वर्ण।

DOPGIPF—416 Min. of HRD/2014—22.4.2015—1,000 Books.

© भारत सरकार
प्रकाशन नियंत्रक

पी.इ.डी. - 956
1000-2014 (डी.एस.के.-II)

Price { **Inland: ₹ 900.00**
Foreign: £ 8.82, $ 13.75

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
Government of India

PRINTED BY DIRECTORATE OF PRINTING AT GOVERNMENT OF INDIA PRESS, N.I.T. FARIDABAD
AND PUBLISHED BY THE CONTROLLER OF PUBLICATIONS, CIVIL LINES, DELHI-110054, 2015